MAGO-116

मानचित्र कला एवं सांख्यिकीय विधियां

उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन
मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

MAGO-116 मानचित्र कला एवं सांख्यिकीय विधियां

इकाई 01– मानचित्र की परिभाषा एवं इतिहास तथा आवश्यकता। **3**

इकाई 02– मानचित्र प्रक्षेप– परिभाषा एवं वर्गीकरण। **20**

इकाई 03– शंक्वाकार प्रक्षेप– एक–मानक आंक्षाश वाला शंकु प्रक्षेप, दो मानक वाला शंकु प्रक्षेप, बोन प्रक्षेपः– विशेषताएं, रचना एवं उपयोग। **30**

इकाई 04– बेलनाकार प्रक्षेपः गुण–दोष एवं रचना–समक्षेत्र बेलनाकार। **49**

इकाई 05– मर्केटर प्रक्षेप, गॉल प्रक्षेप। **64**

इकाई 06– ध्रुवीय प्रक्षेप–ध्रुवीय लम्बकोणीय प्रक्षेप, त्रिविमिय ध्रुवीय खमध्य प्रक्षेप, मानचित्र प्रक्षेपों का चयन। **79**

इकाई 07– भौमिकीय मानचित्र की आवश्यकता, संस्तर एवं संस्तर रेखा, नमन, नतिलम्ब। **96**

इकाई 08– भौमिकीय मानचित्र की समविन्यास एवं विषमविन्यास मानचित्र। **111**

इकाई 09– बलित, नत संस्तर वाले भौमिकीय मानचित्र की पार्श्वकाट एवं वर्णन। **123**

इकाई 10– भूगोल में सांख्यिकीय, भूगोल में सांख्यिकी की उपयोगिता, आंकड़ो के प्रकार। **130**

इकाई 11 समांतर माध्य माध्य, माध्यिका, बहुलक। **145**

इकाई 12– सहसम्बन्ध– प्रकार, स्पीयरमैन तथा कार्ल पियर्सन की विधियों द्वारा सहसम्बन्ध की गणना। **160**

इकाई 13 लारेंज बक्र, प्रकीर्ण आरेख, उच्चतामितीय वक्र **175**

इकाई 14 सुदूर संवेदन तकनीक अर्थ,भारत में सुदूर संवेदन तकनीक का इतिहास, प्रयास एवं उसका उपयोग **186**

इकाई 15 भौगोलिक सूचना तंत्र परिभाषा उद्देश्य एवं कार्य। **203**

इकाई 16 परिच्छेदिका– प्रकार एवं विशेषताए । **225**

उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

परामर्श समिति

प्रो0 सत्यकाम	कुलपति, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
विनय कुमार	कुलसचिव, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

पाठ्यक्रम निर्माण समिति (अध्ययन बोर्ड)

प्रो0 संतोषा कुमार	आचार्य, इतिहास, निदेशक, समाज विज्ञान विद्याशाखा, उ0 प्र0 रा0 ट0 मुक्तविश्वविद्यालय, प्रयागराज
प्रो0 संजय कुमार सिंह	आचार्य, भूगोल समाज विज्ञान विद्याशाखा, उ0 प्र0 रा0 ट0 मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
डॉ0 अभिषेक सिंह	सहा0 आचार्य समाज विज्ञान विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
प्रो0 एन.के .राना	आचार्य, भूगोल विभाग, बी0एच0यू0, वाराणसी
प्रो0 ए0 आर0 सिद्दीकी	आचार्य, भूगोल विभाग, इलाहाबाद विश्वविलय प्रयागराज
प्रो0 अरूण कुमार सिंह	आचार्य, भूगोल विभाग, बी0 एच0 यू0, वाराणसी

लेखक

प्रो0 संजय कुमार सिंह	आचार्य, भूगोल, समाज विज्ञान विद्याशाखा उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
डॉ0 वी0 सी0 जाट	प्राचार्य, राजकीय महाविद्यालय, रादावास जयपुर राजस्थान
डॉ0 द्रेवेन्द्र नारायन पाण्डेय	सहायक आचार्य, भूगोल नागरिक पी0जी0 कालेज जंघई जौनपुर
डॉ0 पवन यादव	सहा0 सहायक आचार्य, भूगोल महा0 राज0 डि0 कालेज कौशाम्बी
डॉ0वीरेन्द्र दूबे	सहायक आचार्य, भूगोल श्री दु0जी पी0जी0 चण्डेश्वर आजमगढ
डॉ0उमाकान्त सिंह	सहायक आचार्य, भूगोल श्री बलदेव पी0जी0 कालेज बडागाव वाराणसी
डॉ0 पारूली सिंह	सहायक आचार्य, भूगोल रा0 पी0 जी0 कालेज जंमुहाई जौनपुर

सम्पादन

प्रो0 संजय कुमार सिंह	आचार्य, भूगोल समाज विज्ञान विद्याशाखा उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

समन्वयक

प्रो0 संजय कुमार सिंह	आचार्य, भूगोल समाज विज्ञान विद्याशाखा उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

सह -समन्वयक

डॉ0 अभिषेक सिंह	सहायक आचार्य, भूगोल समाज विज्ञान विद्याशाखा उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

मुद्रित वर्ष – 2024

© उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

ISBN No. – 978-81-980586-3-8

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस सामग्री के किसी भी अंश को उप्र राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप में मिनियोग्राफी (वक्रमुद्रण) द्वारा या अन्यथा पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

नोट : पाठय साम्रगी में मुद्रित साम्रगी के विचारों एवं आकड़ों आदि के प्रति विश्वविद्यालय, उत्तरदायी नहीं है।

प्रकाशन विनय कुमार, कुलसचिव, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज, 2024।

मुद्रक – के. सी. प्रिन्टिंग एण्ड एलाइड वर्क्स, पंचवटी, मथुरा

इकाई - 1 (Unit - 1)
मानचित्र की परिभाषा एवं इतिहास तथा आवश्यकता

पाठ संरचना **(Lesson Structure)**

1.1 प्रस्तावना

1.2 मानचित्रों का उद्देश्य

1.3 मानचित्र की परिभाषा

1.4 मानचित्र के विशिष्ट लक्षण

1.5 मानचित्रों का उपयोग

1.6 मानचित्रों का वर्गीकरण

1.7 मानचित्र निर्माण की प्रविधियां

1.8 मानचित्रण की सामग्री एवं उपकरण

1.9 मानचित्रकला का इतिहास

1.10 भारतीय मानचित्रकला

1.11 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1.12 प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

प्रयोगात्मक भूगोल की विषय–वस्तु में कुछ सीमा तक सामान्य गणित व विज्ञान का प्रयोग होता है। अतः कला के विद्यार्थियों को मापनी, मानचित्र–प्रक्षेप, आरेख व वितरण मानचित्र आदि की रचना करने, भूवैज्ञानिक व मौसम मानचित्रों की रचना व व्याख्या करने तथा सांख्यिकीय विधियों को समझने में प्रायः कुछ कठिनाइयाँ अनुभव होती हैं। प्रस्तुत इकाई प्रयोगात्मक भूगोल के नवीन पाठ्यक्रमानुसार लिखी गई है तथा इसमें प्रयोगात्मक भूगोल की विषय–वस्तु को अत्यन्त सरल ढंग से समझाने का प्रयास किया गया हैं

मानचित्र हमारे जीवन के सदैव अभिन्न अंग रहे हैं। जब कोई सामान्य व्यक्ति किसी दूसरे व्यक्ति को शब्दों में किसी स्थान की स्थिति समझाने में कुछ कठिनाई अनुभव करता है तो वह अनायास धरातल पर किसी कंकड़ आदि से रेखाचित्र बनाकर उस स्थान तक पहुँचने का मार्ग समझाने लगता है। इससे प्रकट होता है कि मानचित्र बनाना एवं उन्हें प्रयोग करना मानव का जन्मजात गुण है तथा मानचित्रकला का इतिहास उतना ही प्राचीन है जितना कि पृथ्वी पर स्वयं मानव का इतिहास है। वर्तमान समय में दुर्गम टुण्ड्रा प्रदेश में रहने वाले एस्कीमो अथवा अरब व सहारा मरुस्थल की निरक्षर आदिम जनजातियों के द्वारा पशुओं की त्वचा व रेत पर निर्मित 'मानचित्रों' को देखते हुए यह सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है कि आदिकालीन मानव ने भी अपने स्वजनों एवं सम्बन्धियों को मार्गों तथा आखेट–स्थलों की स्थितियाँ बतलाने के उद्देश्य से गुफाओं की दीवारों अथवा धरातल पर किसी न किसी प्रकार के मानचित्र अवश्य बनाये होंगे। वस्तुतः मानचित्र बनाने की इस क्षमता के विकास का इतिहास ही मानचित्रकला के विकास का इतिहास है। सभ्यता के विकास के साथ–साथ मानचित्रकला का क्षेत्र और अधिक व्यापक होता गया और आज तो यह इतना व्यापक हो गया है कि सामान्य से सामान्य व्यक्ति को भी अपने दैनिक जीवन में मानचित्रों की आवश्यकता रहती है। इसके अतिरिक्त भिन्न–भिन्न विषयों में जटिल तथ्यों

को स्पष्ट करने के लिये मानचित्रों, चार्टो, आलेखों, आरेखों व मानारेखों को प्रयोग करने की बढ़ती हुई प्रवृत्ति मानचित्रकला की व्यापकता की द्योतक है।

मानचित्र शब्द की उत्पत्ति (Origin of the term Map)मानचित्र अंग्रेजी भाषा के शब्द 'मैप' (Map) का हिन्दी रूपान्तर है तथा अंग्रेजी भाषा के इस शब्द की उत्पत्ति लैटिन भाषा के 'मैप्पा' (Mapp) शब्द से हुई है जिसका शाब्दिक अर्थ है 'कपड़े का मेजपोश' या 'रूमाल'। मध्यकालीन युग में कपड़े पर बनाये गये विश्व के चक्र–मानचित्रों को 'मैप्पा–मुण्डी' (Mappa Mundi) कहा जाता था। सम्भवतया विश्व के चक्र–मानचित्र के लिए इस शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम सन् 840 में सेन्ट रिक्वीयर के मिकन (Micon) नामक एक मठाधीश ने किया था, जो कालान्तर में बदलते–बदलते मैप के रूप में परिणत हो गया।

1.2 मानचित्रों का उद्देश्य (Purpose of Maps) –

मानचित्र का उद्देश्य भू–तल के लक्षणों एवं स्थानों को प्रदर्शित करना तथा उनके आपसी सम्बन्धों को व्यक्त करना है। मानचित्र, पृथ्वी के आकार व आकृतियों को मापनी के अनुसार छोटा कर के बोधगम्य बनाते है तथा उच्चावच, जलवायु, मिट्टी, प्राकृतिक वनस्पति, खनिज पदार्थ, जल संसाधन, जनसंख्या का वितरण, अधिवास प्रतिरुप, कृषि उद्योग, परिवहन, व्यापार आदि भौगोलिक तथ्यों एवं कारकों का ज्ञान उपलब्ध कराते हैं। भू–तल पर विभिन्न प्रकार के भौतिक, आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक तथा राजनैतिक प्रतिरूप साथ–साथ पाये जाते हैं। इन तथ्यों का शुद्ध प्रदर्शन ही एक अच्छे मानचित्र में निहित उद्देश्यों को पूरा कर सकता है तथा तथ्यों के प्रदर्शन की शुद्धता के आधार पर ही आसानी से इनके अन्तर्सम्बन्धों को समझा जा सकता है।

1.3 मानचित्र की परिभाषा (Definition of a Map)

सम्पूर्ण पृथ्वी अथवा उसके किसी भाग का मापनी के अनुसार समतल सतह पर प्रतीकात्मक चित्रण मानचित्र कहलाता है। विभिन्न विद्वानों द्वारा भिन्न–भिन्न प्रकार से मानचित्र की व्याख्या की गयी है। कुछ प्रमुख विद्वानों द्वारा प्रस्तुत परिभाषायें निम्नवत् हैं–

1. इरविन रेज के अनुसार, ''अपनी प्राथमिक संकल्पना में कोई मानचित्र धरातल के प्रतिरूप का ऊपर की ओर से देखा गया रूढ़ चित्र होता है, जिसमें पहचान के लिए अक्षर लिख दिये जाते हैं।''

''A map is, in its primary conception a conventionalized picture of the earths pattern as a seen from above, to which lettering is added for identification-'' Erwin Raisz-

2. फिन्च तथा ट्रिवार्था के अनुसार, ''मानचित्र धरातल के आलेखी निरूपण होते हैं।''

''Maps are graphic representations of the surface of the earth-'' & Finch and Trewartha-

3. डडले स्टाम्प के अनुसार, ''मानचित्र धरातल अथवा उसके किसी भाग का तथा वहां के भौतिक और राजनीतिक लक्षणों आदि का अथवा खगोलीय पिण्डों का कागज या किसी अन्य पदार्थ की समतल सतह पर निर्मित ऐसा चित्रण है, जिसमें अंकित प्रत्येक बिन्दु निश्चित मापनी या प्रक्षेप के अनुसार अपनी भौगोलिक अथवा खगोलीय स्थिति के अनुरूप स्थित होता है।''

''Map is a representation of the earth's surface or a part of it its physical and political features etc- or of the heavens delneated on a flat surface of paper or other material] each point in the drawing corresponding to a geographical or celestial position according to a definite scale or projection-'' Dudley Stamp-

4. आर.पी. मिश्रा तथा ए. रमेश के अनुसार, "समस्त पृथ्वी या उसके किसी भाग, आकाश या किसी अन्य आकाशीय पिण्ड के दृश्य एवं विचारे गये अवस्थितिक व वितरणात्मक प्रतिरूपों का मापनी के अनुसार प्रतीकात्मक आरेखन मानचित्र कहलाता है।''

'' map is a symbolic drawing to scale of the visible as will as conceived locational and distributional patterns of the whole or a part of the earth, the sky or any other heavenly body-''. R- P- Mishra and A- Ramesh-

5. एल. आर. सिंह तथा आर.एन. सिंह के अनुसार, ''मानचित्र समस्त पृथ्वी (अथवा उसके किसी भाग) का जैसा कि वह ऊपर से दृष्टिगत होती है, परम्परागत लघुमापक चित्रण है।''

''A map may be defined as a small scale conventional representation of the earth (or part there of) as seen from above-'' L- R- Singh and R-N- Singh-

इस तरह उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है कि मानचित्र सम्पूर्ण पृथ्वी अथवा उसके किसी भाग का एक निश्चित मापनी और प्रक्षेप के अनुसार समतल सतह पर प्रतीकात्मक निरूपण है।

1.4 मानचित्र के विशिष्ट लक्षण

मानचित्र के निम्नलिखित विशिष्ट लक्षण पाये जाते हैं–

1. **मापनी** .मानचित्र सानुपात चित्रण है अतः यह निर्धारित मापनी पर बनाया जाता है। जिससे मानचित्र में प्रदर्शित विभिन्न स्थानों के बीच की धरातलीय दूरियां एवं क्षेत्रफल की सही–सही गणना की जा सकती है। स्मरण रहे, मापक रहित मानचित्र को 'रेखा मानचित्र' कहा जाता, है।

2. **पृथ्वी का द्विविमीय निरूपण** (Two & dimentional Representation of the Earth)– मानचित्र त्रिविमीय पृथ्वी का द्विविमीय निरूपण करते हैं। पृथ्वी एक गोलाकार ठोस पिण्ड है जिसमें लम्बाई, चौड़ाई और मोटाई तीनों प्रकार के विस्तार विद्यमान होते हैं। चूंकि मानचित्र समतल सतह पर बनाये जाते हैं अतः इसमें केवल दो आयाम– लम्बाई एवं चौड़ाई का ही निरूपण सम्भव हो पाता है। इसी कारण मानचित्र में पृथ्वी की गोलाभ आकृति एवं उच्चावच को सपाट तल पर प्रदर्शित किया जाता है, जैसा कि वह ऊपर से दृष्टिगत होता है।

3. **मानचित्र प्रक्षेप** (Map & Projection)– मानचित्रों के द्वारा पृथ्वी के वक्रीय तल को समतल पृष्ठ पर प्रदर्शित किया जाता है। अतः सम्पूर्ण पृथ्वी अथवा उसके किसी भाग का मानचित्र बनाने के लिए सर्वप्रथम प्रकाश या गणितीय विधियों की सहायता से ग्लोब के अक्षांश–देशान्तर जाल को किसी समतल सतह पर बनाते हैं, तत्पश्चात् इस रेखा जाल में ग्लोब के विवरणों को सावधानीपूर्वक स्थानान्तरित कर देते हैं। समतल सतह पर बनाया गया अक्षांश–देशान्तर का यह जाल मानचित्र प्रक्षेप कहलाता है। दूसरे शब्दों में मानचित्र प्रक्षेप वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा पृथ्वी के गोलाभीय निर्देशांक का समतल निर्देशांक में रूपान्तरण किया जाता है।

4. **समतल सतह पर निरूपण** (Representation on Plane Surface)– मानचित्र सदैव किसी समतल सतह पर बनाये जाते हैं, लेकिन गोलाभ पृथ्वी को समतल सतह पर सपाट प्रदर्शित करने से सभी मानचित्र मूलतः दोषपूर्ण होते हैं। यद्यपि ग्लोब पृथ्वी की गोलाभ आकृति को सही–सही प्रदर्शित करता है अर्थात् ग्लोब पृथ्वी का उपयुक्त स्वरूप है तथापि मानचित्र अपनी विशेषताओं के कारण ग्लोब की तुलना में अधिक उपयोगी होते हैं।

5. **प्रतीकात्मक निरूपण** (Symbolical Representation)– मानचित्र पर पृथ्वी के भौतिक एवं सांस्कृतिक प्रतिरूपों को प्रतीकों के द्वारा प्रदर्शित किया जाता है अतः किसी मानचित्र को धरातल का आलेखी (Graphical) या प्रतीकात्मक (symbolical) निरूपण कहा जा सकता है। ये प्रतीक कई प्रकार के होते हैं यथा–रूढ़ (Conventional), ज्यामितीय (Geometrical), चित्रमय (Pictorial) एवं मूलाक्षर (Literal) आदि। मानचित्र में यथासम्भव ऐसे प्रतीकों का प्रयोग करना चाहिए जिन्हें अभिसूचक के बिना भी आसानी से समझा जा सके।

1.5 मानचित्रों का उपयोग (Use of Maps)– भूगोल में मानचित्रों का सबसे अधिक प्रयोग किया जाता है, ये भूगोल का परम्परागत माध्यम तथा एक आवश्यक अंग है। अतः मानचित्र को भूगोलवेत्ता का उपकरण कहा जाता है। यद्यपि अन्य विषयों के विद्वान भी मानचित्रों का विशिष्ट लक्ष्यों के निमित्त उपयोग करते हैं। लेकिन भूगोलवेत्ता मानचित्रों का प्रयोग दैनिक जीवन के अभिन्न अंग के रूप में करते हैं। भूगोल में मानचित्रों की महत्ता को स्पष्ट करते हुए डॉ. पाल गॉड ने मानचित्रों को भूगोल की अशुलिपि कहा है। पृथ्वी इतनी विस्तीर्ण है कि मानव अपने छोटे से जीवन काल में देश–देशान्तरों के प्राकृतिक एवं सांस्कृतिक पर्यावरण का पर्यवेक्षण नहीं कर सकता। अतः वह उन्हें जानने और समझने के लिए जिन साधनों का उपयोग करता है उनमें मानचित्र सर्वोपरि है। मानचित्रों में भौतिक परिवेश के तत्वों के साथ–साथ विकास के चरम पर पहुंचे जटिल सांस्कृतिक तत्वों को भी भली प्रकार दर्शाया जाता है। सम्भवतः इसीलिए मानिचित्रों को भूगोल की भाषा कहा जाता है।

आधुनिक काल में जो मानचित्र बनाये जाते हैं उनमें संकेतों के आधार पर छोटे से स्थान में इतनी अधिक सूचनायें दी जाती हैं कि हम उन्हें सूचनाओं का भण्डार कह सकते हैं। मानचित्र भूगोलवेत्ताओं की संकेत लिपि हैं। यह दृष्टपात मात्र से ही किसी देश या प्रदेश के बारे में पर्याप्त जानकारी प्रदान करते हैं। मानचित्र जहां एक भूगोलवेत्ता के लिए भौगोलिक तत्वों की विरलता एवं सघनता के विश्लेषण तथा उनके अन्तर्सम्बधी की सकारण व्याख्या के लिए, महत्वपूर्ण साधन हैं वहीं सर्वेक्षक, नियोजक, प्रशासक, अर्थशास्त्री, शिक्षाशास्त्री, सैनिक–असैनिक अधिकारी, यात्री, सैलानी आदि अर्थात् प्रायः समाज के सभी वर्गों के लोग अपने–अपने उद्देश्यों की पूर्ति हेतु मानचित्रों का उपयोग कहते हैं।

1.6 मानचित्रों का वर्गीकरण

वर्तमान समय में विभिन्न उद्देश्यों की पूर्ति हेतु बड़ी संख्या में मानचित्रों का निर्माण हो रहा है। यही कारण है कि किसी एक विशेष पर मानचित्र का सम्यक वर्गीकरण करना कठिन है। अध्ययन की सुविधा के लिए हम इन मानचित्रों को उनके (i) मापनी तथा (ii) उद्देश्य के आधार निम्न वर्गों में वर्गीकृत कर सकते हैं–

[I] मापनी के अनुसार मानचित्रों के भेद (Kind of Maps According to Scale)

साधारणतया मोटे तौर पर मापनी के आधार पर मानचित्रों को दो भागों में बांटा जाता है– (1) दीर्घ मापनी मानचित्र (Large Scale Maps) तथा (ii) लघुमापनी मानचित्र (Small Scale Maps)। परन्तु यह विभाजन अधूरा रह जाता है क्योंकि मानचित्रों पर बनने वाली मापनियां विभिन्न प्रकार की होती हैं। अतः साधारणतया व्यवहार में आने वाले दीर्घ एवं लघु मापनी वाले मानचित्रों को निम्न भागों में विभक्त कर सकते हैं–

(1) **भूकर मानचित्र** (Cadastral Maps) – ऐसे मानचित्र दीर्घ मापनी पर बने होते हैं तथा इनमें भूसम्पत्ति, खेत, उद्यान, भवन, जलाशय, मार्ग, सार्वजनिक स्थान आदि की सीमायें प्रदर्शित की जाती हैं। भूराजस्व सम्बन्धी कार्यों के लिए तैयार कराती है। लेखपालों द्वारा प्रयोग किये जाने वाले मानचित्र इसी प्रकार के होते हैं जो सामान्यतया 16'' = 1 मील अथवा 1:3960 के मापक पर बने होते हैं।

(2) **स्थलाकृतिक मानचित्र** (Topographical Maps) – ये मानचित्र भी दीर्घ मापनी पर बने होते हैं। टी.डब्ल्यू. बर्च (T-W- Birch) ने इन्हें मध्यवर्ती (Intermediate) मापनी पर बने मानचित्र कहा है।' सामान्यतया ये मानचित्र 1/4 इंच शीट अथवा 1:250000 और इससे बड़ी मापनियों पर बनाये जाते हैं। इन मानचित्रों में प्रमुख स्थलाकृतिक लक्षणों–उच्चावच, प्रवाह–प्रणाली, जलाशयों, वनों, दलदलों, नगरों, ग्रामों, यातायात एवं संचार मार्गों को प्रदर्शित किया जाता है।

(3) **दीवार मानचित्र** (Wall Maps)– दीवारों पर टांगकर जिन मानचित्रों का उपयोग किया जाता है वह इसके अन्तर्गत आते हैं। इनमें अधिकांश लघु मापनी वाले विवरणात्मक मानचित्र होते हैं, जिनमें समस्त पृथ्वी अथवा किसी महाद्वीप या देश अथवा प्रदेश को प्रदर्शित किया जाता है। विद्यालयों एवं महाविद्यालयों के छात्रों को सामान्य या विशिष्ट जानकारी प्रदान करने हेतु इनका सर्वाधिक उपयोग किया जाता है। सामान्य जानकारी वाले इन मानचित्रों में सरलीकृत रूप में सम्बन्धित क्षेत्र के स्थलरूपों, नदियों, जलवायु की दशाओं, मिट्टियों के प्रकार, प्राकृतिक वनस्पति के प्रकार, खनिजों के वितरण, जनसंख्या के वितरण, यातायात मार्गों तथा आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक व राजनीतिक प्रतिरूपों को दिखलाया जाता है। दीवार मानचित्रों की मापनी सम्बन्धित देश के विस्तार एवं मानचित्र के आकार व आवश्यकता पर निर्भर करती है। भारतीय सर्वेक्षण विभाग के द्वारा बनाये गये मानचित्रों की मापनियां 1:15000000 से 1:2500000 तक हैं।

(4) **एटलस मानचित्र** (Atlas Maps)– पुस्तक के रूप में मानचित्रों का संग्रह ही एटलस है। एटलसों को भिन्न–भिन्न आकार में मुद्रित किया जाता है, इसलिए उनके मानचित्रों की प्रदर्शक भिन्न में पर्याप्त अन्तर मिलता है। उदाहरणार्थ 'ऑक्सफोर्ड स्कूल एटलस' में संसार के लिए 1:132000000, महाद्वीपों के लिए 1:24000000 से 1:48000000 तक तथा भारत के लिए 1:18000000 प्रदर्शक भिन्नों का प्रयोग किया गया है। इसी प्रकार भारतीय राष्ट्रीय एटलस का अंग्रेजी संस्करण 1:1000000 प्रदर्शक भिन्न पर तैयार किया गया है। इस एटलस में दो प्लेट 1: 2000000 प्रदर्शक भिन्न के भी हैं।

[II] **उद्देश्य के अनुसार मानचित्रों के भेद** (Kind of Maps According to Purpose)–

प्रत्येक मानचित्र को बनाने का कोई न कोई उद्देश्य होता है। अभीष्ट उद्देश्यों के आधार पर हम इन्हें निम्नलिखित प्रमुख भागों में विभक्त कर सकते हैं–

(1) **भौतिक मानचित्र** (Physical Maps)– प्राकृतिक पर्यावरण के तत्वों का वितरण प्रदर्शित करने वाले मानचित्रों को भौतिक मानचित्र कहा जाता है। इस उपवर्ग के कुछ मुख्य मानचित्र निम्नवत् हैं–

(i) **उच्चावच मानचित्र** (Relief Map)– इन मानचित्रों में धरातलीय स्वरूप यथा पर्वत, पठार, मैदान आदि को मान्य रंगों या आभा द्वारा प्रदर्शित किया जाता है तथा धरातलीय बनावट के साथ–साथ अपवाह तन्त्र को भी दर्शाया जाता है। लघु मापनीं वाले मानचित्रों में सागर तल से बढ़ती हुई ऊंचाइयों के अनुसार निश्चित समोच्च रेखा को जैसे 100, 200, 500, 1000, 2000 मीटर आदि को आधार मान कर उनके अनुसार आभा निश्चित की जाती है।

(ii) **जलवायु मानचित्र** (Climatic Map)– अपेक्षाकृत किसी बड़े भूभाग में दीर्घकालीन औसत मौसम की दशाओं को प्रकट करने वाले मानचित्रों को जलवायु मानचित्र कहते हैं। ये मानचित्र कई प्रकार के होते हैं, जैसे– औसत तापमान मानचित्र, औसत वर्षा मानचित्र, औसत वायुदाब मानचित्र आदि।

(iii) **मौसम मानचित्र** (Weather Map) – इन मानचित्रों के द्वारा अल्पकालीन वायुमण्डलीय दशाओं को प्रदर्शित किया जाता है। इनका निर्माण मौसम कार्यालयों द्वारा होता है। इनमें दिन के किसी विशिष्ट समय (जैसे प्रातः 8. 30 बजे या सायं 5:30 बजे) के तापमान, वर्षा, वायुदाब, मेघाच्छादन आदि मौसमी तत्वों की स्थिति को प्रदर्शित किया जाता है। प्रायः संसार के सभी देशों में इस प्रकार के मानचित्र बनाये जाते हैं। रडार, टेलीग्राफ, मौसम उपग्रहों एवं कम्प्यूटरों के विकास से इस प्रकार के मानचित्रों के निर्माण में काफी सहायता मिली है जिससे मौसम सम्बन्धी भविष्यवाणी भी की जा सकती है।

(iv) **अपवाह मानचित्र** (Drainage Map) – इन मानचित्रों के द्वारा किसी देश या प्रदेश की मुख्य एवं सहायक नदियों के जाल एवं अपवाह तन्त्र (Drainage Systems) को प्रदर्शित किया जाता है।

(अ) **वनस्पति मानचित्र** (Vegetation Map) – इन मानचित्रों में विभिन्न प्रकार की प्राकृतिक वनस्पति यथा–वन, घास के मैदान तथा कंटीली झाड़ियां आदि, का वितरण प्रदर्शित किया जाता है। ऐसे मानचित्रों के द्वारा कभी – कभी एक ही प्रकार की प्राकृतिक वनस्पति के विभिन्न प्रकारों जैसे वनों के प्रकार आदि को भी दिखलाया जाता है।

(vi) **मृदा मानचित्र** (Soil Map) – इन मानचित्रों में किसी प्रदेश में पायी जाने वाली विभिन्न प्रकार की मिट्टियों के वितरण को प्रदर्शित किया जाता है। कृषि नियोजन (Agricultural Planning) हेतु ये मानचित्र बहुत उपयोगी होते हैं।

(vii) **भौमिकीय मानचित्र** (Geological Map)– इस प्रकार के मानचित्रों में किसी क्षेत्र के शैल दृश्यांशों (Rock Outcrops) के वितरण, शैल संस्तरों (Rock Beds) तथा उनके नमन (Dip) की मात्रा एवं दिशा, विभंग रेखाओं (Fracture Lines) तथा वलन अक्ष आदि को धरातलीय उच्चावच के साथ–साथ दिखलाया जाता है।

(2) **जनसंख्या एवं बस्ती मानचित्र** (Population and Settlement maps) – इन मानचित्रों के द्वारा जनसंख्या के वितरण, घनत्व, जनसंख्या वृद्धि, लिंग अनुपात, आयु वर्ग तथा जनसंख्या की व्यावसायिक संरचना आदि को दर्शाया जाता है। बस्ती मानचित्र में ग्राम या नगर की बनावट (Morphology) या विन्यास (Layout) तथा यातायात मार्गों के जाल को प्रदर्शित किया जाता है।

(3) **ऐतिहासिक मानचित्र** (Historical Maps) – ऐसे मानचित्रों में प्राचीन एवं मध्ययुगीन राजा– महाराजाओं के अधिकार क्षेत्रों, किलों, आक्रमण–मार्गों, ऐतिहासिक महत्व के नगरों तथा प्रमुख सभ्यता के केन्द्रों व बस्तियों को दिखलाया जाता है।

(4) **राजनीतिक मानचित्र** (Political Maps) – इन मानचित्रों में किसी देश की अन्तर्राष्ट्रीय तथा प्रशासनिक इकाइयों (राज्य, जनपद, तहसील आदि) की सीमायें, राष्ट्रीय एवं प्रान्तीय राजधानियों व अन्य प्रशासनिक केन्द्रों को प्रदर्शित किया जाता है।

(5) **सामाजिक मानचित्र** (Social Maps) – इन मानचित्रों में जातियों, धर्मो, भाषाओं, कलाओं आदि का विवरण प्रदर्शित किया जाता है।

(6) **सैनिक मानचित्र** (Military Maps) – इन मानचित्रों में युद्ध स्थलों, सैनिक अड्डे, छावनी, शस्त्रागार केन्द्र आदि सामरिक महत्व के केन्द्र तथा यातायात के मार्गों को प्रदर्शित किया जाता है।

(7) **आर्थिक मानचित्र** (Economic Maps) – आर्थिक क्रिया–कलापों से सम्बन्धित मानचित्रों को आर्थिक मानचित्र कहा जाता है। ये मानचित्र अनेक प्रकार के होते हैं, जिनमें से कुछ प्रमुख निम्नवत है।

(i) **भूमि उपयोग मानचित्र** (Land Use Maps) – इन मानचित्रों में किसी क्षेत्र के भूमि उपयोग सम्बन्धी विभिन्न श्रेणियों यथा वन, चरागाह, कृष्य भूमि, कृषि योग्य बन्जर भूमि, अकृष्य भूमि आदि के अन्तर्गत क्षेत्रफल के वितरण को प्रदर्शित किया जाता है।

(ii) **कृषि मानचित्र** (Agricultural Maps) – इन मानचित्रों में किसी प्रदेश की विभिन्न फसलों के वितरण, फसलों की कोटि (Crop Ranking), कृषि दक्षता (Agricultural Efficiency), वहन क्षमता (Carrying Capacity) तथा फसल साहचर्य (Crop Association) आदि को प्रदर्शित किया जाता है।

(iii) **परिवहन मानचित्र** (Transport Maps) – इन मानचित्रों में यातायात एवं संचार मार्गों को प्रदर्शित किया जाता है। इनमें सड़क, रेलमार्ग, वायुमार्ग, सामुद्रिक मार्ग के अतिरिक्त टेलीफोन व टेलीग्राफ लाइनों आदि को दिखाया जाता है।

(iv) **खनिज मानचित्र** (Mineral Maps) – इन मानचित्रों में किसी प्रदेश के खनिज क्षेत्रों तथा उत्खनन केन्द्रों को प्रदर्शित किया जाता है।

(v) **औद्योगीक मानचित्र** (Industrial Maps) – इन मानचित्रों में किसी प्रदेश के औद्योगिक केन्द्रों तथा औद्योगिक पेटियों को प्रदर्शित किया जाता है।

1.7 मानचित्र निर्माण की प्रविधियां (The Mapping Methods) –

मानचित्र निर्माण हेतु मानचित्रकार को कई प्रविधियों का सहारा लेना पड़ता है। मानचित्र की प्रकृति में विविधता के कारण उनकी निर्माण प्रविधि में विविधता का पाया जाना आवश्यक है। यही कारण है कि मानचित्र निर्माण प्रविधियों का सामान्यीकरण करना उपयोगी नहीं होता है। फिर भी इनका कुछ सामान्यीकरण किया जा सकता है जो निम्नवत् हैं–

(1) मानचित्रकार का प्रथम महत्वपूर्ण कार्य मापनी का चयन करना होता है, क्योंकि प्रत्येक मानचित्र को किसी पूर्व निश्चित मापनी पर बनाया जाता है जिससे उसमें प्रदर्शित स्थानों के बीच की वास्तविक दूरियों (धरातल पर) का सही–सही बोध हो सके। मापनी का चयन करते समय कागज आदि के आकार तथा मानचित्र बनाने के उद्देश्य को ध्यान में रखना आवश्यक होता है। मापनी पर ही सम्पूर्ण मानचित्र का स्वरूप निर्धारित होता है। अतः यदि मापनी को मानचित्र का मेरूदण्ड कहा जाये तो अत्युक्ति नहीं होगी।

(2) मानचित्र स्थानिक सम्बन्धों का निरूपण होते हैं। अतः मानचित्रकार का द्वितीय महत्वपूर्ण कार्य गोलाभीय सतह (Spherical Surface) का समतल सतह में निरूपण करना है। इस क्रिया में गोलाभीय सतह की दिशा, दूरी, क्षेत्र एवं आकार में परिवर्तन अपरिहार्य हो जाता है। गोलाभीय सतह का समतल सतह में रूपान्तण प्रक्षेप कहलाता है। उपयुक्त मानचित्र निर्माण हेतु उपयुक्त प्रक्षेप का चयन मानचित्र निर्माण का एक आवश्यक कार्य है।

(3) मानचित्र के निर्माण में अत्यधिक सावधानी की आवश्यकता होती है क्योंकि यह संचार के मिश्रित स्वरूप का निरूपण है जिसमें कुछ सामान्य एवं कुछ विशिष्ट उद्देश्य सन्निहित होते हैं। चूंकि प्रत्येक मानचित्र एक लघुकृत रूप है तथा उसमें कुछ वस्तुनिष्ठता पायी जाती है। अतः मानचित्रकार का तृतीय महत्वपूर्ण कार्य सामान्यीकरण का होता है। इस कार्य में वह कुछ तथ्यों को सामान्यीकृत कर के प्रस्तुत करता है। सामान्यीकरण एक कठिन कार्य है। इसमें आंकड़ों का संक्षिप्तीकरण एवं परिचालन इस प्रकार से करते है जिससे मानचित्र वितरण की आवश्यक विशेषताओं को स्वच्छ एवं प्रभावी ढंग से प्रकट किया जा सके।

(4) मानचित्र की रूपरेखा एवं आलेखीय विशेषता मानचित्रकार का चौथा उत्तरदायित्व है। मानचित्र के सुपाठ्य होने के लिए आवश्यक है कि मानचित्र में दिये गये प्रतीक (Symbols) अथवा निर्देश (Notation) मानचित्र की वस्तुनिष्ठता के अनुकूल हों। इरविन रेज महोदय का यह कथन अक्षरशः सत्य है कि 'मानचित्र–कला एक भाषा है जिसके शब्द प्रतीक हैं।' अतः मानचित्र पर अपेक्षित संसार को प्रदर्शित करने के लिए यह आवश्यक होता है कि मानचित्र का पाठक इन शब्दों (प्रतीकों) को ठीक–ठीक समझ सके। मानचित्र निर्माण के इस कार्य में चित्रांकन की विधियां, लेखन आकार का चुनाव, रेखाओं की मोटाई, रंगों एवं आभाओं का चयन आदि सम्मिलित होते हैं।

(5) मानचित्र निर्माण विधि का पंचम पक्ष (Aspect) मानचित्र का सही निर्माण और इसका पुनरूत्पादन है। सभी मानचित्र सर्वप्रथम साधारण कलम एवं स्याही से निर्मित किये जाते हैं। तत्पश्चात् मुद्रक इनका अनुलिप्यकरण करता है। जिसमें मुद्रण और गैर मुद्रण विधियाँ प्रयोग में लायी जाती हैं। आज विज्ञान के विकास से मानचित्र पुनरूत्पादन में बहुत सहायता मिली है।

1.8 मानचित्रण की सामग्री एवं उपकरण (Materials and Tools of Map & Making) –स्वच्छ, सुन्दर एवं आकर्षक मानचित्रों के निर्माण हेतु उच्च कोटि की मानचित्रण–सामग्री एवं उपकरण उपलब्ध होना चाहिए तथा मानचित्रकार को मानचित्रण की तकनीकों का समुचित ज्ञान एवं मानचित्रण के उपकरणों के प्रयोग में निपुणता होनी चाहिए। मानचित्र निर्माण में प्रयुक्त आवश्यक सामग्री एवं उपकरणों को हम निम्न तीन भागों में बांट सकते हैं–

(1) आरेखण सामग्री (Drawing Materials),

(2) आरेखण साधन (Drawing Instruments),

(3) आरेखण उपकरण (Drawing Equipments)।

(1) **आरेखण सामग्री** (Drawing Materials) – मानचित्रण के लिए निम्नलिखित सामग्री की आवश्यकता होती है–

(i) **आरेखण सतह** (Drawing Surface) – जिस सतह पर मानचित्र बनाया जाता है उसे आरेखण सतह कहते हैं। इसमें कागज, अनुरेखण कागज (Tracing Paper), अनुरेखण कपड़ा, प्लास्टिक अथवा धातु की चादर, लकड़ी का तख्ता, दीवार आदि सम्मिलित किये जाते हैं। आरेखण सतह स्वच्छ व चिकनी होनी चाहिए। अधिकांश मानचित्र आरेखण कागज (Drawing Paper) पर बनाये जाते हैं। अच्छे आरेखण कागज में निम्नलिखित गुण होन चाहिए–

(अ) तापक्रम एवं आर्द्रता के परिवर्तन के साथ कागज के आकार में स्थिरता पायी जानी चाहिए।

(इ) चिकनी एवं सरन्ध्र सतह वाले कागज अच्छे होते हैं क्योंकि इसमें स्याही बैठकर स्थायी हो जाती है।

(ब) **आरेखण कागज** की सतह स्याही फैलने वाली नहीं होनी चाहिए।

(क) कागज मजबूत होना चाहिए जिससे उस पर किसी तथ्य को मिटाने के लिए रबर का प्रयोग करने या मोड़कर रखने पर खराब न हो।

किसी मानचित्र के हाथ से प्रतिलिप्याकरण हेतु अनुरेखण कागज का प्रयोग किया जाता है। इसी तरह इंजीनियरी आरेखण, भूसम्पत्तिं मानचित्र तथा मकानों के प्लान आदि बनाने में अनुरेखण कपड़ा का उपयोग किया जाता है।

(ii) **पेन्सिल** (Pencil)– सुरमे की कठोरता के आधार पर पेन्सिलें कई प्रकार की होती हैं जैसे 6 B, 9 H आदि। जहां 6 B पेन्सिल का सुरमा सबसे मुलायम होता है वहीं 9 H पेन्सिल का सुरमा सबसे कठोर होता है। H B पेन्सिल मध्यम प्रकार की होती है। पेन्सिल की नोक बारीक करने के लिए शार्पनर, ब्लेड, चाकू या रेगमार प्रयोग में लाना चाहिए।

(iii) **रबर** (Rubber)– पेन्सिल और स्याही की अवांछित रेखाओं को मिटाने के लिए रबर का प्रयोग किया जाता है। पेन्सिल की रेखायें मिटाने के लिए कोमल रबर तथा स्याही की रेखा को मिटाने के लिए कठोर रबर का प्रयोग किया जाता है।

(iv) **स्याही** (Ink)– मानचित्र बनाने के लिए कई प्रकार की काली स्याही का उपयोग किया जाता है किन्तु इनमें 'चायना इंक' (China Ink) उत्तम होती है। यह स्याही गहरी काली, जलसह्य (Water Proof) होती है तथा सूखने पर जल से घुलती नहीं है।

(अ) **मुद्रित आभाएं** (Printed Shades)– किसी मानचित्र में भिन्न–भिन्न वस्तुओं का वितरण दिखलाने के लिए प्रायः अलग–अलग प्रकार की छायायें बनानी पड़ती हैं। हाथ से बनायी गयी छायाओं में एक ओर समय व श्रम अधिक

लगता है दूसरी ओर कोई भी छाया सर्वत्र एक जैसी नहीं बन पाती है। इसलिए उच्च कोटि के वितरण मानचित्रों में मुद्रित आभाओं का प्रयोग किया जाता है। ये आभायें पारदर्शी कागज पर मुद्रित होती हैं तथा भिन्न–भिन्न डिजाइनों में मिलती हैं । इन आभाओं के पीछे मोम लगा होता है। इन्हें आवश्यकतानुसार काट कर मानचित्र के इच्छित भाग पर रखकर अच्छी तरह चिपका देते हैं।

(vi) **जल रंग** (Water Colour)– रंगक मानचित्र बनाने के लिए जलरंगों की आवश्यकता होती है। ये जलरंग टिकियों व तरल दोनों रूपों में मिलते हैं, प्रयोग करते समय इनमें आवश्यकतानुसार जल मिला दिया जाता है।

(2) **आरेखण साधन** (Drawing Instruments)– मानचित्रण के लिए निम्नलिखित आरेखण साधनों की आवश्यकता होती है–

(i) **अनुरेखण मेज** (Tracing Table)– सागौन की लकड़ी से बने इस मेज का प्रयोग मानचित्रों के अनुरेखण के लिए किया जाता है। इस मेज की ऊपरी सतह पारदर्शी कांच की चादर से निर्मित होती है तथा इस चादर के नीचे बिजली के बल्ब या ट्यूब लगी होती हैं (चित्र 1.2)। किसी मानचित्र का अनुरेखण करने के पूर्व उसे मेज पर ठीक से रखकर बल्ब को जला देते हैं जिससे कांच की चादर पर रखे मानचित्र का प्रतिबिम्ब उसके ऊपर रखे ड्राइंग पेपर पर स्पष्ट होने लगता है। इस प्रतिबिम्ब के ऊपर पेन्सिल फेरने से मूल मानचित्र ड्राइंग पेपर पर अनुरेखित हो जाता है।

'(ii) **आरेख पट्ट** (Drawing Board)– सामान्यतया किसी मानचित्र को आरेख पट्ट पर रख कर बनाते हैं। आरेख पट्ट तथा उसके टी–स्क्वेयर भली–भांति सुखायी गयी किसी मुलायम लकड़ी के बने होते हैं। इसीलिए मौसम के परिवर्तन का इन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। ड्राइंग पेपर पर आरेख पट्ट के किसी भी किनारे से समान्तर रेखाएं खींचने हेतु टी–स्क्वेयर का प्रयोग किया जाता है। ये विभिन्न आकार में उपलब्ध होते हैं। इनपर ड्राइंग पेपर या अनुरेखण कागज को स्थिर अवस्था में रखने के लिए बोर्डपिन अथवा सेलोफेन टेप (Cellophane Tape) की आवश्यकता होती है।

(iii) **फ्रेन्च वक्र तथा लचीले वक्र** (French Curves and FleÛible Curves)– फ्रेन्च वक्र सेलुलाइड की पतली चादर को काटकर बनाये जाते हैं तथा ये भिन्न–भिन्न आकृति वाले होते हैं। वक्राकार रेखायें जैसे अक्षांश एवँ देशान्तर रेखायें बनाने के लिए इन वक्रों का प्रयोग किया जाता है। वक्राकार रेखायें खींचने के लिए फ्रेंच वक्रों की तुलना में लचीले वक्र अधिक उपयोगी होते हैं। इनकी आकृति कमर में बांधी जाने वाली पेटी के समान होती है तथा इसे कागज पर किसी भी आकृति में मोड़ कर रखा जा सकता है।

इनके अतिरिक्त अन्य बहुत से आरेखण के साधनों यथा–मापनी (Scale), चांदा (Protractor), सैट–स्क्वेयर्स (Set & squares), समान्तर रेखक (Parallel Ruler) आदि की आवश्यकता मानचित्र निर्माण के लिए पड़ती है।

(3) **आरेखण उपकरण** (Drawing Equipments)– मानचित्रण के लिए सामान्यतः निम्न उपकरणों की आवश्यकता पड़ती है–

(i) **आरेखण पेन** (Drawing Pen)– पेन्सिल से बने मानचित्रों पर स्याही चढ़ाने एवं उसको पक्का करने के लिए विभिन्न प्रकार की आरेखण कलमों का प्रयोग किया जाता है। इनमें 'लाइनिंग पेन' (Lining Pen), 'रोड पेन' (Road Pen), 'बॉर्डर लाइन पेन' (Border Line Pen), 'स्वाइवल निब पेन' (Swivel Nib Pen), 'कर्व या कन्टूर पेन' (Curve or Contour Pen) तथा 'डॉटिंग पेन' (Dot&ting Pen) मुख्य हैं । इन पेनों के नाम से ही उनकी उपयोगिता को समझा जा सकता है। रेखायें खींचने के लिए 'लाइनिंग पेन', दोहरी समान्तर रेखायें खींचने के लिए 'रोड पेन', मोटी रेखायें बनाने के लिए 'बॉर्डर लाइन पेन' या 'स्वाइवल निब पेन', वक्राकार रेखाओं पर स्याही चढ़ाने के लिए 'कर्व पेन' तथा भिन्न–भिन्न प्रकार की बिन्दुदार रेखायें खींचने के लिए 'डॉटिंग पेन' का प्रयोग किया जाता है। इन पेनों के फलकों में ड्रापर से स्याही भरते हैं। रेखा खींचते समय फलकों के बीच न ही अधिक दूरी होनी चाहिए और न ही एक–दूसरे से बिल्कुल सटे होना चाहिए। इन पेनों को सीधा चलाना चाहिए तथा कार्य समाप्त हो जाने पर फलकों को ढ़ीला कर के उनकी स्याही को कपड़े से साफ करके सुरक्षित रख देना चाहिए।

(ii) **परकार** (Comps)– परकार लोहे या पीतल के बने होते हैं तथा इनमें सेक्टर जोड़ (Sector Joint) होते हैं। ये कई प्रकार के होते हैं जैसे पेन्सिल कम्पास' (Pencil Compass), 'इंक कम्पास' (Ink Compass), 'रोटेटिंग कम्पास'

(Rotating Compass) तथा 'बीम कम्पास' (Beam Compass) आदि। पेन्सिल व इंक कम्पासों से क्रमशः पेन्सिल व स्याही से वृत्त बनाये जाते हैं (चित्र 1.7)। छोटे वृत्तों को बनाने के लिए 'रोटेटिंग कम्पास' तथा बड़े वृत्तों को बनाने के लिए 'बीम कम्पास' का प्रयोग किया जाता है।

(iii) **विभाजक** (Dividers)– यह दो प्रकार के होते हैं– (1) साधारण विभाजक (Simple Dividers) तथा (2) आनुपातिक विभाजक (Pro& portional Dividers) (चित्र 1.8) । मानचित्र पर दो बिन्दुओं के बीच की दूरी नापने तथा समान दूरी के अन्तर पर चिह्न लगाने के लिए साधारण विभाजक को प्रयोग में लाया जाता है। आनुपातिक विभाजक अनियमित चित्रों के लघुकरण तथा विवर्धन में प्रयोग किया जाता है।

(iv) **अक्षर–लेखन यन्त्र** (Lettering instruments)– मुक्त हस्त से अक्षर लिखने के लिए विशेष प्रकार की निबों का प्रयोग किया जाता है। इन निबों की नोक गोल अथवा कलम के समान कटी हो सकती है। ये निब भिन्न–भिन्न मोटाई वाली होती हैं इसीलिए इन्हें नम्बरों से सम्बोधित किया जाता है। महीन अक्षर लिखने के लिए 'क्रो क्विल' (Crow quill) प्रयोग में लाते हैं।

यान्त्रिक विधि से अक्षर लिखने के लिए लीरॉय यन्त्र (Leyroy Instrument), वैरीग्राफ यन्त्र (Varigraph Instrument), हस्त प्रेस मशीन (Hand Press Machin) अथवा भिन्न–भिन्न नम्बरों वाले सादे स्टेनसिल व पेन प्रयोग लाते हैं। लीरॉय यन्त्र में एक स्क्राइबर होता है। इस स्क्राइबर को टैम्पलेट (Template) या स्टेनसिल पटरी में कटे अक्षर में घुमाया जाता है वह अक्षर यन्त्र के दूसरी ओर लगी लेखनी द्वारा मानचित्र पर लिख दिया जाता है। लीरॉय यन्त्र से भिन्न–भिन्न आकार के अक्षर लिखे जा सकते हैं लेकिन इसके लिए अलग–अलग नम्बरों प्लेटों की आवश्यकता होती है। अक्षर लिखते समय टैम्पलेटों को किसी पटरी के सहारे मजबूती से पकड़ा जाता है। एक अक्षर लिखने के पश्चात् पटरी को यथा स्थान पकड़े रखते हैं तथा टैम्पलेट को उसके सहारे इतना हटा देते हैं कि दूसरे इच्छित अक्षर में स्क्राइबर घुमाया जा सके। इसी प्रक्रिया को दोहराते हुए शब्द को पूर्ण कर लेते हैं। वैरीग्राफ यन्त्र में भी टैम्पलेट का प्रयोग होता है परन्तु भिन्न–भिन्न आकार के अक्षर बनाने के लिए इसमें लीरॉय यन्त्र की तरह अलग–अलग टैम्पलेटों की आवश्यकता नहीं होती है। हस्त प्रेस विधि में प्रत्येक शब्द का इस्पात के अक्षरों को जोड़ कर ठप्पा बनाया जाता है। तत्पश्चात् इन ठप्पों पर स्याही लगाकर मानचित्र पर यथास्थान शब्द अंकित कर देते हैं। सादे स्टेन्सिलों से अक्षर लिखने की विधि लीरॉय विधि के समान होती है केवल अन्तर इतना है कि इसमें स्क्राइबर के बजाय पेन को टैम्पलेट के अक्षर में घुमाते हैं।

उपर्युक्त उपकरणों के अतिरिक्त आरेखण मशीन, कागज काटने की मशीन, कागज तथा मानचित्र आदि को सुरक्षित रखने के लिए स्टैन्ड आदि अन्य महत्वपूर्ण उपकरणों की मानचित्रकार को आवश्यकता होती है।

मानचित्रकला (Cartography)– मानचित्रकला विभिन्न वैज्ञानिक प्रविधियों की सहायता से विभिन्न भौगोलिक तथ्यों का कलात्मक मानचित्रण है। मानचित्रकला को विभिन्न विद्वानों ने भिन्न–भिन्न शब्दों में इस तरह परिभाषित किया है–

एफ.जे. मांकहाउस' के अनुसार ''मानचित्रकला में धरातल के वास्तविक सर्वेक्षण से मानचित्र–मुद्रण तक, मानचित्रण के प्रक्रमों की सम्पूर्ण श्रृंखला सम्मिलित होती है।"

इरविन रेज के अनुसार, "मानचित्र, उच्चावच प्रतिरूप, आवीक्षण रेखाचित्र व मानारेख आदि बनाने की कला एवं विज्ञान को मानचित्रकला कहते हैं।

संयुक्त राष्ट्र के सामाजिक विभाग के अनुसार, "सभी प्रकार के मानचित्रों एवं चार्टों की रचना का विज्ञान, जिसमें मूल सर्वेक्षणों से मानचित्र मुद्रित होने तक की जाने वाली प्रत्येक क्रिया सम्मिलित रहती है, मानचित्रकला कहलाता है।

उपर्युक्त परिभाषाओं के अध्ययन से हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि मानचित्रकला मानचित्रण की कला है, जो वर्तमान समय में वैज्ञानिक प्रविधियों की सहायता से मानचित्रण की प्रक्रियाओं से सम्बन्धित है।

इस प्रकार स्पष्ट होता है कि आधुनिक मानचित्रकला कला और विज्ञान दोनों है। इसीलिए इरविन रेज ने अपनी पुस्तक 'जनरल कार्टोग्राफी' (General Cartography) की भूमिका में लिखा है कि "एक मानचित्रकार 50 प्रतिशत भूगोलवेत्ता, 30 प्रतिशत कलाकार, 10 प्रतिशत गणितज्ञ तथा 10 प्रतिशत अन्य विषयों का ज्ञाता होता है।"

1.9 मानचित्रकला का इतिहास

मानचित्रकला का इतिहास स्वयं इतिहास से भी पुराना है। भाषा द्वारा न व्यक्त किये जाने वाले चीजों को आदिम जातियां मानचित्र द्वारा व्यक्त करती थीं और प्रत्येक आदिम मानव उसे समझ लेता था। आदिम युगीन मानचित्रों की रचना सम्भवतः वृक्षों की टहनियों, ताड़ के पत्तों, पशुओं की खालों तथा मिट्टी के टुकड़ों पर की जाती थी। यद्यपि शैक्षणिक ज्ञान न होने पर भी उनके मानचित्र उचित ज्ञान देने में समर्थ थे। भाषा के विकास के साथ–साथ आज भी मानचित्र की वही उपयोगिता है जितना भाषा विहीन युग में थी। वस्तुतः इस कला का उद्‌भव आदि युग में हो चुका था। उस समय से आज तक इस कला का उत्तरोत्तर विकास होता रहा है। विकास के विभिन्न चरणों से होकर गुजरती हुई मानचित्रकला आज एक वैज्ञानिक विषय के रूप में विकसित हो चुकी है। मानचित्र कला के विकास के इतिहास को निम्नलिखित कालों में बांटा जा सकता है–

1. **प्राचीन काल** (The Ancient Period)– इस काल का समय 5000 ईसा पूर्व से 400 ईसा पश्चात् तक माना जाता है। इस काल की मानचित्रकला को पांच भागों में बांट कर अध्ययन किया जा सकता है– (i) प्राचीन आदिम मानचित्रकला, (ii) ग्रीक मानचित्रकला, (iii) रोमन मानचित्रकला, (iv) चीनी मानचित्रकला तथा (अ) **भारतीय मानचित्रकला।**

(i) **प्राचीन आदिम मानचित्रकला** (The Ancient Primitive Cartography)–

मानचित्रकला के विकास में आदिवासियों का प्रयास अत्यन्त सराहनीय रहा है। आदिम मानचित्रों में प्रशान्त महासागर के मार्शल द्वीप वासियों द्वारा ताड़ पत्र की टहनियों एवं सीपों के सहारे बनाये गये जलयात्रा–चार्टों का विशेष स्थान है। इनमें सीपों से द्वीप, सीधी रेखाओं से खुले समुद्र तथा वक्र रेखाओं से द्वीपों की तरफ जाने वाली लहरें प्रदर्शित की जाती थीं। इसी तरह एस्किमो जातियां सील के खाल पर उन प्राकृतिक दृश्यों को अंकित करते थे, जिनका उनके जीवन पर अधिक प्रभाव था । अन्य आदिम जातियों में एजटेकों के मानचित्र अत्यधिक सुसज्जित हैं। उनके मानचित्रों में स्थलाकृतिक विवरणों की अपेक्ष एतिहासिक घटनाओं का चित्रण अधिक होता है। इन मानचित्रों में नदी, मैदान, मार्ग, मन्दिर तथा युद्ध–क्षेत्र आदि सभी विवरण प्राकृतिक चिन्हों द्वारा प्रदर्शित किये गये हैं। हारवर्ड विश्वविद्यालय के सेमाइटी संग्रहालय में रखी गयी मिट्टी की टिकिया पर बना मानचित्र बेबीलोनी मानचित्रकला के विकास का साक्ष्य प्रस्तुत करता है। इस मानचित्र में दो पर्वत श्रेणियों के मध्य एक नदी दिखायी गयी है जो सम्भवतः के इराक की फरात नदी है। मानचित्र के दक्षिणी भाग में कोई झील या समुद्र है जिसमें यह नदी गिरती है।

(iii) **रोमन मानचित्रकला** (Roman Cartography)– मानचित्रकला सम्बन्धी टॉलेमी के उत्कृष्ट विचारों का रोमन काल में ह्रास होने लगा। चूंकि रोमन शासकों का मुख्य उद्देश्य साम्राज्य का विस्तार एवं जीते हुए क्षेत्रों में अपनी शक्ति को संगठित करना था। अधिकांश मानचित्र उपयोग को दृष्टि में रखकर बनाये जाते थे। ये मानचित्र बहुधा सैनिक तथा प्रशासकीय कार्यों के लिए निर्मित किये जाते थे। इसलिए रोमन वैज्ञानिकों का मानचित्रकला के वैज्ञानिक विकास में कोई महत्वपूर्ण योगदान नहीं रहा तथा इनके मानचित्र प्रक्षेप एवं गणितीय गणनाओं से रहित थे। इन्होंने यूनानियों का अनुसरण करने के बजाये पृथ्वी के वृत्ताकार मानचित्र बनाये थे।

इस सम्बन्ध में मारकस विपासेनियस एगरिप्पा (Marcus Vipasanius Agrippa) नामक रोमन मानचित्रकार का नाम विशेष उल्लेखनीय है जिसने 12 ई.पू. में प्रसिद्ध 'ऑरबिस टेरारम' (Orbis Terrarum) अर्थात् 'संसार का सर्वेक्षण' मानचित्र तैयार किया था। इस मानचित्र में एशिया, अफ्रीका तथा यूरोप तीनों महाद्वीपों में एक समिति दिखलायी पड़ती है। इस मानचित्र के लगभग 4/5 भाग पर रोमन साम्राज्य को तथा 1/5 भाग पर शेष संसार को दिखाया गया था। भारत, चीन (Seres) तथा रूस (Sarmatia) को मानचित्र की सीमा पर बहुत छोटा करके

प्रदर्शित किया गया था। अधिकांश रोमन मानचित्र वर्णनात्मक मानचित्र होते थे तथा उनमें स्थानों व युद्धस्थलों के चित्रण के साथ–साथ सड़कों के जाल बने होते थे। 'प्यूटिंजर टेबुल' (Peutinger Table) इस प्रकार के रोमन मानचित्रों का एक अच्छा उदाहरण है। रोमन साम्राज्य का यह मार्ग–मानचित्र सही अर्थों में एक मानरेख (Cartogram) है, जिस पर मार्गों के साथ–साथ 534 छोटे–छोटे चित्र अंकित हैं।

(iv) **चीनी मानचित्रकला** (Chinese Cartography)– चीनी मानचित्रकला सर्वोपरि प्राचीन उत्कृष्ट थी। इस पर पाश्चात्य देशों का कोई भी प्रभाव नहीं था। चीनी साहित्य में मानचित्र का प्रसंग 227 ई. पू. से मिलता है। प्रथम शताब्दी के पश्चात् चीनी साम्राज्य के लगभग प्रत्येक भाग में स्थानीय मानचित्र बनाये जाने लगे थे। इन स्थानीय मानचित्रों को सम्बन्धित करने का श्रेय पिसियू (Pei Hsiu, 224–273 ई.) को है, जिसे 'चीनी मानचित्रकला का पिता' कहा जाता है। पि सियू ने मानचित्रकला के कुछ सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया था, यथा (1) स्थानों की पारस्परिक स्थितियां बतलाने के लिए सरलरेखी जाल की रचना, (2) एक स्थान से दूसरे स्थान की दिशा बोध के लिए मानचित्र का पूर्वाभिमुखीकरण करना, (3) मानचित्र पर दूरियों का शुद्ध संकेत करना, (4) ऊंचे व नीचे भागों को इंगित करना तथा (5) मार्गों के दायें तथा बायें मोड़ों या कोणों पर ध्यान देना।

पिसियू के पश्चात् चीनी मानचित्रकारों ने फारस से जापान तक प्रसरित समस्त क्षेत्र के मानचित्र बनाये थे। इस काल के मानचित्रों में शिह च्वांग (Hsieh Chuang, 421–466 ई.) का काष्ठ मानचित्र बहुत महत्वूर्ण है, क्योंकि इसमें विभिन्न प्रदेशों को अलग–अलग किया जा सकता है। चिया तान (Chia Tan, 730–805 ई.) ने एशिया व उसके समीपवर्ती भाग का 9.14 वर्ग मीटर आकार वाला एक विशालकाय मानचित्र बनाया था। इस मानचित्र का एक भाग उपलब्ध है जिसमें ह्वांग हो तथा चीन की दीवार को प्रदर्शित किया गया है । यह बारहवीं शताब्दी के मानचित्र का प्रतीक है।

(अ) **भारतीय मानचित्रकला** (Indian Car&tography)–

यद्यपि प्राचीन भारतीय विद्वानों द्वारा बनाये गये कोई भी प्रमाणिक मानचित्र उपलब्ध नहीं है। परन्तु ईसा से कई शताब्दी पूर्व वैदिक कालीन ग्रन्थों – वेद, ब्राह्मण ग्रन्थ, आरण्यक, सूत्र व उपनिषद आदि में पृथ्वी की आयु, आकृति एवं आकार, पृथ्वी की दैनिक एवं वार्षिक गति, पृथ्वी के गुरूत्वाकर्षण, नक्षत्र, सूर्य, चन्द्रमा एवं ग्रहों की स्थिति व आकार का सविस्तार स्पष्ट उल्लेख मिलता है। आर्यभट्ट नामक प्रसिद्ध भारतीय खगोलज्ञ ने पांचवीं शताब्दी में अपनी गणनाओं के आधार पर पृथ्वी की परिधि को 39736 किमी., पृथ्वी के अर्द्धव्यास को 12648 किमी. तथा धरातलीय भाग का क्षेत्रफल 634121360 वर्ग किमी. बतलाया था। ये गणनायें पृथ्वी के आकार सम्बन्धी आधुनिक गणनाओं से काफी मिलती–जुलती हैं। पुराणों में समस्त स्थल–खन्डों को सात द्वीपों– (1) जम्बू द्वीप, (2) प्लक्ष द्वीप, (3) शाल्मली द्वीप, (4) कुश द्वीप, (5) क्रोच द्वीप, (6) शक द्वीप तथा (7) पुष्कर द्वीप में विभाजित किया गया है। इन द्वीपों के अनेक देशों और उन देशों के प्रमुख पर्वतों, नदियों, नगरों आदि का वर्णन मिलता है। महाभारत काल (1600–600 ई.पू.) में यहां के विद्वान पृथ्वी को गोल एवं चारों ओर जल से घिरी हुई मानते थे। इन विद्वानों के अनुसार जम्बू दीप के दक्षिण स्थित महासागर का जल खारा एवं उत्तर के महासागर का जल दूधिया था। इस केन्द्रीय द्वीप के मध्यवर्ती भाग में मेरू पर्वत, उत्तर में ऐरावतवर्ष तथा दक्षिणी किनारे पर भारतवर्ष को स्थित माना गया था। इससे स्पष्ट होता है कि प्राचीन काल में भारतीय विद्वानों को मानचित्रकला का ज्ञान अवश्य था।

गोलाकार पृथ्वी की अवधारणा ने प्राचीन भारतीय साहित्य में ऋग्वेद काल से ही अपना स्थान बना लिया था। उन्होंने 479 ई० के सूर्य सिद्धान्त तथा सिद्धान्त शिरोमणी में वर्णित तथ्य के अनुसार पृथ्वी की परिधि का मापन कर लिया था। आर्यभट्ट एवं लल्ला द्वारा गणना के अनुसार 13,608 कि०मी० आज की आधुनिक माप के समकक्ष ही है। उन्होंने देशान्तर एवं अक्षांश की खोज की। ''उन्होंने ऐसे याम्योत्तर की खोज की जो ध्रुवों से जुड़ा था तथा मुख्य याम्योत्तर के उज्जैन से होकर गुजरने की परिकल्पना की, जहाँ उस युग की महत्वपूर्ण वेधशाला स्थित थी। मुख्य याम्योत्तर के आसपास स्थित स्थानों को रेखापुरा के नाम से जाना गया।'' 15 आर्यभट्ट का

विश्वास था कि पृथ्वी गोलाकार है और यह अपनी धुरी पर घूमती है। उन्होंने भूगोल यंत्र (ग्लोब) का वर्णन भी किया एवं समान्तरों एवं याम्योत्तरों का रेखाजाल भी तैयार किया।

वह पूर्णतः दिशा और दिशा निर्धारण की अवधारणा से भिज्ञ थे। हडप्पा एवं मोहनजोदड़ों काल के लोगों तथा ऋग्वेदिक आर्यों को ध्रुव तारा तथा सूर्य की मदद से मुख्य दिशाओं के निर्धारण करने की विधियों का ज्ञान रखते थे। पाराशर तथा वराह मिहिर जैसे खगोलविदों ने भारत को एक कमल के फूल के रूप में चित्रित किया जिसका केन्द्र मध्य देश था। वेदिक काल से ही मानचित्र में पूर्व को शीर्ष पर प्रदर्शित किये जाने की प्राचीन परम्परा थी जो मराठाओं के काल तक जारी रही। 16 सत्पथ ब्राह्मण ने कारण देते हुये कहा ''पूर्व स्वर्ग का द्वार है।'' वास्तव में पौराणिक विद्वानों ने उत्तर को केन्द्र में रखते हुये विश्व को दर्शाया ।

वेदियों में प्रदर्शन से पता चलता है कि उन्हें मापक की अवधारणा का ज्ञान था। शुल्व–सूत्र में मापक के आनुपातिक तौर पर बढ़ाने या घटाने का वर्णन किया गया है। शुल्व–सूत्र वास्तव में प्राचीन हिन्दू सर्वेक्षण की नियमावली है। मानव शुल्व–सूत्र में मापक फीते, शंकु आदि तथा साथ ही दिशा निर्धारण की विभिन्न विधियों का भी का विवरण मिलता है। उन्होंने पर्वतों एवं पहाड़ियों की ऊँचाई की गणना भी की थी।

कैप्टन विलफोर्ड हिन्दू मानचित्रकला पर अपनी आधिकारिक प्रतिक्रिया देते हुये कहते हैं "भौगोलिक खोजों के अतिरिक्त हिन्दुओं के पास पौराणिक तथा खगोलविदों की विधियों पर आधारित विश्व का मानचित्र भी है, जिनमें दूसरा अधिक प्रचलित उनके पास भारत तथा शहरों के मानचित्र हैं जिनमें देशान्तर एवं अक्षांश का कोई प्रश्न ही नहीं है और वो कभी भी समान भाग वाले मापकों का प्रयोग नहीं करते। इस प्रकार का सर्वोत्तम मानचित्र जो मैंने देखा वह नेपाल राज्य का था जिसे हेस्टिन्ग्स को उपहार दिया गया था। इनमें सड़को को लाल रेखाओं से दिखाया गया था तथा नदियों को नीली रेखाओं से। नेपाल घाटी विशुद्ध रूप से चित्रित की गई थी परन्तु मानचित्र की सीमा की ओर सब कुछ मिलाजुला एवं भ्रमपूर्ण था।'' सर हैरी युले के मतानुसार "13वीं शताब्दी के अन्त तक हिन्दू विश्व मानचित्र समुचित भौगोलिक तथ्यों के बजाय हिन्दुओं के पौराणिक मानचित्रकला के अधिक करीब था।"

यद्यपि यूनानियों ने हमें बताया कि भारतीयों को अपने देश के आकार एवं विस्तार का विशुद्ध ज्ञान था। ''टाल्मी ने भारत का आकार विकृत कर दिया। अन्ततः यह 1508 ई० के विश्व मानचित्र में रेक द्वारा संशोधित किया गया। सन् 1565 ई० में बरटेली ने भारतीय साम्राज्य का मानचित्र बनाया। 17वीं शताब्दी के दौरान डच, फ्रेंच, ब्रिटिश तथा जर्मन मानचित्रविदों द्वारा भारत के कई मानचित्र तैयार किये गये। 1769 ईव में भारतीय सर्वेक्षण संस्थान की स्थापना हुई और मेजर जेम्स रेनेल को महासर्वेक्षक नियुक्त किया गया। उन्होने 1776 ई० में बंगाल' बिहार' अवध' इलाहाबाद तथा आगरा एवं दिल्ली के भागों के साथ ही साथ हिन्दूस्तान का वृहत मानचित्र तैयार किया।

भारतीय सर्वेक्षण संस्थान भारत का सर्वेक्षण करने तथा स्थालाकृतिक मानचित्र बनाने हेतु आधिकारिक केन्द्रीय संस्था है। 1905 ई० से यह निरन्तर एक इंच एक मील (1/63,360) के मापक पर भारत के स्थालाकृतिक मानचित्रों की श्रृंखला का बहुरंगी प्रकाशन कर रही है जिसका रूपान्तर अब 1/50,000 (मीट्रिक मापक) के मापक पर कर दिया गया है। भारतीय सर्वेक्षण संस्थान को भूगणतीय सर्वेक्षण एवं हवाई फोटोग्राफी करने का श्रेय प्राप्त है। इसके द्वारा किये गये अन्तर्राष्ट्रीय, राजकीय एवं शहरी तथा उपनगरीय सर्वेक्षण तथा तैयार अभिलेख, सैन्य स्थलों आदि के मानचित्रों को प्रामाणिक तथा कानूनी प्रपत्र का दर्जा प्राप्त है। थल सेना, वायु सेना तथा नौसेना के प्रति इसकी सेवायें अत्यन्त उच्च कोटि की हैं।

राष्ट्रीय एटलस संगठन (एन०ए०ओ०) की स्थापना के साथ ही और इसके द्वारा प्रकाशित भारत के राष्ट्रीय एटलस (1957 ई०) जो कलकत्ता विश्वविद्यालय के प्रोफेसर एस०पी० चटर्जी के दिशा निर्देश में तैयार किया गया था, भारतीय मानचित्रकला ने एक ऐतिहासिक कीर्तिमान बनाया। आज नैटमो (पूर्व एन०ए०ओ०) को भू–उपयोगी मानचित्र, भूस्वरूप मानचित्र, विषयक एटलस (जैसे सिंचाई एटलस, पर्यटन एटलस, भूराजस्व एटलस, तथा सामाजिक–आर्थिक एटलस आदि) तथा शहरी योजनाकरण मानचित्र श्रृंखला बनाने एवं उनके प्रकाशन करने सम्बन्धी वृहत अधिकार प्राप्त है। इसकी एक डिजिटल मानचित्र बनाने का महत्वाकांक्षी योजना भी है।''

इन प्रयासों ने राज्य योजना एटलस, जैसे आन्ध्र प्रदेश, उत्तर प्रदेश एवं केरल आदि, बनाने तथा उनके प्रकाशन हेतु प्रोत्साहित किया है। उत्तर प्रदेश को उत्तर प्रदेश के व्यापार योजना एटलस के प्रकाशन का विशिष्ट श्रेय भी प्राप्त है।

(2) **मध्य काल** (The Medieval Period)– मानचित्रों की प्रकृति के आधार पर मध्यकालीन मानचित्रकला को दो भागों में बांटा जा सकता है– (i) पूर्व मध्यकालीन मानचित्रकला तथा (ii) उत्तर मध्यकालीन मानचित्रकला।

(i) **पूर्व मध्यकालीन मानचित्रकला** (Early Medieval Cartography)– मानचित्रकला के विकास क्रम में इसे यूरोपीय देशों में 'अन्ध युग' (Dark Age). कहा जाता है। यह काल दूसरी से तेरहवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध तक का काल था। इस समय रोमन साम्राज्य का पतन प्रारम्भ हो गया था और इसके साथ ही साथ विज्ञान भी स्थिरता और पतन के अन्धकार से आच्छादित हो गया। इस समय धर्मान्धता की प्रधानता हो गयी तथा प्रकृति के प्रति उत्पन्न जिज्ञासा को ईश्वर के प्रति अविश्वास करार दिया गया। मानचित्रकार भी पृथ्वी के सम्बन्ध में ईसाई धर्म–ग्रन्थों में लिखी बातों को पूर्णतया सत्य समझने लगे। इन्होंने अलौकिकवाद का आश्रय ग्रहण किया और 'टी–इन–ओ' (T&in&O) या 'आर्बिस टेरारम' (Orbis Terrarum) अथवा रोम के चक्रीय मानचित्र का प्राबल्य बढ़ा। फलतः मानचित्र रचना की वैज्ञानिक पद्धति करीब–करीब मृतप्राय हो गयी। मानचित्रों में काल्पनिक राजाओं, राज्यों, पशुओं तथा स्थानों का चित्रण किया जाने लगा। पृथ्वी के आकार को सपाट एवं वृत्ताकार मान कर उस के केन्द्र में यरूसलम (Jerusalem) को प्रदर्शित किया गया एवं ऊपर की ओर स्वर्ग को दिखलाया गया। इस अन्ध युग के 600 मानचित्र मिले हैं। इनमें सर्वश्रेष्ठ हियरफोर्ड (Herefourd) तथा इब्सटोर्फ (Ebstorf) के मानचित्र हैं।

इस युग में जब यूरोप में मानचित्रकला की अवनति हो रही थी ठीक उसी समय अरब देशों के विद्वान यूनानी विद्वानों के पद–चिन्हों पर चल कर अपनी मानचित्रकला को विकसित करने में संलग्न थे। आठवीं शताब्दी में टॉलेमी की पुस्तक 'ज्योग्राफिया'का अरबी में अनुवाद किया गया था। तत्पश्चात् पृथ्वी की परिधि को मापने की यूनानी विधियों को परिष्कृत कर के एक अंश (Degree) की अपेक्षाकृत अधिक शुद्ध लम्बाई ज्ञात की थी। इससे उन्होंने खगोलीय ग्लोब एवं ज्ञात विश्व के मानचित्र बनाये थे तथा प्रक्षेपों का अध्ययन किया था। इनमें इदरीसी (Edrisi) नामक विद्वान का विश्व–मानचित्र, जो उसने 1154 ई. में सिसली के शासक, रोजर द्वितीय (Roger II), के दरबार में बनाया था, जो बहुत महत्वपूर्ण है। एक आयताकार प्रक्षेप पर बने इस मानचित्र में ऊपर की ओर दक्षिण दिशा दिखालाई गयी है।

(ii) **उत्तर मध्यकालीन मानचित्रकला** (Late Medieval Cartography)– तेरहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध से सत्तरहवीं शताब्दी के अन्त तक का समय मानचित्रकला का पुनर्जागरण काल (Renaissance Period) कहलाता है। इस काल में अन्ध युग का प्रभाव समाप्त हो चुका था। टॉलेमी के 'ज्योग्राफिया' को पुनः प्रतिष्ठा मिलने लगी थी और वैज्ञानिक आविष्कारों का युग आ गया था। अनेक खोजी यात्राओं व सर्वेक्षण यन्त्रों के आविष्कार के कारण मानचित्रकला में पर्याप्त विकास हुआ। मार्को पोलो, वास्को–डि–गामा, कोलम्बस, मैग्लेन, कैप्टन कुक आदि की यात्राओं ने अनेक स्थल खण्डों की खोज, उनके विकास और आकृति का अनुमान लगाया, जिससे विश्व के बारे में प्रत्यक्ष जानकारी प्राप्त हुई, जिससे संसार का मानचित्र बनाने में पर्याप्त सहायता मिलने लगी। इसी तरह प्लेन टेबुल एवं थ्योडोलाइट आदि सर्वेक्षण उपकरणों के आविष्कार के साथ ही सर्वेक्षण कला का विकास हुआ, जिससे वैज्ञानिक आधार पर मानचित्रण सम्भव हुआ। मुद्रण और उत्कीर्णन की कला के आविष्कार से इस काल में मानचित्रकला के विकास को और भी प्रोत्साहन मिला।

इस काल के मानचित्रकारों में जुऑन डी ला कोसा (Juan de la Cos) मुख्य था। वह कोलम्बस का सहयात्री था। उसने सन् 1500 में एक विश्व मानचित्र बनाया था, जिसमें केबोट (Cabot) की कनाडा यात्रा एवं वास्को–डि–गामा की भारत यात्रा के समुद्री मार्ग दिखलाये गये थे । इसी तरह वॉल्डसीमुलर (Waldseemuller) ने 1507 ई. में एक विश्व मानचित्र बनाया था, जिसमें पहली बार दोनों अमेरिका महाद्वीपों को स्पष्ट रूप से एशिया महाद्वीप से पृथक दिखलाया गया था। डीगो रिबरो (Diego Ribro) एक पुर्तगाली विद्वान था, जो स्पेन के राजा की सेवा में शाही विश्वरचना–विज्ञ (Royal Cosmographer) पद पर कार्यरत था। उसने सन् 1529 में आधुनिक

मानचित्रों से मिलता–जुलता एक विश्व मानचित्र बनाया था। इस मानचित्र में पहली बार दोनों अमेरिका की स्थिति का सही–सही चित्रण किया गया था तथा प्रशान्त महासागर के विशाल आकार की पुष्टि की गयी थी। मार्टिन बीहेम (Martin Behaim) ने सन् 1492 में सबसे पहले एक ग्लोब की रचना की थी, जिस पर भूमध्य रेखा, कर्क रेखा, मकर रेखा, आर्कटिक व अन्टार्कटिक वृत्तों को खींच कर विश्व का मानचित्र चित्रित किया था।

पुनर्जागरण काल के सर्वाधिक महत्वपूर्ण मानचित्रकार के रूप में जेरार्डस मरकेटर (Gerardus Mercator) का नाम विशेष उल्लेखनीय है जिसे डच मानचित्रकला का जनक माना जाता है। उसकी प्रारम्भिक ख्याति का कारण उसके द्वारा सन् 1554 में बनाया गया यूरोप महाद्वीप का मानचित्र था, जिसमें मरकेटर ने टॉलेमी की भूलों का निराकरण कर के भूमध्यसागर की लम्बाई को घटाकर 53° कर दिया था। परन्तु मरकेटर की सबसे अधिक ख्याति अपने शुद्ध–दिशा एवं यथाकृतिक बेलनाकार प्रक्षेप से प्राप्त हुई थी। अक्षांशों एवं देशान्तरों के समानुपातिक दूरी पर आधारित यह प्रक्षेप नौसंचालन के लिए आज भी उपयुक्त माना जाता है। इस पर यूरोप, एशिया, अफ्रीका, उत्तरी–दक्षिणी अमेरिका एवं दक्षिणी महाद्वीप दिखाये गये हैं । मरकेटर के शिष्यों में अब्राहम आर्टिलियस (Abraham Ortelius) ने सन् 1570 में थियेटरम ऑरबिस टेरारम (Theatrum Orbis Terrarum) नामक विश्व की प्रथम आधुनिक मानचित्रावली प्रकाशित की थी। इस मानचित्रावली के प्रथम संस्करण में 53 मानचित्र तथा सन् 1587 के संस्करण में 108 मानचित्र थे। इसी तरह विलयम जेन्सजान बल्यू (Willem Janszon Blaeu) सन् 1634 में 6 भागों में 'एटलस नोवस' (Atlas Novus) को प्रकाशित किया जिसे उसके पुत्रों एवं पौत्रों ने 'एटलस मेजर' (Atlas Major) के नाम से संशोधित व परिवर्द्धित कर 11 भागों में प्रकाशित किया। इससे डच मानचित्रकला को जहां प्रसिद्ध मिली वहीं सम्पूर्ण यूरोप में मानचित्रों, चार्टों, ग्लोबों की बाढ़ सी आ गयी। फ्रांसीसी मानचित्रकार जैलाट (Jaillot) ने सन् 1681 में 'एटलस नोवो' (Atlas Noveau) प्रकाशित किया। ब्रिटिश मानचित्रकारों में क्रिस्टोफर सैक्सटन (1542–1608 ई.) द्वारा निर्मित मानचित्र और एडवर्ड राइट द्वारा सन् 1599 में बनाया गया विश्व का चार्ट बहुत महत्वपूर्ण है। इसी समय जर्मनी में भी मानचित्रकला का पर्याप्त विकास हुआ। हेनरिक्स मार्टेलस (Henricus Martelus) तथा मार्टिन बेहेम (Martin Behaim) उल्लेखनीय जर्मनी मानचित्रकार थे।

(3) **आधुनिक काल** (The Modern Period)– आधुनिक काल का प्रारम्भ सत्तरहवीं शताब्दी से माना जाता है। इस काल में मानचित्रकला में एक नवीन वैचारिक क्रान्ति आयी। इसका प्रमुख कारण वैज्ञानिक चिन्तन का विकास था। इससे मानचित्र कला में अवैज्ञानिक दृष्टिकोण के स्थान पर वैज्ञानिक दृष्टिकोण का सूत्रपात हुआ। नौकायन इस समय की एक मुख्य समस्या थी जिसके समाधान हेतु स्थल एवं जल खण्डों का विस्तार, पृथ्वी के आकार, आकृति तथा अक्षांशों एवं देशान्तरों का यथार्थ ज्ञान आवश्यक था। सैनिक कार्यों के लिए भी भूमि सर्वेक्षण की मांग बढ़ रही थी। इसी से प्रभावित होकर अनेक सर्वेक्षण यन्त्रों और तकनीकों का विकास हुआ, जिससे विभिन्न उद्देश्यों के अनुसार पृथ्वी का मानचित्रण किया जाने लगा। एशिया, अफ्रीका तथा उत्तरी एवं दक्षिणी अमेरिका के विभिन्न देशों में प्रसरित यूरोपीय देशों के उपनिवेशों के कारण उनका विस्तृत सर्वेक्षण एवं मानचित्रण भी सम्भव हुआ। कालान्तर में हवाई छायाचित्रण, दूर संवेदन एवं कम्प्यूटर के आविष्कार के विकास क्रम के अनुसार आधुनिक काल को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है– (i) पूर्व आधुनिककालीन मानचित्रकला तथा (ii) उत्तर आधुनिककालीन मानचित्रकला।

(i) **पूर्व आधुनिककालीन मानचित्रकला** (Early Modern Cartography)– इसका समय सत्तरहवीं शताब्दी से उन्नीसवीं शताब्दी तक माना जा सकता है। इस समय अनेक सर्वेक्षण यन्त्रों यथा–सेक्सटैन्ट, क्लाइनोमीटर, थियोडोलाइट, डम्पी लेविल आदि तथा प्रक्षेपों के विकास के कारण मानचित्रकला का तेजी से विकास हुआ। धरातलीय भू–भागों के विस्तृत सर्वेक्षण और मानचित्रण के लिए अनेक देशों में स्वतन्त्र विभाग स्थापित किये गये। सर्वप्रथम सत्तरहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में फ्रांस में एक आकादमी की स्थापना की गयी, जिसमें अक्षांश एवं देशान्तर रेखाओं के मापने के पश्चात् सन् 1682 में विश्व मानचित्र का निर्माण किया गया। अठ्ठारहवीं शताब्दी के अन्त तक फ्रांस के स्थलाकृतिक सर्वेक्षण व मानचित्रण से प्रभावित होकर अन्य यूरोपीय व विश्व के अन्य देशों में स्थलाकृतिक सर्वेक्षण व मानचित्रण लोकप्रिय होता गया। विभिन्न देशों में राष्ट्रीय सर्वेक्षण विभाग की स्थापना की गयी। इसी क्रम में ग्रेट ब्रिटेन में सन् 1765 में, भारत में सन् 1767 में, श्रीलंका में सन् 1800 में, फ्रांस में सन् 1817 में तथा संयुक्त राज्य

अमेरिका में सन् 1882 में सर्वेक्षण विभागों की स्थापना हुई थी। 1:1000000 तथा इससे बड़ी मापनियों पर मानचित्रों की रचना करने के लिए इन विभागों ने अपने–अपने देशों में विस्तृत भू–सर्वेक्षण किया जिससे मानचित्रकला का तेजी से विकास हुआ। विभिन्न प्रक्षेपों पर अभीष्ट उद्देश्यों के अनुसार मानचित्र बनाये जाने लगे। मानचित्रों के आरेखण एवं उनमें विवरणों को प्रदर्शित करने की विधियों में पर्याप्त संशोधन हुआ। फिलिप बुआचे, हन्स कोनॉड गीगर, जे.जी. लेहमान, मिलट डी मरकन आदि विद्वानों ने मानचित्रण में हैश्यूर, समोच्च रेखाओं, प्रतीकों व छायाओं का प्रयोग किया। फलतः मानचित्र अधिक उपयोगी, प्रभावोत्पादक तथा दृष्टिक दृष्टिकोण से बोधगम्य होते गये।

पूर्व आधुनिक काल के उत्तरार्द्ध में मानचित्रण सम्बन्धी अनेक यन्त्रों का तेजी से विकास हुआ। लिथो मुद्रण, मोम–नक्काशी, फोटो उत्कीर्णन, फोटो स्टेट, ब्लू प्रिन्ट तथा रंगीन फोटोग्राफी आदि के प्रयोग तथा विभिन्न तथ्यों के यथार्थ प्रदर्शन के लिए आरेखों, मानारेखों तथा वितरण मानचित्रों का विकास हुआ। इसीलिए इस काल के निर्मित मानचित्र अधिक प्रभावोत्पादक एवं बोधगम्य बन गये।

(ii) **उत्तर आधुनिककालीन मानचित्रकला** (Late Modern Cortography)– इस काल का प्रारम्भ बीसवीं शताब्दी से माना जाता है। इस समय तक मानचित्रकला पूरी तरह विकसित हो गयी थी। इसी समय अन्तर्राष्ट्रीय मानचित्रावली तथा विभिन्न देशों की राष्ट्रीय मानचित्रावलियों का प्रकाशन हुआ। राष्ट्रीय मानचित्रावलियों में देश विशेष के धरातल, भूवैज्ञानिक संरचना, जलवायु, मिट्टियाँ, प्राकृतिक वनस्पति, प्रवाह प्रणाली, जनसंख्या, अर्थव्यवस्था, परिवहन एवं संचार साधन, स्वास्थ्य तथा समाज–सांस्कृतिक दशा आदि के सम्बन्ध में सभी ज्ञात सूचनाओं को मानचित्रों, आरेखों एवं मानारेखों के द्वारा प्रदर्शित किया जाता है। अतः इन मानचित्रावलियों से किसी देश के भौगोलिक अध्ययन में महत्वपूर्ण मदद मिलती है। फ्रांस, स्वीडन, फिनलैन्ड, स्कॉटलैन्ड, संयुक्त राज्य अमेरिका, सोवियत रूस तथा भारत आदि देशों में इस प्रकार की मानचित्रावलियां प्रकाशित हो चुकी हैं।

मानचित्रण की तकनीकों में क्रान्तिकारी परिवर्तन मुद्रण तकनीक के विकास एवं कम्प्यूटर के विकास से सम्भव हुआ। सन् 1960 के बाद इस दिशा में और ज्यादा परिवर्तन आया है क्योंकि हवाई फोटोग्राफी के विकास से विभिन्न धरातलीय तथ्यों के परिवर्तनशील प्रतिरूपों का मानचित्रण तेजी से सम्भव हुआ है। हवाई फोटोग्राफी में विभिन्न क्षेत्रों का छवि चित्र निर्माण और उसके आधार पर धरातल के त्रिविमीय स्वरूप का मानचित्रण विकसित हुआ है। इसी लिए कोई भी अविकसित, अज्ञात तथा दुरूह क्षेत्र मापनी, आकार और विस्तार के सन्दर्भ में यथार्थ रूप में मानचित्रण की परिधि में आ गया है। इससे आगे चलकर दूर संवेद (Remote Sensing) तकनीक के अन्तर्गत कृत्रिम उपग्रहों के माध्यम से डिजिटल मानचित्र बनाये जाने लगे हैं। इससे सर्वेक्षण में लगने वाले समय, धन व श्रम में पर्याप्त बचत हुई है। इसी प्रकार वर्तमान समय में सम्पूर्ण मानचित्रकला, भौगोलिक सूचना तन्त्र (Geographical Information System G-I-S.) के माध्यम से कम्प्यूटर आधारित तकनीकों में परिवर्तित हो गयी है। अनेक ऐसे साफ्टवेयर विकसित किये गये हैं जिनका प्रयोग करके वैज्ञानिक मानचित्रण सम्भव हुआ है। अतः हम कह सकते हैं कि मानचित्रकला एक विकसित विज्ञान है।

1.10 मानचित्र कला में भारतीय योगदान

प्राचीन सन्दर्भों के अवलोकन से पता चलता है कि ''प्राचीन भारतीयों ने मानचित्रकला के क्षेत्र में वृहत योगदान दिया है एवं भौगोलिक परिदृश्यों के अन्वेषण हेतु अनेक वैज्ञानिक सिद्धान्तों एवं तकनीको का प्रतिपादन किया था।' 1" ऋग्वेद के अनुसार शीर्ष परमसत्ता को एक अण्डा उत्पन्न करने का श्रेय जाता है जो सम्पूर्ण विश्व की उत्पत्ति का आधार बना। विष्णु पुराण में भी इसी दृष्टिकोण का प्रतिपादन किया गया है जिसमें सांसारिक अण्डे के सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड के प्रतीक सात चक्रों से घिरे होने की परिकल्पना की गई है। 13 इसके उपरान्त के साहित्य में ब्रह्माण्ड जिनमें भू (पृथ्वी), भुवः (वातावरणीय क्षेत्र) तथा स्वः आदि सम्मिलित किये गये, को 14 लोकों में विभाजित किया गया। पौराणिक लेखकों ने एक ऐसे विश्व की परिकल्पना की जो सात समकेन्द्रों वाले महाद्वीपों से बना था तथा जिनका विभाजन समुद्रों द्वारा किया गया था। इन द्वीपीय महाद्वीपों को वर्षों में विभाजित किया गया, भारतवर्ष सर्वाधिक केन्द्र स्थित महाद्वीप जम्बू द्वीप का भाग था।

गोलाकार पृथ्वी की अवधारणा ने प्राचीन भारतीय साहित्य में ऋग्वेद काल से ही अपना स्थान बना लिया था। उन्होंने 479 ई० के सूर्य सिद्धान्त तथा सिद्धान्त शिरोमणी में वर्णित तथ्य के अनुसार पृथ्वी की परिधि का

मापन कर लिया था। आर्यभट्ट एवं लल्ला द्वारा गणना के अनुसार 13,608 कि०मी० आज की आधुनिक माप के समकक्ष ही है। उन्होंने देशान्तर एवं अक्षांश की खोज की। ''उन्होंने ऐसे याम्योत्तर की खोज की जो ध्रुवों से जुड़ा था तथा मुख्य याम्योत्तर के उज्जैन से होकर गुजरने की परिकल्पना की, जहाँ उस युग की महत्वपूर्ण वेधशाला स्थित थी। मुख्य याम्योत्तर के आसपास स्थित स्थानों को रेखापुरा के नाम से जाना गया।'' आर्यभट्ट का विश्वास था कि पृथ्वी गोलाकार है और यह अपनी धुरी पर घूमती है। उन्होंने भूगोला यंत्र (ग्लोब) का वर्णन भी किया एवं समान्तरों एवं याम्योत्तरों का रेखाजाल भी तैयार किया।

वह पूर्णतः दिशा और दिशा निर्धारण की अवधारणा से भिज्ञ थे। हडप्पा एवं मोहनजोदड़ों काल के लोगों तथा ऋग्वेदिक आर्यों को ध्रुव तारा तथा सूर्य की मदद से मुख्य दिशाओं के निर्धारण करने की विधियों का ज्ञान रखते थे। पाराशर तथा वराह मिहिर जैसे खगोलविदों ने भारत को एक कमल के फूल के रूप में चित्रित किया जिसका केन्द्र मध्य देश था।

वेदिक काल से ही मानचित्र में पूर्व को शीर्ष पर प्रदर्शित किये जाने की प्राचीन परम्परा थी जो मराठाओं के काल तक जारी रही। 16 सत्पथ ब्राह्मण ने कारण देते हुये कहा "पूर्व स्वर्ग का द्वार है।'' वास्तव में पौराणिक विद्वानों ने उत्तर को केन्द्र में रखते हुये विश्व को दर्शाया (Ns|dk)। वेदियों में प्रदर्शन से पता चलता है कि उन्हें मापक की अवधारणा का ज्ञान था। शुल्व–सूत्र में मापक के आनुपातिक तौर पर बढ़ाने या घटाने का वर्णन किया गया है। शुल्व–सूत्र वास्तव में प्राचीन हिन्दू सर्वेक्षण की नियमावली हैं। मानव शुल्व–सूत्र में मापक फीते, शंकु आदि तथा साथ ही दिशा निर्धारण की विभिन्न विधियों का भी का विवरण मिलता है। उन्होंने पर्वतों एवं पहाड़ियों की ऊँचाई की गणना भी की थी।

कैप्टन विलफोर्ड हिन्दू मानचित्रकला पर अपनी आधिकारिक प्रतिक्रिया देते हुये कहते हैं "भौगोलिक खोजों के अतिरिक्त हिन्दुओं के पास पौराणिक तथा खगोलविदों की विधियों पर आधारित विश्व का मानचित्र भी है, जिनमें दूसरा अधिक प्रचलित है। उनके पास भारत तथा शहरों के मानचित्र हैं जिनमें देशान्तर एवं अक्षांश का कोई प्रश्न ही नहीं है और वो कभी भी समान भाग वाले मापकों का प्रयोग नहीं करते। इस प्रकार का सर्वोत्तम मानचित्र जो मैंने देखा वह नेपाल राज्य का था जिसे हेस्टिन्ग्स को उपहार दिया गया था। इनमें सड़को को लाल रेखाओं से दिखाया गया था तथा नदियों को नीली रेखाओं से। नेपाल घाटी विशुद्ध रूप से चित्रित की गई थी परन्तु मानचित्र की सीमा की ओर सब कुछ मिलाजुला एवं भ्रमपूर्ण था।''
सर हैरी युले के मतानुसार "13वीं शताब्दी के अन्त तक हिन्दू विश्व मानचित्र समुचित भौगोलिक तथ्यों के बजाय हिन्दुओं के पौराणिक मानचित्रकला के अधिक करीब था।"

यद्यपि यूनानियों ने हमें बताया कि भारतीयों को अपने देश के आकार एवं विस्तार का विशुद्ध ज्ञान था। ''टाल्मी ने भारत का आकार विकृत कर दिया। अन्ततः यह 1508 ई० के विश्व मानचित्र में रेक द्वारा संशोधित किया गया। सन् 1565 ई० में बरटेली ने भारतीय साम्राज्य का मानचित्र बनाया। 17वीं शताब्दी के दौरान डच, फ्रेंच, ब्रिटिश तथा जर्मन मानचित्रविदों द्वारा भारत के कई मानचित्र तैयार किये गये। 1769 ई० में भारतीय सर्वेक्षण संस्थान की स्थापना हुई और मेजर जेम्स रेनेल को महासर्वेक्षक नियुक्त किया उन्होंने 1776 ई० में बंगाल, बिहार, अवध, इलाहाबाद तथा आगरा एवं दिल्ली के भागों के साथ–साथ हिन्दूस्तान का वृहत मानचित्र तैयार किया।

भारतीय सर्वेक्षण संस्थान भारत का सर्वेक्षण करने तथा स्थालाकृतिक मानचित्र बनाने हेतु आधिकारिक केन्द्रीय संस्था है। 1905 ई० से यह निरन्तर एक इंच = एक मील (1/63, 360) के मापक पर भारत के स्थालाकृतिक मानचित्रों की शृंखला का बहुरंगी प्रकाशन कर रही है जिसका रूपान्तर अब 1/50,000 (मीट्रिक मापक) के मापक पर कर दिया गया है। भारतीय सर्वेक्षण संस्थान को भूगणतीय सर्वेक्षण एवं हवाई फोटोग्राफी करने का श्रेय प्राप्त है। इसके द्वारा किये गये अन्तर्राष्ट्रीय, राजकीय एवं शहरी तथा उपनगरीय सर्वेक्षण तथा तैयार अभिलेख, सैन्य स्थलों आदि के मानचित्रों को प्रामाणिक तथा कानूनी प्रपत्र का दर्जा प्राप्त है। थल सेना, वायु सेना तथा नौसेना के प्रति इसकी सेवायें अत्यन्त उच्च कोटि की हैं।

राष्ट्रीय एटलस संगष्ठन (एन०ए०ओ०) की स्थापना के साथ ही और इसके द्वारा प्रकाशित भारत के राष्ट्रीय एटलस (1957 ई०) जो कलकत्ता विश्वविद्यालय के प्रोफेसर एस०पी० चटर्जी के दिशा निर्देश में तैयार

किया गया था, भारतीय मानचित्रकला ने एक ऐतिहासिक कीर्तिमान बनाया। आज नैटमो (पूर्व एन०ए०ओ०) को भूउपयोगी मानचित्र, भूस्वरूप मानचित्र, विषयक एटलस (जैसे सिंचाई एटलस, पर्यटन एटलस, भूराजस्व एटलस, तथा सामाजिक–आर्थिक एटलस आदि) तथा शहरी योजनाकरण मानचित्र श्रृंखला बनाने एवं उनके प्रकाशन करने सम्बन्धी वृहत अधिकार प्राप्त है। इसकी एक डिजिटल मानचित्र बनाने का महत्वाकांक्षी योजना भी है।

इन प्रयासों ने राज्य योजना एटलस, जैसे आन्ध्र प्रदेश, उत्तर प्रदेश एवं केरल आदि, बनाने तथा उनके प्रकाशन हेतु प्रोत्साहित किया है। उत्तर प्रदेश को उत्तर प्रदेश के व्यापार योजना एटलस के प्रकाशन का विशिष्ट श्रेय भी प्राप्त है।

1.11 प्रश्न

प्र०– मानचित्र किसे कहते हैं?

प्र०– मानचित्र के विशिष्ट लक्षणों के नाम बतलाइये।

प्र०– मानचित्र को धरातल का प्रतीकात्मक निरूपण क्यों कहा जाता है?

प्र०– मानचित्रों के वर्गीकरण के प्रमुख आधार बतलाइये।

प्र० मापनी के अनुसार मानचित्र कितने प्रकार के होते हैं?

प्र०– भूकर मानचित्र किसे कहते हैं?

प्र० – हमारे देश में ग्रामों के भूकर मानचित्र किस मापनी पर बनाये गये हैं?

प्र० – स्थलाकृतिक मानचित्र किसे कहते हैं?

प्र० – स्थलाकृतिक मानचित्र किसे कहते हैं?

प्र० – उद्देश्य के अनुसार कौन–कौन से प्रमुख मानचित्र होत हैं?

प्र०. कुछ भौतिक मानचित्रों के नाम बतलाइये।

प्र0. कुछ आर्थिक मानचित्रों के नाम बतलाइये।

प्र०. मानचित्रण में प्रयुक्त प्रविधियों को क्रमानुसार बतलाइये।

प्र०. मापनी का चयन करते समय कौन–कौन सी बातें ध्यान में रखी जाती हैं?

1.12 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची–

1डॉ. एल.आर सिंह – प्रायोगिक भूगोल के सिद्धान्त, शारदा पब्लिकेशन प्रयागराज।

2.प्रो. आर. एल. सिंह –Elements of Practical Geography कल्याणी पब्लिकेशन वाराणसी।

3.प्रो. हीरा लाल–प्रयोगात्मक भूगोल, वसुन्धरा प्रकाशन गोरखपुर।

4.डॉ. आर.सी. तिवारी अभिनव प्रयोगात्मक भूगोल, प्रचालिका पब्लिकेशन, प्रयागराज।

5.प्रो. के. एन. सिंह प्रायोगिक भूगोल के मूलतत्व ज्ञानोदय प्रकाशन गोरखपुर।

6.जे. पी. शर्मा प्रायोगात्मक भूगोल के सरल सिद्धान्त' रस्तोगी पब्लिकेशन मेरठ।

7.डॉ. मोहम्मद हारुन प्रयोगात्मक भूगोल' मिश्रा ट्रेडिंग कारपोरेशन वाराणसी।

इकाई - 2 (Unit - 2)
मानचित्र प्रक्षेप – परिभाषा एवं वर्गीकरण

पाठ संरचना **(Lesson Structure)**

2.1 प्रस्तावना
2.2 उद्देश्य
2.3 मानचित्र प्रक्षेप की परिभाषा
2.3.1 मानचित्र प्रक्षेप का विकास
2.4 मानचित्र प्रक्षेप के प्रमुख तथ्य
2.4.1 अक्षांश
2.4.2 अक्षांश वृत्त
2.4.3 देशान्तर
2.4.4 यामोत्तर
2.4.5 भू–ग्रिड
2.4.6 गोर एवं कटिबन्ध
2.4.7 मापनी
2.5 मानचित्र–प्रक्षेपों का वर्गीकरण
2.5.1 प्रकाश के प्रयोग के आधार पर
2.5.2 रचना विधि के आधार पर
2.5.3 गुण के आधार पर
2.6 सारांश
2.7 बोध प्रश्न
2.8 संदर्भ ग्रन्थ

2.1 प्रस्तावना :

मानचित्रण एक कला है जिसके माध्यम से त्रिविमीय धरातल की रचना मानचित्र के रूप में समतल सतह पर की जाती है। ग्लोब को समतल सतह पर प्रदर्शित करने के लिए प्रक्षेप की आवश्यकता है। ग्लोब पर अक्षांश रेखाओं के जाल को प्रक्षेप की सहायता से समतल कागज पर बनाकर मानचित्र की रचना की जाती है। समस्त पृथ्वी अथवा उसके किसी भाग का समलत सतह पर मानचित्र बनाने के लिए प्रक्षेप का उपयोग किया जाता है। प्रक्षेप बनाने की कला की शुरूआत लगभग दो हजार वर्ष पूर्व ग्रीक विद्वानों ने गणितीय विधि के आधार पर की थी।

2.2 उद्देश्य:

इस इकाई के अध्ययन का अधोलिखित उद्देश्य है–

1. प्रक्षेप के अर्थ की व्याख्या करना ।
2. प्रक्षेप के विकास में विद्वानों के योगदान को व्याख्या करना
3. प्रक्षेपों के प्रकार के बारे में जानना

2.3 मानचित्र प्रक्षेप की परिभाषा :

प्रक्षेप मानचित्र बनाने की महत्वपूर्ण तकनीक है। प्रक्षेप का तात्पर्य होता है प्रकाश की सहायता से किसी चित्र को दीवाल या कपड़े पर प्रदर्शित करना। उदाहरण स्वरूप किसी सिनेमा हाल में छोटी आकार की फिल्म को बड़ी आकार की फिल्म में प्रदर्शित किया जाता है। इसी प्रकार से अक्षांश–देशांतर के जाल से बने ग्लोब पर जब

प्रकाश डाला जाता है तो पीछे की सतह पर उसके अनुकृति की छाया पड़ती है। इस प्रकार से स्पष्ट है कि प्रक्षेपों द्वारा ग्लोबीय धरातल को समतल सतह पर मानचित्रित किया जाता है। प्रक्षेप द्वारा निर्मित मानचित्र में क्षेत्रफल, विस्तार तथा विभिन्न स्थानों की सापेक्षिक स्थिति ग्लोब के समरूप ही रहती है। विभिन्न विद्वानों प्रक्षेप की परिभाषा अधोलिखित प्रकार से दी है–

इरविन रेज (Erwin Raisz) के अनुसार ,'अक्षांश वृत्तों तथा यामोत्तर का ऐसा व्यवस्थित क्रम, जिस मानचित्र बनाया जा सके, प्रक्षेप कहा जा सकता है'

'A projection can be defiend as….any orderly system of parallels and meridians on which a can be drawn.'

एफ.जे. मॉकहाडस (F.J. Monkhouse) के अनुसार ,' पृथ्वी के अक्षांश वृत्तों तथा याम्योत्तरों का जाल या रेखाजाल के रूप में समतल सतह में प्रदर्शन मानचित्र प्रक्षेप कहलाता है।

' A map-projection is some method of representing on a sheet of paper the lines of latitude and longitude of the globe.'

जे.ए. स्टीयर्स (J.A,Steers) के अनुसार, 'मानचित्र–प्रक्षेप ग्लोब की अक्षांश व देशान्तर रेखाओं को सपाट कागज पर प्रदर्शित करने एक विधि है।'

' A map projection is a means of representing the lines of latitude and longitude of the globe on a flat sheet of paper.'

2.3.1 मानचित्र प्रक्षेप का विकास

प्रक्षेप बनाने की कला की शुरूआत लगभग दो हजार वर्ष पूर्व यूनानी विद्वानों ने किया था। पृथ्वी की गोलाकार आकृति का ज्ञान यूनानी विद्वानों को हो गया था। ऐसा माना जाता है कि प्रथम प्रक्षेप के निमार्ण 600 ईसा पूर्व मिलेटस के थेल्स ने किया था। थेल्स ने नोमानिक प्रक्षेप का प्रयोग कर खगोल मानचित्र का निर्माण किया था। इरेटास्थनीज (276–196 ईसा पूर्व) ने ज्यामितीय विधि से पृथ्वी की परिधि को मापा और तत्कालीन विश्व का मानचित्र निर्मित किया जिसमें सात अक्षांश एवं सात देशान्तर रेखाएं प्रदर्शित की गयी थी। 150 ईसा पूर्व यूनानी खगोलशास्त्री एवं गणितज्ञ हिप्पार्कस ने इरेटास्थनीज के मानचित्र में संशोधन कर विश्व का मानचित्र बनाया जिसमें 11 अक्षांश रेखाएं समान दूरी पर अंकित थी। हिप्पार्कस ने समरूपीय गोलीय तथा लम्बकोणीय प्रक्षेप बनाने की विधियों को बताया। दूसरी शताब्दी में टाल्मी ने महान ग्रन्थ **'ज्योग्राफिया'** में मानचित्रों का संकलन तथा ग्लोब की रचना एवं प्रक्षेपों के निमार्ण की विधियों का वर्णन किया है। टाल्मी ने ध्रुवीय क्षेत्र का मानचित्र त्रिविम प्रक्षेप पर एवं संसार का मानचित्र शंक्वाकार प्रक्षेप पर निर्मित किया था।

अन्ध युग में धार्मिक मान्यताओं के बढ़ते प्रभुत्व के कारण वैज्ञानिक कार्य के स्थान पर धार्मिक विचारों को बल मिलने लगा। पृथ्वी को तश्तरीनुमा गोल माना जाने लगा और अब 'O' 'T' मानचित्र बनने लगे। इस काल में अरब विद्वानों ने मानचित्र कला का विकास जारी रखा। अरब विद्वानों ने प्राचीन यूनानी गन्थ्रों का अरबी भाषा में अनुवाद कराया। टाल्मी के ग्रन्थ का अध्ययन कर प्रक्षेपों के लिए नवीन गणना की तथा समुद्री मानचित्रों के लिए बेलनाकार प्रक्षेप का प्रयोग किया। 1154 ईसवी में अरब विद्वान इदरीसी ने इस दिशा में महत्वपूर्ण कार्य कर आयताकार प्रक्षेप पर विश्व मानचित्र का निमार्ण किया।

पुर्नजागरण काल में मानचित्र के निमार्ण में एक नया मोड़ लिया महत्वपूर्ण भौगोलिक खोजों ने। इस काल में साहसी खोज यात्राओं एवं नवीन यंत्रों के आविष्कार से मानचित्रकला के क्षेत्र में पुनः प्रगति हुई। मानचित्र प्रक्षेप के निमार्ण के लिए प्रारंभिक गणितीय विधियों का विश्लेषण कर नवीन प्रक्षेपों की रचना की जाने लगी। मार्टिन वाल्डसीमुलर ने 1507 में बोन प्रक्षेप से मिलते जुलते प्रक्षेप का निमार्ण किया। गिरारडस मर्कैटर ने 1559 में यथाकृतिक बेलनाकार प्रक्षेप की रचना की जिस पर विश्व का मानचित्र बनाने के लिए आज भी उपयोग होता है। 1650 में निकोलस सैन्सन ने सिनुसॉयडल प्रक्षेप बनाया जिसे आगे चलकर फ्लैमस्टीड ने प्रयोग किया। इन दोनों विद्वानों के नाम पर इस प्रक्षेप का नाम 'सैन्सन–फ्लैम्स्टीड सिनुसॉयड' प्रक्षेप पड़ा। पहला समक्षेत्र प्रक्षेप बनाने का

श्रेय जोहन हेनरिच लैम्बर्ट को जाता है। इन्होंने समक्षेत्र बेलनाकार, समक्षेत्र खमध्य प्रक्षेप एवं समक्षेत्र शंक्वाकार प्रक्षेप विकसित किया।

19वीं शताब्दी में मानचित्र प्रक्षेप के गणितीय सिद्धान्तों की स्थापना में मानचित्रकारों, भूगणितज्ञों का महत्वपूर्ण योगदान था। इनमें गॉस, टिसोट, एरी, क्लार्क एवं पियर्स प्रमुख विद्वान थे। 19वीं शताब्दी की शुरूआत में स्थलाकृतिक मानचित्र सैन्य संस्थानों द्वारा बड़े पैमाने पर तैयार करायें गये। इस दौरान सरल गणित के अनुप्रयोग का उपयोग करके मालवीड, गाल आदि विद्वानों ने प्रक्षेपों का निमार्ण किया जो उनके नाम से ही प्रसिद्ध है। 20 वीं शताब्दी में मानचित्र प्रक्षेप पर 50 से अधिक मोनोग्राफ अंग्रेजी एवं विभिन्न भाषाओं में प्रकाशित हुए।

2.4 मानचित्र प्रक्षेप के प्रमुख तथ्य

मनचित्र प्रक्षेप को समझने से पहले सम्बन्धित महत्वपूर्ण घटकों के बारे में जानना आवश्यक है, जिसका वर्णन अधोलिखित है–

2.4.1 अक्षांश (Latitude)

अक्षांश ग्लोब पर स्थान निर्धारण के लिए पूर्व एवं पश्चिम दिशा में खींची जाने वाली काल्पनिक रेखा है। अक्षांश रेखा ग्लोब प्रदर्शित की जाने वाली कोणीय दूरी है, जो पृथ्वी के केन्द्र से मापी जाती है तथा अंश, मिनट एवं सेकेंड में प्रदर्शित की जाती है। ग्लोब के मध्य में खींची गयी 0^0 अक्षांश रेखा को भूमध्यरेखा कहते है। यह रेखा ग्लोब को उत्तरी गोलार्द्ध एवं दक्षिणी गोलार्द्ध में विभाजित करती है। इसलिए उत्तरी गोलार्द्ध की अक्षांश रेखा को उत्तरी अक्षांश रेखा और दक्षिणी गोलार्द्ध की अक्षांश रेखा को दक्षिणी अक्षांश रेखा कहते है। उत्तरी ध्रुव 90^0 उत्तरी अक्षांश रेखा पर तथा दक्षिणी ध्रुव 90^0 दक्षिणी अक्षांश रेखा पर स्थित होता है। भूमध्यरेखा पर 1^0 अक्षांश की दूरी 110.569 किमी0 एवं ध्रुवों पर 111.700 किमी0 होती है।

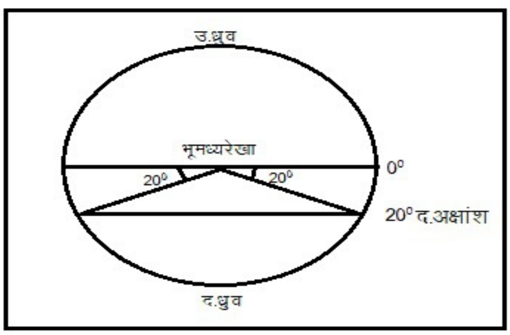

चित्र: 2.1 अक्षांश रेखा

2.4.2 अक्षांश वृत्त (Parallel of latitude)

ग्लोब पर समान अक्षांश वाले बिन्दुओं को मिलाती हुई खींची जाने वाले वृत्तों को अक्षांश वृत्त कहा जाता है। भूमध्यरेखा के उत्तर या दक्षिण में 0^0 से 90^0 मध्य किसी मान का अक्षांश वृत्त बनाया जा सकता है। यह सदैव पूर्व–पश्चिम रेखाओं के रूप में खींचा जाता है। भूमध्यरेखा के उत्तर में स्थित अक्षांश वृत्त को उत्तरी अक्षांश वृत्त तथा दक्षिण में स्थित अक्षांश वृत्तों को दक्षिणी अक्षांश वृत्त कहते है। भूमध्यरेखा वृहत् वृत्त होती है शेष सभी वृत्त लघु वृत्त होते है। ध्रुवों पर अक्षांश वृत्त बिन्दु के रूप में होते है। ग्लोब का प्रत्येक बिन्दु ध्रुवों के अतिरिक्त किसी न किसी अक्षांश वृत्त पर स्थित होता है।

2.4.3 देशान्तर (Longitude)

देशान्तर रेखा ग्लोब पर प्रमुख याम्योत्तर रेखा तथा किसी स्थान के मध्य स्थित अक्षांश वृत्त से मापी गयी कोणीय दूरी होती है। देशान्तर रेखा विषुवत वृत्त को समकोण पर काटती है। वर्ष 1884 में अन्तर्राष्ट्रीय समझौते द्वारा लन्दन के निकट ग्रिविच रॉयल वेधशाला से होकर जाने वाले देशान्तर को प्रमुख देशान्तर (Prime Meridian) मान लिया गया। प्रमुख देशान्तर रेखा का मान 0^0 मानते हुए इसके पूर्व दिशा के देशान्तर रेखाओं को पूर्वी देशान्तर तथा पश्चिम में स्थित देशान्तर रेखाओं को पश्चिमी देशान्तर में गणना की जाती है। देशान्तर रेखाओं का मान ग्रिविच रेखा से पूर्व अथवा पश्चिम में 180^0 के मध्य होता है। भूमध्यरेखा पर 1^0 देशान्तर की दूरी

111.32 किमी0 तथा ध्रुवों पर शून्य होती है। 60^0 अक्षांश पर 1^0 देशान्तर की दूरी भूमध्यरेखा की लगभग आधी होती है। प्रत्येक देशान्तर रेखाओं का एक सिरा उत्तरी ध्रुव तथा दूसरा सिरा दक्षिणी ध्रुव पर मिलते है। सभी देशान्तर रेखाएं समान लम्बाई की उत्तर–दक्षिण दिशा में होती है।

2.4.4 याम्योत्तर (Meridian)

ग्लोब पर समान देशान्तर वाले स्थानों को मिलाकर खींची जाने वाली कल्पित रेखाओं को याम्योत्तर कहते है। प्रत्येक याम्योत्तर एक वृहत्त वृत्त होता है। इसका आधा भाग पूर्वी तथा आधा भाग पश्चिमी देशान्तर रेखा के अन्तर्गत आता है। वृत्त में 360^0 डिग्री होते है इसलिए देशान्तर रेखाओं की संख्या भी 360 होती है। 180 देशान्तर ग्रिविच रेखा के पूर्व में एवं 180 देशान्तर रेखाएं पश्चिम दिशा में होती है। 180^0 पूर्वी एवं पश्चिमी रेखा की एक ही देशान्तर रेखा होती है। प्रमुख यामोत्तर के पूर्वी भाग को पूर्वी गोलार्द्ध तथा पश्चिमी भाग को पश्चिमी गोलार्द्ध कहते है। अतः देशान्तर रेखा से किसी स्थान का पूर्व अथवा पश्चिम में स्थिति का बोध होता है। ग्लोब पर ध्रुवों को छोड़ प्रत्येक बिन्दु की कोई न कोई देशान्तर रेखा होती है।

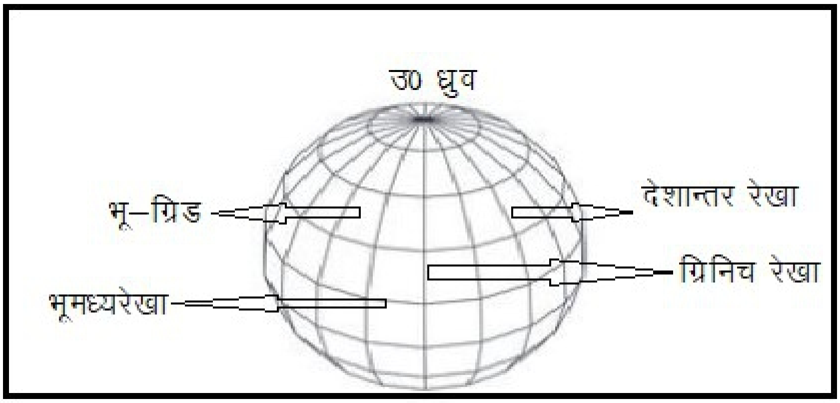

चित्र : 2.2 ग्लोब

2.4.5 भू–ग्रिड (The Earth Grid)

ग्लोब पर अक्षांश वृत्तों तथा याम्योत्तरों के जाल को भू–ग्रिड कहते है। किसी स्थान की अवस्थिति तथा दिशा निर्धारण इसकी सहसयता से करते है। मानचित्र प्रक्षेपों में भू–ग्रिड की रचना समतल कागज पर विभिन्न विधियों से की जाती है।

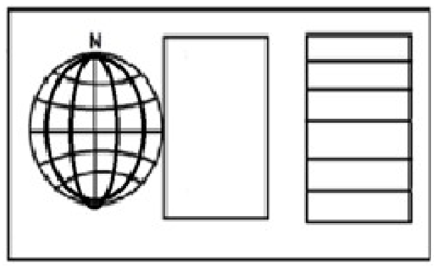

चित्र : 2.4 काल्पनिक ग्लोब रेखाजाल के भूमध्यरेखीय भाग का समलत कागज पर प्रक्षेपण

2.4.6 गोर तथा कटिबन्ध (Gore and Zone)

ग्लोब पर दो देशान्तर रेखाओं के मध्य भाग को गोर तथा दो अक्षांश रेखाओं के मध्य स्थित भाग को कटिबन्ध कहा जाता है।

2.4.7 मापनी (Scale)

प्रक्षेप की रचना मापनी के आधार पर की जाती है। प्रक्षेप बनाते समय पृथ्वी का औसत अर्द्धव्यास 6367.25 किमी (636,725,000 सेमी) अथवा 3956.75 मील (250,699,680 इंच) को कार्य सरल बनाने के लिए पृथ्वी की अर्द्धव्यास की लम्बाई 635,000,000 सेमी अथवा 250,000,000 इंच मानकर रचना की जाती है। प्रक्षेप की रचना करते समय लघुकृत गोले का अर्द्धव्यास को मापनी से पृथ्वी के अर्द्धव्यास में भाग देकर ज्ञात कर लेते है। उदाहरण के लिए यदि 1 / 125,000,000 मापनी पर प्रक्षेप की रचना करनी है तो –

ग्लोब का अर्द्धव्यास = पृथ्वी का वास्तविक अर्द्धव्यास / प्रदर्शक भिन्न

$$\text{लघुकृत गोले का अर्द्धव्यास} = \frac{635000000}{12500000}$$

$$= 5.08 \text{ सेमी}$$

2.5 मानचित्र–प्रक्षेपों का वर्गीकरण

प्रक्षेपों का वर्गीकरण रचना प्रकाश के प्रयोग,रचना विधि एवं गुण के आधार पर अधोलिखित प्रकार से वर्गीकृत किया जाता है–

2.5.1 प्रकाश की स्थिति के आधार पर वर्गीकरण

प्रकाश की स्थिति के आधार पर मानचित्र प्रक्षेपों को दो भागों में विभाजित किया जाता है–

2.5.1.1 संदर्श प्रक्षेप (Perspective Projection)

ग्लोब के अक्षांश–देशान्तर रेखाओं के जाल के किसी निश्चित बिन्दु पर प्रकाश डाल कर उसकी छाया को समतल कागज पर प्रक्षेपित कर संदर्श प्रक्षेप बनते है। अक्षांश वृत्तों एवं देशान्तरों के छाया को पेन्सिल या फोटोग्राफ द्वारा स्थायी चित्र प्राप्त कर लिया जाता है। ग्लोब पर प्रकाश की स्थिति के अनुसार समतल कागज को स्पर्श करने वाले अक्षांश एवं देशान्तर के आधार पर इसका वर्गीकरण किया जाता है। उदाहरणार्थ यदि प्रकाश को ग्लोब के केन्द्र पर मानकर उस पर उत्तरी ध्रुव पर समतल कागज (चित्र : 2.1) को रखते है तो उसकी छाया समतल कागज पर उत्तरी ध्रुव केन्द्र में और अक्षांश रेखाएं वृत्ताकार तथा देशान्तर रेखा सरल रेखा के रूप में प्रदर्शित होगी।

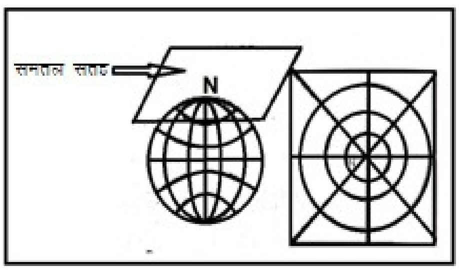

चित्र : 2.3 ग्लोबीय रेखाजाल के ध्रुवीय क्षेत्र का समतल कागज पर प्रक्षेपण

यदि प्रकाश की स्थिति को भूमध्यरेखा के केन्द्र पर रखते है तथा समतल कागज को भूमध्यरेखा (चित्र : 2.2) से स्पर्श कराते है तो ग्लोब से प्रक्षेपित प्रकाश द्वारा अक्षांश एवं देशान्तर रेखाएं समतल कागज पर सीधी रेखाओं के रूप में प्रदर्शित होगी। अतः इसी प्रकार से प्रकाश का प्रयोग कर अक्षांश एवं देशान्तर रेखाओं को प्रक्षेपित कर संदर्श प्रक्षेप की रचना की जाती है।

2.5.1.2 असंदर्श प्रक्षेप (Non-perspective Projection)

संदर्श प्रक्षेपों में गणितीय विधि का प्रयोग कर संशोधित प्रक्षेप को असंदर्श प्रक्षेप कहा जाता है। इस प्रकार से आवश्यकतानुसार प्रक्षेपों की रचना में परिवर्तन करके यथाकृतिक, समक्षेत्र एवं शुद्ध दिशा प्रदर्शित करने वाला मानचित्र बनाया जा सकता है जो संदर्श प्रक्षेप से अधिक उपयोगी होता है।

2.5.2 रचना–विधि के आधार पर प्रक्षेपों का वर्गीकरण

प्रक्षेप की रचना विधि के आधार पर इसे चार वर्गो में विभाजित किया जाता है–

1. शंकु प्रक्षेप
2. बेलनाकार प्रक्षेप
3. खमध्य प्रक्षेप
4. रूढ़ प्रक्षेप

2.5.2.1 शंकु प्रक्षेप (Conical Projection)

शंकु एक ज्यामितीय आकृति है। इस आकृति का प्रयोग कर प्रक्षेप की रचना की जाती है। यह इस सिद्धान्त पर आधारित है कि ग्लोब पर निर्मित भू–ग्रिड को कागज के शंकु पर प्रक्षेपित कर लेने के पश्चात शंक्वाकार कागज को समतल रूप से फैलाने पर आधारित है। इस विधि में यह कल्पना कर ली जाती है कि ग्लोब के किसी ध्रुव पर शंक्वाकार कागज रखा हुआ है। शंकु किसी एक अक्षांश पर ग्लोब को स्पर्श करता है तथा प्रकाश की स्थिति ग्लोब के केन्द्र में है। शंकु ग्लोब को जिस अक्षांश पर स्पर्श करता है उसे मानक अक्षांश कहा जाता है। इस मानक अक्षांश की आकृति वृत्त के चाप के समान होती है। सभी अक्षांश रेखाएं वृत्ताकार होती है तथा देशान्तर रेखाएं ध्रुव से सरल रेखाओं के रूप में निकलती है तथा अक्षांश को समकोण पर काटती है।

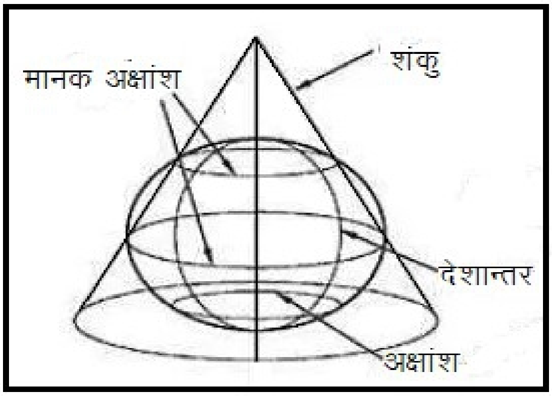

चित्र : 2.5 शंकु प्रक्षेप

शंकु प्रक्षेप में प्रमुख रूप से अधोलिखित प्रक्षेप आते है–

1. एक मानक अक्षांश शंकु प्रक्षेप।
2. दो मानक अक्षांश वाला शंकु प्रक्षेप।
3. बोन प्रक्षेप।
4. बहुशंकु प्रक्षेप।
5. अन्तर्राष्ट्रीय प्रक्षेप।

उपरोक्त प्रक्षेप और उनकी रचना विधि के बारे में इकाई तीन में अध्ययन करेंगे। शंकु प्रक्षेप विशेषताएं निम्नलिखित है–

विशेषताएं –

1. इस प्रक्षेप की रचना बहुत ही आसान है।
2. शंकु प्रक्षेप पर दोनों गोलार्द्धों में मध्य अक्षांशीय और पूर्व–पश्चिम में अधिक विस्तार वाले देशों या शीतोष्ण कटिबन्धीय क्षेत्रों के मानचित्र बनाने के लिए उपयुक्त होता है।
3. शंकु प्रक्षेप पर मापनी केवल केवल मानक अक्षांश पर शुद्ध होती है। इसका तात्पर्य यह हुआ कि प्रक्षेप इसकी लम्बाई ग्लोब के समान है।
4. इस प्रक्षेप का आकार एवं क्षेत्रफल शुद्ध प्रदर्शित नहीं होता इसलिए सम्पूर्ण पृथ्वी का मानचित्र एक साथ नहीं बनाया जा सकता।
5. भूमध्यरेखीय और ध्रुवीय क्षेत्रों के मानचित्र के लिय यह प्रक्षेप अनुपयुक्त है क्योंकि ध्रुवीय क्षेत्रों में संकुचन एवं भूमध्यरेखीय क्षेत्रों में विर्वधन अधिक हो जाता है।
6. इस प्रक्षेप पर ध्रुव केवल बिन्दु के रूप में प्रदर्शित होता है।

2.5.2.2 बेलनाकार प्रक्षेप (Clindrical Projection)

यह एक प्रकार का प्रक्षेपित प्रक्षेप है। इसमें यह कल्पना की जाती है कि ग्लोब को बेलनाकार कागज के अन्दर रखा जाता है जो भूमध्यरेखा को स्पर्श करता है। प्रकाश की अवस्थिति ग्लोब के केन्द्र में होती है तो अक्षांश

एव देशान्तर के रेखाजालों का प्रतिबिम्ब कागज पर प्रदर्शित होता है। प्रतिबिम्ब प्रदर्शित होने के पश्चात बेलनाकार कागज को सपाट फैलाने से बने अक्षांश और देशान्तारों के जाल को बेलनाकार प्रक्षेप कहते है। इस प्रक्षेप में सभी अक्षांश रेखाएं भूमध्यरेखा के समान होती है परन्तु भूमध्यरेखा से दूरी भिन्न–भिन्न होती है। देशान्तर रेखाएं सीधी रेखा के रूप में और एक दूसरे से समान दूरी पर होती है। प्रत्येक देशान्तर रेखा अक्षांश रेखा को समकोण पर काटती है जिसके कारण बेलनाकार प्रक्षेप की आकृति आयताकार होती है। बेलनाकार प्रक्षेप में मापनी केवल भूमध्यरेखा पर शुद्ध रहती है।

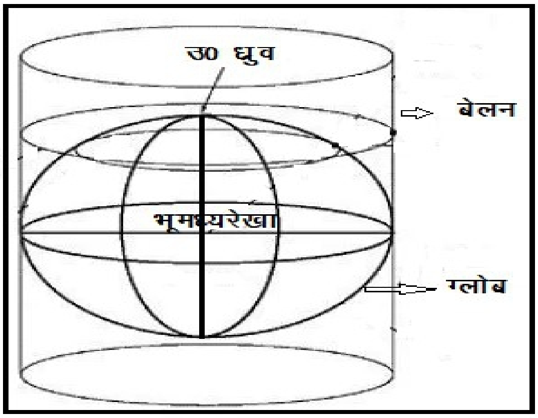

चित्र : 2.6 बेलनाकार प्रक्षेप

बेलनाकार प्रक्षेप के मुख्य प्रकार निम्नलिखित है–

1. यथार्थ अथवा संदर्श बेलनाकार प्रक्षेप।
2. सामान्य अथवा समदूरस्थ बेलनाकार प्रक्षेप।
3. बेलनाकार समक्षेत्र प्रक्षेप।
4. बेलनाकार यथाकृतिक प्रक्षेप
5. गॉल का त्रिविम प्रक्षेप।

उक्त प्रक्षेपों एवं उनकी रचना विधि के बारें में विस्तृत रूप से इकाई 4 एवं 5 में अध्ययन करेंगे। बेलनाकार प्रक्षेप की विशेषताएं निम्नांकित है–

विशेषताएं –

1. बेलनाकार प्रक्षेप की रचना विधि सरल है।
2. अक्षांश एवं देशान्तर रेखाएं दोनो ही सरल रेखाओं द्वारा तथा एक दूसरे के लम्बवत प्रदर्शित होते है।
3. प्रत्येक अक्षांश रेखाएं भूमध्यरेखा के बराबर होती है, परन्तु ध्रुवों की तरफ जाने पर उनके बीच की दूरिया बढ़ने लगती है।
4. भूमध्यरेखीय पर मापनी शुद्ध होती है। अतः भूमध्यरेखीय क्षेत्र के लिए ही मानचित्र बनाने के लिए उपयुक्त है।

उपरोक्त विशेषताओं से स्पष्ट है कि बेलनाकार प्रक्षेपों में भूमध्यरेखा से ध्रुवों की तरफ जाने पर अक्षांश के मापनी में वृद्धि हो जाती है। इस प्रक्षेप में ध्रुव भी भूमध्यरेखा जितनी लम्बी अक्षांश रेखा से प्रदर्शित होती है जबकि ग्लोब पर वह बिन्दु के रूप में प्रदर्शित होती है। देशान्तर रेखा भी ग्लोब से भिन्न प्रदर्शित होती है। सम्पूर्ण अक्षांश एवं देशान्तर रेखाओं का जाल बन जाने के कारण इस प्रक्षेप पर विश्व का मानचित्र बनाया जा सकता है।

2.5.2.3 खमध्य प्रक्षेप (Zenithal Projection)

ग्लोब पर बने हुए अक्षांश तथा देशान्तर रेखाओं के जाल को स्पर्श रेखा तल पर मानी गयी किसी समतल कागज पर प्रक्षेपित कर लेते है, तो इस प्रकार से बने प्रक्षेप को खमध्य प्रक्षेप कहते है। इस प्रक्षेप में केन्द्र से सभी बिन्दुओं की दिशाएं शुद्ध होती है क्योंकि इनका सतह शंकु या बेलनाकार न होकर चौकोर होता है। शुद्ध दिशा सूचक होने के कारण इसे दिगंशीय प्रक्षेप भी कहते है। इस प्रक्षेप में जहां प्रक्षेपण तल ग्लोब को स्पर्श करता है उसे प्रक्षेप केन्द्र कहते हैं तथा जिस बिन्दु पर प्रकाश की कल्पना की जाती है उसे नेत्र स्थान कहते है। इसके

निमार्ण में ग्लोब को उसके केन्द्रीय बिन्दु से ठीक ऊर्ध्व बिन्दु से देखते है। इसी कारण इसे खमध्य प्रक्षेप या शीर्षक प्रक्षेप (Zenithal Projection) कहते है।

स्पर्श तल रेखा की स्थिति (चित्र 2.4) के आधार पर खमध्य प्रक्षेप को तीन भागों में विभाजित करते है–

1. ध्रुवीय खमध्य प्रक्षेप – स्पर्श तल रेखा ग्लोब ध्रुव पर स्पर्श करता है।
2. भूमध्य रेखीय प्रक्षेप – स्पर्श तल रेखा ग्लोब को भूमध्यरेखा पर स्पर्श करता है।
3. तिर्यक खमध्य प्रक्षेप – स्पर्श तल रेखा ग्लोब पर भूमध्यरेखा या ध्रुव के अलावा किसी अन्य स्थान पर स्पर्श करता है।

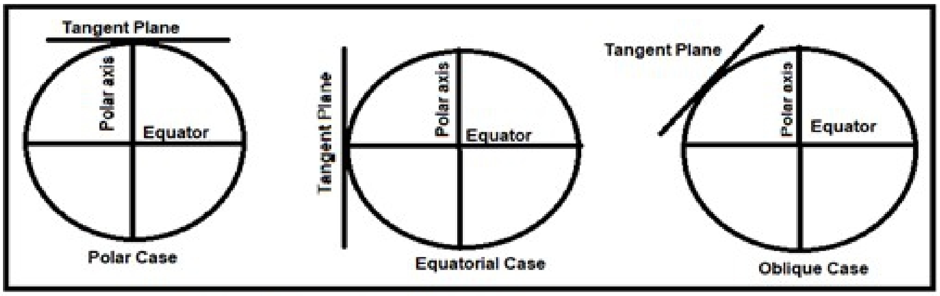

चित्र : 2.6 खमध्य प्रक्षेप के प्रकार

प्रकाश की स्थिति (चित्र : 2.6)के आधार पर खमध्य प्रक्षेप को तीन उप वर्ग में विभाजित करते है–

1. **केन्द्रीय या नोमोनिक प्रक्षेप (Gnomonic Projection)** – प्रकाश की स्थिति जब ग्लोब के केन्द्र (चित्रः 2.7) होते है तो प्रक्षेपित समस्त अक्षांश एवं देशान्तर रेखाओं का प्रतिबिम्ब सरल रेखाओं द्वारा समतल कागज की सतह पर प्रदर्शित हो जाते है। इस प्रक्षेप को केन्द्रीय प्रक्षेप कहते है।

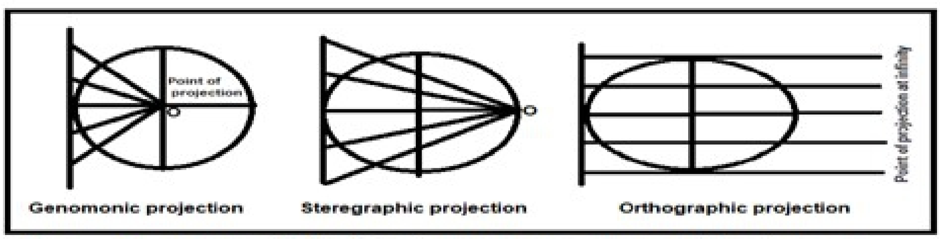

चित्र : 2.7 प्रकाश की स्थिति के आधार पर खमध्य प्रक्षेप के प्रकार

2. **त्रिविम प्रक्षेप (Stereographic projection)** – जब प्रकाश ग्लोब की आन्तरिक परिधि के किसी बिन्दु पर हो जो स्पर्श रेखा के सम्मुख व्यास के दूसरे सिरे पर स्थित मानते है।

3. **लम्बकोणीय प्रक्षेप (Orthographic projection)** – जब प्रकाश का स्रोत ग्लोब के बाहर अन्नत स्थिति में हो तो इस अवस्था में प्रकाश की किरणें सरल एवं समानान्तर होती है।

प्रक्षेपण तल की स्थिति के अनुसार नोमोनिक, त्रिविम एवं लम्बकोणीय जमध्य प्रक्षेप में से प्रत्येक की तीन स्थितियां बनेगी–विषुवतीय, तिर्यक एवं ध्रुवीय । खमध्य प्रक्षेप की विशेषताएं अधोलिखित है–

विशेषताएं :

1. खमध्य प्रक्षेप में खींची गई प्रत्येक सरल रेखा एक वृहत् वृत्त होती है तथा इनके दिक्मान को केन्द्र से मापा जा सकता है। इन पर प्रदर्शित दिक्मान शुद्ध होते है।
2. प्रक्षेप के केन्द्र से समान दूरी पर स्थिति प्रत्येक बिन्दु मानचित्र पर भी समान दूरी पर स्थित होते है।
3. मानचित्र के केन्द्र से समदूरस्थ स्थित बिन्दु की मापनी के परिवर्तन और आकृति की विकृति का मान समान होता है।
4. किसी एक गोलार्द्ध का मानचित्र प्रदर्शित करने पर बाहरी किनारा वृहत् वृत्त के रूप में प्रदर्शित होता है।

2.5.2.4 रूढ़ प्रक्षेप (Conventional Projection)

जब किसी उद्देश्य पूर्ति हेतु प्रक्षेप के आकार को संशोधित कर गणितीय विधि का उपयोग कर प्रक्षेप बनाया जाता है तो उसे रूढ़ प्रक्षेप कहते है। यह प्रक्षेप केवल गणितीय विधि का प्रयोग कर बनाये जाते है। आकृति संशोधित हो जाने के कारण ये प्रक्षेप उपरोक्त की श्रेणी में नहीं आता है। विश्व का मानचित्र बनाने के लिए यह प्रक्षेप बहुत उपयोगी होते है। मॉलवीड, सिनुस्वायडल आदि प्रक्षेप रूढ़ प्रक्षेप के अन्तर्गत आते है।

2.5.3 गुण के आधार पर प्रक्षेपों का वर्गीकरण

अभी तक हमने जिन प्रक्षेपों को देखा सभी की अपनी–अपनी विशेषताएं है। कोई प्रक्षेप सही आकृति का, तो कोई शुद्ध क्षेत्रफल का प्रदर्शन करता है। किसी प्रक्षेप की मापनी शुद्ध होती है तो किसी में दिशा। मानचित्र बनाने के लिए प्रक्षेप में चार गुण सबसे महत्वपूर्ण है– 1. शुद्ध आकृति 2. शुद्ध क्षेत्रफल 3. शुद्ध दिशा 4. शुद्ध मापनी । परन्तु समस्या यह है किसी मानचित्र का आकार शुद्ध तो उसका क्षेत्रफल अशुद्ध हो जाता है। किसी प्रक्षेप में सभी गुण प्रदर्शित नही होते है। अतः गुण के आधार पर प्रक्षेप को तीन वर्गो में बॉटा जाता है –

1. यथाकृतिक प्रक्षेप
2. समक्षेत्र प्रक्षेप
3. शुद्ध–दिशा प्रक्षेप

2.5.3.1 यथाकृतिक प्रक्षेप (Orthomorphic Projection)

यह प्रक्षेप शुद्ध आकृति प्रक्षेप है। इसमें धरातलीय आकृति शुद्ध प्रदर्शित की जाती है। धरातल के किसी भाग का मानचित्र बनाते समय जैसी आकृति उसकी ग्लोब पर है वैसी ही समतल कागज पर बनती है तो उसे यथाकृतिक मानचित्र कहते है। मानचित्र पर शुद्ध दिशा दर्शाने के लिए यथाकृतिक मानचित्र की आवश्यकता पड़ती है। इसके प्रमुख लक्षण निम्न है –

1. इस प्रक्षेप पर बने मानचित्र में किसी बिन्दु पर हर दिशा में मापक समान रहने के लिए अक्षांश देशान्तर रेखाएं एक दूसरे को समकोण पर काटती है।
2. इस प्रक्षेप पर स्थानान्तर मापक में परिवर्तन होता रहता है। अतः वृहत क्षेत्रों का आकार शुद्ध नहीं रह जाता, इसलिए इस पर समस्त ग्लोब के मानचित्र की रचना संभव नही है।

   मानचित्र पर शुद्ध दिशा प्रदर्शित करने के लिए यथाकृतिक प्रक्षेप की आवश्यकता होती है। इसके अंतर्गत मर्केटर एवं त्रिविम प्रक्षेप आते है। मानचित्र पर परिवहन मार्ग, जल धाराएं तथा वायुदिशा प्रदर्शित करने के लिए यथाकृतिक प्रक्षेप की आवश्यकता होती है।

2.5.3.2 समक्षेत्र प्रक्षेप (Homolograpic Projection)

समक्षेत्र प्रक्षेप में भौगोलिक क्षेत्रफल शुद्ध दर्शाया जाता है। क्षेत्रफल शुद्ध दर्शाने के लिए एक दिशा में मापनी को बढ़ाना तथा दूसरी दिशा में घटाना पड़ता है। इसके कारण क्षेत्रफल तो शुद्ध हो प्रदर्शित हो जाता है परन्तु आकृति विकृत हो जाती है। मॉलवीड तथा सिनुसॉयडल प्रक्षेप इसके आदर्श उदाहरण है। राजनीतिक, वितरण तथा सांख्यकीय मानचित्र बनाने के लिए समक्षेत्र प्रक्षेप की आवश्यकता पड़ती है।

2.5.3.3 शुद्ध–दिशा प्रक्षेप (Azimuthal Projection)

इस प्रक्षेप में दिशाओं को शुद्ध रूप से प्रदर्शित किया जाता है। मानचित्र पर किन्हीं दो बिन्दुओं के बीच की दिशा वही होती है जो ग्लोब पर होती है। इस प्रक्षेप को बनाने के लिए अक्षांश एवं देशान्तर की रेखाओं की लम्बाई में समान रूप से वृद्धि की जाती है। मर्केटर एवं खमध्य प्रक्षेप पर बने मानचित्रों में दिशाओं का प्रदर्शन शुद्ध होता है। इसीलिए अंतर्राष्ट्रीय जलमार्गों को दर्शाने के लिए मानचित्र मर्केटर प्रक्षेप पर बनायें जाते है।

2.6 सारांश

इस इकाई में हमने पढ़ा कि प्रक्षेप की सहायता से गोलाकार पृथ्वी का समतल कागज पर मानचित्र बनाया जाता है। प्रक्षेप में अक्षांश वृत्तों एवं देशान्तरों का जाल बनाकर ग्लोब के विवरण को दर्शा दिया जाता है। गोलाकार पृथ्वी का समतल सतह पर चित्रण आसान नहीं होता जिसके कारण उसके विभिन्न भागों का मानचित्र

अलग–अलग प्रक्षेप पर बनाया जाता है। कोई भी प्रक्षेप सर्वगुण सम्पन्न नहीं होता है। ग्लोब का सही आकार दिखाने वाले प्रक्षेप यथाकृतिक होते है तो सही क्षेत्रफल दर्शाने वाले समक्षेत्र प्रक्षेप होते है। कोई भी प्रक्षेप एक साथ यथाकृतिक और समक्षेत्र नहीं होता है। यथाकृतिक प्रक्षेप अशुद्ध क्षेत्रफल दिखाता है तो समक्षेत्र प्रक्षेप का आकार विकृत हो जाता है। सही दिशा दिखाने वाले प्रक्षेप को शुद्ध दिशा प्रक्षेप कहते है। इस प्रकार से उद्देश्य के आधार पर मानचित्र बनाने के लिए प्रक्षेपों का चयन किया जाता है।

2.6 वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. पृथ्वी का भूमध्यरेखीय अर्द्धव्यास है –

   अ. 12756 किमी. ब. 12714 किमी.

   स. 6378 किमी. द. 6370 मील

2. यथाकृतिक प्रक्षेप का उदाहरण है–

   अ. मर्केटर प्रक्षेप ब. मॉलवीड प्रक्षेप

   स. सिनुसॉयडल प्रक्षेप द.गॉल प्रक्षेप

3. "ज्योग्राफिया" ग्रन्थ किस विद्वान की रचना है –

   अ. इरेटास्थनीज ब. टॉलमी

   स. थेल्स द. मैरीनस

2.7 बोध प्रश्न

1. प्रक्षेप की परिभाषा एवं इतिहास की व्याख्या कीजिए।
2. रचना विधि के आधार पर प्रक्षेपों का वर्गीकरण प्रस्तुत कीजिए।
3. गुण के आधार पर प्रक्षेपों का वर्गीकरण कीजिए।
4. बेलनाकार प्रक्षेप की विशेषताओं का वर्णन कीजिए।
5. यथाकृतिक प्रक्षेप के महत्व का वर्णन कीजिए।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न का उत्तर – 1.स 2. अ 3. अ

2.8 संदर्भ ग्रन्थ

1. शर्मा, जे.पी.(2005), प्रयोगिक भूगोल, रस्तोगी पब्लिकेशन्स, मेरठ
2. चौहान, पी.आर..(2016), प्रायोगात्मक भूगोल, वसुन्धरा प्रकाशन, गोरखपुर
3. सिंह, एल.आर. (2013), प्रायोगिक भूगोल के सिद्धान्त, शारदा पुस्तक भवन, प्रयागराज
4. Maliter, K.K. & Maltiar, S.R.(2019), Concept of Cartography Remote Sensing and GIS, Rajesh Publications, New Delhi.

इकाई - 3 (Unit - 3)

शंक्वाकार प्रक्षेप– एक मानक अक्षांश वाला शंकु प्रक्षेप, दो मानक वाला शंकु प्रक्षेप, बोन प्रक्षेप – विशेषताएँ, रचना एवं उपयोग

(Conical Projection- Conical Projection with one standard parallel conical projection with two standard parallel, Bonne's projection- Characteristics, construction and uses)

पाठ संरचना **(Lesson Structure)**

1. उद्देश्य (Objectives)
2. प्रस्तावना (Introduction)
3. एक मानक अक्षांश वाला शंकु प्रक्षेप (Conical Projection with one standard parallel)
4. दो मानक अक्षांश वाला शंकु प्रक्षेप (Conical Projection with two standard parallels)
5. बोन प्रक्षेप (Bonne's Projection)
6. निष्कर्ष (Conclusio
7. मॉडल प्रश्न (Model Question)
8. सन्दर्भ पुस्तकें (Reference Books)

1. उद्देश्य **(Objectives)**

1. विद्यार्थियों को एक गोलार्द्ध में स्थित क्षेत्रों के मानचित्र निर्माण में शंकु प्रक्षेपों के बारे में विस्तृत जानकारी देना।
2. मध्य अक्षांशीय छोटे–छोटे देशों के मानचित्र बनानें में शंकु प्रक्षेपों का विशेष उपयोग का ज्ञान कराना।
3. शंकु प्रक्षेपों के बारे में पढ़ने के बाद विद्यार्थियों के लिए मानचित्र बनाना आसान हो जायेगा।
4. छात्र–छात्राओं को यह समझने में मदद मिलेगी कि गोलाकृति पृथ्वी के क्षेत्रों को किस प्रकार से समतल सतह पर प्रदर्शित किया जायेगा।
5. मानचित्र बनाने के प्रति विद्यार्थियों को विशेष आकर्षण हो जायेगा।

2. प्रस्तावना **(Introduction)**

भूगोल विषय में मानचित्रों का महत्वपूर्ण स्थान रहा है और मानचित्र बनाने में प्रक्षेपों का विशेष महत्व है। जहाँ तक शंक्वाकार प्रक्षेप की परिभाषा और वर्णन से यह सिद्ध होता है कि इस प्रक्षेप में एक साधारण शंक्वाकार प्रक्षेप होता है जिसमें कागज का शंकु भूमध्य रेखा और ध्रुवों के बीच के किसी एक अक्षांश को स्पर्श करता है इसी अक्षांश को मानक अक्षांश कहते है, शंकु को रखते समय यह ध्यान रखना आवश्यक है कि पृथ्वी का केन्द्र, ध्रुव तथा शंकु का शीर्ष एक सीधी रेखा में हो। मानक अक्षांश पर क्षेत्रफल सदैव शुद्ध होता है किन्तु मानक अक्षांश से दूर जाने पर क्षेत्रफल में क्रमशः अशुद्धि बढ़ती जाती है, इन्ही अशुद्धियों को दूर करने तथा एक बड़े क्षेत्रफल को शुद्धता से दर्शाने हेतु शंकु प्रक्षेपों में दो मानक अक्षांश वाले शंकु प्रक्षेपों को भी प्रयोग किया जाता है। इस प्रक्षेप में कागज का शंकु भूमध्य रेखा तथा ध्रुवों के बीच के किन्ही दो अक्षांशों (किसी एक ही गोलार्द्ध के) को स्पर्श करता है और शुद्ध रहता है। देशान्तर रेखाओं की रचना करते समय यह ध्यान देना आवश्यक हो जाता है कि मध्य देशान्तरीय रेखा ही केन्द्रीय मध्याह्न रेखा होती है। उदाहरण स्वरूप यदि किसी प्रक्षेप में 10°, 20°, 30°, 40°तथा 50°देशान्तर दर्शाना हो तो मध्य देशान्तर यानि 30° की देशान्तरीय रेखा ही केन्द्रीय मध्याह्न रेखा मानी जायेगी। शंकु प्रक्षेप प्रमुख रूप से दो प्रकार के होते है–

1. **सरल शंक्वाकर प्रक्षेप** – इसमें किसी एक ही अक्षांश को मानक अक्षांश माना जाता है तथा
2. **संशोधित शंक्वाकर प्रक्षेप** – इस प्रक्षेप में मानक अक्षांशो की संख्या एक से अधिक होती है इस प्रक्षेप में मुख्य रूप से तीन प्रक्षेप आते है जिसका विवरण क्रमशः बोन प्रक्षेप, बहुशंकु प्रक्षेप तथा अन्तराष्ट्रीय प्रक्षेप प्रमुख है।

हम आगे कुछ चुनिंदा और महत्वपूर्ण प्रक्षेपों के बारे में विस्तार से अध्ययन करेगें।

3. एक मानक अक्षांश वाला शंक्वाकार प्रक्षेप **(Conical Projection with One Standard Parallel)**

इस प्रक्षेप में सिर्फ एक ही अक्षांश, मानक अक्षांश होता है जो सही मापक के अनुसार बनाया जाता है। शेष अक्षांश रेखायें इसी मानक अक्षांश के समानान्तर समान दूरी पर खींची जाती है। सभी अक्षांश रेखायें एक संकेन्द्रीय वृत्त होती है जिसका केन्द्र एक ही होता है। मानक अक्षांश पर प्रक्षेपान्तर के अनुसार बिन्दु अंकित करते है और तत्पश्चात् केन्द्र से सीधी रेखाओं द्वारा सभी प्रक्षेपान्तराल (मानक अक्षांश पर) वाले बिन्दुओं को मिला देने से देशान्तर रेखाओं की रचना हो जाती है।

उदाहरण–1:–प्रदर्शक भिन्न 1:125000000 पर एक मानक अक्षांश वाले शक्वाकार प्रक्षेप की रचना कीजिए जिसका अक्षांशीय विस्तार 50^0 से 70^0 उत्तरी अक्षांश तथा देशान्तरीय विस्तार 20^0 से 50^0 पूर्वी देशान्तर हो और उसका प्रक्षेपान्तर 5^0 हो।

हलः– लघुकृत पृथ्वी के गोले का अर्द्धव्यास(R)

$$= \frac{\text{पृथ्वी का वास्तविक अर्द्धव्यास}}{\text{प्रदर्शक भिन्न का हर}} =$$

$$= \frac{2500000000}{125000000} = 2 \text{ इंच}$$

मानक अक्षांश का चयनः–प्रश्न के अनुसार प्रक्षेप का अक्षांशीय विस्तार–50^0 उत्तरी अक्षांश क्रमशः 55^0, 60^0, 65^0 तथा 70^0 तक है। इस तरह से कुल 5 अक्षांश हुए इसलिए तीसरे अक्षांश यानि 60^0 उत्तरी अक्षांश को मानक अक्षांश माना जायेगा।

मानक देशान्तर का चयनः– प्रश्न के अनुसार प्रक्षेप का देशान्तरीय विस्तार 20^0 पूर्वी देशान्तर से क्रमशः 25^0, 30^0, 35^0, 40^0, 45^0 तथा 50^0 पूर्वी देशान्तर है। इस तरह से कुल 7 देशान्तर हुए। अतः चौथे देशान्तर यानि कि 35^0 पूर्वी देशान्तर को केन्द्रीय देशान्तर रेखा मान लेंगे।

मानक अक्षांश के बारे में:– यह कोई जरूरी नहीं कि मध्यवर्ती अक्षांश को ही मानक अक्षांश माना जायेगा। भूमध्य रेखा एवं ध्रुव को छोड़कर किसी भी बीच के अक्षांश को मानक अक्षांश मानकर इस प्रक्षेप की रचना की जा सकती है। किन्तु प्रकाश की अवस्थिति के अनुसार एवं क्षेत्रफल की शुद्धता को दृष्टिगत रखते हुए सम्भवतः बीच के अक्षांश को ही मानक अक्षांश माना जाता है।

प्रक्षेप की आलेखी रचनाः–

1. सर्वप्रथम 2 इंच त्रिज्या की माप से वृत का एक चतुर्थांश ABC है।
2. बिन्दु A को केन्द्र मानकर 5^0 प्रक्षेपान्तर के बराबर कोण DAB खीचते हैं।
3. अब चूंकि मानक अक्षांश 60^0 उत्तरी अक्षांश है। अतः मानक अक्षांश के भी बराबर एक कोण बिन्दु A को ही केन्द्र मानकर EAB की रचना करते हैं।
4. AC रेखा को आगे उपर की तरफ बढ़ाते हैं तथा E बिन्दु से 90^0 का कोण बनाती हुई एक स्पर्श रेखा खींचते हैं जो कि AC रेखा के लम्बवत ऊपर की ओर उठे हुए भाग को बिन्दु F पर काटती है।
5. यही EF रेखा की दूरी ही मानक अक्षांश का अर्द्धव्यास होता है।

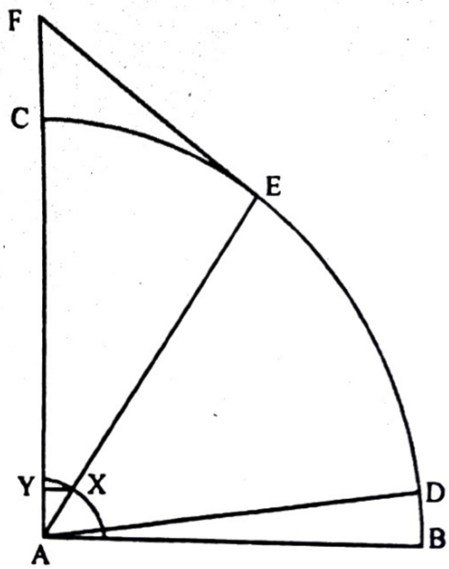

चित्र **3.1**

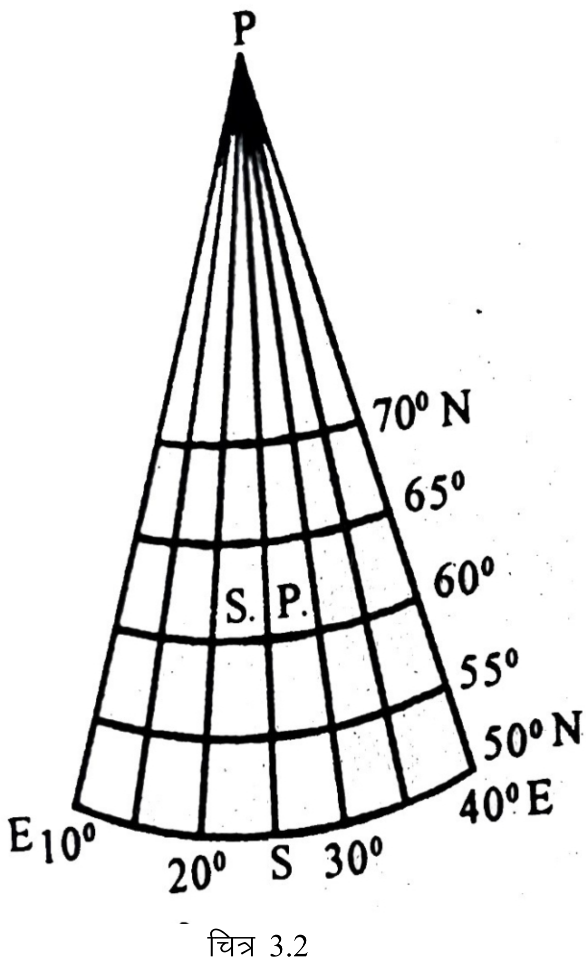

चित्र 3.2

6. अब चूंकि प्रक्षेपान्तर 5^0 है। अतः परकार में BD के बराबर की दूरी लेकर बिन्दु A को केन्द्र मानकर एक चाप लगाते है जो कि मानक अक्षांश की रेखा AE को बिन्दु X पर काटता है।

7. अब बिन्दु X से AC रेखा पर XY लम्ब डालते है। यही XY की दूरी मानक अक्षांश यानि 60^0 उत्तरी अक्षांश पर देशान्तरीय अन्तराल की दूरी होगी।

प्रक्षेप की रचनाः–

1. सर्वप्रथम एक लम्बवत रेखा P.Q. खींचते हैं जो कि प्रश्न के अनुसार केन्द्रीय देशान्तर (मध्याह्न रेखा) होगी तथा इसका मान 35^0 पूर्वी देशान्तर होगा।
2. अब बिन्दु P को केन्द्र मानकर EF रेखा की दूरी परकार में लेकर PQ रेखा को काटते हुए एक चाप लगाया यही चाप 60^0 उत्तरी अक्षांश की मानक रेखा है।
3. अन्य अक्षांश वृतों की रचना करने के लिए BD के बराबर की दूरी परकार में लेकर 60^0 मानक अक्षांश से ऊपर की ओर दो बिन्दु जो कि चिन्ह लगायेंगे, पुनः 60^0 मानक अक्षांश से नीचे की ओर दो बिन्दु जो कि क्रमशः 65^0 उत्तरी अक्षांश तथा 70^0 उत्तरी अक्षांश के कटान बिन्दुओं का चिन्ह PQ रेखा पर ही लगायेंगे।
4. सभी अक्षांश रेखाओं का कटान बिन्दु का चिन्ह लगा लेने के बाद बिन्दु D को केन्द्र मानक सभी कटान बिन्दुओं पर चाप की रचना कर देंगे। इस तरह से इसकी अक्षांश वृतों (50^0, 55^0, 60^0, 65^0 तथा 70^0) की रचना हो जायेगी।
5. देशान्तर रेखाओं की रचना करने के लिए सर्वप्रथम मानक अक्षांश यानि कि 60^0 उत्तरी अक्षांश पर XY के बराबर की दूरी परकार में लेकर केन्द्रीय मध्याह्न रेखा (35) के पूरब तीन बिन्दु जो कि क्रमशः 40^0, 45^0 तथा 50^0 पूर्वी देशान्तर तथा केन्द्रीय मध्याह्न रेखा (35) के पश्चिम में तीन बिन्दु जो कि क्रमशः 30^0, 25^0 तथा 20^0 पूर्वी देशान्तरीय रेखा के कटान बिन्दु होंगे।
6. अब मानक अक्षांश 60^0 उत्तरी अक्षांश) पर सभी देशान्तरीय चिन्ह लगाये जाने के बाद बिन्दु P से सीधी रेखा के द्वारा सभी देशान्तरीय चिन्हों को मिला देंगे। ये सरल रेखायें सभी सम्बन्धित देशान्तरीय रेखाओं को प्रकट करती है।
7. अब प्रक्षेप में रचित सभी अक्षांश रेखाओं एवं देशान्तर रेखाओं से सम्बन्धित उनका मान लिखकर, प्रक्षेप की रचना को पूर्ण कर लेंगे(चित्र 3.2)।

गणितीय रचना विधि

गणितीय विधि से इस प्रक्षेप की रचना करने के लिए हमें तीन मापों की आवश्यकता होगी।

1. मानक अक्षांश वृत का अर्द्धव्यास।
2. मानक अक्षांश वृत पर देशान्तरों के बीच की दूरी।
3. केन्द्रीय मध्याह्न रेखा पर अक्षांश रेखाओं के बीच की दूरी।

इन मापों को निम्न त्रिकोणमितीय सूत्रों के द्वारा प्राप्त किया जा सकता हैः–

दिया गया चित्र NFSG वृत 1:125000000 मापनी पर निर्मित ग्लोब को प्रदर्शित करता है जिस पर स्पर्श करता हुआ एक शंकु दिखाया गया है। चित्र में शंकु का शीर्ष P बिन्दु पर ग्लोब के अक्ष OP तथा स्पर्श रेखा PA के बीच बना कोण OPA मानक अक्षांश (60^0N) के कोण AOG के बराबर होता है। अतः ΔPOA में

$$\frac{PA}{AO} = \frac{\text{आधार}}{\text{लम्ब}} = Cot\ \theta$$

$$PA = Ao\ Cot\theta = R\,Cot\ 60^0$$

(चूंकि AO निर्मित ग्लोब का अर्द्धव्यास तथा θ का मान 60^0 है),

अतः इनका मान रखे जाने पर $= 2 \times 0.57735 = 1.15$ इंच

यह दूरी मानक अक्षांश (60^0 उत्तरी) का अर्द्धव्यास होगी।

2. चित्र के अनुसार AO निर्मित ग्लोब का अर्द्धव्यास R=2 इंच तथा $\angle OAE = \angle\theta = 60^0$

अब समकोण $\Delta\, OEA$ में

आधार

$$\frac{AE}{PO} = \frac{\text{आधार}}{\text{लम्ब}} = Cos\ \theta$$

अतः मानक अक्षांश वृत की लम्बाई $AC = 2\Pi R\ Cos\theta$

चूंकि मानक अक्षांश वृत पर देशान्तरीय अन्तराल की दूरी ज्ञात करना है। अतः देशान्तरीय अन्तराल की दूरी $2\Pi R\ Cos\ \theta \times \frac{\text{देशान्तरीय अन्तराल}}{360^0}$

$$= 2\Pi R\ Cos\ 60^0 \times \frac{5^0}{360^0}$$

$$= \frac{2\times 3.14\times 2\times 0.50\times 5}{360}$$

3. केन्द्रीय मध्याह्न रेखा पर 5^0 की अक्षांशीय दूरी

$$= \frac{2\Pi R\times 5^0}{360}$$

$$= \frac{2\times 3.14\times 2\times 5}{360^0} = 0.17 \text{ इंच}$$

प्रक्षेप की रचनाः–

1. प्रक्षेप की रचना करने के लिए सर्वप्रथम एक लम्बवत रेखा PQ खींचते हैं जो केन्द्रीय मध्याह्न रेखा यानि 35^0 पूर्वी देशान्तर होगी।
2. बिन्दु P को केन्द्र मानकर 1.15 इंच का अर्द्धव्यास लेकर 60^0 उत्तरीय अक्षांश यानि मानक अक्षांश की रचना करेंगे।
3. अन्य अक्षांश वृतों की रचना करने हेतु मानक अक्षांश (60^0N) से उत्तर दो बिन्दु 0.17 इंच की दूरी लेकर चिन्ह लगायेंगे तथा इसी माप से दक्षिण की ओर भी दो बिन्दु का चिन्ह् लगायेंगे।

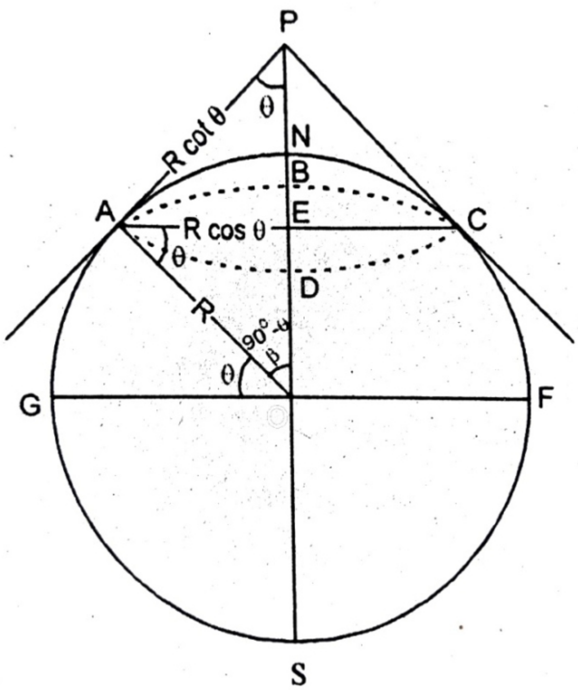

चित्र 3.3

4. अब बिन्दु P को केन्द्र मानक केन्द्रीय मध्याह्न रेखा पर अंकित सभी अक्षांशीय चिन्हों पर चाप खींचकर सभी अक्षांश रेखाओं की रचना करेंगे।

5. अब मानक अक्षांश वृत पर 0.09 इंच की माप से केन्द्रीय मध्याह्न रेखा के पूरब तीन चिन्ह क्रमशः 40^0, 45^0 तथा 50^0 पूर्वी देशान्तर के तथा इसी तरह से पश्चिम में भी तीन चिन्ह क्रमशः 30^0, 25^0 तथा 20^0 पूर्वी देशान्तर के लगायेंगे।

6. अब इन सभी देशान्तरीय चिन्हों को सरल रेखाओं के द्वारा बिन्दु P से मिला देंगे । यही सरल रेखायें प्रक्षेप में देशान्तर रेखाओं को प्रदर्शित करेगी।

7. पुनः सभी अक्षांश एवं देशान्तर रेखाओं पर उनके सम्बन्धित मान लिखकर प्रक्षेप को पूरा करेंगे।

उदाहरण–2 :– मापक 1 : 125000000 पर एक मानक अक्षांश वाला शंक्वाकार प्रक्षेप की रचना कीजिए जिसका प्रक्षेपान्तर 10^o तथा विस्तार 20^o उत्तरी अक्षांश से 60^o उत्तरी अक्षांश तथा 30^o पूर्वी देशान्तर से 110^o पूर्वी देशान्तर तक हो।

लघुकृत पृथ्वी के गोले का अर्द्धव्यास = पृथ्वी की वास्तविक त्रिज्या / प्रदर्शक भिन्न का हर
= 250000000 (इंच) / 125000000= 2 इंच
अक्षांश रेखाओं की सं0 = 20^o, 30^o, 40^o, 50^o तथा 60^o = 5 अक्षांश
देशान्तर रेखाओं की सं0=30^o, 40^o, 50^o, 60^o, 70^o, 80^o, 90^o,100^o तथा 110^o =
9 देशान्तर

आलेखी रचना–

- सर्वप्रथम 2 इंच त्रिज्या के वृत्त का एक चतुर्थांश बनाया।
- अब प्रक्षेपान्तर के अनुसार चतुर्थांश में 10^o, 20^o, 30^o, 40^o, 50^o तथा 60^o का चिन्ह चतुर्थांश की परिधि पर लगाकर उसे क्रमशः केन्द्र से मिलाया।
- अब चूकि प्रक्षेप का अक्षांशीय विस्तार 20^o उत्तरी से 60^o उत्तरी है अतः बीच के किसी अक्षांश को मानक अक्षांश माना जायेगा प्रश्न के अनुसार 40^o उत्तरी अक्षांश को मानक अक्षांश मान लिया जायेगा।
- पुनः 40^o अक्षांश रेखा से समकोण बनाती हुई एक सीधी रेखा खींचा जो कि PQR रेखा को S पर काटती है।
- अब 0^o से 10^o तक की नाप से P को केन्द्र मानकर एक वृत्त का छोटा चतुर्थांश बनाया तथा 40^o के कटान बिन्दु से PR पर एक लम्ब खींचा जो PR रेखा को X तथा छोटी परिधि को Y पर काटता है। यही मानक अक्षांश पर प्रक्षेपान्तर की दूरी है (चित्र 3.1)।

प्रक्षेप की रचना–

एक सीधी रेखा खींचा तथा उस पर कोई बिन्दु O मान लिया अब बिन्दु O को केन्द्र मानकर ST की माप लेकर एक वृत्तखण्ड खींचा जो कि मानक अक्षांश (40^o) है।

- 40^o अक्षांश रेखा से ऊपर तथा नीचे प्रक्षेप के विस्तार के अनुसार क्रमशः 50^o तथा 60^o अक्षांश एवं 30^o, 20^o तथा 10^o की अक्षांश रेखा (वृत्तखण्ड) प्रक्षेपान्तर 0^o–10^o की माप लेकर खींचा।
- अब मानक अक्षांश पर लम्ब XY की माप से देशान्तर का चिन्ह लगाया जो क्रमशः 30^o से 110^o= 9 देशान्तर
- पुनः बिन्दु O से सीधी रेखा द्वारा सभी देशान्तरीय चिन्हों को मिलाया तथा प्रक्षेप के विस्तार के अनुसार अक्षांश तथा देशान्तरों का मान लिखा। प्रक्षेप की रचना पूरी हुई (चित्र 3.2)।

गणितीय रचना विधि–

यह विधि भी उपरोक्त आलेखी विधि के ही समान है, अन्तर केवल यह है कि यहाँ गणित के सूत्रों का प्रयोग करके प्रक्षेप की रचना करते है।

लघुकृत पृथ्वी के गोले का अर्द्धव्यास$R = \frac{250000000}{125000000} = 2$ इंच

केन्द्रीय मध्याह्न रेखा पर प्रक्षेपान्तर की दूरी =

$2\pi r \times$ प्रक्षेपान्तर / 360^o

$=2\times3.1416\times2\times10/360=0.34$ इंच

प्रमाणिक अक्षांश रेखा पर प्रक्षेपान्तर की दूरी =

$2\pi r \times$ प्रक्षेपान्तर / $360^o \times \cos 40^o$

$=2\times3.1416\times2\times10/360\times7660=0.26$ इंच

प्रमाणिक अक्षांश वृत्त का अर्द्धव्यास=

$R \cot 40^o = 2\times1.1918 = 2\text{-}38$ इंच

उपरोक्त मापको के आधार पर प्रक्षेप की रचना

सर्वप्रथम एक सीधी लम्ब रेखा खींचिए जिस पर कोई बिन्दु O मान लीजिए, बिन्दु O को केन्द्र मानकर 2.38 इंच के नाप से चाप खींचिए, यह चाप 40^o अक्षांश (मानक अक्षांश) का चाप होगा। इस मानक अक्षांश पर प्रक्षेपान्तरीय दूरी 0.26 इंच की नाप से सभी देशान्तर रेखाओं का चिन्ह् अंकित कीजिए। पुनः 40^o अक्षांश रेखा से ऊपर तथा नीचे सभी अक्षांश वृत्तों को 0.34 इंच के अन्तराल पर अंकित कीजिए और बिन्दु O को केन्द्र मानकर सभी अक्षांशों का चाप खींचिए अब मानक अक्षांश की देशान्तरीय चिन्ह् और बिन्दु O को मिलाकर सभी देशान्तर रेखाओं की रचना कीजिए और सभी संबन्धित अक्षांश और देशान्तरों का मान लिखिए (चित्र 3.5)।

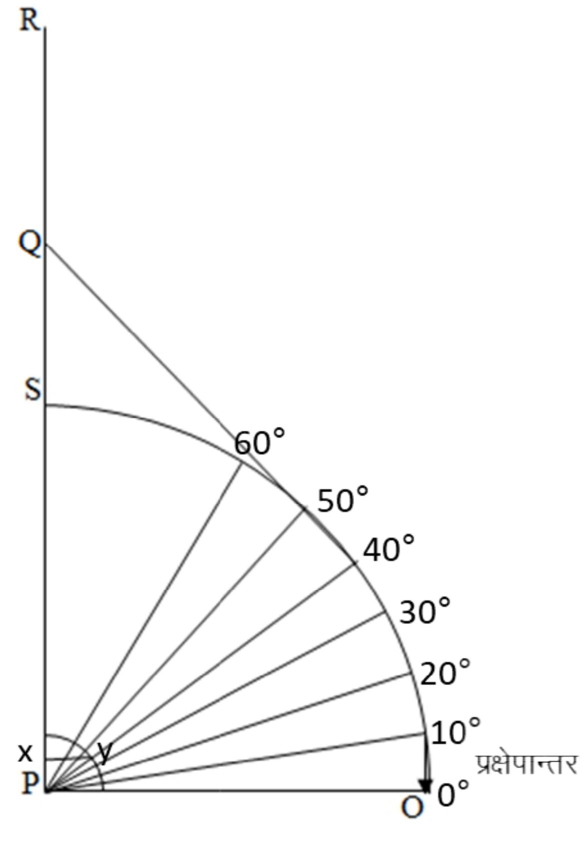

चित्र 3.4

विशेषतायें (Characteristics)

1. इस प्रक्षेप में सभी अक्षांश रेखायें संकेन्द्रीय वृत्त होती है।

2. मानक अक्षांश तथा सभी देशान्तर रेखाओं के सहारे मापक शुद्ध होता है।
3. सभी देशान्तर रेखायें एक सरल रेखा होती है।
4. केवल मानक अक्षांश पर ही क्षेत्रफल शुद्ध होता है उसके उत्तर अथवा दक्षिण जाने पर क्षेत्रफल क्रमशः त्रुटिपूर्ण होता चला जाता है।
5. अक्षांश रेखाओं के बीच की दूरी एक समान होती है।
6. इस प्रक्षेप में ध्रुव एक वृतीय चाप होता है।
7. देशान्तर रेखायें शंकु के शीर्ष से प्रसारित एक सरल रेखा होती है जिनके मध्य का अन्तराल विषक्त रेखा की ओर जाने पर क्रमशः बढ़ता जाता है।
8. इस प्रक्षेप पर केवल एक ही गोलार्द्ध का मानचित्र बनाया जा सकता है।
9. यह प्रक्षेप एटलस के लिए भी उपयोगी होता है क्योंकि यह कई भागों में बनाया जा सकता है।
10. इस प्रक्षेप की रचना बेहद आसान होती है।

मापक 1 : 125000000

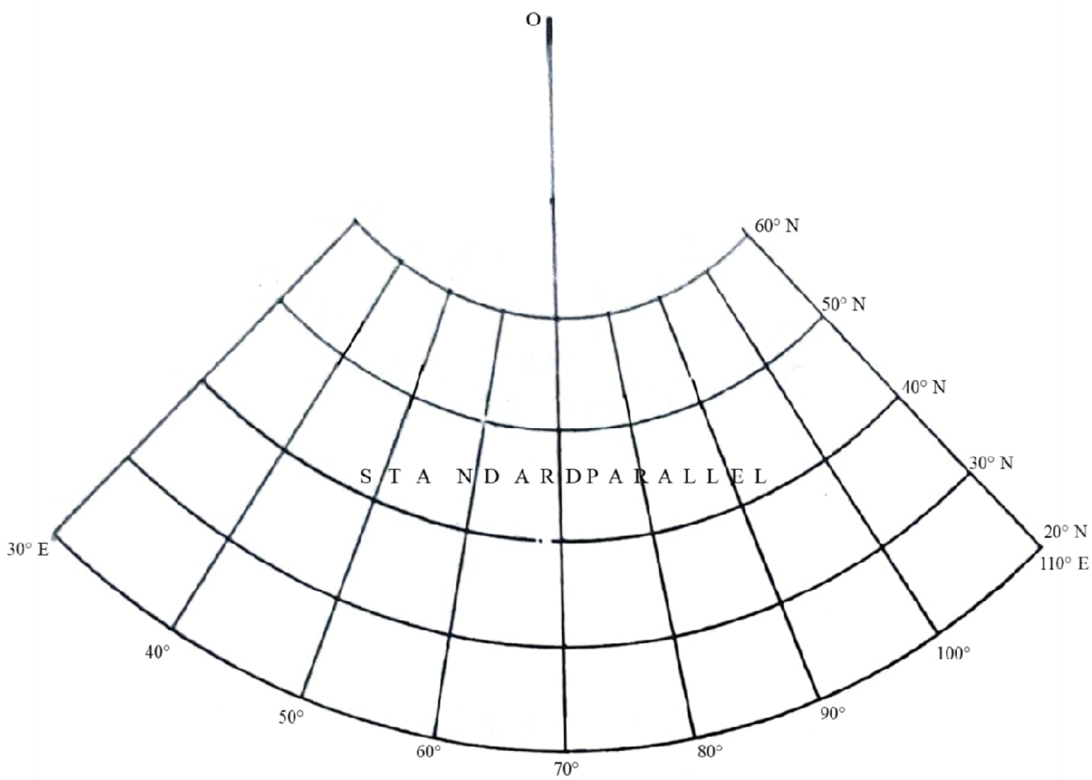

चित्र 3.5

उपयोग (Uses)

इस प्रक्षेप पर केवल छोटे–छोटे देशों अथवा प्रदेशों को दिखाया जाता है जिनका पूर्व–पश्चिम विस्तार अधिक हो तथा उत्तरी–दक्षिणी विस्तार कम हो क्योंकि मानक अक्षांश रेखा के सहारे ही क्षेत्रफल शुद्ध होता है।

4.दो मानक अक्षांश वाला शंक्वाकार प्रक्षेप

(Conical Projection with Two Standard Parallels)

एक मानक अक्षांश वाले शंक्वाकार प्रक्षेप में विस्तृत क्षेत्र के शुद्ध क्षेत्रफल का प्रदर्शन सम्भव न होने के कारण दो मानक अक्षांश वाले शंक्वाकार प्रक्षेप की रचना की जाती है। इस प्रक्षेप में यह मान लिया जाता है कि शंकु ग्लोब को दो अक्षांश वृत्तों पर स्पर्श कर रहा है। सन् 1805 में इस प्रक्षेप को एच0सी0 अलबर्स महोदय ने प्रस्तुत किया था।

अतः क्षेत्रफल इन दोनो अक्षांश वृतों के सहारे शुद्ध रहेगा, मानक अक्षांशों का चुनाव इस प्रकार से करना चाहिए कि पूरे मानचित्र का लगभग 65 प्रतिशत भाग इन दोनों मानक अक्षाशों के बीच में रहे, किन्तु याद रहे कि मानक अक्षांशों से दूर हटने पर क्षेत्रफल अशुद्ध होता जाता है।

उदाहरण–3: प्रदर्शक भिन्न 1:150000000 पर एक दो मानक अक्षांश वाले शंक्वाकार प्रक्षेप की रचना कीजिए जिसका प्रक्षेपान्तर 10^0 तथा विस्तार 30^0 दक्षिणीय अक्षांश से 80^0 दक्षिणी अक्षांश तथा 40^0 पश्चिमी देशान्तर से 40^0 पूर्वी देशान्तर तक हो।

हल. लघुकृत पृथ्वी के गोले का अर्द्धव्यास = $\frac{\text{पृथ्वी का वास्तविक अर्द्धव्यास}}{\text{प्रदर्शक भिन्न का हर}}$

$$= \frac{2500000000}{150000000} = 1.66 \text{ इंच}$$

मानक अक्षांश का चयनः–

उपरोक्त दिये गये प्रश्न में प्रक्षेप का अक्षांशीय विस्तार 30^0 दक्षिणी अक्षांश से 80^0 दक्षिणी अक्षांश है तथा प्रक्षेपान्तर 10^0 है। अतः अक्षांश रेखायें क्रमशः 30^0, 40^0, 50^0, 60^0, 70^0 तथा 80^0 की खींची जायेगी जिसमें मानक अक्षांश क्रमशः 40^0 तथा 70^0 दक्षिणी अक्षांश की रेखायें होगी।

प्रक्षेप की रचनाः–

1. सर्वप्रथम 1.66 इंच का अर्द्धव्यास लेकर वृत के एक चतुर्थाश ABC की रचना करेंगे।
2. पुनः AB रेखा से प्रक्षेपाान्तर के अनुसार 60^0 के बराबर कोण मापकर DAB खींचेगे।
3. अब चूंकि मानक अक्षांश रेखायें क्रमशः 40^0 दक्षिणी तथा 70^0 दक्षिणी अक्षांश की है। अतः A बिन्दु पर 40^0 का कोण एवं 70^0 का कोण बनाती हुई <EAB तथा <FAB की रचना करेंगे।

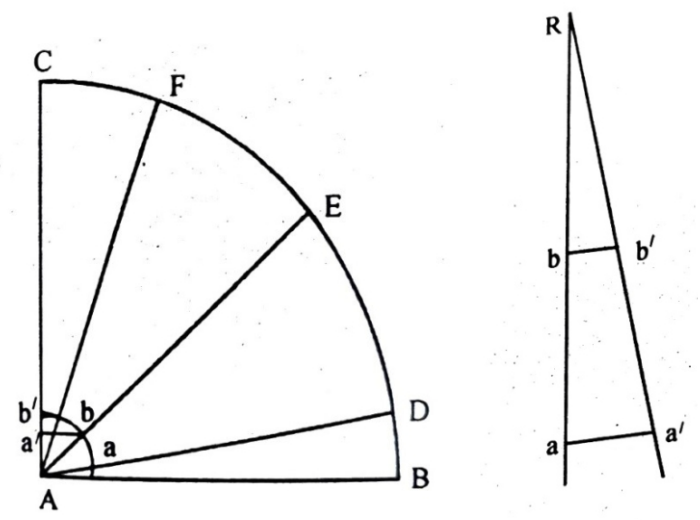

चित्र 3.6चित्र 3.7

4. प्रक्षेपान्तर BD की चापीय दूरी लेकर बिन्दु A को केन्द्र मानकर एक चाप खींचेंगे जो कि AE रेखा को a बिन्दु पर तथा AF रेखा को b बिन्दु पर काटता है।
5. a तथा b बिन्दुओं पर AB के समानान्तर AC रेखा पर क्रमशः aa' तथा bb' लम्ब डाल देते हैं।
6. अब एक लम्बवत सीधी रेखा खींचेगे तथा प्रक्षेपान्तर BD की चापीय दूरी लेकर इस रेखा पर नीचे से विभिन्न सम्बन्धित अक्षांशों का स्थान निश्चित कर चिन्ह लगाते है।
7. पुनः 40^0 अक्षांश एवं 70^0 अक्षांश वाले बिन्दुओं पर aa' तथा bb' बराबर दूरी का लम्ब डाल देते हैं।
8. अब इन लम्बों के सिरों a' तथा b' को मिलाती हुई एक सीधी रेखा खींचेगे जो पहली लम्बवत रेखा को बिन्दु R पर काटती है।
9. इस प्रकार Ra की दूरी 40^0 मानक अक्षांश तथा Rb की दूरी 70^0 मानक अक्षांश के अर्द्धव्यासहोंगे।

मूल प्रक्षेप की रचनाः–

1. प्रक्षेप बनाने के लिए सर्वप्रथम एक सीधा लम्बवत रेखा खींचेगे तथा उस पर उपर बिन्दु P मानेंगे। यह P बिन्दु दक्षिणी ध्रुव को प्रदर्शित करेगा तथा यह रेखा केन्द्रीय देशान्तर रेखा (0^0 देशान्तर) होगी।
2. बिन्दु P को केन्द्र मानकर Ra तथा Rb के बराबर माप की दूरीयों से चाप लगायेंगे जो क्रमशः 40^0 मानक अक्षांश तथा 70^0 मानक अक्षांश को प्रकट करेंगे।
3. पुनः BD की चापीय दूरी लेकर केन्द्रीय देशान्तर रेखा पर सभी अक्षांश वृतों का स्थान चिन्ह अंकित करेंगे तथा बिन्दु P को केन्द्र मानकर अन्य सभी अक्षांश वृतों की रचना करेंगे।
4. देशान्तर रेखाओं की रचना करने के लिए हम 40^0 मानक अक्षांश पर aa' की दूरी से तथा 70^0 मानक अक्षांश पर bb' की दूरी से देशान्तरीय चिन्ह अंकित करेंगे।

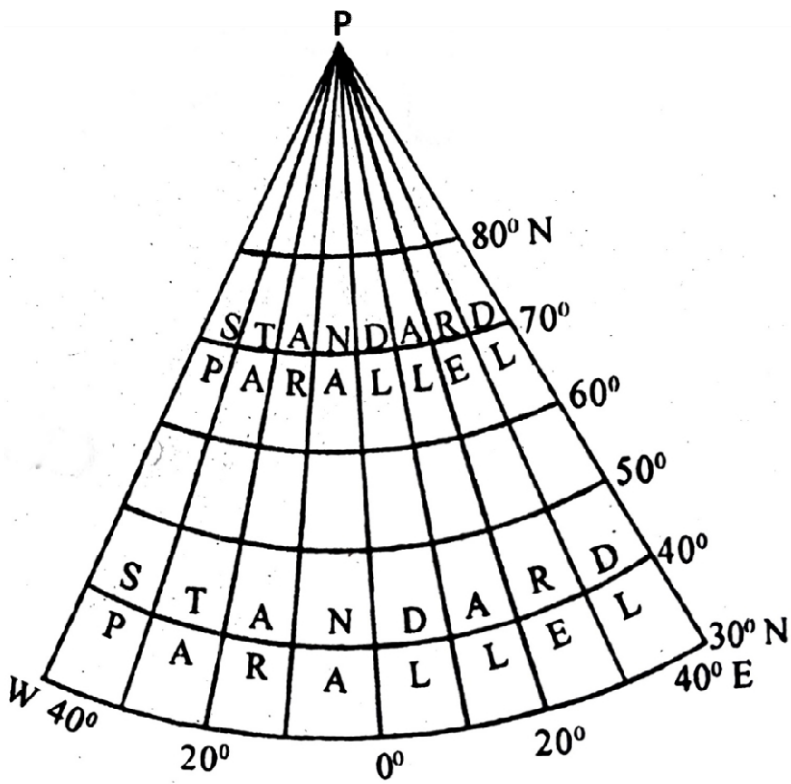

चित्र 3.8

5. ध्यान रहे देशान्तरों की कुल संख्या 9 है। अतः केन्द्रीय मध्याह्न रेखा के दाहिनी ओर चार देशान्तर क्रमशः (10^0, 20^0, 30^0 तथा 40^0 पूर्वी देशान्तर) तथा बांयी ओर चार देशान्तर क्रमशः (10^0, 20^0, 30^0 तथा 40^0 पश्चिमी देशान्तर) का ही चिन्ह लगायेंगे।

6. अब बिन्दु P से सीधी रेखा द्वारा सभी देशान्तरीय चिन्हों को मिला देंगे। यही सरल रेखा देशान्तरों को प्रदर्शित करेगी।

7. अन्त में सभी अक्षांश एवं देशान्तर रेखाओं पर उनका मान तथा दिशायें अंकित कर देंगे और प्रक्षेप को पूरा करेंगे(चित्र 3.8)।

गणितीय रचना विधिः—

गणितीय विधि से दो मानक अक्षांश वाले शंक्वाकार प्रक्षेप की रचना करने हेतु हमे तीन मापों की आवश्यकता होगी।

1. दोनों मानक अक्षांशों पर देशान्तरीय अन्तराल की दूरी।
2. केन्द्रीय देशान्तर रेखा पर प्रत्येक अक्षांश के बीच की दूरी।
3. मानक अक्षांश वृतों का अर्द्धव्यास दिया गया है।

लघुकृत पृथ्वी के गोले का अर्द्धव्यास (R) = 1.66 इंच

अतः 40^0 अक्षांश पर देशान्तरीय अन्तराल की दूरी

$$= \left[\frac{2\Pi R\times \text{-----} \times \text{प्रक्षेपान्तर}}{360}\right]$$

$$= \frac{2\times 22\times 1.66\times 10\times 0.76604}{7\times 360} = 0.222 \text{ इंच}$$

अब— 70^0 अक्षांश रेखा पर देशान्तरीय अन्तराल $= \dfrac{2\Pi R\times \text{प्रक्षेपान्तर} \times Cos\,70}{360}$

$$= \frac{2\times 22\times 1.66\times 10\times 0.34204}{7\times 360^0} = 0.099 \text{ इंच}$$

2. केन्द्रीय देशान्तर रेखा पर प्रत्येक अक्षांश के बीच की दूरी

$$= \frac{2\Pi R\times \text{प्रक्षेपान्तर}}{360^0} - = \frac{2\times 22\times 1.66\times 10}{7\times 360} = 0.29 \text{ इंच}$$

3. 70^0 मानक अक्षांश का अर्द्धव्यास$= 2\Pi R\left(\dfrac{70-40}{360}\right)\times \dfrac{Cos\,70^0}{Cos\,40^0 - Cos\,70^0}$

$$= 2\times 3.14\times 1.66\times\left(\frac{30}{360}\right)\times \frac{0.34203}{0.76604-0.34203} = 0.698 \text{ इंच}$$

40^0 मानक अक्षांश वृत का अर्द्धव्यास $= 2\Pi R\left(\dfrac{70-40}{360}\right)\times \dfrac{Cos\,40}{Cos\,40^0 - Cos\,70^0}$

$$= 2\times 3.14\times 1.66\times\left(\frac{30}{360}\right)\times \frac{0.76604}{0.76604-0.34203} = 1.563 \text{ इंच}$$

प्रक्षेप की रचनाः—

1. प्रक्षेप की रचना करने के लिए सर्वप्रथम एक सीधी लम्बवत रेखा खींचेगे जो कि केन्द्रीय देशान्तर रेखा होगी तथा इस रेखा पर उपर बिन्दु P मानेंगे।

2. बिन्दु P को केन्द्र मानकर 0.69 इंच तथा 1.56 इंच अर्द्धव्यास को लेकर क्रमशः 70^0 तथा 40^0 मानक अक्षांश की रचना करेंगे।
3. पुनः केन्द्रीय देशान्तर रेखा पर अन्य अक्षांशों का चिन्ह 0.29 इंच माप से बनायेंगे तथा P बिन्दु को केन्द्र मानकर सभी अक्षांशों की रचना करेंगे।
4. अब 40^0 मानक अक्षांश पर 0.22 एवं तथा 70^0 मानक अक्षांश पर 0.09 इंच नाप से देशान्तरीय अन्तराल के कुल 08 चिन्ह अंकित करेंगे (चित्र के अनुसार)।
5. पुनः बिन्दु P से सभी देशान्तरीय चिन्हों को मिलाती हुई सरल रेखायें खींच देंगे और यही सरल रेखायें देशान्तर रेखायें होंगी।
6. अन्त में सभी सम्बन्धित अक्षांश एवं देशान्तर रेखाओं का मान अंकित कर प्रक्षेप की रचना को पूर्ण करेंगे।

उदाहरण–4:– मापक 1 : 125000000 पर दो मानक अक्षांश वाले शंक्वाकार प्रक्षेप की रचना कीजिए, जिसका विस्तार 10^o उत्तरी अक्षांश से 70^o उत्तरी अक्षांश तथा 25^o पूर्वी देशान्तर से 85^o पूर्वी देशान्तर तक हो और प्रक्षेपान्तर 10^o हो।

हल– लघुकृत पृथ्वी के गोले का अर्द्धव्यास = $\frac{250000000}{125000000}$ = 2 इंच

अक्षांश रेखाओं की सं0= 10^o, 20^o, 30^o, 40^o, 50^o, 60^o तथा 70^o= 7 अक्षांश रेखायें

देशान्तर रेखाओं की सं0 = 25^o, 35^o, 45^o, 55^o, 65^o, 75^oतथा 85^o =

7 देशान्तर रेखायें

मानक अक्षांश का चुनाव = 20^oअक्षांश तथा 60^o अक्षांश

रचना विधि–

- सर्वप्रथम 2 इंच त्रिज्या की माप लेकर एक वृत्त का चतुर्थांश बनाया (AOB)
- वृत्त के चतुर्थांश में क्रमशः 10^o (प्रक्षेपान्तर) 20^o तथा 60^o का कोण बनाती हुई रेखा खींचकर चतुर्थांश की परिधि में मिलाया (PQR)।

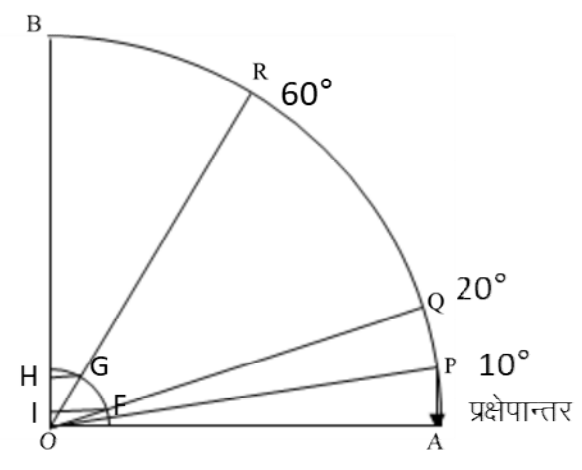

चित्र 3.9

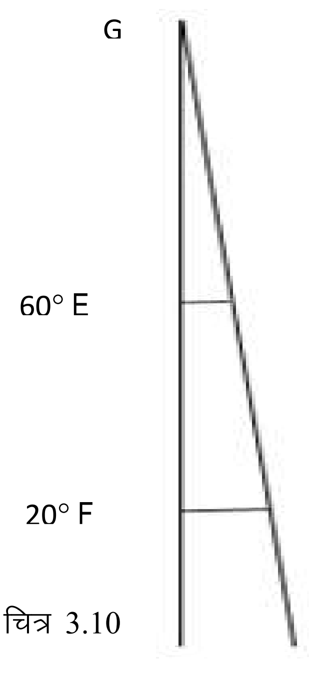

चित्र 3.10

➢ अब 10° प्रक्षेपान्तर की दूरी चाप में लेकर O को केन्द्र मानकर एक चाप खींचा तथा 20° तथा 60° के कटान बिन्दु से OB रेखा पर लम्ब डाला जो कि क्रमशः 20° मानक अक्षांश तथा 60° मानक अक्षांश पर प्रक्षेपान्तर की देशान्तरीय दूरियां है।

➢ पुनः एक सरल रेखा EF खींचा और उस पर प्रक्षेपान्तर AP की दूरी लेकर सभी अक्षांशों को अंकित किया, अब 20° तथा 60° अक्षांश पर मानक अक्षांश की देशान्तरीय दूरी के बराबर माप की रेखायें खींचा तथा इन दोनों प्रक्षेपान्तर की रेखाओं को मिलाती हुई एक रेखा खींचा जो EF रेखा को बिन्दु G पर काटती है। अब GE तथाGF मानक अक्षांश वृत्तों की त्रिज्या है।

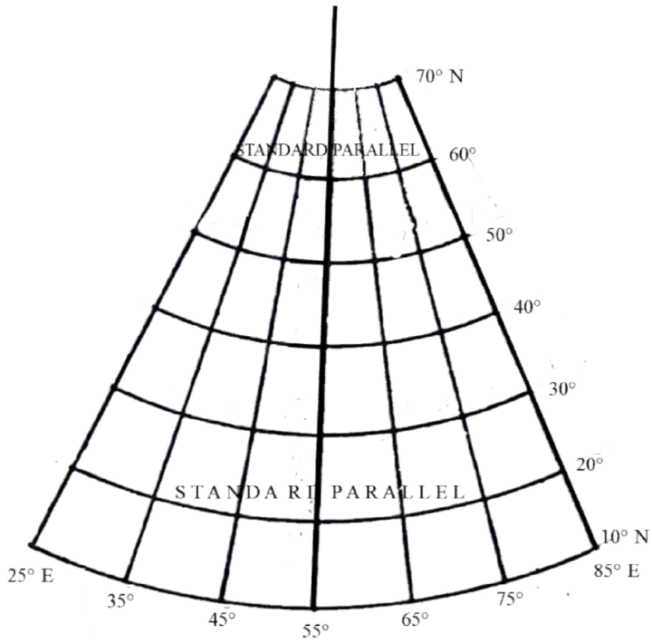

मापक 1 : 125000000

चित्र 3.11

प्रक्षेप की रचना–

- सर्वप्रथम एक खड़ी सीधी रेखा खींचिए, इस रेखा पर क्रमशः GE तथा GF का अर्द्धव्यास लेकर वृत्तखण्ड खींचिए जो कि क्रमशः 20° मानक अक्षांश तथा 60° मानक अक्षांश रेखायें है।
- इन मानक अक्षांशों पर पूर्व निर्धारित प्रक्षेपान्तर की देशान्तरीय दूरियां अंकित कीजिए।
- अक्षांशीय विस्तार के अनुसार सीधी रेखा पर AD नाप से सभी अक्षांशों का चिन्ह अंकित कीजिए तथा G को केन्द्र मानकर सभी अक्षांश वृत्तों का वृत्तखण्ड खींचिए।
- अब मानक अक्षांशों के सभी देशान्तरों को मिलाती हुई सीधी रेखा खींचकर देशान्तरों की रचना कीजिए तथा सभी का मान अंकित कीजिए।

गणितीय रचना विधि–

लघुकृत पृथ्वी के गोले का अर्द्धव्यास= $\frac{250000000}{125000000}$ = 2 इंच

केन्द्रीय मध्याह्न रेखा पर प्रक्षेपान्तर की दूरी =

$2\pi r \times$ प्रक्षेपान्तर / 360°

$=2\times3.1416\times2\times10/360 = 0.34$ इंच

20^o मानक अक्षांश पर प्रक्षेपान्तर की दूरी =

$2\pi r\times$ प्रक्षेपान्तर / $360^o\times\cos20^o$

$=2\times3.1416\times2\times10/360\times0.9396 = 0.32$ इंच

60^o मानक अक्षांश पर प्रक्षेपान्तर की दूरी =

$2\times3.1416\times2\times10/360\times\cos60^o$

$=2\times3.1416\times2\times10/360\times0.5 = 0\text{-}17$ इंच

अब 20^o अक्षांश वृत्त की शंकु के शीर्ष से दूरी =

$R\ Cot60^o = 2\times2.2.74 = 5\text{-}48$ इंच

60^o अक्षांश वृत्त की शंकु के शीर्ष से दूरी =

$R\ Cot60^o = 2\times0.57 = 1\text{-}14$ इंच

अब उपरोक्त मापकों की सहायता से प्रक्षेप की रचना करेंगे, सर्वप्रथम एक सीधी रेखा खींचकर उस पर कोई बिन्दु O लेगें। O को केन्द्र मानकर उपरोक्त दूरी के अनुसार 20^o तथा 60^oकी मानक अक्षांश का चाप खींचेगें तदुपरान्त इन मानक अक्षांशों पर क्रमशः 0.32 इंच तथा 0.17 इंच के अन्तराल से देशान्तर रेखाओं का चिन्ह् अंकित करेंगें। पुनः केन्द्रीय मध्याह्न रेखा पर 0.34 इंच की दूरी से सभी सम्बन्धित अक्षांश वृतों यथा 10^o, 30^o, 40^o, 50^o तथा 70^o का चिन्ह अंकित करेगें और बिन्दु O को केन्द्र मानकर सभी अक्षांशों का चाप खींचेगें तत्पश्चात् दोनों मानक अक्षांशों 20^oअक्षांश तथा 60^oअक्षांश पर पहले से चिन्हांकित देशान्तरों को क्रमशः मिलाकर देशान्तर रेखाओं की रचना करेगें। अब पुनः सभी संबन्धित अक्षांश एवं देशान्तर रेखाओं का मान लिखकर प्रक्षेप को पूरा करेगें।

विशेषताएँ (Characteristics)

- इस प्रक्षेप में सभी अक्षांश रेखायें एक संकेन्द्रीय वृत्त होती है।
- प्रत्येक अक्षांश रेखाओं के बीच की दूरी बराबर होती है तथा मापक केवल मानक अक्षांश वृत्तों के सहारे ही शुद्ध होता है।
- सभी देशान्तर रेखायें सरल रेखा होती है केन्द्रीय मध्याह्न रेखा तथा सभी देशान्तर रेखाओं के सहारे मापक में शुद्धता होती है।
- एक मानक अक्षांश वाले शंक्वाकार प्रक्षेप की अपेक्षा यह प्रक्षेप थोड़ा अधिक शुद्ध होता है।

उपयोग (Uses)

बहुतायत इस प्रक्षेप का उपयोग ऐसे देशों के प्रदर्शन के लिए किया जाता है जिनका पूरब–पश्चिम विस्तार अधिक हो। ट्रांस साइबेरियन रेलवे तथा एशिया यूरोप एवं उत्तरी अमेरिका के अधिकांश देशों का प्रदर्शन इस प्रक्षेप पर किया जाता है।

5. बोन प्रक्षेप (Bonne's Projection)

सर्वप्रथम फ्रांस के विशेषज्ञ रिग्रोवार्ट बोन ने इस प्रक्षेप को बनाया था। यह शंकु प्रक्षेप का ही एक संशोधित रूप है, इस प्रक्षेप में एक ही मानक अक्षांश होता है जिसका चुनाव सम्भवतः मध्यवर्ती भाग मे ही किया जाता है। इस प्रक्षेप में देशान्तर रेखायें एक सरल रेखा न होकर वक्र रेखायें होती है। इस प्रक्षेप पर क्षेत्रफल शुद्ध होता है।

उदाहरण–5:–प्रदर्शक भिन्न 1 : 125000000 पर एक बोन प्रक्षेप की रचना कीजिए, जिसका प्रक्षेपान्तर 10^o हो तथा विस्तार 25^oउत्तरी अक्षांश से 65^oउत्तरी अक्षांश तथा 20^o पूर्वी देशान्तर से 80^o पूर्वी देशान्तर हो।

$$\frac{}{250000000}$$

हल– लघुकृत पृथ्वी के गोले का अर्द्धव्यास= $\frac{}{125000000}$=2इंच

अक्षांश रेखाओं की संख्या =25°, 35°, 45°, 55°, 65°=

5 अक्षांश

देशान्तर रेखाओं की संख्या =20°, 30°, 40°, 50°, 60°, 70°, 80° =

7 अक्षांश

रचना विधि–

- सर्वप्रथम 2 इंच त्रिज्या की माप लेकर वृत्त का एक चतुर्थांश AOB खींचें। तत्पश्चात् इसके केन्द्र से प्रक्षेपान्तर 10° तथा सभी अक्षांश वृत्तों के बराबर कोण बनाती हुई रेखायें खींचे।
- पुनः प्रक्षेपान्तर AC की माप लेकर चतुर्थांश के केन्द्र O को केन्द्र मानकर एक छोटा चतुर्थांश बनाये जो सभी अक्षांशों को क्रमशः A, B, C, D तथा E पर काटता है।

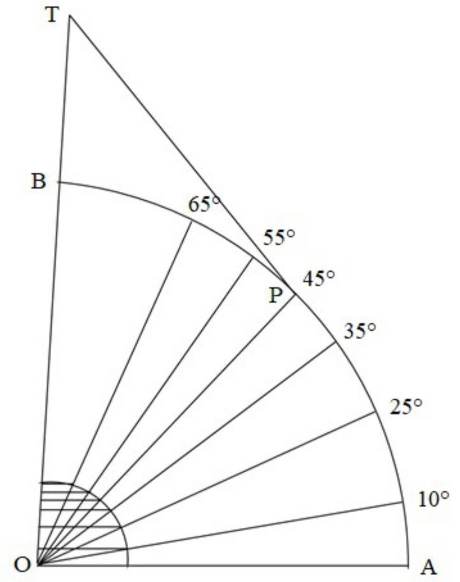

चित्र 3.12

- अब केन्द्रीय मध्याहन रेखा पर उपरोक्त बिन्दुओं A, B, C, D तथा E से लम्ब रेखा जो क्रमशः P, Q, R, S तथा T पर काटता है। अब AP, AQ इत्यादि रेखायें क्रमशः सम्बन्धित अक्षांशों की देशान्तरीय दूरियाँ है।
- अब मानक अक्षांश का चुनावन्दपज. 5 करेगें जो कि 45° अक्षांश है इस मानक अक्षांशीय रेखा OP से समकोण बनाती हुई एक रेखा खींचेगें जो कि रेखा को बिन्दु T पर स्पर्श करेगी। अतः PT रेखा मानक अक्षांश का अर्द्धव्यास होगी।

प्रक्षेप की रचना–

प्रक्षेप की रचना करने के लिए एक सीधी रेखा खींचिए और उस पर कोई बिन्दु O मान लीजिए। बिन्दु O से PT की माप का अर्द्धव्यास लेकर एक चाप खीचिए जो कि मानक अक्षांश 45° की अक्षांशीय रेखा है।

- केन्द्रीय मध्याहन रेखा और मानक अक्षांशीय रेखा के कटान बिन्दु से प्रक्षेपान्तरीय दूरी AC के बराबर माप लेकर सभी अक्षांशों यथा 55°, 65° तथा 35° एवं 25° का चिह्न अंकित करेगें।
- पुनः बिन्दु O को केन्द्र मानकर सभी अक्षांशीय चापों को खींचेगें।
- अब सभी अक्षांशीय चापों पर देशान्तरीय दूरीयों के बराबर माप का देशान्तरीय चिन्ह अंकित करेगें जैसे 45° अक्षांश पर CX के बराबर इत्यादि क्रमशः।

➢ इस प्रकार देशान्तरीय दूरियों को अंकित करने के पश्चात् सभी देशान्तरों को सुडौल वक्र रेखाओं द्वारा मिलाकर प्रक्षेप को पूरा कीजिए।

गणितीय रचना–

गणितीय विधि से बोन प्रक्षेप की रचना हेतु हमें तीन मानों की आवश्यकता होगी।

लघुकृत पृथ्वी के गोले का अर्द्धव्यास $= \frac{250000000}{125000000} = 2$ इंच

केन्द्रीय मध्याह्न रेखा पर 10^{o} की अक्षांशीय दूरी =

$2\pi r \times$ अन्तराल / 360^{o}

$= 2 \times 3.1416 \times 2 \times 10 = 0.34$ इंच

45^{o} के मानक अक्षांश वृत की शंकु के शीर्ष से दूरी =

$R \text{ Cot} 45^{o} = 2 \times 1 = 0.17$ इंच

मानक अक्षांश पर देशान्तरीय अन्तराल की दूरी =

$2\pi r \times$ अन्तराल / $360^{o} \times \text{Cos} 45^{o}$

$= 2 \times 3.1416 \times 2 \times 10 \times 0.7071 / 360 = 0.24$ इंच

मापक 1 : 125000000

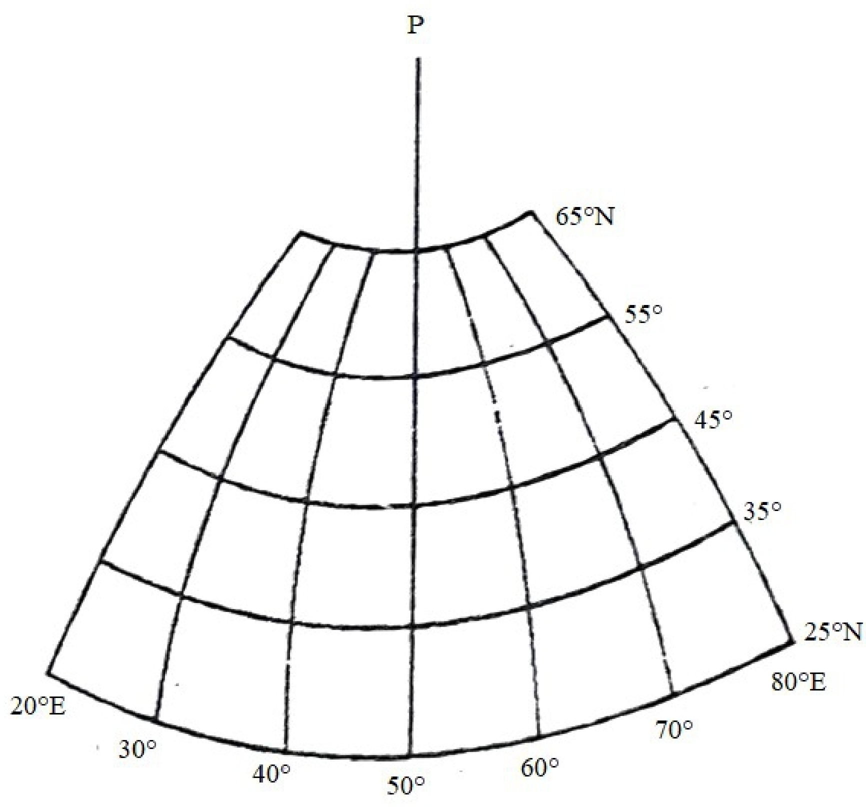

चित्र 3.12

अब सर्वप्रथम एक सीधी रेखा खींचेगें और उस पर कोई बिन्दु O लेगें जो शंकु के शीर्ष को प्रदर्शित करेगा। O को केन्द्र मानकर 2 इंच लम्बाई को त्रिज्या से 45^{o} मानक अक्षांश का एक चाप खींचेगें जो कि केन्द्रीय

मध्याह्न रेखा के लगभग बीच में होगा। अब इस मानक अक्षांश से 0.34 इंच के अन्तराल पर अन्य अक्षांश वृतों जैसे 55°, 65° ऊपर तथा 35° तथा 25° नीचे की तरफ चिन्हांकित करेगें। पुनः बिन्दु O को केन्द्र मानकर सभी अक्षांश वृतों के चाप खींचेगें। अब मानक अक्षांश जो कि 45° की अक्षांश रेखा है इस पर 0.24 इंच नाप से सभी देशान्तरीय अन्तरालों को अंकित करेगें और तत्पश्चात इन देशान्तरों और बिन्दु O को मिलाते हुई रेखाओं से सभी देशान्तरों के जाल को पूरा करेगें। अब सभी सम्बन्धित अक्षांश एवं देशान्तरों के मान लिखकर प्रक्षेप को पूरा करेगें।

विशेषताएँ (Characteristics)

सभी अक्षांश रेखायें एक समकेन्द्रीय वृत्त होती है। सभी देशान्तर रेखायें वक्राकार किन्तु सुडौल होती है। सभी अक्षांशीय वृत्तों के सहारे मापक शुद्ध होता है। इस प्रकार सभी अक्षांशीय वृत एक मानक अक्षांश होते हैं। इस प्रक्षेप में सभी देशान्तरों के सहारे भी मापक शुद्ध होता है। इस प्रक्षेप पर क्षेत्रफल भी शुद्ध होता है इसलिए इसे समक्षेत्र प्रक्षेप भी कहा जाता है। किनारे की ओर इस प्रक्षेप का आकार थोड़ा विकृत हो जाता है।

प्रयोग (Uses)

क्षेत्रफल शुद्ध होने के कारण इस प्रक्षेप का प्रयोग लगभग हर महाद्वीपों को दर्शाने के लिए किया जाता है किन्तु बहुत बड़े देशों अथवा महाद्वीपों का मानचित्र बनाने पर किनारों की तरफ उनका आकार विकृत हो जाता है अतः छोटे देशों/ प्रदेशों हेतु यह प्रक्षेप सर्वथा उपयुक्त है।

6.निष्कर्ष (Conclusion)

प्रस्तुत अध्याय में हमनें कुछ महत्वपूर्ण प्रक्षेपों के बारे में अध्ययन किया और मानचित्र को बनाने में प्रक्षेपों की महत्वपूर्ण भूमिका के बारे में अध्ययन किया खासतौर से शंकु प्रक्षेपों की रचना उनके गुण–दोष और उनकी उपयोगिता के बारे में गहराइयों से जाना। शंकु प्रक्षेपों का अध्ययन करने से विद्यार्थियों को यह ज्ञान हुआ कि इन प्रक्षेपों का बहुतायत प्रयोग शीतोष्ण कटिबन्धीय देशों में किया जाता है यथा इन देशों की फसलें, खनिज उत्पादन और अन्य क्रिया–कलाप को मानचित्र पर दर्शाने हेतु विद्यार्थियों को विशेष जानकारी होगी।

अन्य प्रक्षेपों की तुलना में शंकु प्रक्षेपों के महत्व के बारे में जानकर छात्र–छात्राओं में मानचित्र के प्रति उत्साह एवं आकर्षण को बढ़ावा मिलेगा।

मॉडल प्रश्न (Model Questions)

प्रश्न 1. **एक मानक अक्षांश वाला शंक्वाकार प्रक्षेप के नामकरण का आधार है–**

(a) इसका शंकु केवल भूमध्य रेखा को स्पर्श करता है।
(b) इसका शंकु केवल किसी एक ध्रुव को स्पर्श करता है।
(c) इसका शंकु किसी एक अक्षांश वृत को स्पर्श करता है।
(d) उपरोक्त में से कोई नहीं।

प्रश्न 2. **एक मानक अक्षांश के शंक्वाकार प्रक्षेप में ध्रुव को प्रकट किया जाता है–**

(a) एक बिन्दु के द्वारा।
(b) एक रेखा के द्वारा।
(c) एक चाप के द्वारा।
(d) उपरोक्त में से कोई नहीं।

प्रश्न 3. **एक मानक अक्षांश वाले शंक्वाकार प्रक्षेप में निम्न में से कौन–सा गुण विद्यमान होता है?**

(a) केवल एक गोलार्द्ध का मानचित्र बनाया जा सकता है।
(b) मानक अक्षांश पर मापनी शुद्ध होती है।
(c) समस्त देशान्तरों पर मापनी शुद्ध होती है।
(d) उपरोक्त सभी।

प्रश्न 4. **एक मानक अक्षांश वाले शंक्वाकार प्रक्षेप किस क्षेत्र का मानचित्र बनाने के लिए उपर्युक्त होते है?**

(a) जिनका उत्तर–दक्षिण विस्तार अधिक हो।

(b) जिनका पूरब–पश्चिम विस्तार अधिक हो।

(c) विषुवतीय क्षेत्र।

(d) ध्रुवीय क्षेत्र।

प्रश्न 5. **छोटक शांकव प्रक्षेप किसे कहते है?**

(a) एक मानक अक्षांश वाले शंक्वाकार प्रक्षेप को।

(b) दो मानक अक्षांश वाले शंक्वाकार प्रक्षेप।

(c) बोन प्रक्षेप।

(d) बहुशंकु प्रक्षेप।

प्रश्न 6. **निम्न में से कौन सा प्रक्षेप ''ना तो यथाकृतिक है और ना ही समक्षेत्र''।**

(a) दो मानक अक्षांश वाला शंक्वाकार प्रक्षेप।

(b) बोन प्रक्षेप।

(c) बहुशंकु प्रक्षेप।

(d) अंतर्राष्ट्रीय प्रक्षेप।

प्रश्न 7. **ट्रांससाइबेरियन रेलवे को दिखाने के लिए किस प्रक्षेप पर मानचित्र श्रेयस्कर होगा?**

(a) एक मानक अक्षांश वाला शंकवाकार प्रक्षेप।

(b) दो मानक अक्षांश वाला शंकवाकार प्रक्षेप।

(c) बोन प्रक्षेप।

(d) उपरोक्त में से कोई नहीं।

प्रश्न 8. **निम्नलिखित में से किस प्रक्षेप में सभी अक्षांशीय वृतों के सहारे मापक शुद्ध होता है–**

(a) एक मानक अक्षांश वाला शंक्वाकार प्रक्षेप।

(b) दो मानक अक्षांश वाला शंक्वाकार प्रक्षेप।

(c) बोन प्रक्षेप।

(d) उपरोक्त सभी।

प्रश्न 9. **शीतोष्ण कटिबन्धीय देशों के मानचित्र हेतु कौन–सा प्रक्षेप उपर्युकत होता है?**

(a) एम मानक अक्षांश वाला शंक्वाकार प्रक्षेप।

(b) दो मानक अक्षांश वाला शंक्वाकार प्रक्षेप।

(c) बोन प्रक्षेप।

(d) उपरोक्त सभी।

प्रश्न10. **निम्न में से बोन प्रक्षेप की विशेषतायें है–**

(a) यह शुद्ध क्षेत्रफल है।

(b) इस प्रक्षेप पर केवल एक गोलार्द्ध दिखाया जाता है।

(c) ध्रुव एक बिन्दु मात्र होता है।

(d) उपरोक्त सभी।

प्रश्न 11– मापक 1 : 125000000 पर एक मानक अक्षांश वाले शंकु प्रक्षेप की रचना कीजिए जिसका प्रक्षेपान्तर 10° हो तथा उसका विस्तार 10° उत्तरी अक्षांश से 70° उत्तरी अक्षांश तथा 30° पश्चिमी देशान्तर से 30° पूर्वी देशान्तर हो।

प्रश्न 12– एक मानक अक्षांश वाले शंक्वाकार प्रक्षेप और दो मानक अक्षांश वाले शंक्वाकार प्रक्षेपों में प्रमुख अन्तर को स्पष्ट कीजिए।

प्रश्न 13– मापक 1 : 250000000 पर यूरोप महाद्वीप को दर्शाने हेतु दो मानक अक्षांश वाले शंक्वाकार प्रक्षेप की रचना कीजिए जिसका प्रक्षेपान्तर 5° हो।

प्रश्न 14– बोन प्रक्षेप के गुण–दोष की व्याख्या करते हुए उसकी उपयोगिता को स्पष्ट कीजिए।

प्रश्न 15– शंक्वाकार प्रक्षेपों के प्रमुख प्रकारों तथा उनकी विशेषताओं का वर्णन कीजिए।

प्रश्न 16– मापक 1 : 250000000 पर एक बोन प्रक्षेप की रचना कीजिए जिसका प्रक्षेपान्तराल 15° हो तथा अक्षांशीय विस्तार 15° उत्तरी अक्षांश से 75° उत्तरी अक्षांश एवं देशान्तरीय विस्तार 45° पश्चिमी देशान्तर से 15° पूर्वी देशान्तर तक हो।

प्रश्न 17– बोन प्रक्षेप और दो मानक अक्षांश वाले शंक्वाकार प्रक्षेप में क्या दोष हैं, विवरण दीजिए।

प्रश्न 18–बोन प्रक्षेप को सर्वप्रथम किसने तैयार किया था?

प्रश्न 19–शंक्वाकार प्रक्षेप में मानक अक्षांश से आप क्या समझते हैं?

प्रश्न 20–शंक्वाकार प्रक्षेप पर किस प्रकार के मानचित्र बनाये जाते हैं?

सन्दर्भ पुस्तकें (Reference Books)

1. यादव, हीरा लाल (1987), प्रैक्टिकल जियोग्राफी, वसुंधरा प्रकाशन, गोरखपुर।
2. E. Raisz (1962), General Cartoigraphy, John Wiley and Sons, New York, 5th Edition.
3. F.J. Monkhouse and F.J. Wilkinson (1985), Maps and Diagrams, Methuen, London.
4. तिवारी, आर. सी. (2003), प्रयोगात्मक भूगोल, प्रयाग पुस्तक भवन, इलाहाबाद।
5. हीरा लाल (2009), प्रयोगात्मक भूगोल् के आधार, राधा पब्लिकेशन, नई दिल्ली।
6. हारून, मोहम्मद (2010), प्रयोगात्मक भूगोल, मिश्र ट्रेडिंग कारपोरेशन, मैदागिन, वाराणसी।
7. K. Sarkar (1997), Practical Geography: A Systematic Approach, Orient Longman, Kolkata.
8. L.R. Singh (2006), Fundamental of Practical Geography, Sharda Pustak Bhawan, Allahabad.
9. डी० आर० खुल्लर (2022), प्रयोगात्मक भूगोल, कल्याणी पब्लिकेशन नई दिल्ली।
10. Misra, R. P. and Ramesh, A. (1969), Fundamental of Cartography, University of Mysore, Mysore.
11. चौहान, पी आर (1998), प्रायोगिक भूगोल, वसुंधरा प्रकाशन, गोरखपुर।
12. Robinson, A.H. (2009), Elements of Cartography, Wiley; Sixth edition (1 January 2009), USA.
13. जे०पी० शर्मा (2011), प्रायोगिक भूगोल, (चतुर्थ संस्करण), रस्तोगी पब्लिकेशन्स मेरठ।
14. आर. एन. मिश्र एवं पी के शर्मा (2019), प्रायोगिक भूगोल, रावत पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली।
15. आर० एल० सिंह एवं राना पी बी सिंह (1993), प्रयोगात्मक भूगोल के तत्व कल्याणी पब्लिशर्स, नई दिल्ली।
16. आर०सी० तिवारी एवं सुधाकर त्रिपाठी (2018) अभिनव प्रयोगात्मक भूगोल, प्रवालिका पब्लिकेशन्स, इलाहाबाद।

इकाई–4 (Unit- 4)
बेलनाकार प्रक्षेप : गुण–दोष एवं रचना – समक्षेत्र बेलनाकार
(Cylindrical Projection: Merit – Demerit and Construction – Equal Area Cylindrical Projection)

पाठ संरचना (Lesson Structure)

1. उद्देश्य (Obejective)
2. प्रस्तावना (Introduction)
3. बेलनाकार प्रक्षेप : गुण–दोष (Cylindrical Projection: Merit-Demerit)
4 संदर्श बेलनाकार प्रक्षेप (Perspective Cylindrical Projection)
5 सामान्य अथवा समदूरस्थ बेलनाकार प्रक्षेप(Simpleor Equidistanant Cylindrical Projection)
6 समक्षेत्र बेलनाकार प्रक्षेप (Equal Area Cylindrical Projection)
7 विशेषताएं एंव उपयोग (Characteristics and uses)
8 निष्कर्ष (Conclusion)
9 मॉडल प्रश्न (Model Question)
10 सन्दर्भ पुस्तक (Reference Books)

1. उद्देश्य (Obejectives)

1. भूमध्य रेखीय देशों का मानचित्र ठीक तरह से बनाया जा सकता है।
2. छात्र–छात्राओं को बेलनाकार प्रक्षेप बनाने में आसान रहेगा।
3. इस प्रक्षेप पर बड़े–बड़े देशों महाद्वीपों का मानचित्र आसानी से बनाया जा सकेगा।
4. आयताकार आकृति का होने के कारण मानचित्र पढ़ना तथा समझना सरल होगा।

2. प्रस्तावना (Introduction)

इस प्रक्षेप में ग्लोब को कागज के खोखले बेलन से पूरा इस प्रकार से ढ़क दिया जाता है ताकि बेलन भूमध्य रेखा को पूरा स्पर्श करता हो और अन्य अक्षांश प्रक्षेपित हों, इस प्रकार प्रक्षेपित करने से प्राप्त अक्षांश और देशान्तर रेखाओं के रेखाजाल को बेलनाकार प्रक्षेप कहा जाता है। इसमें समस्त अक्षांश एक सीधी रेखा तथा भूमध्य रेखा के बराबर होते है। अतः मापनी केवल भूमध्य रेखा पर ही शुद्ध होती है। सभी देशान्तर रेखायें भी एक सरल रेखा होती है एवं उनके बीच की आपसी दूरी सदैव समान होती है। प्रत्येक अक्षांश एंव देशान्तर रेखाओं का कटान बिन्दु एक समकोण होता है अतः इस प्रक्षेप की आकृति आयताकार हो जाती है। इस प्रक्षेप में भूमध्य रेखा से अन्य अक्षांश वृतों की दूरी गणितीय सूत्र $R^{\tan\theta}$ से ज्ञात की जाती है। विषुवत रेखीय देशों का मानचित्र बनाने हेतु यह प्रक्षेप बहुत उपयोगी है।

3.संदर्श बेलनाकार प्रक्षेप

(Perspective Cylindrical Projection)

इस प्रक्षेप की रचना करने में यह माना जाता है कि बेलन भूमध्य रेखा के सहारे ग्लोब को स्पर्श करता है तथा प्रकाश स्रोत ग्लोब के केन्द्र में रखा हुआ है। इसे यथार्थ या स्वाभाविक बेलनाकार प्रक्षेप भी कहते है। बेलन के भूमध्य रेखा के सहारे मापनी स्पर्श करने के कारण भूमध्य रेखा की दूर जाने पर अक्षांशो के बीच की दूरी और उनके सहारे मापनी क्रमशः बढ़ती जाती है। इस प्रक्षेप पर ध्रुव का प्रदर्शन सम्भव नहीं हो पाता क्योंकि वह अनन्त हो जाता है।

उदाहरण–1:– 1:250000000 प्रदर्शक भिन्न पर एक संदर्श बेलनाकार प्रक्षेप की रचना कीजिए जिसका विस्तार 60^0 उत्तरीय अक्षांश से 60^0 दक्षिणी अक्षांश हो तथा प्रक्षेपान्तर 20^0 का हो।

हल. लघुकृत पृथ्वी के गोले का अर्द्धव्यास $\frac{\text{पृथ्वी का वास्तविक अर्द्धव्यास}}{\text{प्रदर्शक भिन्न का हर}}$

$$= \frac{250000000}{250000000} = 1 \text{ इंच}$$

भूमध्य रेखा की लं0 $= 2\Pi R$

$= 2 \times \frac{22}{7} \times 1 = 6.3$ इंच

भूमध्य रेखा पर देशान्तरों के बीच की दूरी $\frac{2\Pi R \times \text{प्रक्षेपान्तर}}{360}$

$= \frac{2 \times 22 \times 1 \times 20}{7 \times 360^0}$ = 0.35 इंच

प्रक्षेप की रचना:–

1. सर्वप्रथम किसी बिन्दु 0 को केन्द्र मानकर 1 इंच की त्रिज्या से एक अर्धवृत ABC की रचना करते हैं जिसमें AC रेखा ध्रुवीय व्यास को तथा OB रेखा भूमध्यरेखीय त्रिज्या को प्रदर्शित करती है।
2. बिन्दु B से भूमध्य रेखा की लम्बाई के बराबर यानि 6.3 इंच लम्बाई की एक रेखा BP खींचते हैं। यही रेखा प्रक्षेप में भूमध्य रेखा को प्रकट करेगी।
3. अब बिन्दु 0 पर OB रेखा के दोनो ओर क्रमशः 20^0, 40^0 तथा 60^0 का कोण बनाती हुई रेखायें खींचेगी जो वृत की परिधि को क्रमशः DEF तथा GHI पर काटती है।
4. पुनः बिन्दु B पर एक लम्बवत स्पर्श रेखा खींचेगे। इस स्पर्श रेखा को 0 बिन्दु से प्रसारित विभिन्न कोण की रेखायें क्रमशः D' R' F' तथा G' H' I' पर काटती है।
5. अब इन बिन्दुओं से भूमध्य रेखा BP के सामान्तर रेखायें खींच देंगे जो क्रमशः 20^0, 40^0 तथा 60^0 उत्तरी अक्षांश एवं 20^0, 40^0 तथा 60^0 दक्षिणी अक्षांश को प्रदर्शित करेगी।
6. भूमध्य रेखा BP को देशान्तरीय अन्तराल 20^0 के आधार $\frac{360}{20} = 18$ समान भागों में विभाजित कर देंगे और इन विभाजन बिन्दुओं से भूमध्य रेखा पर समकोण बनाती हुई रेखायें खींच देंगे। ये रेखाएं प्रक्षेप में सम्बन्धित देशान्तर रेखाओं को दर्शायेगी।
7. सभी अक्षांश एवं देशान्तर रेखाओं का मान अंकित कर प्रक्षेप की रचना पूरी करेंगे।

गणितीय रचना विधि:–

गणितीय विधि से इस प्रक्षेप की रचना करने हेतु हमें तीन मापों की आवश्यकता होगी।

1. भूमध्य रेखा की लम्बाई।
2. भूमध्य रेखा से विभिन्न अक्षांश रेखाओं की दूरिया, तथा
3. भूमध्य रेखा पर देशान्तरीय अन्तराल की दूरी

हल. लघुकृत पृथ्वी के गोले का अर्द्धव्यास (R)

= 1 इंच (आलेखी विधि में)

अतः (1) भूमध्य रेखा की लम्बाई = $2\Pi R$

$$= 2\times\frac{22}{7}\times 1 = 6.3 \text{ इंच}$$

संदर्श बेलनाकार प्रक्षेप

प्रदर्शक भिन्न– 1:250000000

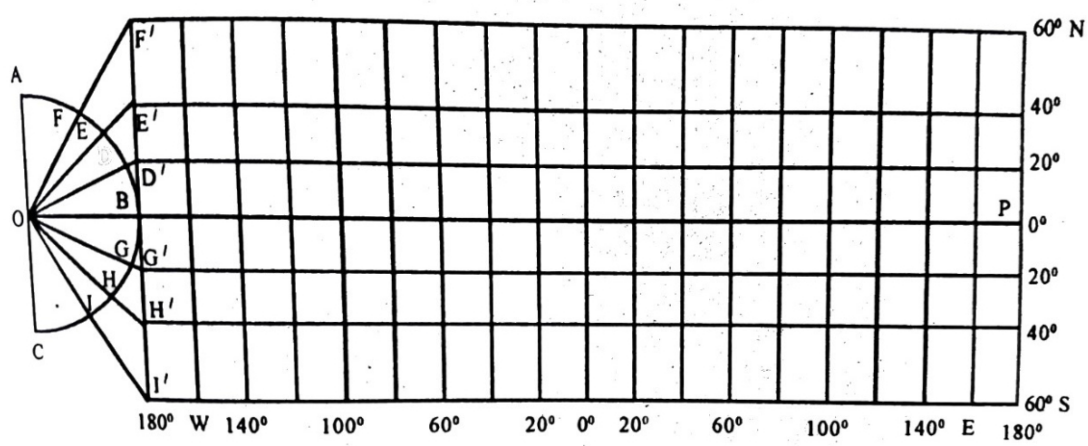

चित्र 4.1

2. भूमध्य रेखा से विभिन्न अक्षांश रेखाओं की दूरी ज्ञात करने हेतु चित्र में:–

समकोण ΔOBG में

$$\frac{G'B}{0B} = \frac{\text{लम्ब}}{\text{आधार}}$$

$$G'B = OB\times\tan\theta$$

$G'B = R\times\tan\theta$ (जहां θ का मान 20^0 है)

अतः उपरोक्त सूत्र की सहायता से हम विभिन्न अक्षांश रेखाओं भूमध्य रेखा से दूरी ज्ञात कर सकते हैं।

अब– 20^0 की अक्षांश की भूमध्य रेखा से दूरी = R Tan 20^0

= 1x0.36397 = 0.36 इंच

40^0 अक्षांश की भूमध्य रेखा से दूरी = R Tan 40^0

= 1x0.83910 = 0.84 इंच

60^0 अक्षांश की भूमध्य रेखा से दूरी = R Tan 60^0

= 1x0.36397 = 1.73 इंच

3. भूमध्य रेखा पर देशान्तरों के बीच की दूरी $= \frac{2\Pi R\times}{360}$ प्रक्षेपान्तर

$$= \frac{6.3\times 20}{360} = 0.35 \text{ इंच}$$

प्रक्षेप की रचना:–

1. सर्वप्रथम 1 इंच अर्द्धव्यास लेकर एक अर्द्धावृत्त OABC की रचना करते हैं जिसमें OB विषुवतीय त्रिज्या तथा AC ध्रुवीय व्यास को प्रदर्शित करेंगे।
2. तदुपरान्त बिन्दु B से 6.3 इंच लम्बी एक रेखा BP खीचेंगे जो कि भूमध्य रेखा को प्रकट करेगी।

3. रेखा BP को 0.35 इंच की माप से देशान्तरों के अनुसार बराबर–बराबर 18 भागों में विभाजित करेंगे और सभी विभाजित बिन्दुओं से भूमध्य रेखा पर समकोण बनाती हुई लम्बवत रेखाएं खीचेंगे जो कि प्रक्षेप में सभी सम्बन्धित देखान्तरों को प्रकट करेगी।
4. अब विभिन्न अक्षांशों की भूमध्य रेखा से दूरी के आधार पर क्रमशः 0.36 इंट 20^0 उत्तरी तथा दक्षिणी अक्षांश हेतु 0.84 इंच 40^0 उत्तरी एवं दक्षिणी अक्षांत हेतु एवं 1.73 इंच 60^0 उत्तरी एवं दक्षिणी अक्षांश रेखा की रचना करेंगे।
5. अब सभी अक्षांश एवं देशान्तर रेखाओं से सम्बन्धित उनका मान लिखकर पक्षेप को पूरा करेंगे।

विशेषताएंः–

1. इस प्रक्षेप में अक्षांश एवं देशान्तर रेखाएं एक सीधी रेखा होती है तथा एक दूसरे पर लम्ब होती है।
2. सभी अक्षांशों पर देशान्तर रेखाओं के बीच की दूरी बराबर होती है।
3. भूमध्य रेखा से ध्रुवों की ओर उत्तरोत्तर बढ़ने पर अक्षांश रेखाओं के बीच का अन्तराल क्रमशः बढ़ता जाता है।
4. इस प्रक्षेप में सभी अक्षांश रेखाएं भूमध्य रेखा के बराबर ही होती है। यहां तक की ध्रुव भी जो कि एक बिन्दु है, भूमध्य रेखा के बराबर ही होता है।
5. इस प्रक्षेप पर मापक केवल भूमध्य रेखा के सहारे ही शुद्ध पाया जाता है। इससे उपर या नीचे जाने पर मापनी अशुद्ध जोती जाती है। फलस्वरूप इस प्रक्षेप की आकृति, क्षेत्रफल एवं दिशाएं सभी अशुद्ध हो जाते हैं।
6. इस प्रक्षेप की रचना में त्रिकोणमितीय सूत्र का प्रयोग किया जाता है।

4.सामान्य अथवा समदूरस्थ बेलनाकार प्रक्षेप
(Simple or Equidistanant Cylindrical Projection)

इस प्रक्षेप का अविष्कार प्लेट कैरी नामक एक मानचित्रकार ने किया था। फलतः इस प्रक्षेप को प्लेट कैरी प्रक्षेप भी कहा जाता हैं इस प्रक्षेप में अक्षांश एवं देशान्तर रेखाओं की आपसी दूरी सदैव समान होती है। अतः इस प्रक्षेप को समदूरस्थ प्रक्षेप भी कहा जाता है। इसकी रचना अत्यन्त आसान है।

उदाहरण–2:–प्रदर्शक भिन्न 1:250000000 पर विश्व का मानचित्र बनाने के लिए एक साधारण बेलनाकार प्रक्षेप की रचना कीजिए जिसका प्रक्षेपान्तर 15^0 हो।

हल. लघुकृत पृथ्वी के गोले का अर्द्धव्यास $= \frac{\text{पृथ्वी का वास्तविक अर्द्धव्यास}}{\text{प्रदर्शक भिन्न का हर}}$

$$= \frac{250000000}{250000000} = 1 \text{ इंच}$$

भूमध्य रेखा की लम्बाई $= 2\Pi R$

$$= 2\times\frac{22}{\gamma}\times 1 = 6.3 \text{ इंच}$$

भूमध्य रेखा पर प्रत्येक देशान्तर के बीच की दूरी $= \frac{2\Pi R\times \text{ प्रक्षेपान्तर}}{360}$

$$= \frac{6.3 \times 15}{360} = 0.26 \text{ इंच}$$

प्रक्षेप की रचनाः—

1. सर्वप्रथम 1 इंच त्रिज्या लेकर एक अर्धवृत ONAS की रचना करते हैं जिसमें NS ध्रुवीय व्यास तथा OA विषुवतीय अर्द्धव्यास को प्रदर्शित करता है।
2. 0 बिन्दु से प्रक्षेपान्तर 15^0 का कोण बनाती हुई एक रेखा खीचेंगे जो कि अर्द्धवृत की परिधि को बिन्दु B पर काटती है। यही AB की चापीय दूरी अक्षांश और देशान्तर रेखाओं के बीच की अन्तरालीय दूरी होगी।
3. अब बिन्दु A से 6.3 इंच नाप की एक क्षैतिज रेखा AD खीचेंगे।
4. पुनः इस रेखा को परकार में 0.26 इंच नाप लेकर 24 बराबर भागों में बांट देंगे तथा प्रत्येक भाग से AD पर लम्ब डालती हुई रेखाएं उपर तथा नीचे की ओर खींच देंगे ये रेखायें देशान्तर रेखाओं को प्रकट करेगी।
5. अब बिन्दु A तथा D की स्पर्श रेखाओं को भी इसी नाप (0.26 इंच) से परकार द्वारा उपर तथा नीचे की ओर 6—6 चिन्ह लगायेंगे जो कि क्रमशः 15^0, 30^0, 45^0, 60^0, 75^0, तथा 90^0 की अक्षांश रेखाओं के निशान होंगे।
6. पुनः भूमध्य रेखा AD के समानान्तर रेखा EF तथा GH पर लगे अक्षांशीय चिन्हों को आपस में मिलाकर अक्षांश रेखाओं की रचना करेंगे।
7. अब सभी अक्षांश एवं देशान्तर रेखाओं के सम्बन्धित मान को लिखकर प्रक्षेप की रचना को पूरी करेंगे।

गणितीय रचना विधिः—

गणितीय विधि से हम प्रक्षेप की रचना करने लिए हमें केवल दो मापों की आवश्यकता होती है।

1. भूमध्य रेखा की लम्बाई।
2. अक्षांश एवं देशान्तर रेखाओं का अन्तराल (जो कि सदैव बराबर होता है)

हलः—

1. भूमध्य रेखा की लम्बाई $= 2\Pi R$

$$= 2 \times \frac{22}{7} \times 1 = 6.3 \text{ इंच}$$

2. अक्षांश एवं देशान्तर रेखाओं के बीच की दूरी $= \frac{2\Pi R \times \text{प्रक्षेपान्तर}}{360^0}$

$$= \frac{6.3 \times 15}{360} = 0.26 \text{ इंच}$$

रचनाः—

1. सर्व प्रथम 6.3 इंच लम्बी एक क्षैतिज रेखा AD खींचते हैं जो कि भूमध्य रेखा को प्रदर्शित करेगी।
2. अब बिन्दु A पर EF तथा बिन्दु D पर GH स्पर्श रेखा खीचेंगे जो कि AD रेखा पर लम्बवत है।
3. अब भूमध्य रेखा AD पर परकार में 0.26 इंच नाप लेकर 24 बराबर भाग के देशान्तरीय चिन्ह लगायेंगे।
4. पुनः इसी माप (0.26 इंच) से लंबवत रेखा EF तथा रेखा GH पर AD रेखा के उपर तथा नीचे क्रमशः 6—6 चिन्ह लगायेंगे जो कि सभी अक्षांशों के निशान होंगे।
5. अब EF तथा GH रेखा पर लगे निशानों को भूमध्य रेखा के समानान्तर आपस में मिला देंगे। अब ये रेखायें क्रमशः 15^0, 30^0, 45^0, 60^0, 75^0, तथा 90^0 उत्तरी तथा दक्षिणी अक्षांश की रेखायें होगी।
6. अब भूमध्य रेखा AD पर लगे देशान्तरीय चिन्हों को ऊपर तथा नीचे की छोर प्रक्षेप के विस्तार की सीमा तक बढ़ा देंगे। ये रेखायें सभी देशान्तरों को प्रकट करेगी।
7. सभी अक्षांश और देशान्तरों के सम्बन्धित मान को लिखकर प्रक्षेप की रचना को पूर्ण करेंगे।

सामान्य अथवा समदूरस्थ बेलनाकार प्रक्षेप

प्रदर्शक भिन्न– 1:250000000

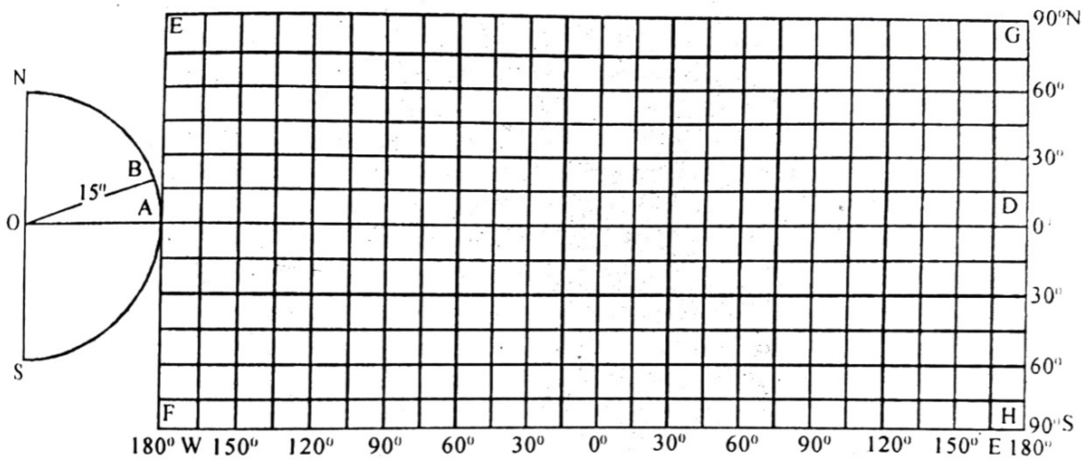

चित्र 4.2

विशेषताएं :–

1. इस प्रक्षेप पर समान आकार के वर्ग निर्मित होते हैं क्योंकि आक्षांश एवं देशान्तर रेखाओं के बीच का अन्तराल बराबर होता है।
2. समस्त अक्षांश रेखायें भूमध्य रेखा के समानान्तर एवं भूमध्य रेखा की लम्बाई के बराबर ही होती है।
3. सभी देशान्तर रेखायें भी आपस में समानान्तर एवं बराबर होती है तथा ये सभी अक्षांश रेखाओं एवं भूमध्य रेखा को भी समकोण पर काटती है।
4. इस प्रक्षेप में किसी भी देशान्तर की लम्बाई अक्षांश रेखा की लम्बाई का आधा होती है, क्योंकि अक्षांश रेखाओं की संख्या देशान्तर रेखाओं की संख्या का आधा होती है।

उदाहरण–3:–प्रदर्शक भिन्न 1:280000000 मापनी पर संसार का मानचित्र बनाने के लिए एक सामान्य अथवा समदूरस्थ बेलनाकार प्रक्षेप की रचना कीजिए जिसका प्रक्षेपान्तर 15^0 हो।

हल. लघुकृत पृथ्वी के गोले का अर्द्धव्यास (R) = $\dfrac{\text{पृथ्वी का वास्तविक अर्द्धव्यास}}{\text{प्रदर्शक भिन्न का हर}}$

$$= \frac{250000000}{280000000} = 0.9 \text{ इंच}$$

भूमध्य रेखा की लम्बाई $= 2\Pi R$

$$= 2 \times \frac{22}{7} \times 0.89 = 5.61 \text{ इंच}$$

देशान्तरीय अन्तराल की दूरी $= \dfrac{2\Pi R \times \text{प्रक्षेपान्तर}}{360^0}$

$$= \frac{5.61 \times 15}{360} = 0.23 \text{ इंच}$$

प्रक्षेप की रचना:–

1. प्रक्षेप की रचना करने हेतु सर्वप्रथम 5.61 इंच लम्बाई की AB एक रेखा खींचते हैं जो कि प्रक्षेप में भूमध्य रेखा को प्रदर्शित करेगी।
2. पुनः बिन्दु A तथा बिन्दु B से उपर तथा नीचे की ओर लम्ब रेखायें खीचेंगे जो क्रमशः CD एवं EF होगी और ये रेखायें 180^0 देशान्तरीय रेखा को प्रकट करेगी।
3. अब भूमध्य रेखा AB को प्रक्षेपान्तर के अनुसार कुल 24 बराबर भागो में (प्रत्येक 0.23 इंच) में बांट देंगे और निशान लगायेंगे।
4. अब इसी नाप (0.23 इंच) से लम्बवत रेखा CD पर भूमध्य रेखा के बिन्दु A के उपर तथा नीचे 6–6 निशान लगायेंगे जो सभी अक्षांश रेखाओं यथा क्रमशः 15^0, 30^0, 45^0, 60^0, 75^0 उत्तरीय तथा दक्षिणी अक्षांशों को प्रदर्शित करेगी।
5. अब CD रेखा पर लगे चिन्हों को भूमध्य रेखा के समानान्तर क्षैतिज रेखा EF से मिला देंगे। अब सभी अक्षांश रेखायें बनकर तैयार हो जायेगी।
6. पुनः भूमध्य रेखा पर देशान्तरीय चिन्हों को CD तथा EF के समानान्तर भूमध्य रेखा पर लम्बवत मिला देंगे। इस प्रकार सभी देशान्तरीय की रचना भी पूर्ण हो जायेगी।
7. अन्त में सभी अक्षांश एवं देशान्तरों का मान लिखकर अपने प्रक्षेप को पूरा करेंगे।
8. इस प्रक्षेप में भूमध्य रेखा की लम्बाई शुद्ध होती है तथा इसके सहारे मापनी भी शुद्ध पायी जाती है।

समदूरस्थ बेलनाकार प्रक्षेप

प्रदर्शक भिन्न– 1:280000000

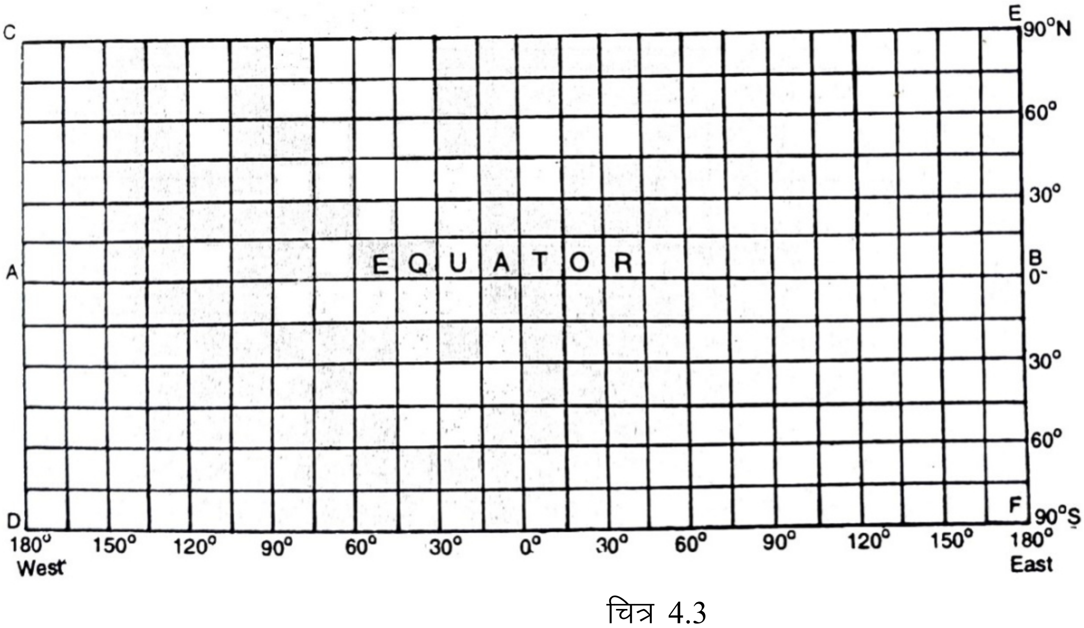

चित्र 4.3

9. भूमध्यरेखा के अलावा अन्य सभी अक्षांश रेखायें अपनी मूल लम्बाई से बड़ी होती है। फलस्वरूप उन पर मापनी की अशुद्ध होती है। इसका अनुमान इसी बात से लगाया जा सकता है कि ध्रुव जो कि एक बिन्दु होता है, उसकी भी लम्बाई भूमध्य रेखा की लम्बाई के बराबर होती है। अतः यह कहा जा सकता है कि भूमध्य रेखा के उपर अथवा नीचे की ओर बढ़ने पर अक्षांश रेखाओं की मापनी की अशुद्धि उत्तरोत्तर बहती जाती है।
10. प्रत्येक देशान्तर रेखाओं के सहारे मापनी शुद्ध होती है क्योंकि सभी अक्षांश रेखायें भूमध्य रेखा से सही दूरी पर बनायी गयी होती है।

11. यह प्रक्षेप समक्षेत्र प्रक्षेप नहीं है और इसकी आकृति भी शुद्ध नहीं होती है और ना ही इस पर दिशायें शुद्ध होती है।

उपयोगः—

यह प्रक्षेप भूमध्य रेखीय क्षेत्रों के मानचित्र बनाने हेतु अत्यन्त उपयोगी होता है क्योंकि भूमध्य रेखा के सहारे इसकी आकृति एवं क्षेत्रफल में न्यूनतम त्रुटि होती है। इस प्रक्षेप पर ध्रुवीय क्षेत्रों के मानचित्र नहीं बनाये जा सकते, क्योंकि ध्रुवीय क्षेत्रों की आकृति, क्षेत्रफल एवं मापनी सदैव विकृत हो जाती है।

समक्षेत्र बेलनाकार प्रक्षेप

(Equal Area Cylindrical Projection)

इस प्रक्षेप में ग्लोब पर बने अक्षांश एवं देशान्तर रेखाओं के जाल को एक बेलनाकार कागज पर प्रदर्शित किया जाता है। सामान्यतः ग्लोब को बेलाकार कागज में इस प्रकार रखा जाता है कि दोनो का अक्ष एक ही अनुरूप है।

उदाहरण—4:—प्रदर्शक भिन्न 1: 300000000 पर संसार का मानचित्र बनाने के लिए एक समक्षेत्र बेलनाकार प्रक्षेप की रचना कीजिए जिसका प्रक्षेपान्तराल 15^0 हो।

हल.

लघुकृत पृथ्वी के गोले का अर्द्धव्यास $=(R)$ $= \dfrac{\text{पृथ्वी का वास्तविक अर्द्धव्यास}}{\text{प्रदर्शक भिन्न का हर}}$

$$R = \frac{250000000}{300000000} = 0.833 \text{ इंच}$$

भूमध्य रेखा की लम्बाई $= 2\Pi R$

$$= 2 \times \frac{22}{7} \times 0.833 = 5.22 \text{ इंच}$$

भूमध्य रेखा पर देशान्तरीय अन्तराल की दूरी $= \dfrac{2\Pi R \times \text{प्रक्षेपान्तर}}{360}$

$$= \frac{5.22 \times 15}{360} = 0.217 \text{ इंच}$$

प्रक्षेप की आलेखी रचनाः—

1. सर्वप्रथम किसी बिन्दु 0 को केन्द्र मानकर 0.83 इंच अर्द्धव्यास लेकर एक अर्धवृत OTPS की रचना करते हैं जिसमें रेखा TS ध्रुवीय व्यास को प्रदर्शित कर रहा है तथा रेखा OP भूमध्य रेखीय पृथ्वी की त्रिज्या को प्रकट करेगी।
2. अब बिन्दु P से भूमध्य रेखा की लम्बाई के बराबर 5.22 इंच नाप की एक रेखा PQ खीचेंगे जो प्रक्षेप में भूमध्य रेखा को प्रदर्शित करेगी।
3. पुनः P बिन्दु पर Ab तथा Q बिन्दु पर CD लम्बवत रेखायें खींच देंगे।
4. अब केन्द्र 0 से 15^0 के अन्तराल पर कोण बनाती हुई रेखायें खीचेंगे जो अधिवृत की परिधि को क्रमशः EFGHIT तथा JKLMNS बिन्दुओं पर काटेगी।
5. पुनः इन कटान बिन्दुओं से भूमध्य रेखा PQ के समानान्तर रेखायें बीच देंगे जो क्रमशः क्रमशः 15^0, 30^0, 45^0, 60^0, 75^0 तथा 90^0 उत्तरी अक्षांश एवं 15^0, 30^0, 45^0, 60^0, 75^0 तथा 90^0 दक्षिणी अक्षांश की रेखायें होगी।

6. देशान्तर रेखाओं की रचना करने के लिए भूमध्य रेखा PQ को 0.217 इंच नाप परकार में लेकर कुल 24 बराबर भागों (देशान्तरीय अन्तराल के अनुसार) में बांट देंगे अथवा PE की चापीय दूरी से 24 बराबर भागों में बांट देंगे।
7. इन कटान बिन्दुओं से रेखा AB के समानान्तर लम्बवत रेखायें खींच देंगे जो कि प्रक्षेप में सभी देशान्तर रेखाओं को प्रदर्शित करेगी।
8. अब सभी अक्षांश एंव देशान्तर रेखाओं का मान लिखकर अपने प्रक्षेप की रचना को पूर्ण कर लेंगे।

5. समक्षेत्र बेलनाकार प्रक्षेप

प्रदर्शक भिन्न 1: 300000000

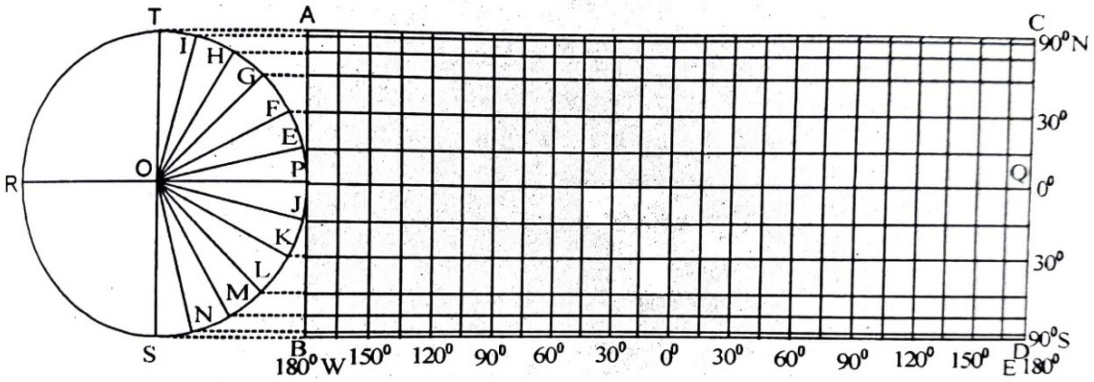

चित्र 4.4

गणितीय रचना विधि :–

गणितीय विधि के अनुसार समक्षेत्र बेलनाकार प्रक्षेप की रचना करने के लिए हमें तीन मापों की आवश्यकता होती है।

1. प्रदर्शक भिन्न के अनुसार भूमध्य रेखा की लम्बाई।
2. भूमध्य रेखा पर देशान्तरीय अन्तराल की दूरी।

हल. लघुकृत पृथ्वी के गोले का अर्द्धव्यास $=(R)\ \dfrac{250000000}{300000000} = 0.833$ इंच

1. भूमध्य रेखा की लम्बाई $= 2\Pi R = 2 \times \dfrac{22}{7} \times 0.833 = 5.22$ इंच

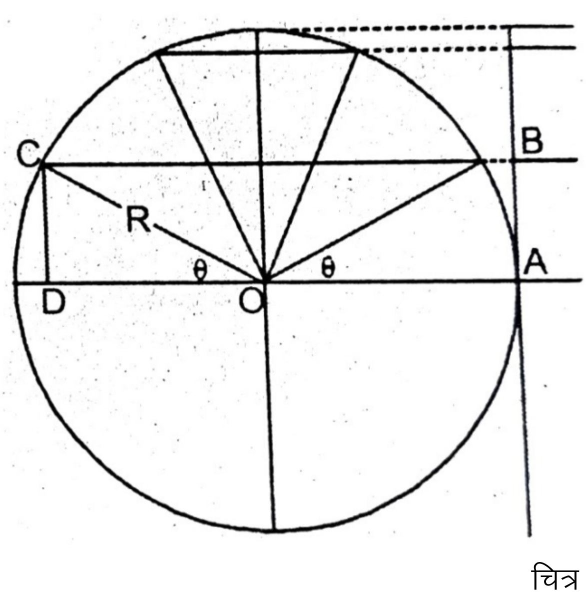

चित्र 4.5

2. भूमध्य रेखा पर देशान्तरीय अन्तराल की दूरी $= \frac{2\Pi R \times 15^0}{360^0}$ = 0.217 इंच

3. भूमध्य रेखा से विभिन्न अक्षांश रेखाओं की दूरी ज्ञात करने हेतु हमें चित्र से सहायता लेना होगा।

चित्र से स्पष्ट है कि समकोण ΔODC में

$$\frac{CD}{CO} = \frac{\text{लम्ब}}{\text{कर्ण}} = Sin\theta$$

$CD = CO\ Sin\theta$ (यहां CO त्रिज्या हैं)

अब हम भूमध्य रेखा से विभिन्न अक्षांश रेखाओं की दूरियां उपरोक्त सूत्र से ज्ञात कर सकते हैं।
यथा.

15^0 अक्षांश रेखा की भूमध्य रेखा से दूरी $= R\ Sin\,15^0 = 0.833 \times 0.2588 = 0.22$ इंच

30^0 अक्षांश रेखा की भूमध्य रेखा से दूरी $= R\ Sin\,30^0 = 0.833 \times 0.5000 = 0.42$ इंच

45^0 अक्षांश रेखा की भूमध्य रेखा से दूरी $= R\ Sin\,45^0 = 0.833 \times 0.7071 = 0.55$ इंच

60^0 अक्षांश रेखा की भूमध्य रेखा से दूरी $= R\ Sin\,60^0 = 0.833 \times 0.8660 = 0.72$ इंच

75^0 अक्षांश रेखा की भूमध्य रेखा से दूरी $= R\ Sin\,75^0 = 0.833 \times 0.9659 = 0.80$ इंच

90^0 अक्षांश रेखा की भूमध्य रेखा से दूरी $= R\ Sin\,90^0 = 0.833 \times 1.0000 = 0.833$ इंच

अब प्रक्षेप की रचना करने के लिए :—

1. सर्वप्रथम PQ एक रेखा 6.22 इंच नाप लेकर खींचते हैं जो भूमध्य रेखा को प्रदर्शित करेगी।
2. PQ रेखा को देशान्तरीय अन्तराल 0.217 इंच की माप लेकर 24 सामान भागों में विभक्त कर देंगे जो कि सभी देशान्तरों के चिन्ह होंगे।
3. पुनः अंक्षांश रेखाओं की रचना करने हेतु बिन्दु P तथा Q पर उपर तथा नीचे लम्ब रेखायें खींच देंगे।
4. अब बिन्दु P से तथा बिन्दु Q से उपर तथा नीचे लम्ब रेखाओं पर भूमध्य रेखा से विभिन्न अक्षांश की दूरी के अनुसार (जैसे 15^0 अक्षांश रेखा की दूरी 0.22 इंच आदि क्रमशः) चिन्ह लगायेंगे।
5. तदुपरान्त इन चिन्हों को PQ रेखा के समानान्तर मिलाते हुए सभी अक्षांश रेखाओं की रचना करेंगे।
6. अब भूमध्य रेखा PQ पर लगाये गये सभी देशान्तरीय अन्तराल के चिन्हों से PQ रेखा के लम्बवत रेखायें खींच देंगे जो सभी देशान्तर रेखाओं को प्रदर्शित करेगी।
7. अन्त में सभी अक्षांश एवं देशान्तर रेखाओं के मान लिखकर प्रक्षेप की रचना को पूर्ण करेंगे।

उदाहरण—5:—प्रदर्शक भिन्न 1 : 250000000 पर पूर्वी गोलार्द्ध के लिए एक समक्षेत्र बेलनाकार प्रक्षेप की रचना कीजिए जिसका प्रक्षेपान्तर 30° हो।

हल— लघुकृत पृथ्वी के गोले का अर्द्धव्यास $= \frac{250000000}{250000000} = 1$ इंच

प्रक्षेपान्तर = 30°

अतः अक्षांश रेखाओं की सं0 =0°, 30°, 60°, 90° उत्तरी एवं दक्षिणी अक्षांश देशान्तर रेखाओं की सं0 $= \frac{180}{30} = 6$ देशान्तर

भूमध्य रेखा की लम्बाई = $\frac{2\pi r}{2}$ = $\frac{2 \times 3.1416 \times 1}{2}$ = 3.1416 इंच

भूमध्य रेखा पर प्रक्षेपान्तरीय दूरी = $\frac{2\pi r}{360} \times$ प्रक्षेपान्तर

= $\frac{2 \times 3.1416 \times 30}{360}$ = 0.52 इंच

भूमध्य रेखा से अन्य अक्षांश रेखाओं की दूरी ज्ञात करने के लिए हम R $\sin\theta$ का प्रयोग करेंगें।

भूमध्य रेखा से 30^o अक्षांश रेखा की दूरी = R $\sin 30^o$ = 0-5 इंच

भूमध्य रेखा से 60^o अक्षांश रेखा की दूरी = R $\sin 60^o$ = 0-860 इंच

भूमध्य रेखा से 90^o अक्षांश रेखा की दूरी = R $\sin 90^o$ = 1 इंच

प्रक्षेप की रचना–

सर्वप्रथम 1 इंच माप का अर्द्धव्यास लेकर एक अर्धवृत्त की रचना किये तथा उस पर प्रक्षेपान्तर के अनुसार अक्षांश कोण क्रमशः 30^o, 60^o तथा 90^o का कोण बनाती हुई रेखायें खींचिए।

समक्षेत्र बेलनाकार प्रक्षेप

मापक 1 : 125000000

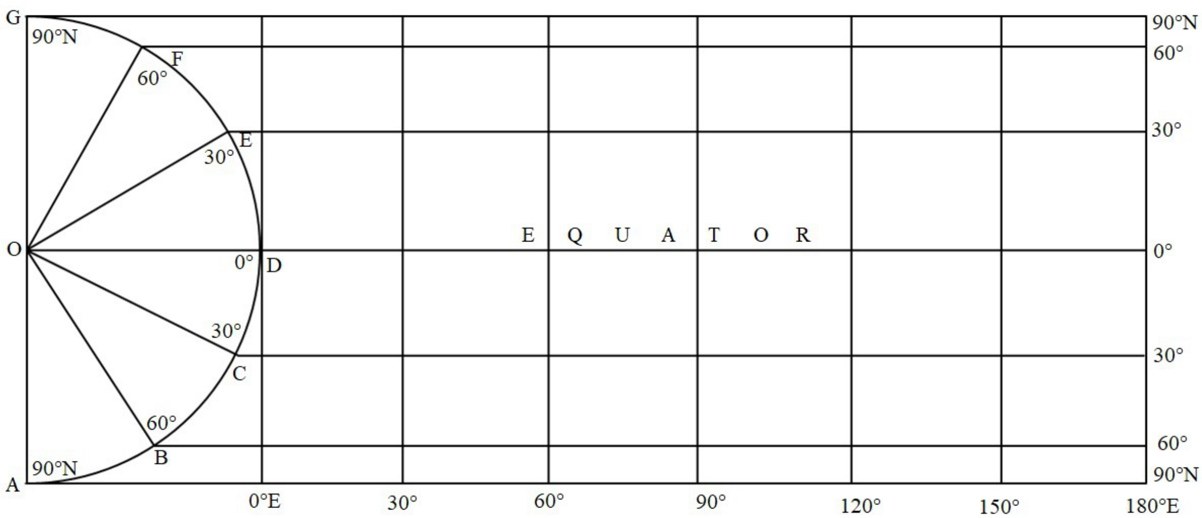

चित्र 4.6

अब 0^o की रेखा से भूमध्य रेखा की लम्बाई के बराबर रेखा खींचिए और उसे प्रक्षेपान्तर के अनुसार 0.52 इंच माप लेकर 6 भागों में विभाजित किये। पुनः इन 6 भागों पर ऊपर से नीचे तक लम्ब रेखायें खींच दिये। अब A, B, C, D, E, F, G आदि बिन्दुओं से भूमध्य रेखा के समानन्तर रेखायें खींचा और उस पर सभी अक्षांशों एवं देशान्तरों को अंकित करके प्रक्षेप को पूरा किया।

गणितीय रचना विधि (Mathematical Method)

समक्षेत्र बेलनाकार प्रक्षेप की रचना गणितीय विधि से करने के लिए हमें तीन मापों की आवश्यकता होती है।

1. लघुकृत पृथ्वी के गोले का अर्द्धव्यास = $\frac{250000000}{250000000}$ = 1 इंच
   भूमध्य रेखा की लम्बाई = $2\pi R = 2\times22/7\times1 = 44/7 = 6.28$ इंच
   केवल पूर्वी गोलार्द्ध के लिए भूमध्यरेखा की लम्बाई = $6.28/2 = 3.14$ इंच

2. भूमध्य रेखा पर 30° की देशान्तरीय दूरी = $2\pi R\times30/360$ = 1 इंच
   भूमध्य रेखा की लम्बाई = $2\times22/7\times1\times30/360 = 0.52$ इंच

3. तीसरी माप यानि अक्षांश रेखाओं की भूमध्य रेखा से दूरियाँ ज्ञात करने हेतु हम निम्न सूत्र का प्रयोग करते है।

$$R \sin\theta$$

अब 30° अक्षांश रेखा की भूमध्य रेखा से दूरी

$= R \sin30^\circ = 1 \times 0.5 = 0.5$ इंच,

60° अक्षांश रेखा की भूमध्य रेखा से दूरी

$= 1 \times \sin60^\circ = 1 \times 0.8660 = 0.8660$ इंच

90° अक्षांश रेखा की भूमध्य रेखा से दूरी

$= 1 \times \sin90^\circ = 1 \times 1 = 1$ इंच

अब प्रक्षेप की रचना करने के लिए 3.14 इंच लम्बी भूमध्य रेखा खींचकर उसे 0.52 इंच नाप के बराबर भागों में विभाजीत कर देशान्तरीय अन्तराल का चिन्ह् लगायेगें। पुनः भूमध्यरेखा से क्रमशः 30° तथा 60° अक्षांश रेखाओं की दूरीयों के अनुसार रचना करेगें तथा भूमध्यरेखा पर चिन्हांकित सभी देशान्तरीय अन्तरालों को ऊपर नीचे लम्ब खींचकर सम्बन्धित मान अंकित करेगें।

विशेषतायें (Characteristics)

1. सभी अक्षांश एवं देशान्तर रेखायें सरल रेखा होती है जो एक दूसरे को समकोण पर काटती है।
2. सभी अक्षांश लम्बाई में बराबर होते है तथा वे सरल रेखायें होती हैं।
3. भूमध्यरेखा से दूर हटने पर अक्षांशीय मापक बढ़ता जाता है।
4. भूमध्यरेखा से दूर जाने पर अक्षांश रेखाओं के बीच की दूरी क्रमशः घटती जाती है।
5. इस प्रक्षेप पर क्षेत्रफल शुद्ध होता है अतः इसे समक्षेत्र प्रक्षेप भी कहते है।
6. भूमध्यरेखा से दूर हटने पर आकार विकृत हो जाता है।
7. सभी अक्षांशों पर देशान्तर रेखाओं के बीच की दूरी बराबर होती है।

दोष (Demerits)

बेलनाकार प्रक्षेप में भूमध्यरेखा से दूरी बढ़ने के साथ–साथ अक्षांश रेखाओं की लम्बाई अशुद्ध होती जाती है, यहाँ तक कि ध्रुव जो कि एक बिन्दु से दर्शाया जाता है, वह भी बेलनाकार प्रक्षेप में भूमध्यरेखा की लम्बाई के बराबर ही प्रदर्शित किया जाता है।

उपयोग (Uses and Applications)

इस प्रक्षेप का उपयोग मध्यवर्ती अक्षांशों से सम्बन्धित मानचित्रों के लिए किया जाता है। 45° उत्तरी एवं दक्षिणी अक्षांश के बीच के मानचित्र हेतु यह प्रक्षेप सर्वथा उपयुक्त है। 45° से अधिक जाने पर आकार विकृत हो जाता है। इस प्रक्षेप पर गर्म क्षेत्रों की फसलें जैसे चावल, रबड़, गन्ना तथा कहवा आदि प्रदर्शित किया जाता है।

निष्कर्ष (Conclusion)

बेलनाकार प्रक्षेपों के अध्ययन के बाद यह निष्कर्ष निकलता है कि भूमध्यरेखीय देशों तथा मध्य अक्षांशीय देशों का मानचित्र बनाने में यह बहुत उपयोगी है। इस मानचित्र पर विश्व में उत्पादित होने वाली कुछ भूमध्‍ रेखीय फसलें यथा चावल, गन्ना तथा विषुवतरेखीय वनों को दर्शाने हेतु यह प्रक्षेप सर्वोत्तम है।

आयताकार आकृति होने के कारण यह सरल एवं समझाने में आसान मानचित्र है वर्तमान में यह भूमध्यरेखीय देशों की फसलों वनों तथा आकृति को दर्शाने हेतु बहुतायत में प्रयोग किया जाता है। संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि यह प्रक्षेप बहुत सरल एवं उपयोगी है छात्र–छात्राओं को इस प्रक्षेप को पढ़ने से आगे बहुत लाभ मिलेगा।

मॉडल प्रश्न (Model Questions)

प्रश्न 1. कागज की बेलन की बाहरी सतह पर अक्षांश और देशान्तरीय रेखा जाल को सपाट फैलाने से कौन–सा प्रक्षेप बनता है?

(a) शंक्वाकार प्रक्षेप।
(b) बेलनाकार प्रक्षेप।
(c) खमध्य प्रक्षेप।
(d) उपरोक्त में से कोई नहीं।

प्रश्न 2. बेलनाकार प्रक्षेप के सामान्य लक्षण है–

(a) सभी अक्षांश रेखायें सरल एवं समान्तर होती है।
(b) देशान्तर रेखायें सरल एवं समानान्तर होती है।
(c) अक्षांश एवं देशान्तर रेखायें एक दूसरे पर समकोण बनाती है।
(d) उपरोक्त सभी।

प्रश्न 3. साधारण बेलनाकार प्रक्षेप का अविष्कार कौन किये थे?

(a) प्लेट कैरी।
(b) जे0एच0 लैम्बर्ट।
(c) गिरार्डस क्रेमर।
(d) जेम्स गॉल।

प्रश्न 4. जे0एच0 लम्बर्ट ने किस बेलनाकार प्रक्षेप को सर्वप्रथम बनाया था?

(a) साधारण बेलनाकार प्रक्षेप।
(b) संदर्भ बेलनाकार प्रक्षेप।
(c) समक्षेत्र बेलनाकार प्रक्षेप।
(d) उपरोक्त में से कोई नहीं।

प्रश्न 5. प्लेट कैरी का साधारण बेलनाकार प्रक्षेप किस तरह का प्रक्षेप माना जाता है?

(a) यथाकृतिक।
(b) समक्षेत्र।
(c) समदूरस्थ।
(d) इनमें से कोई नहीं।

प्रश्न 6. भूमध्य रेखा के निकटवर्ती क्षेत्र का मानचित्र बनाने हेतु कौन साप्रक्षेप उपयोगी होता

है?

(a) अन्तर्राष्ट्रीय प्रक्षेप।

(b) साधारण बेलनाकार प्रक्षेप।

(c) समक्षेत्र बेलनाकार प्रक्षेप।

(d) उपरोक्त में से कोई नहीं।

प्रश्न 7. बेलनाकार प्रक्षेप बनाने हेतु किन मापों की आवश्यकता होती है?

(a) भूमध्य रेखा की लम्बाई।

(b) देशान्तरीय अन्तराल।

(c) भूमध्य रेखा से विभिन्न अक्षांशों की दूरी।

(d) उपरोक्त सभी।

प्रश्न 8. अफ्रीका महाद्वीप का मानचित्र बनाने हेतु सर्वाधिक उपर्युक्त प्रक्षेप है–

(a) साधारण बेलनाकार प्रक्षेप।

(b) अन्तर्राष्ट्रीय प्रक्षेप।

(c) संदर्भ बेलनाकार प्रक्षेप।

(d) समक्षेत्र बेलनाकार प्रक्षेप।

प्रश्न 9. विश्व में रबर चावल व चाय के उत्पादन को प्रदर्शित करने हेतु सर्वाधिक उपर्युक्त प्रक्षेप है।

(a) साधारण बेलनाकार प्रक्षेप।

(b) बोन प्रक्षेप।

(c) संदर्श बेलनाकार प्रक्षेप।

(d) समक्षेत्र बेलनाकार प्रक्षेप।

प्रश्न 10. निम्न में से किस प्रक्षेप पर क्षेत्रफल ग्लोब की भांति शुद्ध रहता है?

(a) समक्षेत्र बेलनाकार प्रक्षेप।

(b) साधारण बेलनाकार प्रक्षेप।

(c) संदर्श बेलनाकार प्रक्षेप।

(d) उपरोक्त में से कोई नहीं।

प्रश्न 11– प्रदर्शक भिन्न 1 : 250000000 पर संसार का मानचित्र बनाने के लिए एक समक्षेत्र बेलनाकार प्रक्षेप की रचना कीजिए जिसका प्रक्षेपान्तर 15^o हो।

प्रश्न 12 – समक्षेत्र बेलनाकार प्रक्षेप की मुख्य उपयोगिता को स्पष्ट कीजिए।

प्रश्न 13 – बेलनाकार प्रक्षेप के गुण और दोष की चर्चा कीजिए।

प्रश्न 14 – समक्षेत्र बेलनाकार प्रक्षेप संसार का मानचित्र बनाने हेतु किस प्रकार उपयोगी है, समझाइयें।

प्रश्न 15. प्रदर्शक भिन्न 1:200000000 पर संसार का मानचित्र बनाने हेतु 15^0 प्रक्षेपान्तर पर एक समक्षेत्र बेलनाकार प्रक्षेप की रचना कीजिए।

प्रश्न16. प्रदर्शक भिन्न 1:250000000 पर एक संदर्श बेलनाकार प्रक्षेप की रचना कीजिए जिसका विस्तार 70^0N से 70^0S अक्षांश तथा प्रक्षेपान्तर 10^0 हो।

प्रश्न17. साधारण बेलनाकार प्रक्षेप की विशेषतायें, गुण–दोष एवं उपयोग की चर्चा कीजिए।

प्रश्न18. समक्षेत्र बेलनाकार प्रक्षेप की गणितीय विधि को संक्षेप में समझाइये।

प्रश्न 19. संदर्श बेलनाकार प्रक्षेप के रचना की आलेखी विधि का वर्णन कीजिए।

प्रश्न20. प्रदर्शक भिन्न 1:300000000 पर एक साधारण बेलनाकार प्रक्षेप की रचना गणितीय विधि से कीजिए जिसका प्रक्षेपान्तर 15^0 हो।

सन्दर्भ पुस्तकें (Reference Books)

1. यादव, हीरा लाल (1987), प्रैक्टिकल जियोग्राफी, वसुंधरा प्रकाशन, गोरखपुर।
2 E. Raisz (1962), General Cartoigraphy, John Wiley and Sons, New York, 5th Edition.
3 F.J. Monkhouse and F.J. Wilkinson (1985), Maps and Diagrams, Methuen, London.
4 तिवारी, आर. सी. (2003), प्रयोगात्मक भूगोल, प्रयाग पुस्तक भवन, इलाहाबाद।
5 हीरा लाल (2009), प्रयोगात्मक भूगोल् के आधार, राधा पब्लिकेशन, नई दिल्ली।
6 हारून, मोहम्मद (2010), प्रयोगात्मक भूगोल, मिश्र ट्रेडिंग कारपोरेशन, मैदागिन, वाराणसी।
7 K. Sarkar (1997), Practical Geography: A Systematic Approach, Orient Longman, Kolkata.
8 L.R. Singh (2006), Fundamental of Practical Geography, Sharda Pustak Bhawan, Allahabad.
9 डी० आर० खुल्लर (2022), प्रयोगात्मक भूगोल, कल्याणी पब्लिकेशन नई दिल्ली।
10 Misra, R. P. and Ramesh, A. (1969), Fundamental of Cartography, University of Mysore, Mysore.
11 चौहान, पी आर (1998), प्रायोगिक भूगोल, वसुंधरा प्रकाशन, गोरखपुर।
12 Robinson, A.H. (2009), Elements of Cartography, Wiley; Sixth edition (1 January 2009), USA.
13 जे०पी० शर्मा (2011), प्रायोगिक भूगोल, (चतुर्थ संस्करण), रस्तोगी पब्लिकेशन्स मेरठ।
14 आर. एन. मिश्र एवं पी. के. शर्मा (2019), प्रायोगिक भूगोल, रावत पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली।
15 आर० एल० सिंह एवं राना पी. बी. सिंह (1993), प्रयोगात्मक भूगोल के तत्व कल्याणी पब्लिशर्स, नई दिल्ली।
16 आर०सी० तिवारी एवं सुधाकर त्रिपाठी (2018) अभिनव प्रयोगात्मक भूगोल, प्रवालिका पब्लिकेशन्स, इलाहाबाद।

इकाई–5 (Unit- 5)
मर्केटर अथवा बेलनाकार यथाकृतिक प्रक्षेप एवं गॉल का त्रिविम प्रक्षेप
(Mercater's or Cylindrical Orthomorphic Projection and Gall's Stereographic Projection)

पाठ संरचना **(Lesson Structure)**

1. उद्देश्य **(Obejective)**
2. प्रस्तावना **(Introduction)**
3. मर्केटर अथवा बेलनाकार यथाकृतिक प्रक्षेप **(Mercater's or Cylindrical Orthomorphic Projection)**
4. गॉल का त्रिविम प्रक्षेप **(Gall's Stereographic Projection)**
5. निष्कर्ष **(Conclusion)**
6. मॉडल प्रश्न **(Model Question)**
7. सन्दर्भ पुस्तकें **(Reference Books)**

1.उद्देश्य (Obejectives)

1. एक ही प्रक्षेप पर पूरे संसार का प्रदर्शन सम्भव होता है।
2. यह एक संशोधित बेलनाकार प्रक्षेप है अतः कुछ त्रुटियों को छोड़कर इसका बहुत उपयोग होता है।
3. विद्यार्थियों को सही दिशा का ज्ञान कराने में यह प्रक्षेप उपयोगी है।
4. प्राचीन काल में इन प्रक्षेपों का प्रयोग नाविक (समुद्री) किया करते थे।
5. संसार के कृषि उत्पादन, वन, स्थलाकृतियाँ आदि भलीभाँति इस पर दिखाये जा सकते है।

2.प्रस्तावना (Introduction)

प्रस्तुत अध्याय में हम मर्केटर प्रक्षेप और गॉल प्रक्षेप के बारे में अध्ययन करेंगे जहाँ तक इन प्रक्षेपों की विशेषताओं का वर्णन किया जाय तो ये प्रक्षेप पूरे विश्व का मानचित्र बनाने के लिए उपयोगी होते है। आदि काल में समुंद्री व्यापारी, नौसंचालन आदि में इसका उपयोग होता था। यह एक यथाकृत्रिक प्रक्षेप मानचित्र होता है। इस प्रक्षेप में विभिन्न अक्षांश रेखाओं की भूमध्य रेखा से दूरियों को एक सारणी के माध्यम से ज्ञात किया जाता है। मर्केटर प्रक्षेप में भूमध्य रेखा पर मापनी शुद्ध होती है किन्तु गॉल प्रक्षेप पर 45° अक्षांश पर मापनी शुद्ध होती है। नौ संचालन के अतिरिक्त पवनों की दिशा एवं महासागरीय धाराओं को मानचित्र पर प्रदर्शित करने के लिए भी यह प्रक्षेप बहुत उपयोगी होता है। मर्केटर प्रक्षेप में शुद्ध आकृति एवं शुद्ध दिशा को दिखाया जाता है।

मर्केटर प्रक्षेप का एक अवगुण यह है कि जैसे–जैसे हम भूमध्य रेखा से दूर हटते जाते है क्षेत्रफल बहुत अधिक बढ़ जाता है। इसलिए उच्च अक्षांशों के प्रदर्शन हेतु यह प्रक्षेप अनुपयुक्त होता है।

जहाँ पर गॉल प्रक्षेप की बात की जाय तो इस प्रक्षेप में भूमध्य रेखा पर नहीं बल्कि 45° अक्षांश रेखा पर मापनी शुद्ध होती है यह प्रक्षेप भी एक संशोधित बेलनाकार प्रक्षेप का रूप है। इसमें प्रमुख गुण यह है कि 45° अक्षांश वृतों पर मापनी शुद्ध होती है किन्तु इसका अवगुण यह है कि भूमध्य रेखा की लम्बाई की अपनी वास्तविक आकार से छोटी यानि 45° अक्षांश के बराबर होती है। अतः भूमध्य रेखीय क्षेत्रफल में कमी आती है।

इसके विपरीत यदि 45° अक्षांश से ध्रुवों की ओर देखा जाय तो मापनी अपनी वास्तविक स्थिति से काफी बड़ी होती है क्योंकि सभी उच्च अक्षांश भी 45° अक्षांश रेखा के बराबर ही होती है। देशान्तर रेखाओं में भी काफी विकृति होती है क्योंकि जितना देशान्तरीय अन्तराल 45° अक्षांश पर होता है उतना ही देशान्तरीय अन्तराल भूमध्यरेखा पर एवं उतना ही देशान्तरीय अन्तराल उच्च अक्षांशों में भी होता है। अतः भूमध्यरेखीय मापनी घट जाती है तथा उच्च अक्षांशीय मापनी अपने वास्तविक आकार से बढ़ जाती है।

3. मर्केटर अथवा बेलनाकार यथाकृतिक प्रक्षेप

(Mercater's or Cylindrical Orthomorphic Projection)

इस प्रक्षेप की रचना सर्वप्रथम हालैण्ड के विद्वान गरहार्ड क्रेमर ने 1569 में किया था इनका उपनाम मरकेटर था। फलस्वरूप यह प्रक्षेप मरकेटर प्रक्षेप कहलाने लगा। परन्तु वर्तमान में मरकेटर प्रक्षेप का संशोधित रूप चलन में है जिसको एडवर्ड राइट नामक अंग्रेज में बनाया था, कालान्तर में यह ग्रेट ब्रिटेन का मुख्य प्रक्षेप बन गया। इसका सबसे अधिक प्रयोग जलयानों के संचालन में किया गया किन्तु यह एक भ्रमात्मक प्रक्षेप है क्योंकि ध्रुवों के पास वाले छोटे–छोटे देशों का क्षेत्रफल भी इस प्रक्षेप पर बड़ा ही लगता है। बीसवीं शताब्दी के बाद से इस प्रक्षेप का महत्व बहुत कम हो गय है।

उदाहरण–1:–प्रदर्शक भिन्न 1:300000000 पर संसार का मानचित्र बनाने हेतु एक मर्केटर प्रक्षेप की रचना कीजिए जिसका प्रक्षेपान्तर 20^0 हो।

हल.

$$\text{लघुकृत पृथ्वी के गोले का अर्द्धव्यास} = (R) \frac{\text{पृथ्वी का वास्तविक अर्द्धव्यास}}{\text{प्रदर्शक भिन्न का हर}}$$

$$\frac{250000000}{300000000} = 0.833 \text{ इंच}$$

$$\text{भूमध्य रेखा की लम्बाई} = 2\Pi R$$

$$= 2 \times \frac{22}{7} \times 0.833 = 5.23 \text{ इंच}$$

$$\text{भूमध्य रेखा पर देशान्तरीय अन्तराल की दूरी} = \frac{2\Pi R \times \text{ प्रक्षेपान्तर}}{360}$$

$$= \frac{5.22 \times 20^0}{360} = 0.29 \text{ इंच}$$

प्रक्षेप की आलेखी रचना:–

1. सर्वप्रथम 5.23 इंच लम्बी एक रेखा AB खीचियें जो प्रक्षेप में भूमध्य रेखा को प्रदर्शित करेगी।
2. अब बिन्दु A तथा बिन्दु B पर ऊपर तथा नीचे क्रमशः एक–एक लम्बवत रेखायें CD तथा EF खींचा जिस पर प्रक्षेप में दिये गये अक्षांश वृतों की रचना की जायेगी।
3. अब भूमध्य रेखा से विभिन्न अक्षांशों की दूरियों को हम सारणी की सहायता से ज्ञात करके CD तथा EF लम्बवत रेखाओं पर चिन्ह अंकित करेंगे।

यथा.

20^0 अक्षांश रेखा की भूमध्य रेखा से दूरी $= 0.356 \times R$

$= 0.356 \times 0.83 = 0.29$ इंच

40^0 अक्षांश रेखा की भूमध्य रेखा से दूरी $= 0.763 \times R$

$= 0.763 \times 0.83 = 0.63$ इंच

60^0 अक्षांश रेखा की भूमध्य रेखा से दूरी $= 1.317 \times R$

$= 1.317 \times 0.83 = 1.09$ इंच

80^0 अक्षांश रेखा की भूमध्य रेखा से दूरी $= 2.436 \times R$

$= 2.436 \times 0.83 = 2.02$ इंच

4. अब CD तथा EF पर उपरोक्त अक्षांशों की भूमध्यरेखा से दूरी के अनुसार चिन्ह अंकित करेंगे, उन चिन्हों को भूमध्यरेखा AB के समानान्तर CD पर लगे निशान को EF पर लगे निशानों से मिला देंगे। इस प्रकार से हम सभी अक्षांशों 20^0, 40^0, 60^0 तथा 80^0 उत्तरी एवं दक्षिणी अक्षांशों की रचना पूरा किये।
5. अब देशान्तर रेखाओं की रचना करने हेतु हम भूमध्यरेखा AB को 0.29 इंच नाप लेकर कुल बराबर–बराबर 18 भागों में बांट देंगे तथा सभी देशान्तरों का निशान लगा देंगे।
6. देशान्तरों का चिन्ह लगाने के बाद हम प्रत्येक निशान जो भूमध्यरेखा पर लगे है, को AB के लम्बवत समकोण बनाती हुई उपर तथा नीचे की ओर उठा देंगे, ये रेखायें सभी देशान्तरीय रेखाओं को प्रदर्शित करेगी।
7. अब प्रक्षेप के विस्तार के अनुसार सभी अक्षांश एवं देशान्तर रेखाओं के मान लिखकर हम अपने प्रक्षेप की रचना को पूर्ण करेंगे।

मर्केटर अथवा बेलनाकार यथाकृतिक प्रक्षेप

प्रदर्शक भिन्न– 1:300000000

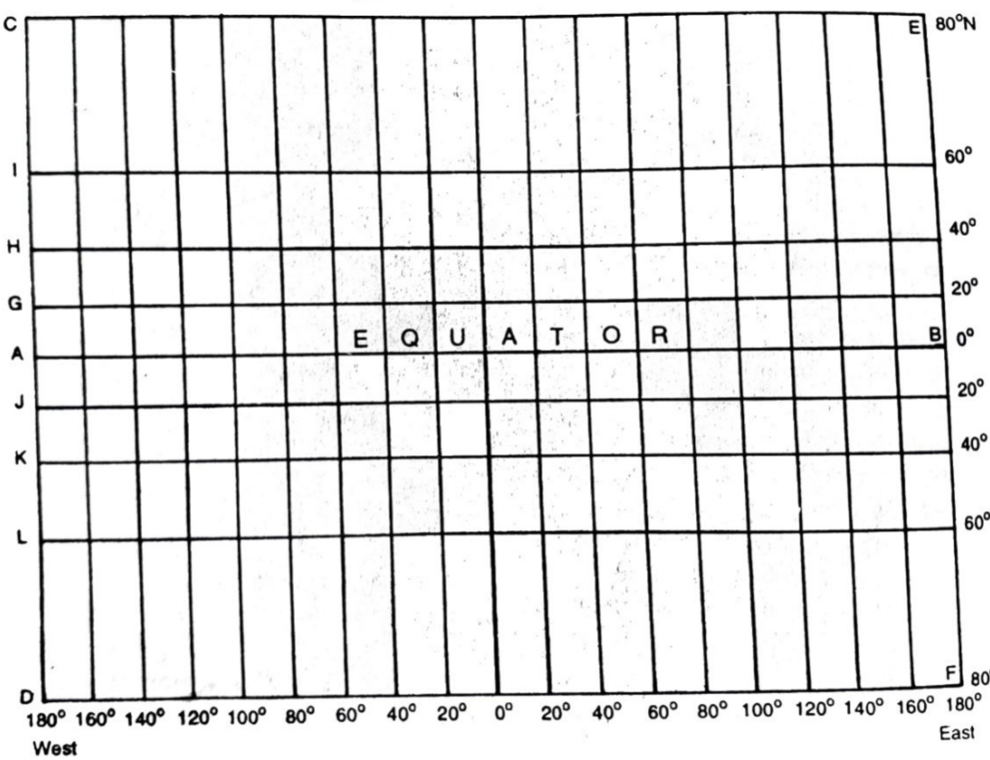

चित्र 5.1

गणितीय रचना विधि

गणितीय विधि से इस प्रक्षेप की रचना करने हेतु हमें केवल तीन मापों की आवश्यकता होगी।

1. भूमध्यरेखा की लम्बाई $2\Pi R$
2. भूमध्यरेखा पर प्रत्येक देशान्तरीय अन्तराल की दूरी।
3. भूमध्यरेखा से प्रत्येक अक्षांश रेखा की दूरी।

अब हम तीनों मापों को ज्ञात करने हेतुः–

1. भूमध्यरेखा की लं0 = $2\Pi R = 5.23$ इंच (आलेखी विधि से)
2. भूमध्यरेखा पर प्रत्येक देशान्तर के बीच का अन्तराल 0.29 इंच तथा

3. भूमध्य रेखा से प्रत्येक अक्षांश रेखा की दूरी ज्ञात करने के लिए हम आलेखी विधि में वर्णित सारणी का प्रयोग करेंगे।

उपरोक्त तीनों माप ज्ञात करने के बाद हम आलेखी विधि के अनुसार चरणबद्ध तरीके से प्रक्षेप की रचना करेंगे।

उदाहरण–2:– प्रदर्शन भिन्न 1 : 250000000 पर विश्व का मानचित्र बनाने के लिए एक मर्केटर प्रक्षेप की रचना कीजिए जिसका प्रक्षेपान्तर 15° हो।

हल– लघुकृत पृथ्वी के गोले का अर्द्धव्यास = $\frac{250000000}{250000000}$ = 1 इंच

विषुवत रेखा की लम्बाई = $2\pi r$ = 21 $\times \frac{22}{7} \times$

= $\frac{44}{7}$ = 6.28 इंच

चूकि

प्रक्षेपान्तर 15° है अतः देशान्तर रेखाओं की संख्या= $\frac{360}{15}$ = 24 देशान्तर

भूमध्य रेखा पर प्रत्येक देशान्तर के बीच की दूरी = $\frac{6.28}{24}$ = 0.26 इंच

रचना– सर्वप्रथम 6.28 इंच लम्बी एक सीधी रेखा खींचेगें जो भूमध्यरेखा को दर्शाती है, पुनः इस रेखा को 24 बराबर–बराबर भागों में बाँट देगें और प्रत्येक बिन्दु से ऊपर तथा नीचे एक लम्ब डाल देगें। अब भूमध्य रेखा से प्रमुख अक्षांश रेखाओं की दूरी निम्न प्रकार से ज्ञात करेंगे–

15° अक्षांश रेखा की भूमध्यरेखा से दूरी = 0.265X1= 0.265 इंच

30° अक्षांश रेखा की भूमध्यरेखा से दूरी = 0.549X1= 0.549इंच

45° अक्षांश रेखा की भूमध्यरेखा से दूरी = 0.881X1= 0.881इंच

60° अक्षांश रेखा की भूमध्यरेखा से दूरी = 1.317X1= 1.317इंच

75° अक्षांश रेखा की भूमध्यरेखा से दूरी = 2.027X1= 2.027इंच

- अब भूमध्य रेखा से उपरोक्त अक्षांशों की माप के बराबर अन्तराल लेकर सभी अक्षांश रेखाओं को खींच देगें।
- पुनः सभी अक्षांश और देशान्तर रेखाओं पर उनका मान अंकित कर प्रक्षेप को पूरा करेगें।

गणितीय रचना विधि–

गणितीय विधि से मरकेटर प्रक्षेप की रचना करने के लिए हम निम्न सारणी का प्रयोग करेगें–

अक्षांश	भूमध्य रेखा से दूरी	अक्षांश	भूमध्य रेखा से दूरी
5°	0.087×R	50°	0.010×R
10°	0.175×R	55°	0.154×R
15°	0.265×R	60°	0.317×R
20°	0.356×R	65°	1.505×R
25°	0.450×R	70°	1.735×R
30°	0.549×R	75°	2.025×R
35°	0.652×R	80°	2.436×R

40^o	$0.763 \times R$	85^o	$3.131 \times R$
45^o	$0.880 \times R$	90^o	अनन्त

मर्केटर प्रक्षेप

मापक 1 : 250000000

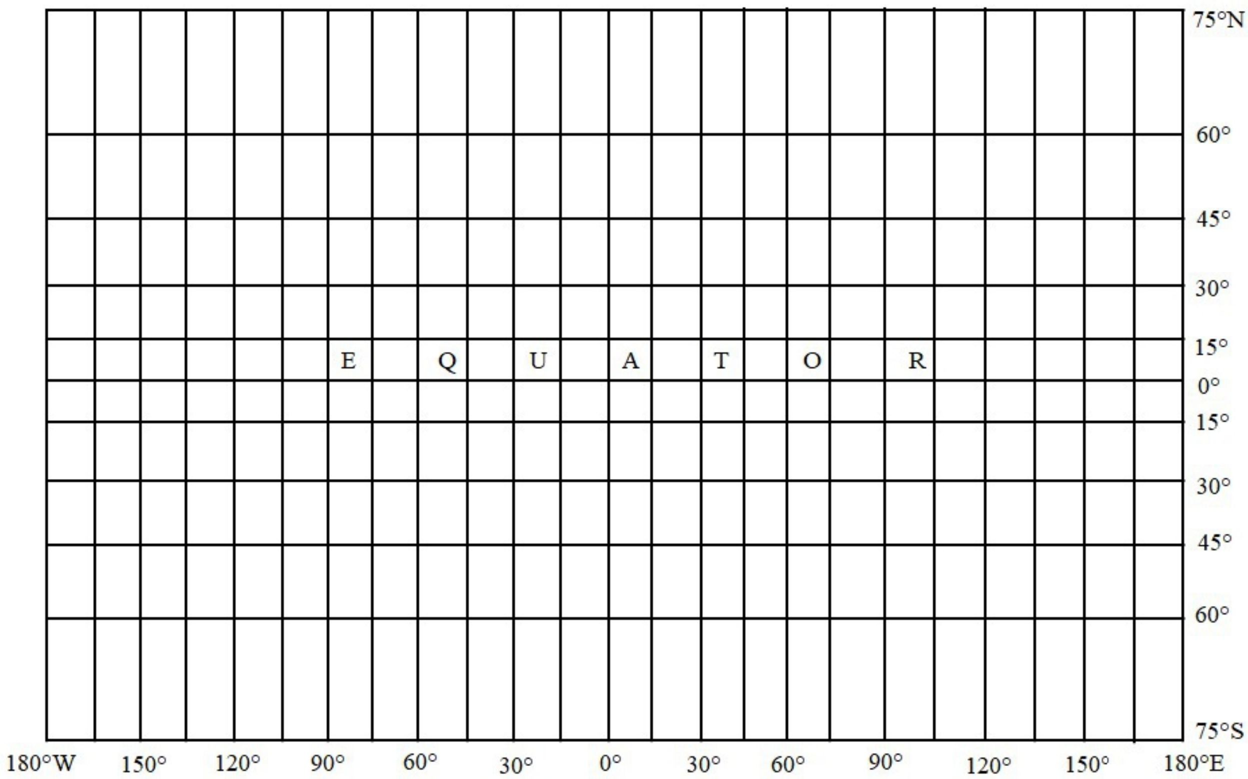

चित्र 5.2

अब भूमध्य रेखा की लम्बाई 6.28 इंच की रेखा खींचेगें और उसे बराबर–बराबर 24 भागों में विभाजित करके सभी देशान्तर रेखाओं को चिन्हांकित करेंगें।

भूमध्य रेखा से सम्बन्धित अक्षांश रेखाओं की दूरी ज्ञात करने के लिए हम उक्त सारणी का प्रयोग करेंगें, तत्पश्चात अक्षांश रेखाओं की रचना करके सभी देशान्तरीय चिन्हों को ऊपर–नीचे लम्ब के रूप में मिलाकर देशान्तर रेखाओं की भी रचना करेंगें और पुनः सभी अक्षांश और देशान्तरों का मान लिखकर प्रक्षेप को पूरा करेंगें।

गुण (Merits)

1. इस प्रक्षेप में अक्षांश एवं देशान्तर रेखायें एक सीधी रेखा होती है तथा वे एक दूसरे को समकोण पर काटती है।
2- सभी अक्षांश रेखाएं भूमध्य रेखा के बराबर माप की होती है एवं भूमध्य रेखा से उत्तर एवं दक्षिण जाने पर अक्षांश रेखाओं के बीच दूरी बढ़ती जाती है।
3- मापनी भूमध्य रेखा पर शुद्ध होती है।

4. जिस अनुपात से भुमध्य रेखा से ध्रुवों की ओर अक्षांश वृतों के सहारे पूरब–पश्चिम दिशा में मापनी में वृद्धि होती है। ठीक उसी अनुपात में ध्रुवों की ओर देशान्तर रेखाओं के सहारे उत्तर–दक्षिण दिशा में मापनी बढ़ती है।
5. उपरोक्त कारण से ही आक्षांश एवं देशान्तर रेखाओं के प्रत्येक कटान बिन्दु पर मापनी प्रत्येक दिशा में शुद्ध होती है। अतः इसे एकायथाकृतिक प्रक्षेप कहा जाता है।
6. इस प्रक्षेप की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसपर स्थित किन्ही दो स्थानों को मिलाने वाली सरल रेखा उन दो स्थानों के बीच की शुद्ध दिशा को प्रदर्शित करती है। इसी सरल रेखा को **'एक दिशा नौ पथ'** रेखा कहते है जो समस्त देशान्तर रेखाओं को समान कोण पर काटती है तथा एक नियत दिकृमान वाली रेखा होती है। वृहत वृतीय मार्ग पर चलने वाले सभी जलयाग तथा वायुयान **'एक दिशा नौ पथ रेखा'** का ही अनुसरण करते है जिससे वृहद वृत के सहारे निरन्तर दिशा परिवर्तन की समस्या से बचा जा सकता है।
7. यद्यपि यह एक यथाकृतिक एवं शुद्ध दिशा प्रक्षेप है किन्तु इसमें भूमध्य रेखा से ध्रुवों की ओर जाने में काफी वृद्धि होने लगती है। उदाहरण के रूप में यह कहा जा सकता है कि दक्षिणी अमेरिका ग्रीनलैण्ड से लगभग 9 गुना बड़ा है किन्तु इस प्रक्षेप पर मानचित्र देखने से लगता है कि ग्रीनलैण्ड का क्षेत्रफल लगभग दक्षिणी अफ्रिका के बराबर हैं
8- क्षेत्रफल में विकृति का अंदाजा इसी बात से लगाया जा सकता है कि 60^0 अक्षांश पर क्षेत्रफल में 4 गुना वृद्धि, 75^0 अक्षांश पर 15 गुना तथा 80^0 अक्षांश पर क्षेत्रफल में 33 गुना वृद्धि हो जाती है।

एक दिश नौ पथ रेखा :–

मरकेटर प्रक्षेप पर दो बिन्दुओं को मिलाने वाली सीधी रेखा को एक दिश नौ पथ रेखा कहते हैं। यह प्रत्येक देशान्तर रेखाओं के साथ बराबर कोण बनाती हुई खींची जाती है जिससे दिशा में शुद्ध होती है। यह समुद्री नाविकों के लिए अत्यन्त उपयोगी होती है। एक दिश नौ पथ रेखा का अनुसरण करके एक स्थान से दूसरे स्थान को बहुत आसानी से पहुंचा जा सकता है।

दोष (Demerits)

इस प्रक्षेप का सबसे बड़ा दोष यह है कि ध्रुवों के आस–पास के क्षेत्र इस प्रक्षेप पर अपनी वास्तविक क्षेत्रफल एवं आकार से काफी बड़े दिखायी देते है। इस प्रक्षेप पर ध्रुवों को प्रदर्शित नहीं किया जा सकता।

उपयोग (Uses)

इस प्रक्षेप का उपयोग एटलस मानचित्रों में भूमध्यरेखा के आस–पास के क्षेत्रों के लिए सबसे अधिक होता है। समुंद्री धारायें, अपवाह प्रतिरूप, तापमान का वितरण पवन एवं उनकी दिशायें तथा विश्व में वर्षा के वितरण को दर्शाने हेतु इस प्रक्षेप का बहुतायत प्रयोग किया जाता है।

4.गॉल का त्रिविम प्रक्षेप

(Gall's Stereographic Projection)

इस प्रक्षेप को सर्वप्रथम 1855 में जेम्स गॉल नाम एक पादरी ने बनाया था जो एडिनबरा के निवासी थे। उन्हीं के नाम के कारण इस प्रक्षेप को गॉल प्रक्षेप कहा जाता है। यह बेलनाकार प्रक्षेप का ही संशोधित रूप है। इस प्रक्षेप में यह कल्पना की जाती है कि बेलन ग्लोब को किसी एक अक्षांश वृत पर नहीं बल्कि 45^o उत्तरी एवं 45^o दक्षिणी दो अक्षांश वृतों पर स्पर्श करता है। अतः इस प्रक्षेप में भूमध्य रेखा की लम्बाई 45^o अक्षांश रेखा की लम्बाई के बराबर होती है।

45^o अक्षांश रेखा की लम्बाई = $2\pi R\ \mathrm{Cos}45$ (सूत्र)

चूंकि $Cos45 =$ 0.7071

अतः गॉल प्रक्षेप पर सभी अक्षांश वृतों की लम्बाई अन्य प्रक्षेपों पर बने अक्षांश वृतों की अपेक्षा 0.7071 गुना कम होती है।

इस प्रक्षेप में अक्षांश रेखाओं की रचना करने हेतु भूमध्य रेखीय व्यास के विपरीत बिन्दु पर प्रकाश स्रोत की कल्पना करके अक्षांश वृतों को बेलन पर प्रक्षेपित किया जाता है। देशान्तर रेखाओं की रचना हेतु

प्रक्षेपान्तर / 360X45° अक्षांश रेखा की लम्बाई

सूत्र का प्रयोग करके समान दूरी पर देशान्तर रेखायें खींची जाती है।

उदाहरण–3:–प्रदर्शक भिन्न 1:300000000 पर संसार का मानचित्र बनाने हेतु एक गॉल प्रक्षेप की रचना कीजिए जिसका प्रक्षेपान्तर 15° हो।

हल. लघुकृत पृथ्वी के गोले का अर्द्धव्यास $= (R)$ $\dfrac{\text{पृथ्वी का वास्तविक अर्द्धव्यास}}{\text{प्रदर्शक भिन्न का हर}}$

$$\frac{250000000}{300000000} = 0.833 \text{ इंच}$$

45° अक्षांश वृत की लम्बाई $= 2\Pi R\ Cos\,45^0$

$$= 2\times\frac{22}{7}\times 0.833\times 0.7071$$

=3.69 इंच

45° अक्षांश वृत पर प्रत्येक देशान्तरों के बीच की दूरी $= \dfrac{2\Pi R\times \text{प्रक्षेपान्तर}}{360}$

$$= \frac{3.69\times 15}{360} = 0.153 \text{ इंच}$$

गॉल का त्रिविम प्रक्षेप

प्रदर्शक भिन्न– 1:300000000

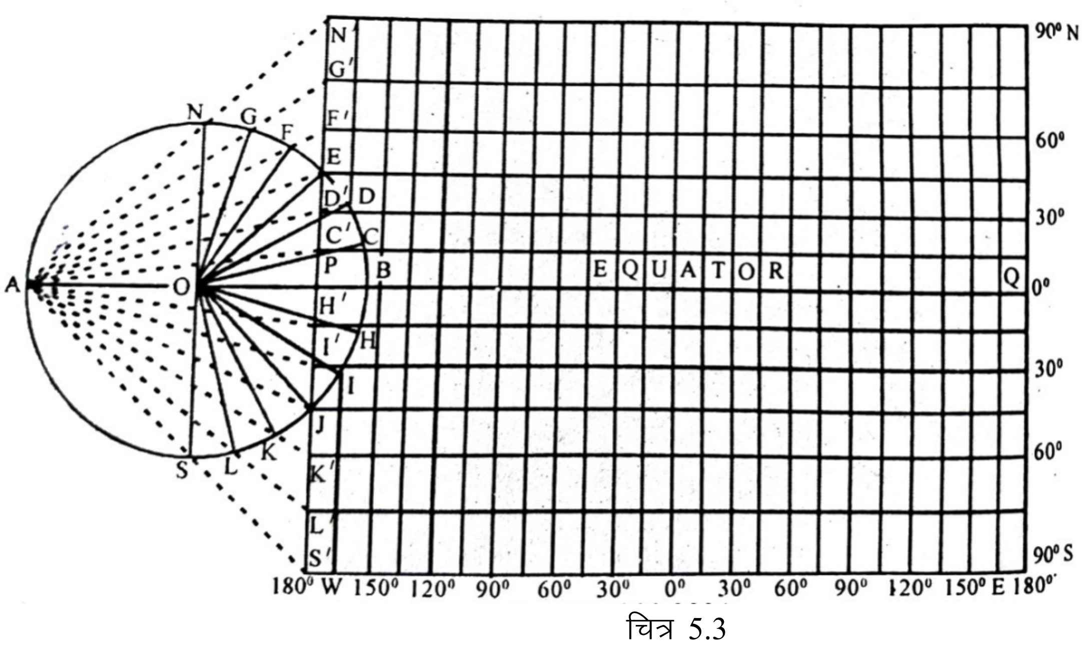

चित्र 5.3

प्रक्षेप की रचना :–

1. सर्व प्रथम किसी बिन्दु 0 को केन्द्र मानकर 0.83 इंच अर्द्धव्यास लेकर एक वृत की रचना करते हैं जिसमें NOS रेखा ध्रुवीय व्यास को तथा AOB रेखा भूमध्य रेखीय व्यास को प्रदर्शित कर रही होती है।
2. अब केन्द्र 0 से OB रेखा के दोनों ओर 15^0 के कोणीय अन्तराल पर रेखायें खींचते है जो वृत की परिधि को उपर की ओर क्रमशः C, D, E, F एवं G पर तथा नीचे की ओर क्रमशः H, I, G, K तथा L बिन्दुओं पर काटती है।
3. अब वृत की परिधि पर लम्बवत 45^0 की कोणीय रेखा के प्रतिच्छेदन रेखा E तथा J बिन्दुओं को मिलाती हुई रेखा खींच देते हैं जो OB रेखा यानि विषुवतीय अर्द्धव्यास वाली रेखा को बिन्दु P पर काटती है।
4. बिन्दु P से भूमध्यरेखा के बराबर माप (3.69 इंच) की रेखा OB को आगे बढ़ाते हुए खींचेंगे जो रेखा PBQ होगी और यह रेखा प्रक्षेप में भूमध्य रेखा को प्रदर्शित करेगी।
5. अब बिन्दु Q पर भी ऊपर तथा नीचे की ओर लम्बवत रेखा खीच देंगे।
6. अब चूंकि प्रकाश का स्रोत बिन्द A पर है। अतः बिन्दु A से वृत की परिधि पर अंकित विभिन्न कोणीय बिन्दुओं को मिलाती हुई रेखायें खींच देंगे जो कि 45^0 की प्रतिच्छेदन रेखा तक जायेगी और ये रेखायें क्रमशः AC'C, AD'D, AE, AF'F, AGG' तथा ANN' उपर की ओर तथा AH'H, AI'I, AJ, AKK', ALL' तथा ASS' नीचे की ओर होगी।
7. पुनः भूमध्यरेखा PBQ के समानान्तर रेखायें उपरोक्त वर्णित बिन्दुओं C', D', E'; F, G' तथा N से और H', I', J', K', L' तथा S' से खींच देंगे। ये रेखायें क्रमशः 15^0, 30^0, 45^0, 60^0, 75^0, तथा 90^0 उत्तरी अक्षांश एवं 15^0, 30^0, 45^0, 60^0, 75^0, तथा 90^0 दक्षिणी अक्षांश को प्रदर्शित करेगी।
8. अब देशान्तर रेखाओं की रचना करने के लिए प्रक्षेपान्तर के अनुसार 360 ⁄ 15=24 देशान्तर अतः भूमध्यरेखा PQ को 24 बराबर भागों में बांट देंगे एवं प्रत्येक भाग से भूमध्यरेखा के लम्बवत रेखायें खींच देंगे, अब यही रेखायें प्रक्षेप में वर्णित सभी देशान्तर रेखाओं को प्रकट करेगी।
9. अब अन्त में सभी अक्षांश एवं देशान्तर रेखाओं का मान लिखकर प्रक्षेप की रचना को पूर्ण करेंगे।

गणितीय रचना विधि

गणितीय विधि से गॉल प्रक्षेप की रचना करने हेतु हमे तीन मापों की आवश्यकता होती है।

1. 45^0 अक्षांश वृत की लम्बाई।
2. 45^0 अक्षांश वृत पर देशान्तरीय अन्तराल की दूरी तथा
3. भूमध्य रेखा से अक्षांश रेखाओं की दूरी

हल. लघुकृत पृथ्वी के गोले का अर्द्धव्यास $=(R)$ = $\frac{250000000}{300000000} = 0.833$ इंच

1. 45^0 अक्षांश वृत की लम्बाई $= 2\Pi R \, Cos 45^0$

$$= 2\times\frac{22}{7}\times 0.833\times 0.7071$$

3.69 इंच

2. 45^0 अक्षांश वृत पर प्रत्येक देशान्तरों के बीच की दूरी $= \frac{2\Pi R\times \text{प्रक्षेपान्तर}}{360}$

$$= \frac{3.69\times 15}{360} = 0.153 \text{ इंच}$$

3. तीसरी माप यानि भूमध्य रेखा से विभिन्न अक्षांश रेखाओं की दूरी ज्ञात करने हेतु हम उक्त चित्र की सहायता लेंगे।

चित्र में स्पर्श तल ग्लोब को 45^0 अक्षांश रेखा पर लम्बवत काटता हुआ दिखलाया गया है अर्थात् $<COB=45^0$है। चूंकि प्रकाश की स्थिति A बिन्दु पर मानी गयी है। अतः किसी की अक्षांशवृत की स्पर्श तल पर भूमध्य रेखा से प्रक्षेपित दूरी DE के बराबर होगी जिसे निम्नलिखित विधि से ज्ञात किया जा सकता है।

समकोण त्रिभूज D' OF में $\frac{D'F}{OD'} = Sin\theta$

$\therefore D'F = OD' Sin\theta$ (यहां OD' त्रिज्या है)

$\therefore D'F = R Sin\theta$

इसी प्रकार से $\frac{OF}{OD'} = Cos\theta$

$\therefore OF = OD' Cos\theta = R Cos\theta$

इसी तरह समकोण $\Delta\, COE$ में– $\frac{OE}{OC} = Cos 45^0 (\because \angle COE = 45^0)$

$OE = OC\ Cos 45^0 = R\ Cos 45^0$

अब चूंकि $\Delta\, DAE$ तथा $\Delta\, DOF$ समानुपाती है–$\therefore \frac{DE}{D'F} = \frac{AE}{AF}$

$$\therefore DE = \frac{D'F \times AE}{AF} = \frac{D'F(AO + OE)}{AO + OF}$$

$DE = \frac{R Sin\theta(R + R Cos 45^0)}{R \times R Cos\theta}$ (जहां θ सम्बन्धित अक्षांशीय मान है)

उपरोक्त परिकलित सूत्र के द्वारा हम भूमध्यरेखा से विभिन्न अक्षांश रेखाओं की दूरिया ज्ञात करेंगे।

15^0 अक्षांश की भूमध्यरेखा से दूरी $= \frac{R\ Sin 15^0(R + R Cos 45^0)}{R + R\ Cos 15^0}$

$$\frac{0.833 \times 0.2588(0.833 + 0.833 \times 0.7071)}{0.833 + 0.833 \times 0.9659}$$

$=0.19$ इंच

30^0 अक्षांश वृत की भूमध्यरेखा से दूरी $= \frac{R\ Sin 30^0(R + R Cos 45^0)}{R + R\ Cos 30^0}$

$\frac{0.833 \times 0.50(0.833 + 0.833 \times 0.7071)}{0.833 + 0.833 \times 0.8660} = 0.38$ इंच

45^0 अक्षांश वृत की भूमध्यरेखा से दूरी $= \frac{R\ Sin 45^0(R + R Cos 45^0)}{R + R\ Cos 45^0}$

$\frac{0.833 \times 0.7071(0.833 + 0.833 \times 0.7071)}{0.833 + 0.833 \times 0.7071} = 0.59$ इंच

60^0 अक्षांश वृत की भूमध्यरेखा से दूरी $= \frac{R\ Sin 60^0(R + R Cos 45^0)}{R + R\ Cos 60^0}$

$\frac{0.833 \times 0.8660(0.833 + 0.833 \times 0.7071)}{0.833 + 0.833 \times 0.5000} = 0.82$ इंच

75^0 अक्षांश वृत की भूमध्यरेखा से दूरी $= \dfrac{R\ Sin75^0\left(R + R\,Cos45^0\right)}{R + R\ Cos75^0}$

$$\frac{0.833\times 0.50(0.833+0.833\times 0.7071)}{0.833+0.833\times 0.2588}=1.09$$ इंच

अब. 90^0 अक्षांश वृत की भूमध्यरेखा से दूरी $= \dfrac{R\ Sin90^0\left(R + R\,Cos45^0\right)}{R + R\ Cos90^0}$

$$\frac{0.833\times 1.000(0.833+0.833\times 0.7071)}{0.833+0.833\times 0.833\times 0}=1.42$$ इंच

रचना विधिः—

1. अब प्रक्षेप की रचना करने के लिए सर्वप्रथम 45^0 अक्षांश वृत की लम्बाई के बराबर एक रेखा PQ खींचते हैं जो प्रक्षेप में भूमध्य रेखा को प्रदर्शित करेगी।
2. रेखा PQ को प्रक्षेपान्तर के अनुसार देशान्तर रेखाओं की रचना करने के लिए $\frac{360}{15}=$ कुल 24 बराबर भागों में बांट देंगे। ध्यान रहे कि प्रत्येक देशान्तर के बीच की दूरी मापक के अनुसार 0.153 इंच ही होगी।

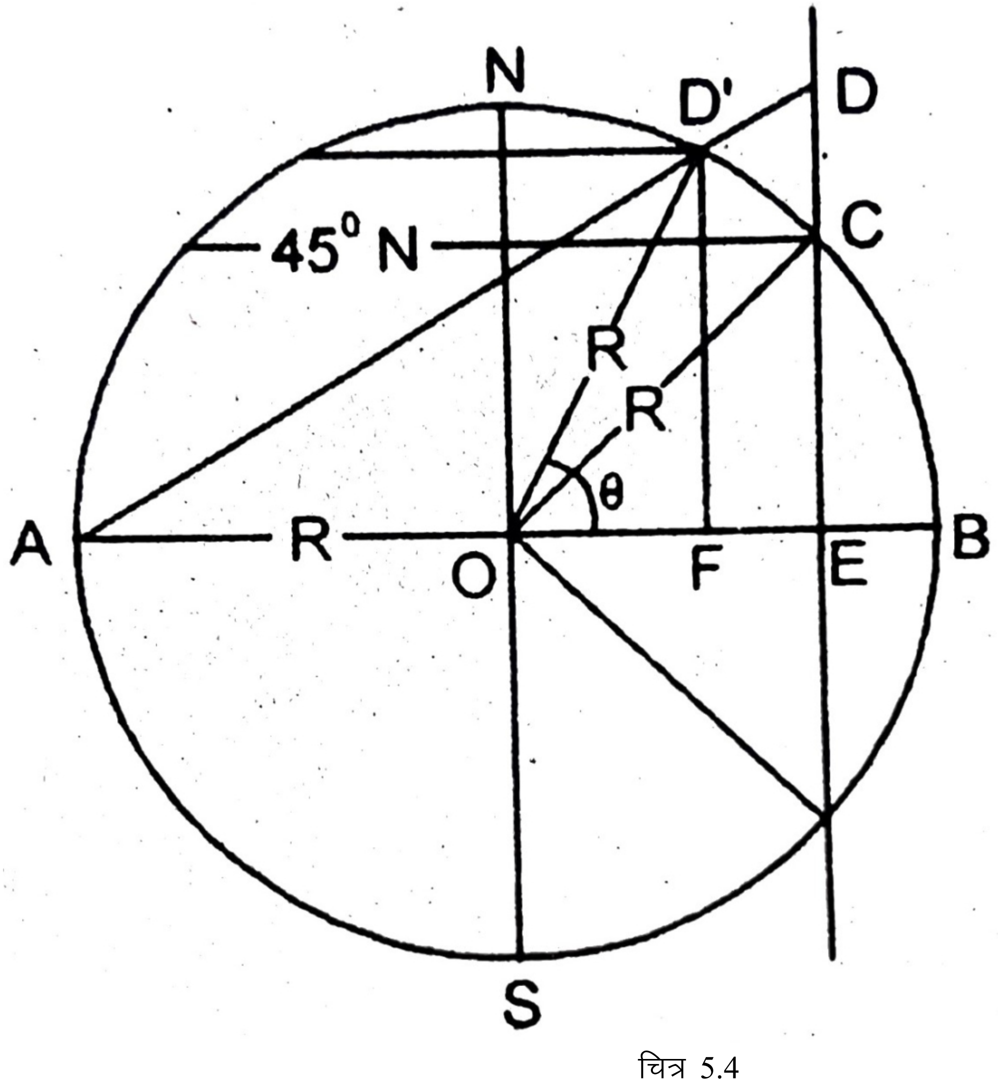

चित्र 5.4

3. अब बिन्दु P तथा Q पर उपर तथा नीचे की ओर लम्बवत रेखायें खींचेंगे जिस पर अक्षांश वृतों की रचना की जायेगी।

4. अब विभिन्न अक्षांशों की भूमध्य रेखा से दूरी के अनुसार अक्षांश रेखाओं के चिन्ह लगायेंगे जैसे बिन्दु P तथा Q से उपर तथा नीचे की ओर लम्ब रेखा पर 0.19 इंच की दूरी पर निशान लगायेंगे जो 15^0 उत्तरी एवं दक्षिणी अक्षांश वृत का निशान लोगा और इसी प्रकार से 0.38 इंच = 30^0 अक्षांश, 0.59 इंच = 45^0 अक्षांश, 0.82 इंच = 60^0 अंक्षांश, 1.09 इंच = 75^0 अक्षांश एवं 1.42 इंच = 90^0 उत्तरी एवं दक्षिणी अक्षांश रेखाओं के निशान लगायेंगे।

5. अब उपरोक्त निशानों को लगाने के बाद भूमध्य रेखा PQ के समानान्तर सभी निशानों को आपस में मिला देंगे। यही सभी अक्षांश रेखाएं तैयार हो जायेगी।

6. देशान्तर रेखाओं की रचना करने के लिए भूमध्य रेखा PQ पर लगे दशान्तरीय चिन्हों को PQ रेखा को लम्बवत उपर तथा नीचे की ओर 90^0 अक्षांश रेखा तक बढ़ाते हुए खीचेंगे।

7. अब सम्बन्धित अक्षांश एवं देशान्तर रेखाओं के मान लिखकर प्रक्षेप की रचना को पूर्ण करेंगे।

उदाहरण–4:– मापक 1 : 250000000 पर संसार का मानचित्र बनाने हेतु एक गॉल प्रक्षेप की रचना कीजिए जिसका प्रक्षेपान्तर 15^o हो।

हल– लघुकृत पृथ्वी के गोले का अर्द्धव्यास $\frac{250000000}{250000000}$ = =1 इंच

45^o अक्षांश रेखा की लम्बाई = $2\pi R\ \text{Cos}45$

$2 \times 22/7 \times 1 \times 0.7071$ == 4-45 इंच

15^o अन्तराल पर देशान्तर रेखाओं के बीच की दूरी =4.45X15/360= 0-185 इंच

प्रक्षेप की रचना–

सर्वप्रथम 1 इंच माप की त्रिज्या से एक वृत की रचना किया इस वृत के आधे भाग पर ऊपर तथा नीचे प्रक्षेपान्तर के अनुसार क्रमशः 15^o, 30^o, 45^o .... इत्यादि कोण बनाती हुई रेखायें खींचा जो वृत की परिधि को क्रमशः ऊपर के तरफ B, I, J, E, K, L तथा M, N, F, P, Q, D पर स्पर्श करती है।

<u>गॉल प्रक्षेप</u>

मापक 1 : 250000000

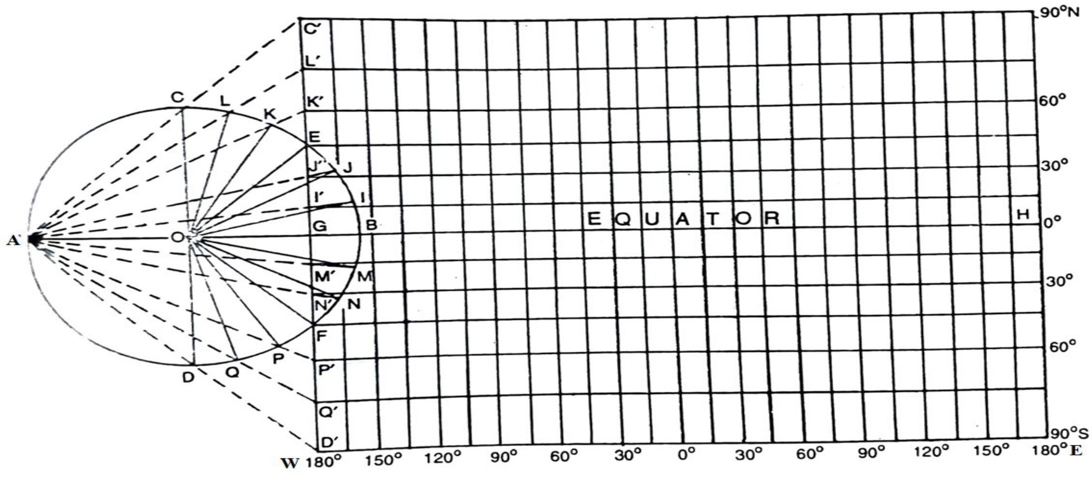

चित्र 5.5

चूंकि वृत में AB रेखा भूमध्य रेखीय व्यास तथा CD रेखा ध्रुवीय व्यास है। 45^o अक्षांश जो कि उत्तर तथा दक्षिण में वृत की परिधि को क्रमशः E तथा F पर काटता है को मिलाती हुई एक लम्बी रेखा खींचेगें।

- बिन्दु E तथा F से 4.45 इंच लम्बी रेखा खींचेगें तथा शेष अक्षांश की रचना करने के लिए बिन्दु A से वृत की परिधि पर स्थित बिन्दुओं I, J, K, L, C, M, N, O, Pतथा D को मिलाती हुई रेखायें खींचेगें जो 45^o अक्षांश पर लम्ब रेखा को क्रमशः I, J, K, L, C, M, N, , P तथा Q पर काटती है। अब इन कटान बिन्दुओं से भी 45^o अक्षांश के समानान्तर रेखायें खींचकर शेष सभी अक्षांश की रचना कीजिए।
- देशान्तर रेखाओं की रचना हेतु 45^o अक्षांश रेखा को अथवा भूमध्यरेखा को 24 बराबर भागों में (0.185 इंच अन्तराल पर) बांट दीजिए तथा FE के समानान्तर रेखायें खींचकर सभी देशान्तर को पूर्ण कीजिए।
- अब सभी सम्बन्धित अक्षांश तथा देशान्तर रेखाओं का मान लिखकर प्रक्षेप को पूरा कीजिए।

गणितीय रचना विधि–

गणितीय विधि से गॉल प्रक्षेप की रचना कने हेतु हमें निम्न मापों की आवश्यकता होगी।

1– 45^o अक्षांश वृत्त की लम्बाई = 4.45 इंच (आलेखी विधि)

2– 45^o अक्षांश वृत्त पर देशान्तरीय अन्तराल की दूरी = 0.185 इंच (आलेखी विधि से)

3– अक्षांश रेखाओं की भूमध्य रेखा से दूरी –इसको प्राप्त करने के लिए हम निम्न सूत्र का प्रयोग करेंगें–

$$= \frac{R \sin\theta\,(R+R\cos 45)}{R+R\cos\theta}$$

15^o अक्षांश रेखा की भूमध्य रेखा से दूरी = $\frac{R \sin 15\,(R+R\cos 45)}{R+R\cos 15}$

$$= \frac{1\times 0.2588\,(1+1\times 0.7071)}{1+1\times 0.9659} = 0.25 \text{ इंच}$$

उपरोक्त सूत्र का प्रयोग करके हम सभी अक्षांशों की भूमध्यरेखा से दूरी ज्ञात कर लेंगें। अब हम 45^o अक्षांश वृत्त की लम्बाई = 4.45इंच की रेखा खींचेगें और उसे 24 समान भागों में विभाजित कर देशान्तरीय चिन्ह लगायेगें तत्पश्चात भूमध्य रेखा के दोनो ओर क्रमशः 15^o अक्षांश (0.25 इंच), ... इत्यादि सभी अक्षांश रेखाओं की रचना करेंगें, और उसके बाद सभी देशान्तर रेखाओं की भी रचना करेंगें।

विशेषताएँ(Characteristics)

1. सभी अक्षांश रेखायें 45^0 अक्षांश रेखा के बराबर तथा सरल एवं समानान्तर रेखाये होती है।
2. देशान्तर रेखाये भी सरल एवं समानान्तर होती है।
3. भूमध्य रेखा से ध्रुवों की ओर जाने पर अक्षांश रेखाओं के बीच परस्पर दूरी बढ़ती जाती है जबकि देशान्तर रेखाओं के बीच की दूरी सदैव समान रहती है।
4. अक्षांश तथा देशान्तर एक दूसरे पर लम्ब होती है।
5. इस प्रक्षेप में केवल 45^0 उत्तरी एवं दक्षिणी अक्षांश वृत की लम्बाई ही शुद्ध होती है तथा इनके सहारे मापनी भी शुद्ध होती है।
6. 45^0 अक्षांश वृत से भूमध्य रेखा की ओर मापनी क्रमशः छोटी होती है क्योंकि भूमध्य रेखा की ओर के अक्षांश वृत अपने मूल आकार से छोटे होत जाते हैं जब तक भूमध्य रेखा की बात की जाय तो यह भी अपने मूल आकार से लगभग 7/10 गुना ही होती है।
7. 45^0 अक्षांश वृत से ध्रुवों की ओर जाने पर सभी अक्षांश रेखाएं अपनी वास्तविक माप से उत्तरोत्तर बड़ी होती जाती हैं। अतः इनके सहारे मापनी बढ़ी हुई होती है। यहां तक कि 90^0 अक्षांश जो कि एक बिन्दु होता है, वह भी 45^0 अक्षांश रेखा के बराबर ही होता है।
8. देशान्तर रेखाओं के सहारे भी मापनी में वृद्धि होती है, लेकिन निम्न अक्षांशों की अपेक्षा उच्च अक्षांशों में यह विकृति अधिक पायी जाती है।

9. यह प्रक्षेप न तो शुद्ध दिशा प्रदर्शित करता है और ना ही शुद्ध आकृति।

गुण (Merits)

45^{o} अक्षांश पर ही मापनी शुद्ध होती है जबकि 45^{o} अक्षांश से भूमध्य रेखा की ओर जाने पर मापनी क्रमशः छोटी तथा ध्रुवों की ओर जाने पर मापनी क्रमशः बड़ी होती जाती है।

दोष (Demerits)

इस प्रक्षेप की आकृति, क्षेत्रफल एवं दिशा अंशतः अशुद्ध होती है, फिर भी मध्य अक्षांशो के मानचित्रों हेतु इसका प्रयोग किया जाता है।

5.निष्कर्ष (Conclusion)

प्रस्तुत अध्याय का अध्ययन करने से हम संसार के मानचित्र को एक ही प्रक्षेप पर बनाने के बारे में सीखे और साथ–साथ यह भी समझ गये कि पूर्व काल में किस प्रकार से समुंद्री नाविक अपने नौसंचालन हेतु मानचित्रों का सहारा लिया करते थें। मापनी की कुछ अशुद्धियों को अगर छोड़ दिया जाय तो संसार का मानचित्र बनाने हेतु मर्केटर एवं गॉल दोनो प्रक्षेप बहुत उपयोगी है।

6.मॉडल प्रश्न (Model Questions)

प्रश्न 1. मर्केटर प्रक्षेप किस प्रकार के मानचित्र के लिए सर्वाधिक उपयोगी है?

(a) विश्व के वनों को प्रदर्शित करने हेतु।
(b) भूमध्य रेखीय मानचित्र हेतु।
(c) नौ संचालन हेतु।
(d) गेहूँ उत्पादन के प्रदर्शन हेतु।

प्रश्न 2. एक दिशा नौ पथ किस प्रक्षेप की विशेषता है?

(a) मर्केटर प्रक्षेप।
(b) गॉल प्रक्षेप।
(c) साधारण बेलनाकार प्रक्षेप।
(d) उपरोक्त में कोई नहीं।

प्रश्न 3. $2\Pi R\,Cos\,45^{0}$ किस प्रक्षेप में भूमध्य रेखा की लम्बाई निकालने हेतु प्रयुक्त किया जाता है?

(a) साधारण बेलनाकार प्रक्षेप।
(b) संदर्श बेलनाकार प्रक्षेप।
(c) मर्केटर प्रक्षेप।
(d) गॉल प्रक्षेप।

प्र0 4. दि टाइम एटलस आफ द वर्ल्ड में किस प्रक्षेप का बहुतायत प्रयोग हुआ है?

(a) साधारण बेलनाकार प्रक्षेप।
(b) संदर्श बेलनाकार प्रक्षेप।
(c) मर्केटर प्रक्षेप।
(d) गॉल प्रक्षेप।

प्रश्न 5. निम्न में से मर्केटर प्रक्षेप की विशेषता है–

(a) ध्रुवों का प्रदर्शन सम्भव न हो।
(b) अक्षांश वृतों के सहारे देशान्तरों में भी वृद्धि होना।
(c) नौ संचालन हेतु उपयुक्त।

(d) उपरोक्त सभी।

प्रश्न 6. वायु परिवहन हेतु संसार के मानचित्र हेतु कौन सा प्रक्षेप उपयुक्त है?

(a) साधारण बेलनाकार प्रक्षेप।

(b) मर्केटर प्रक्षेप।

(c) गॉल प्रक्षेप।

(d) उपरोक्त में से कोई नहीं।

प्रश्न .7 विश्व में तापमान एवं वर्षा वितरण का प्रदर्शन हेतु कौन–सा प्रक्षेप उपयुक्त होता है?

(a) साधारण बेलनाकार प्रक्षेप।

(b) मर्केटर प्रक्षेप।

(c) गॉल प्रक्षेप।

(d) उपरोक्त में से कोई नहीं।

प्रश्न .8 निम्न में से किस प्रक्षेप में अक्षांश त्रिविम विधि से बनायी जाती है?

(a) साधारण बेलनाकार प्रक्षेप।

(b) संदर्श बेलनाकार प्रक्षेप।

(c) मर्केटर प्रक्षेप।

(d) गॉल प्रक्षेप।

प्रश्न .9 मर्केटर प्रक्षेप का स्वरूप है–

(a) साधारण बेलनकार।

(b) त्रिविम।

(c) यथाकृतिक।

(d) उपरोक्त में से कोई नहीं।

प्रश्न .10 मर्केटर प्रक्षेप में किस मानचित्र ने आवश्यक संशोधन किया ?

(a) जेम्स गॉल।

(b) मॉक हाउस।

(c) जे0एच0 लेम्बर्ट।

(d) एडवर्ट राइट।

प्रश्न 11– प्रदर्शक भिन्न 1 : 250000000 पर संसार का मानचित्र बनाने के लिए एक गॉल प्रक्षेप की रचना कीजिए।

प्रश्न 12– प्रदर्शक 1 : 250000000 पर संसार का मानचित्र बनाने हेतु एक मर्केटर प्रक्षेप की रचना कीजिए।

प्रश्न 13– गॉल प्रक्षेप की प्रमुख विशेषतायें बताइये।

प्रश्न 14– मर्केटर प्रक्षेप नौ संचालन हेतु किस प्रकार से उपयोगी है समझाऐ।

प्रश्न 15– गॉल प्रक्षेप में क्या अवगुण हैं विस्तार से बताइये।

प्रश्न 16– मरकेटर प्रक्षेप के गुण–दोष की चर्चा कीजिए।

प्रश्न 17– विश्व का मानचित्र बनाने के लिए एक मर्केटर प्रक्षेप की रचना कीजिए जिसका प्रदर्शक भिन्न 1:200000000 तथा प्रक्षेपान्तर 15^0 हो।

प्रश्न 18– मर्केटर प्रक्षेप के वृतमार्ग की चर्चा कीजिए।

प्रश्न 19– एक दिशा नौ पथ गुण को देखते हुए मर्केटर प्रक्षेप की उपयोगिता को समझाइये।

प्रश्न 20–गॉल प्रक्षेप की उपयोगिता एवं विशेषताओं का वर्णन कीजिए।

7.सन्दर्भ पुस्तकें (Reference Books)

1.यादव, हीरा लाल (1987), प्रैक्टिकल जियोग्राफी, वसुंधरा प्रकाशन, गोरखपुर।

2-E. Raisz (1962), General Cartoigraphy, John Wiley and Sons, New York, 5th Edition.

3 F.J. Monkhouse and F.J. Wilkinson (1985), Maps and Diagrams, Methuen, London.

4 तिवारी, आर. सी. (2003), प्रयोगात्मक भूगोल, प्रयाग पुस्तक भवन, इलाहाबाद।

5 हीरा लाल (2009), प्रयोगात्मक भूगोल, के आधार, राधा पब्लिकेशन, नई दिल्ली।

6 हारून, मोहम्मद (2010), प्रयोगात्मक भूगोल, मिश्र ट्रेडिंग कारपोरेशन, मैदागिन, वाराणसी।

7 K. Sarkar (1997), Practical Geography: A Systematic Approach, Orient Longman, Kolkata.

7 L.R. Singh (2006), Fundamental of Practical Geography, Sharda Pustak Bhawan, Allahabad.

8 डी० आर० खुल्लर (2022), प्रयोगात्मक भूगोल, कल्याणी पब्लिकेशन नई दिल्ली।

9 Misra, R. P. and Ramesh, A. (1969), Fundamental of Cartography, University of Mysore, Mysore.

10 चौहान, पी आर (1998), प्रायोगिक भूगोल, वसुंधरा प्रकाशन, गोरखपुर।

11 Robinson, A.H. (2009), Elements of Cartography, Wiley; Sixth edition (1 January 2009), USA.

12 जे०पी० शर्मा (2011), प्रायोगिक भूगोल, (चतुर्थ संस्करण), रस्तोगी पब्लिकेशन्स मेरठ।

13 आर. एन. मिश्र एवं पी. के. शर्मा (2019), प्रायोगिक भूगोल, रावत पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली।

14 आर० एल० सिंह एवं राना पी. बी. सिंह (1993), प्रयोगात्मक भूगोल के तत्व कल्याणी पब्लिशर्स, नई दिल्ली।

15 आर०सी० तिवारी एवं सुधाकर त्रिपाठी (2018) अभिनव प्रयोगात्मक भूगोल, प्रवालिका पब्लिकेशन्स, इलाहाबाद।

इकाई–06 (Unit- 6)

ध्रुवीय प्रक्षेप– ध्रुवीय लम्बकोणीय प्रक्षेप, त्रिविमिय ध्रुवीय खमध्य प्रक्षेप एवं प्रक्षेपों का चयन

(Polar Projection- Orthographic Polar Zenithal Projection, Stereographic Polar Zenithal Projection and Selection of Projection)

पाठ संरचना **(Lesson Structure)**

6.1 उद्देश्य **(Obejective)**

6.2 प्रस्तावना **(Introduction)**

6.3 ध्रुवीय लम्बकोणीय खमध्य प्रक्षेप **(Polar Zenithal Projection)**

6.4 ध्रुवीय त्रिविम खमध्य प्रक्षेप **(Stereographic Polar Zenithal Projection)**

6.5 प्रक्षेपों का चयन **(Selection of Projection)**

6.6 निष्कर्ष **(Conclusion)**

6.7 मॉडल प्रश्न **(Model Question)**

6.8 सन्दर्भ पुस्तकें **(Reference Books)**

6.1 उद्देश्य (Obejectives)

1. प्रक्षेप को सीखने का प्रथम उद्देश्य यह है कि इस पर उत्तरी एवं दक्षिणी ध्रुवीय क्षेत्रों का प्रदर्शन ठीक ढ़ंग से किया जा सकता है।
2. इन मानचित्रों में विभिन्न रंगों का प्रयोग करके स्थलाकृतिक विशेषताओं को ठीक ढ़ंग से प्रस्तुत किया जा सकता है।
3. यह प्रक्षेप ध्रुवीय क्षेत्रों से सम्बन्धी मानचित्रों के लिए विशेष उपयोगी है।
4. इन प्रक्षेपों को पढ़ने से विद्यार्थियों में ध्रुवीय क्षेत्रों से सम्बन्धित मानचित्रों को समझने में काफी मदद मिलेगी।
5. इस प्रक्षेप की रचना विद्यार्थियों के लिए उपयोगी होगा।

6.2 प्रस्तावना (Introduction)

प्रस्तुत अध्याय में हम दो प्रक्षेपों यथा लम्बकोणीय ध्रुवीय खमध्य प्रक्षेप एवं ध्रुवीय त्रिविम मध्य प्रक्षेप की रचना आलेखी एंव गणितीय दोनो विधियों से सीखेगें और साथ–साथ यह भी समझेंगें कि ध्रुवीय क्षेत्रों का मानचित्र बनाने हेतु ये प्रक्षेप किस प्रकार से उपयोगी होते है। लम्बकोणीय ध्रुवीय मध्य प्रक्षेप की विशेषता यह होती है कि इसमें सभी अक्षांश रेखायें एक संकेन्द्रीय वृत होती है तथा ध्रुवों से दूर जाने पर इनके बीच की दूरी क्रमशः कम होती जाती है अक्षांश और देशान्तर रेखाओं का कटान ध्रुवों से दूर जाता है इनकी आकृति एंव क्षेत्रफल अशुद्ध होता चला जाता है क्योकि बताया जा चुका है कि ध्रुवों से दूर जाने पर अक्षांश रेखाओं के बीच की दूरी क्रमशः घटती जाती है।

यदि ध्रुवीय त्रिविम खमध्य प्रक्षेप के बारे में देखा जाय तो इसकी रचना काफी सरल होने के कारण यह ध्रुवीय क्षेत्रों के मानचित्र बनाने हेतु सबसे अधिक उपयोग में लाया जाता है। इसकी विशेषता यह है कि यह एक यथाकृतिक एवं शुद्ध दिशा प्रक्षेप है सभी अक्षांश रेखायें इसमें भी संकेन्द्रीय वृत के रूप में होती है, जिसका केन्द्र ध्रुव ही होता है जैसे–जैसे ध्रुवो से दूर जाते है, वैसे–वैसे अक्षांश रेखाओं के बीच की दूरी बढ़ती जाती है इसीलिए इस प्रक्षेप की आकृति सभी दिशाओं में शुद्ध होती है। देशान्तर रेखायें भी समान कोणीय दूरी पर एक सरल रेखा के रूप में होती है तथा अक्षांश एवं देशान्तर रेखाओं का कटान बिन्दु एक समकोण होता है।

खमध्य प्रक्षेपः—इस प्रक्षेप में अक्षांश एवं देशान्तर रेखाओं का प्रक्षेपण एक ऐसे तल पर किया जाता है जो ग्लोब को सिर्फ एक बिन्दु पर स्पर्श करता हो। उसे शिरोबिन्दु या उर्ध्व कहते हैं। अग्रेजी भाषा में इस शब्द के लिए Zenith प्रयोग किया जाता है। इसमें प्रकाश स्रोत के ठीक उपर के बिन्दु पर ग्लोब को स्पर्श करते हुए अक्षांश एवं देशान्तर रेखाओं का प्रक्षेपण एक समतल सतह पर किया जाता है। चूंकि ऐसा करने से इस प्रक्षेप में केन्द्र बिन्दुओं से अन्य बिन्दुओं का दिगंश (Bearing) शुद्ध होता है। अतः ये प्रक्षेप (Azimuthal) दिगंशीय प्रक्षेप की कहे जाते है। यहां हम निम्न चुनिंदा खमध्य प्रक्षेपों को रचना सहित समझेंगे।

6.3 लम्बकोणीय ध्रुवीय खमध्य प्रक्षेप(Orthographic Polar Zerithal Projection)

लम्बकोणीय ध्रुवीय खमध्य प्रक्षेपों में संकेन्द्रीय वृत्ताकार अक्षांश रेखाओं की रचना हेतु इस प्रक्षेप की रचना में यह कल्पना की जाती है कि प्रक्षेपण तल ग्लोब पर ध्रुव को स्पर्श करता है। प्रकाश स्रोत ग्लोब से अनन्त दूरी वाले किसी बिन्दु पर स्थित माना जाता है।

उदाहरण—1:— प्रदर्शक भिन्न 1:120000000 पर उत्तरी गोलार्द्ध का मानचित्र बनाने हेतु एवं लम्बकोणीय ध्रुवीय खमध्य प्रक्षेप की रचना कीजिए जिसका प्रक्षेपान्तर 15^0 हो।

हल.

$$\text{लघुकृत पृथ्वी के गोले का अर्द्धव्यास } (R) = \frac{\text{पृथ्वी का वास्तविक अर्द्धव्यास}}{\text{प्रदर्शक भिन्न का हर}}$$

$$= \frac{250000000}{120000000} = 2.08 \text{ इंच}$$

अब प्रक्षेप की आलेखी रचना करने हेतु हम निम्न बिन्दुओं के अनुसार चरणबद्ध तरीके से आगे बढ़ेंगे।

1. सर्वप्रथम 2.08 इंच का अर्द्धव्यास लेकर वृत का एक चतुर्थांस NAO बनायेंगे जिसमें N बिन्दु उत्तरी ध्रुव को प्रदर्शित करेगा तथा O बिन्दु पृथ्वी के केन्द्र को यानि ON रेखा ध्रुवीय अर्द्धव्यास है तथा OA रेखा विषुवतीय अर्द्धव्यास है।
2. अब OA विषुवतीय अर्द्धव्यास के समानान्तर एक स्पर्श रेखा NA' खीचेंगे।
3. पुनः बिन्दु O से 15^0 प्रक्षेपान्तर के अनुसार 15^0, 30^0, 45^0, 60^0 तथा 75^0 का कोण बनाती हुई रेखायें खीचेंगे जो वृत्तखण्ड की परिधि को क्रमशः B, C, D, E, तथा F बिन्दुओं पर काटेगी।
4. अब रेखा OA पर ON रेखा के समानान्तर रेखायें क्रमशः A, B. C, D, E तथा F बिन्दुओं को मिलाते हुए खीचेंगे क्योंकि इस प्रक्षेप में यह कल्पना की गयी होती है कि प्रकाश का स्रोत ग्लोब से अनन्त दूरी पर है। अतः ये रेखायें NA' रेखा को क्रमशः A, B. C, D, E तथा F बिन्दुओं पर काटती है।
5. अब यही दूरियां प्रक्षेप में ध्रुव से विभिन्न अक्षांश रेखाओं की दूरी होगी जैसे 15^0 अक्षांश रेखा की ध्रुव से दूरी NB', 30^0 अक्षांश की ध्रुव से दूरी = NC' इसी प्रकार क्रमशः—

मूल प्रक्षेप की रचनाः— मूल प्रक्षेप की रचना करने के लिए हम निम्न बिन्दुओं के अनुसार कार्य करेंगे।

1. सर्वप्रथम कोई बिन्दु N को केन्द्र मानकर प्रक्षेपान्तर के अनुसार हम क्रम से सभी अक्षांश रेखाओं की रचना करेंगे जैसे—

क. NA' की दूरी का अर्द्धव्यास लेकर बिन्दु N को केन्द्र मानकर O^0 अक्षांश वृत (भूमध्य रेखा) की रचना करेंगे।

ख. NB' की दूरी का अर्द्धव्यास लेकर बिन्दु N को केन्द्र मानकर 15^0 अक्षांश वृत की रचना करेंगे।

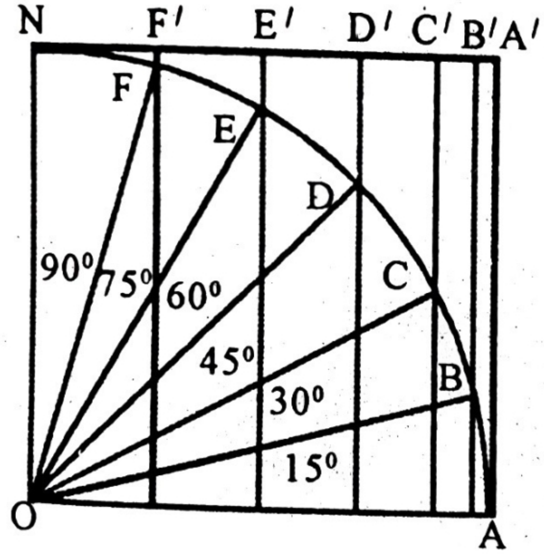

चित्र 6.1

लम्बकोणीय ध्रुवीय खमध्य प्रक्षेप

प्रदर्शक भिन्न —1:120000000

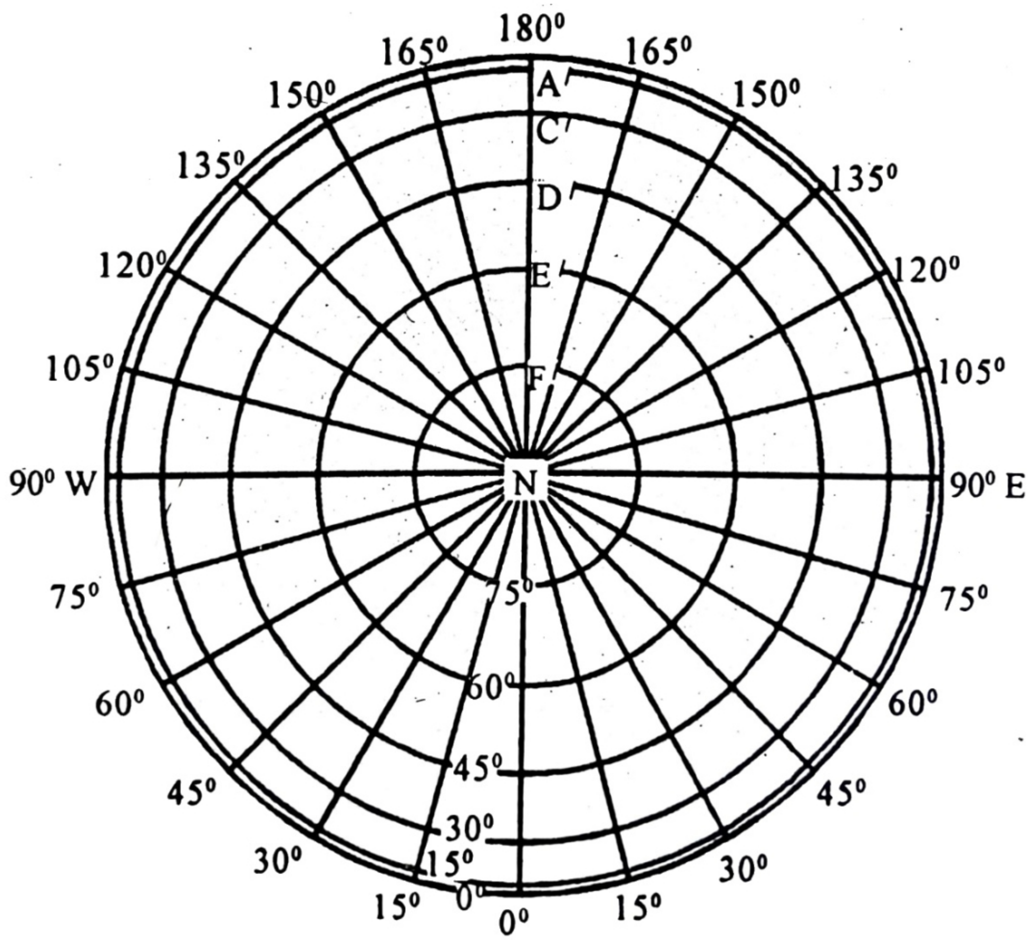

चित्र 6.2

ग. NC' की दूरी का अर्द्धव्यास लेकर बिन्दु N को केन्द्र मानकर 30^0 अक्षांश वृत की रचना करेंगे।

घ. ND' की दूरी का अर्द्धव्यास लेकर बिन्दु N को केन्द्र मानकर 45^0 अक्षांश वृत की रचना करेंगे।

ड. NE' की दूरी का अर्द्धव्यास लेकर बिन्दु N को केन्द्र मानकर 60^0 अक्षांश वृत की रचना करेंगे तथा–

च. NF' की दूरी का अर्द्धव्यास लेकर बिन्दु N को केन्द्र मानकर 75^0 अक्षांश वृत की रचना करेंगे।

2. N बिन्दु उत्तरी ध्रुव को प्रदर्शित करता है।
3. अब देशान्तर रेखाओं की रचना करने के लिए हम N बिन्दु से 15^0 के अन्तराल पर कोण बनाती हुई चारों तरफ कुल 24 रेखायें खीचेंगे जो प्रक्षेप में सभी देशान्तर रेखाओं को प्रदर्शित करेगी।
4. अब सभी अक्षांश एवं देशान्तर रेखाओं के मान लिखकर हम प्रक्षेप की रचना प्रक्रिया को पूर्ण करेंगे।

गणितीय रचना विधि :–

इस प्रक्षेप की रचना गणितीय विधि से करने के लिए हमें सिर्फ एक मान की आवश्यकता होगी जो कि ध्रुव से विभिन्न अक्षांश रेखाओं की दूरी, यानि विभिन्न अक्षांश रेखाओं का अर्द्धव्यास। इसे प्राप्त करने के लिए हम त्रिकोणमितीय सूत्र का प्रयोग करेंगे जिसका विवरण नीचे दिया जा रहा है। प्रस्तुत चित्र में NBA अभीष्ठ ग्लोब का चतुर्थांस है तथा बिन्दु O ग्लोब का केन्द्र बिन्दु है और रेखा OA ग्लोब का अर्द्धव्यास है। <BOA अक्षांश वृत के केन्द्र पर बना कोण O है, N बिन्दु उत्तरी ध्रुव को प्रकट करता है जाहं NA प्रक्षेपण तक ग्लोब को स्पर्श करता है। चूंकि प्रकाश का स्रोत अनन्त में प्रति ध्रुवीय है, इसलिए प्रकाश किरण आने पर Q अक्षांश वृत के B बिन्दु का प्रतिबिम्ब प्रक्षेपण तल के B' बिन्दु पर पड़ेगा अर्थात् Q अक्षांश वृत का अर्द्धव्यास NB' या CB रेखा के बराबर होगा।

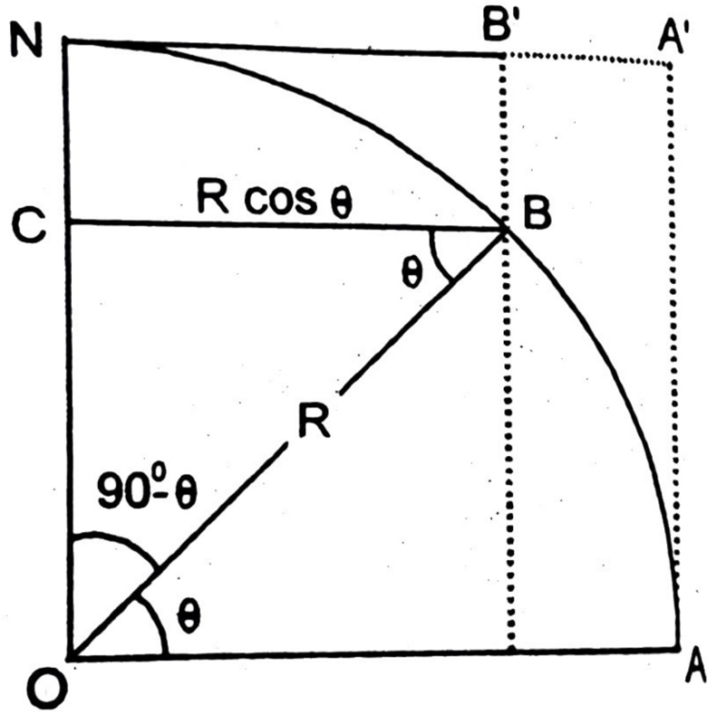

चित्र 6.3

चित्र के अनुसारः–

$\angle BOA = \angle OBC = \theta$

तथा $\angle BOC = 90 - \theta$

अब समकोण ΔOBC में– $\dfrac{CB}{OB} = \dfrac{\text{आधार}}{\text{कर्ण}}$ $s\theta$

$CB = OB\ Cos\theta \Rightarrow R\ Cos\theta \quad (\because R = OB)$

अतः उपरोक्त सूत्र के आधार पर हम सभी सम्बन्धित अक्षांश वृतों के अर्द्धव्यास को ज्ञात कर सकते हैं।

अब. 0^0 अक्षांश वृत का अर्द्धव्यास $= R\,Cos\theta = R\ Cos0 = 2.08 \times 1.0000 = 2.08$ इंच

15^0 अक्षांश वृत का अर्द्धव्यास $= R\,Cos15^0 = 2.08 \times 0.9659 = 2.009$ इंच

30^0 अक्षांश वृत का अर्द्धव्यास $= R\,Cos30^0 = 2.08 \times 0.8660 = 1.80$ इंच

45^0 अक्षांश वृत का अर्द्धव्यास $= R\,Cos45^0 = 2.08 \times 0.7071 = 1.47$ इंच

60^0 अक्षांश वृत का अर्द्धव्यास $= R\,Cos60^0 = 2.08 \times 0.5000 = 1.04$ इंच

75^0 अक्षांश वृत का अर्द्धव्यास $= R\,Cos75^0 = 2.08 \times 0.2588 = 0.53$ इंच

अब प्रक्षेप की रचना करने हेतु हम निम्न प्रकार से कार्य करेंगे।

1. सर्वप्रथम किसी बिन्दु N को मानेंगे जो कि प्रक्षेप में उत्तरी ध्रुव को प्रकट करेगा।
2. पुनः बिन्दु N से अक्षांश वृतों के अर्द्धव्यास के बराबर दूरी परकार में लेकर सभी अक्षांश वृतों की रचना करेंगे जैसे N बिन्दु को केन्द्र मानकर 2.08 इंच की दूरी पर 0^0 अक्षांश रेखा, 2.009 इंच की त्रिज्या से 15^0 की अक्षांश रेखा, 1.80 इंच की त्रिज्या से 30^0 की अक्षांश रेखा, 1.47 इंच की त्रिज्या से 45^0 की अक्षांश रेखा, 1. 04 इंच की त्रिज्या से 60^0 की अक्षंश रेखा तथा 0.53 इंच की त्रिज्या लेकर 75^0 अक्षांश रेखा की रचना करेंगे।
3. N बिन्दु प्रक्षेप में 90^0 अक्षांश रेखा यानि उत्तरी ध्रुव को प्रकट करेगा।
4. अब देशान्तर ही N बिन्दु से 15^0 के अन्तराल पर कुल बराबर–बराबर 24 देशान्तर रेखाओं की रचना कर देंगे।
5. अब सभी अक्षांश एवं देशान्तर रेखाओं के मान लिखकर प्रक्षेप की रचना को पूर्ण कर लेंगे।

उदाहरण–1:–प्रदर्शक भिन्न 1 : 250000000 पर उत्तरी गोलार्द्ध का मानचित्र बनाने के लिए एक लम्बकोणीय ध्रुवीय खमध्य प्रक्षेप की रचना कीजिए जिसका प्रक्षेपान्तर 15° हो।

हल –

लघुकृत पृथ्वी के गोले का अर्द्धव्यास = $\frac{250000000}{250000000} = 1$ इंच

आलेखी रचना

- सर्वप्रथम 1 इंच त्रिज्या की माप लेकर वृत के एक चतुर्थांश OAN की रचना कीजिए, जहाँ N उत्तरी ध्रुव को तथा O वृत के केन्द्र को प्रदर्शित करता है, तत्पश्चात N बिन्दु से Na स्पर्श रेखा खींचा।
- अब O केन्द्र से क्रमशः 15°, 30°, 45°, 60° तथा 75° का कोण बनाती हुई रेखायें खींचेगें जो वृत की परिधि को क्रमशः B, C, D इत्यादि बिन्दुओुं पर स्पर्श कर रही है।
- पुनः ON रेखा के समानान्तर A, B, C, D, E तथा F बिन्दुओं को काटती हुई रेखायें खींचिये जो स्पर्श रेखा को क्रमशः a, b, c इत्यादि बिन्दुओं पर काटती है।

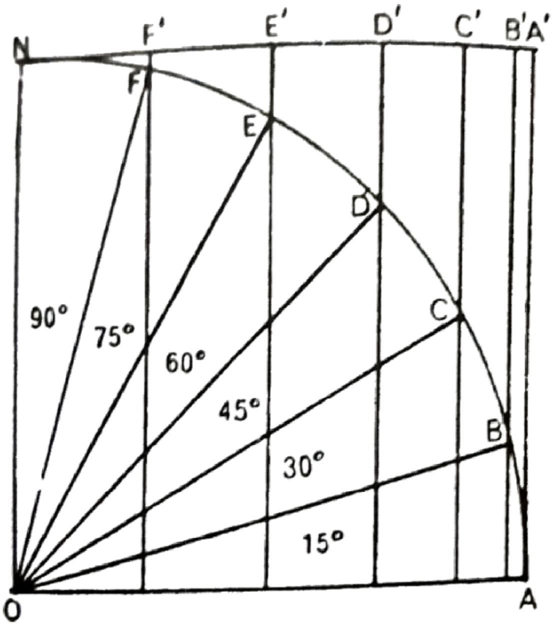

चित्र 6.4

लम्बकोणीय ध्रुवीय खमध्य प्रक्षेप

मापक 1 : 250000000

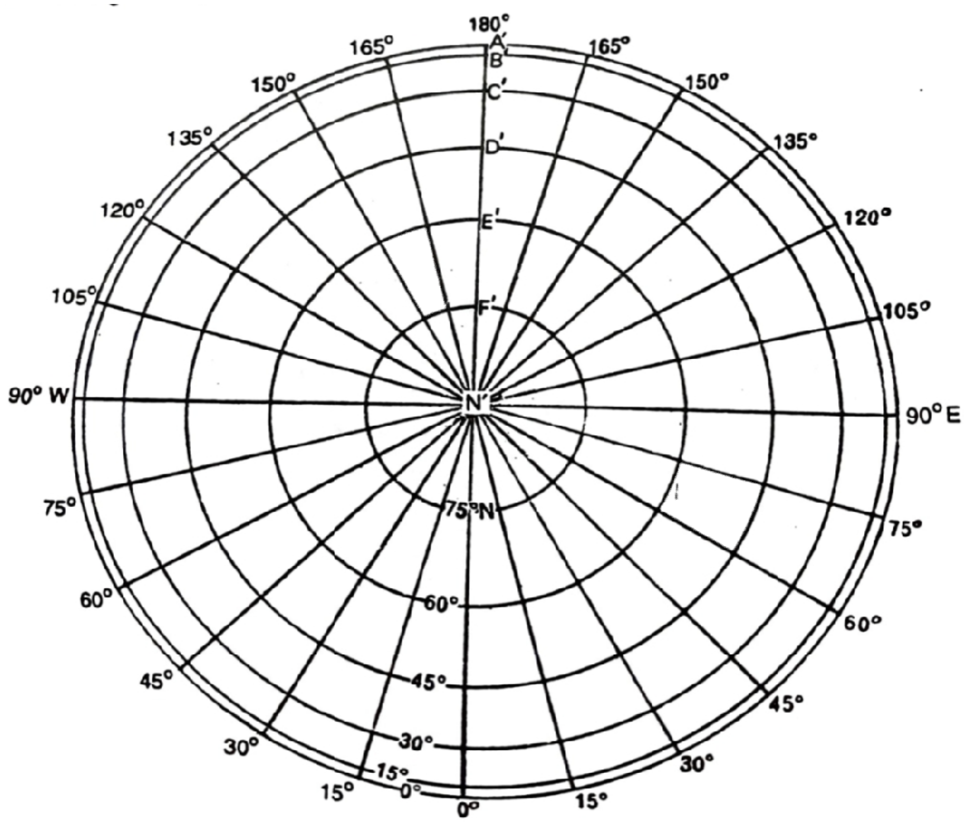

चित्र 6.5

प्रक्षेप की रचना –

- प्रक्षेप की रचना करने के लिए सीधी रेखा खींचिए तथा उस पर कोई बिन्दु N लीजिए यह बिन्दु उत्तरी ध्रुव को प्रदर्शित करेगा।
- पुनः N बिन्दु से क्रमशः Na, Nb, Nc, ……… इत्यादि दूरियों के बराबर माप की त्रिज्या लेकर Nको केन्द्र मानकर क्रमशः 0° ,15°, 30°... आदि सभी अक्षांश वृतों की रचना किया गया और सभी के संबधित मान लिखा गया।
- देशान्तर रेखाओं की रचना करने के लिए 15°अन्तराल पर चारों तरफ सीधी रेखायें खींची गयी और सभी के देशान्तरीय मान लिखे गये। अब प्रक्षेप बनकर तैयार हुआ।

गणितीय रचना विधि –

इस प्रक्षेप की रचना गणितीय विधि से करने के लिए हमें सिर्फ एक ही माप की आवश्यकता होगी। सभी अक्षांश रेखाओं की त्रिज्या जिसको हम निम्न त्रिकोणमितीय सूत्र से ज्ञात कर सकते है।

$R\cos\theta$ या $R\sin(90-\theta)$

जहाँ पर R लघुकृत पृथ्वी की त्रिज्या है।

उदाहरणार्थ यदि 15° अक्षांश वृत का अर्द्धव्यास ज्ञात करना है तो

सूत्र $R\cos 15$ या $R\sin(90-15)$

जहाँ R=1 इंच 1×0.9659 या $1\times\sin 75$

$=1\times 0.9659$ या 1×0.9659 = 0-9659 इंच

अतः उक्त सूत्र का प्रयोग करके हम सभी संबधित अक्षांश रेखाओं की त्रिज्या ज्ञात कर लेगें।

अब प्रक्षेप की रचना करने के लिए हम सर्वप्रथम कोई बिन्दु Nको केन्द्र मानकर 0.9659 इंच की त्रिज्या से एक वृत की रचना करेगें जो कि 15° की अक्षांश रेखा को प्रदर्शित करेगा और इसी प्रकार से क्रमशः 30° ,45°, 60°,75° तथा 90° अक्षांश रेखा की भी रचना करेगें। देशान्तर रेखाओं की रचना करने के लिए हम 15° के अन्तराल पर आलेखी विधि की भाँति सभी देशान्तर रेखाओं की रचना करेगें तत्पश्चात सभी अक्षांश और देशान्तर रेखाओं का मान लिखकर प्रक्षेप को पूरा करेगें।

विशेषताए (Characteristics)

1. इस प्रक्षेप में सभी अक्षांश रेखायें संकेन्द्रीय वृत होती है तथा ध्रुवों से दूर जाने पर उनकी आपसी दूरी कम होती जाती है।
2. सभी देशान्तर एक सरल रेखा होती है। सभी अक्षांश एवं देशान्तर रेखाओं का कटान समकोण होता है।
3. इस प्रक्षेप पर केवल उत्तरी या दक्षिणी ध्रुवीय क्षेत्रों को ठीक से दिखाया जा सकता है।
4. इस प्रक्षेप में सभी अक्षांशों के सहारे मापनी शुद्ध पायी जाती है परन्तु केन्द्र से देशान्तर रेखाओं की दूरी तीव्र गति से कम होने के कारण देशान्तर रेखाओं के सहारे मापनी शुद्ध नहीं पायी जाती। अतः इस प्रक्षेप में क्षेत्रफल एवं आकृति दोनों विकृत हो जाती है।
5. इस प्रक्षेप में प्रक्षेप केन्द्र से दूर चतुर्दिक दिशा शुद्ध होती है।

गुण (Merits)

- इस प्रक्षेप पर दिशा शुद्ध होती है।
- ध्रुवों से क्रमशः दूर होते जाने पर क्षेत्रफल तथा आकृति अशुद्ध होती चली जाती है।

उपयोग (Uses)

वैसे तो इस प्रक्षेप का प्रयोग बहुत कम होता है फिर भी खगोलीय मानचित्रों के लिए यह प्रक्षेप बहुत उपयोगी है इस प्रक्षेप का प्रयोग स्थलाकृतिक मानचित्रों में भी बहुतायत किया जाता है।इन मानचित्रों में आवश्यक रंग एवं आभाओं का प्रयोग करके उच्चावच लक्षणों को आकर्षक रूप में मानचित्र पर पेश किया जा सकता है। खगोलीय मानचित्रों रेखाचित्रों, भूराजनीति एवं सैन्य योजना आदि कार्यों के लिए यह मानचित्र विशेष महत्व का होता है और बहुत उपयोगी भी होता है। संयुक्त राज्य अमेरिका के मानचित्रकारों ने कुछ वर्षों से इस प्रक्षेप की रचना में विशेष रूचि दिखलायी है। आर0ई0 हैरिसन ने ''ए वार एटलस फार अमेरिकन'' नामक मानचित्रावली में इस प्रक्षेप पर अनेक आकर्षक मानचित्र बनाये हैं जो अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

6.4. त्रिविम ध्रुवीय खमध्य प्रक्षेप (Stereographic Polar Zenithal Projection)

यह एक संदर्श प्रक्षेप है इसमें यह कल्पना की जाती है कि किसी एक ध्रुव पर प्रक्षेपण तल तथा दूसरे ध्रुव पर प्रकाश स्रोत है यानि यदि प्रक्षेपण तल उत्तरी ध्रुव पर है तो प्रकाश का स्रोत दक्षिणी ध्रुव पर होगा। उत्तरी गोलार्द्ध की रचना करते समय प्रक्षेपण तल उत्तरी ध्रुव पर तथा दक्षिणी गोलार्द्ध की रचना करते समय प्रक्षेपण तल दक्षिणी ध्रुव पर रखा जायेगा। इसी प्रकार अक्षांश और देशान्तर रेखाओं का जाल बनाया जाता है।

उदाहरण–3:– प्रदर्शक भिन्न 1:240000000 पर उत्तरी गोलार्द्ध का मानचित्र बनाने के लिए एक ध्रुवीय त्रिविम खमध्य प्रक्षेप की रचना कीजिए जिसका प्रक्षेपान्तर 15^0 हो।

हल.

$$\text{लघुकृत पृथ्वी के गोले का अर्द्धव्यास } (R) = \frac{\text{पृथ्वी का वास्तविक अर्द्धव्यास}}{\text{प्रदर्शक भिन्न का हर}}$$

$$= \frac{635000000}{240000000} = 2.64 \text{ सेमी}$$

प्रक्षेप की रचना करने के लिए हम निम्न चरणबद्ध बिन्दुओं के अनुसार आगे बढ़ेंगे।

1. सर्वप्रथम किसी O बिन्दु को केन्द्र मानकर 2.64 सेमी0 अर्द्धव्यास लेकर एक वृत की रचना करेंगे जिसमें NS ध्रुवीय व्यास को तथा PA भूमध्य रेखीय व्यास को प्रदर्शित कर रहा है।
2. अब N बिन्दु से भूमध्य रेखीय अर्द्धव्यास के समानान्तर एक रेखा NA' खीचेंगे।

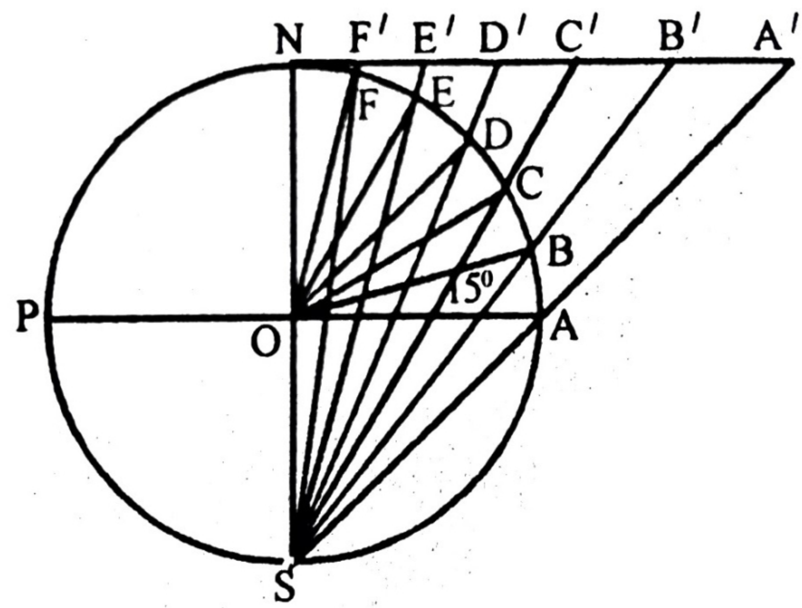

चित्र 6.6

3. पुनः O बिन्दु से OA रेखा के उपर क्रमशः 15^0, 30^0, 45^0, 60^0, तथा 75^0 का कोण बनाती हुई रेखायें खीचेंगे जो वृत की परिधि को क्रमशः B, C, D, E तथा F बिन्दुओं पर काटेगी। अब यही दूरी विभिन्न अक्षांश वृतों के अर्द्धव्यास होंगे जैसे– NA' की दूरी $=0^0$ अक्षांश वृत का अर्द्धव्यास NB' की दूरी = 15^0 अक्षांश वृत का अर्द्धव्यास, NC' की दूरी $=30^0$ अक्षांशवृत का अर्द्धव्यास ND' की दूरी = 45^0 अक्षांशवृत का अर्द्धव्यास, NE' की दूरी = 60^0 अक्षांश वृत का अर्द्धव्यास तथा NF की दूरी 75^0 अक्षांश वृत के अर्द्धव्यास को प्रदर्शित करेगी।

5. अब मूल प्रक्षेप की रचना करने के लिए अन्य स्थान पर कोई बिन्दु N मानते हैं तथा N को केन्द्र बिन्दु मानकर हम क्रमशः NA', NB', NC', ND', NE' तथा NF' की दूरी परकार में लेकर 0^0, 15^0, 30^0, 45^0, 60^0, तथा 75^0 अक्षांशों के संकेन्द्रिय वृतों की रचना करेंगे। विदित है कि यहां N 15^0, 30^0, 45^0, 60^0, तथा 75^0 बिन्दु उत्तरी ध्रुव को प्रकट करेगा।

त्रिविम ध्रुवीय खमध्य प्रक्षेप

प्रदर्शक भिन्न– 1:240000000

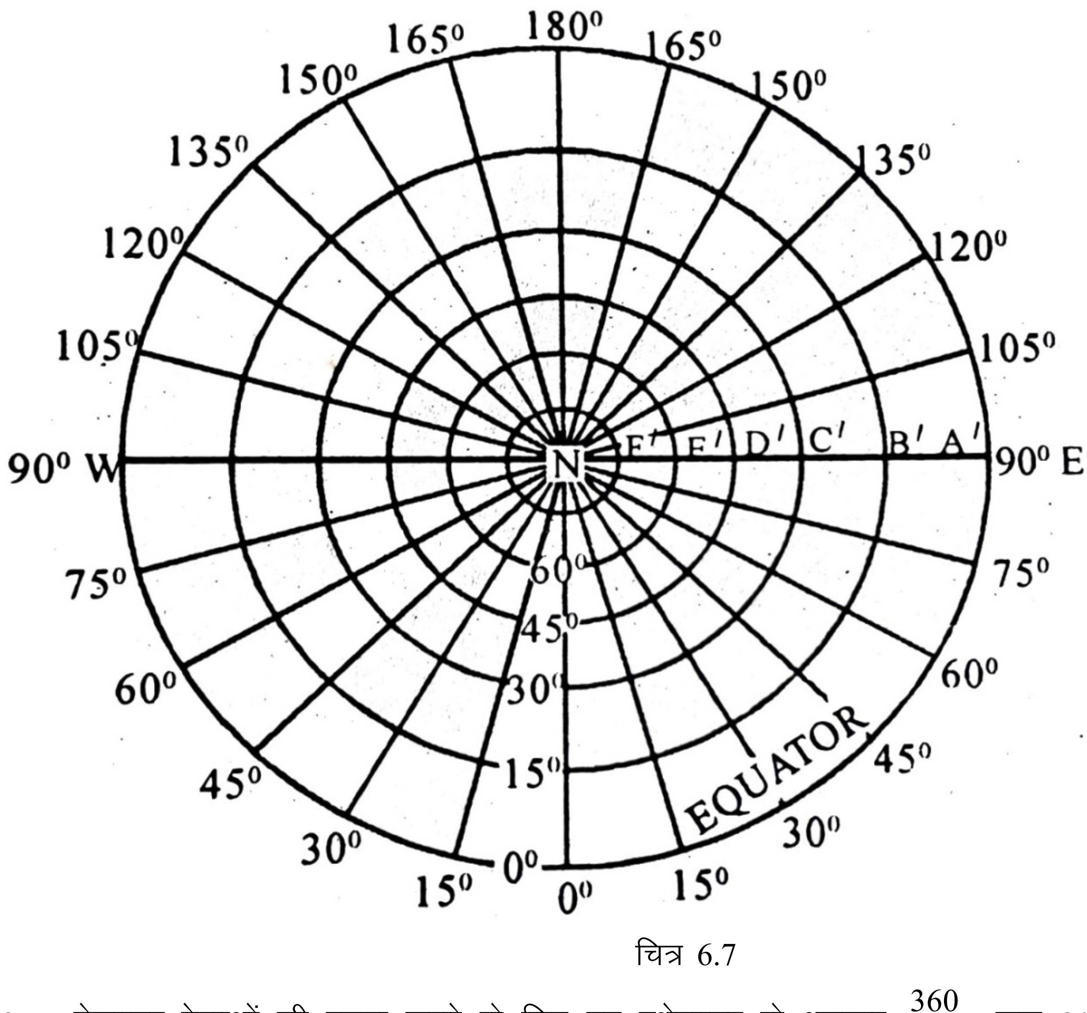

चित्र 6.7

6. देशान्तर रेखाओं की रचना करने के लिए हम प्रक्षेपान्तर के अनुसार $\frac{360}{15}$ = कुल 24 देशान्तर, संकेन्द्रीय अक्षांश वृतों के केन्द्र N से 15^0 के अन्तराल पर सभी देशान्तर रेखाओं की रूचना करेंगे। देशान्तर रेखायें एक सरल रेखा होगी जो केन्द्र N से O^0 अक्षांश रेखा को स्पर्श करेगी।

7. अब सभी अक्षांश एवं देशान्तर रेखाओं के मान लिखकर अपने प्रक्षेप की रचना को पूर्ण करेंगे।

गणितीय रचना विधि :–

ध्रुवीय त्रिविम खमध्य प्रक्षेप की रचना गणितीय विधि से करने हेतु हमें केवल एक माप की आवश्यकता होती है वो है–सम्बन्धित अक्षांश वृतों का अर्द्धव्यास।

इसकी गणना करने हेतु हम त्रिकोणमितीय सूत्र का प्रयोग करेंगे। किन्तु सूत्र की सार्थकता को समझने के लिए हम उपरोक्त चित्र का अवलोकन करेंगे जिसमें NASP वृत के N तथा S बिन्दु क्रमशः उत्तरी एवं दक्षिणी ध्रुव है तथा 0 बिन्दु ग्लोब का केन्द्र है। $\angle BOA=\theta^0$ अक्षांश वृत के केन्द्र पर बना एक अक्षांशीय कोण है और रेखा ON, OS, OA एवं OP अभीष्ठ ग्लोब के अर्द्धव्यास (R) हैं।

इस प्रकार NB एक प्रक्षेपण तल है जो ग्लोब को बिन्दु N पर स्पर्श करता है। अतः स्पष्ट है कि 5 बिन्दु से प्रकाश डालने पर Q अक्षांश वृत के B बिन्दु का प्रतिबिम्ब NB' प्रक्षेपण तल के B' बिन्दु पर पड़ेगा। इस प्रकार Q अक्षांश वृत का अर्द्धव्यास NB' रेखा के बराबर होगा जिसकी लम्बाई हम निम्न प्रकार से ज्ञात कर सकते हैं।

$\angle BOA = \theta$ अतः $\angle NOB = 90 - \theta$

अथवा $\angle NOB = \angle BSO + \angle OBS$

$\therefore \angle BSO = \frac{90-\theta}{2}$

अब समकोण त्रिभुज B' NS में $\frac{NB'}{NS} = \frac{\text{प्रक्षेपान्तर}}{\text{कर्ण}} = Tan\ \frac{90-\theta}{2}$

$NB' = NS\,Tan\ \frac{90-\theta}{2}$

$NB' = 2R\ Tan\ \frac{90-\theta}{2}$ (चूंकि NS=2R है तथा Q का मान सम्बन्धित अक्षांश है)

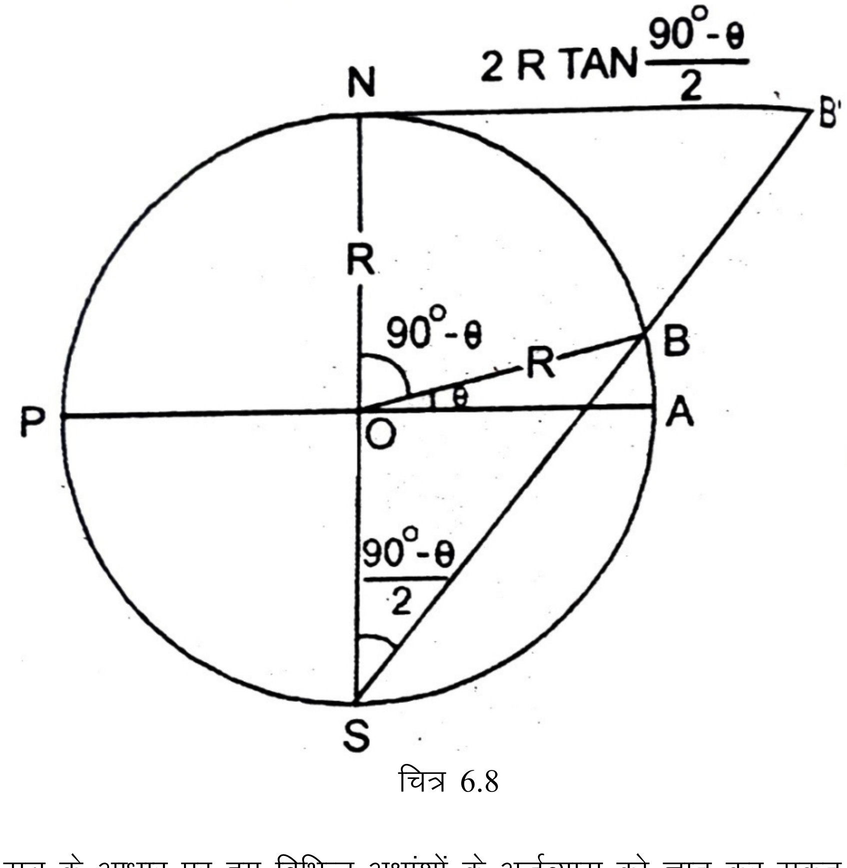

चित्र 6.8

अतः उपरोक्त सूत्र के आधार पर हम विभिन्न अक्षांशों के अर्द्धव्यास को ज्ञात कर सकत हैं–

यथा 0^0 अक्षांश वृत का अर्द्धव्यास $= 2R\ Tan \frac{90-\theta}{2}$

$= 2R Tan 45 = 2 \times 2.64 \times 1.0000 = 5.28$ सेमी

15^0 अक्षांश वृत का अर्द्धव्यास $= 2R\ Tan \frac{90-15}{2}$

$= 2R\ Tan\ 37.5^0 = 2 \times 2.64 \times 0.7673 = 4.05$ सेमी

30^0 अक्षांश वृत का अर्द्धव्यास $= 2R\ Tan \frac{90-30}{2}$

$= 2R\ Tan\ 30^0 = 2 \times 2.64 \times 0.5773 = 3.04$ सेमी

45^0 अक्षांश वृत का अर्द्धव्यास $= 2R\ Tan \frac{90-45}{2}$

$= 2R\ Tan\ 22.5^0 = 2 \times 2.64 \times 0.4142 = 2.18$ सेमी

60^0 अक्षांश वृत का अर्द्धव्यास $= 2R\ Tan \frac{90-60}{2}$

$= 2R\ Tan\ 15^0 = 2 \times 2.64 \times 0.2679 = 1.41$ सेमी

75^0 अक्षांश वृत का अर्द्धव्यास $= 2R\ Tan \frac{90-75}{2}$

$= 2R\ Tan\ 7.5^0 = 2 \times 2.64 \times 0.1316 = 0.694$ सेमी

90^0 अक्षांश N बिन्दु होगा।

प्रक्षेप की रचना :–

1. सर्वप्रथम कोई बिन्दु N मानेंगे जो प्रक्षेप में उत्तरी ध्रुव को प्रदर्शित करेगा।
2. N को केन्द्र मानकर उपर वर्णित अक्षांश वृतों के अर्द्धव्यास से संकेन्द्रीय वृत की रचना करेंगे जैसे–
   5.28 सेमी0 का अर्द्धव्यास लेकर 0^0 अक्षांश वृत की रचना करेंगे।
   4.05 सेमी0 का अर्द्धव्यास लेकर 15^0 अक्षांश वृत की रचना करेंगे।
   3.04 सेमी0 का अर्द्धव्यास लेकर 30^0 अक्षांश वृत की रचना करेंगे।
   2.18 सेमी0 का अर्द्धव्यास लेकर 45^0 अक्षांश वृत की रचना करेंगे।
   1.41 सेमी0 का अर्द्धव्यास लेकर 60^0 अक्षांश वृत की रचना करेंगे।
   0.694 सेमी0 का अर्द्धव्यास लेकर 75^0 अक्षांश वृत की रचना करेंगे तथा N 90^0 अक्षांश होगा।
3. अब देशान्तर रेखाओं की रचना करने के लिए पुनः बिन्दु N से 15^0 के अन्तराल पर कुल 24 सरल रेखायें खीचेंगे जो केन्द्र N से लेकर 0^0 की अक्षांश रेखा को स्पर्श करेगी।
4. अब सभी सम्बन्धित अक्षांश एवं देशान्तरों का मान लिखकर प्रक्षेप की रचना को पूर्ण करेंगे।

उदाहरण–4:–प्रदर्शक भिन्न 1 : 250000000 पर दक्षिणी गोलार्द्ध के लिए एक त्रिविम ध्रुवीय खमध्य प्रक्षेप की रचना कीजिए जिसका प्रक्षेपान्तर 15^o हो।

हल – लघुकृत पृथ्वी के गोले का अर्द्धव्यास = $\frac{250000000}{250000000} = 1$ इंच

अक्षांश रेखाओं की सं0 = 15^o, 30^o, 45^o, 60^o, 75^o तथा 90^o

आलेखी रचना –

- सर्वप्रथम 1 इंच का अर्द्धव्यास लेकर एक अर्द्धवृत की रचना करते है इस अर्द्धवृत में A बिन्दु उत्तरी ध्रुव को तथा C बिन्दु दक्षिणी ध्रुव को दर्शाती है।
- अब अर्द्धवृत के केन्द्र O से वृत के चतुर्थांश OAB में प्रक्षेपान्तर के अनुसार क्रमशः 15^{o} ,30^{o}, 45^{o},60^{o}, 75^{o} का कोण बनाया जो अर्द्धवृत की परिधि को क्रमशः a, b, c, d, e बिन्दुओं पर काटती है।

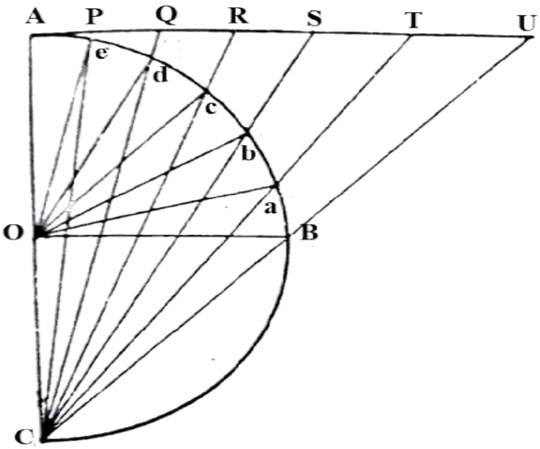

चित्र 6.9

ध्रुवीय त्रिविम खमध्य प्रक्षेप

मापनी 1 : 250000000

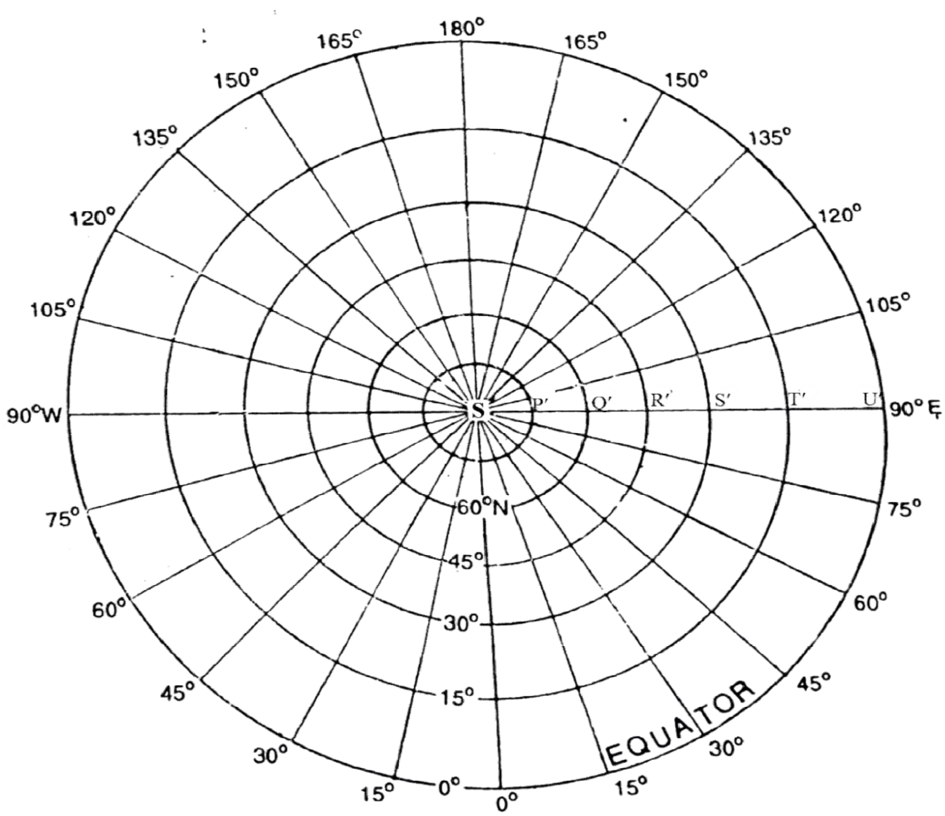

चित्र 6.10

- ➢ पुनः बिन्दु C यानि दक्षिण ध्रुव से इन बिन्दुओं a, b, c, …. इत्यादि को मिलाती हुई प्रकाश रेखायें खींचा जो कि स्पर्श रेखा को क्रमशःP, Q, R, S, Tतथा U बिन्दु पर काटती है।

प्रक्षेप की रचना –

- ➢ प्रक्षेप की रचना करने के लिए एक लम्बवत सीधी रेखा खींचिए तथा उस पर कोई बिन्दु S लीजिए जो दक्षिणी ध्रुव को प्रदर्शित करेगा।
- ➢ S बिन्दु से क्रमशः AP, AQ, AR, AS, AT,तथा AU की माप लेकर (त्रिज्या का) अक्षांश वृतों की रचना कीजिए जो क्रमशः 75°,60°, 45°,30°, 15° तथा 0° दक्षिणी अक्षांश के वृत होगें।
- ➢ देशान्तर रेखाओं की रचना करने के लिए 15° अन्तराल पर कोण बनाती हुई चारों तरफ सरल रेखायें खींचिए तथा उन पर सभी का मान अंकित कर प्रक्षेप को पूरा कीजिए।

गणितीय रचना विधि – ध्रुवीय त्रिविम खमध्य प्रक्षेप की गणितीय विधि से रचना करने हेतु हमें सिर्फ एक माप की आवश्यकता होगी सभी सम्बन्धित अक्षांश वृत की त्रिज्या जो कि हम निम्न सूत्र द्वारा प्राप्त कर सकते है।

सूत्र–$2R\tan(90-\theta)/2$

उदाहरणार्थ –

15° अक्षांश का अर्द्धव्यास = $2X1X\tan(90-15)/2$

= 2X1X37.30

= $2\times1\times0.7673$ = 1-5346 इंच

उक्त सूत्र का प्रयोग करके हम क्रमशः 30°,45°, 60°,75° तथा 90° अक्षांशों का अर्द्धव्यास ज्ञात कर लेगें।

प्रक्षेप की रचना करने हेतु हम कोई बिन्दु S लेगें जो दक्षिणि ध्रुव को प्रदर्शित करेगा तत्पश्चात बिन्दु S को केन्द्र मानकर उक्त सभी अक्षांश वृतों (जैसे 15° अक्षांश वृत की त्रिज्या = 1.5346 इंच) की रचना कर लेगें। देशान्तर रेखाओं की रचना करने के लिए 15° के अन्तराल पर आलेखी विधि जैसा सभी देशान्तर रेखाओं का निर्माण करके प्रक्षेप को पूरा करेगें।

विशेषतायें (Characteristics)

1. सभी अक्षांश रेखायें एक संकेन्द्रीय वृत होती है जिनका केन्द्र ध्रुव होता है और ध्रुवों से दूर जाने पर अक्षांश रेखाओं के बीच की दूरी क्रमशः बढ़ती जाती है।
2. सभी देशान्तर रेखायें समान कोणीय दूरी पर एक सरल रेखा के रूप में होती है अक्षांश एवं देशान्तरों का आपसी कटान बिन्दु एक समकोण पर होता हैं।
3. प्रक्षेप केन्द्र से चारों तरफ दिशा शुद्ध रहती है। अतः यह एक शुद्ध दिशा प्रक्षेप है।
4. इस प्रक्षेप में प्रक्षेप केन्द्र से भूमध्य रेखा की ओर अक्षांश रेखाओं एवं देशान्तर रेखाओं दोनों के ही सहारे मापनी में वृद्धि होती है। परन्तु वृद्धि की दर अक्षांश–देशान्तर रेखाओं के सन्दर्भ में एक ही अनुपात में पायी जाती है जिससे इसमें यथाकृतिक प्रक्षेप के गुण भी पाये जाते हैं।

गुण (Merits)

केन्द्र से भूमध्यरेखा की ओर क्रमशः अक्षांश वृतों की लम्बाइयों में वृद्धि होने के कारण यह यथाकृतिक प्रक्षेप बन जाता है। प्रक्षेप के केन्द्र से चारों और इसकी दिशा शुद्ध होती है तथा इस प्रक्षेप पर भूमध्यरेखा का प्रदर्शन सम्भव है।

उपयोग (Uses)

पृथ्वी के ध्रुवीय भाग के क्षेत्रों अथवा देशों को दर्शाने हेतु इस प्रक्षेप का बहुतायत उपयोग किया जाता है किन्तु इसमें मापनी की अधिक विभिन्नता होने के कारण वर्तमान समय में इस प्रक्षेप पर मानचित्र बनाने का कार्य कुछ कम हो गया है।

6.5.प्रक्षेपों का चयन (Selection of Projections)

प्रक्षेप का शाब्दिक अर्थ किसी पारदर्शी फिल्म अथवा कागज पर बनी हुई आकृति को प्रकाश की सहायता से किसी समतल सतह पर दर्शाना होता है। जैसा कि हम सब जानते है कि हमारी पृथ्वी एक लध्वक्ष गोलाभ के रूप में है और पृथ्वी के इस आकार के समतल सतह पर सही–सही दर्शाना शायद असम्भव है क्योंकि मानचित्र में विकृति अवश्यम्भावी है फिर भी कुछ विकृतियों को छोड़कर समतल सतह का मानचित्र पढ़ने, समझने और कई मायने में सुगम होता है।

क्षेत्र विशेष के आधार पर प्रक्षेपों का चयन –

हमारी पृथ्वी बहुत बड़ी है और इतनी बड़ी पृथ्वी का मानचित्र किसी एक प्रक्षेप पर बनाना सम्भव नही है यदि मानचित्र बना भी दिया जाय तो उसमें काफी विसंगती आ जायेगी और उसको पढ़ना एवं समझना बहुत कठिन हो जायेगा तथा क्षेत्रफल सम्बन्धी त्रुटि भी आयेगी इन्ही सभी बिन्दुओं को ध्यान में रखकर पृथ्वी के अलग–अलग क्षेत्रों के लिए अलग–अलग प्रक्षेपों का चयन चयन किया जाता है जिससे पृथ्वी के लगभग सभी क्षेत्रों का प्रदर्शन काफी हद तक सही–सही किया जा सकें।

1. **ध्रुवीय क्षेत्रों के प्रदर्शन हेतु उपर्युक्त प्रक्षेप** – ध्रुवीय खमध्य समदूरस्थ प्रक्षेप ध्रुवीय खमध्य समक्षेत्र प्रक्षेप, नोमोनिक ध्रुवीय खमध्य प्रक्षेप, धुवीय त्रिविम खमध्य प्रक्षेप तथा लम्बकोणीय ध्रुवीय खमध्य प्रक्षेप आदि ध्रुवीय क्षेत्रों का मानचित्र बनाने हेतु विशेष रूप से उपयोग में लाये जाते है।
2. **मध्य अक्षांशों हेतु उपर्युक्त प्रक्षेप** – इन क्षेत्रों के प्रदर्शन हेतु एक मानक अक्षांश वाला शंक्वाकार प्रक्षेप, दो मानक अक्षांश वाला शंक्वाकार प्रक्षेप बोन प्रक्षेप, बहुशंकु प्रक्षेप तथा अन्तर्राष्ट्रीय प्रक्षेप आदि का चयन किया जाता है।
3. **विषुवतीय क्षेत्रों हेतु उपर्युक्त प्रक्षेप** – विषुवतीय क्षेत्रों के सही–सही प्रदर्शन हेतु विषुवतीय खमध्य समदूरस्थ प्रक्षेप, विषुवतीय खमध्य समक्षेत्र प्रक्षेप, नोमोनिक विषुवतीय खमध्य प्रक्षेप तथा त्रिविम विषुवतीय खमध्य प्रक्षेपों का चयन किया जाता है।
4. **संसार के मानचित्र हेतु उपर्युक्त प्रक्षेप** – यथार्थ या संदर्भ बेलनाकार प्रक्षेप, समदूरस्थ बेलनाकार प्रक्षेप, बेलनाकार समक्षेत्र प्रक्षेप, मर्केटर प्रक्षेप, गॉल प्रक्षेप आदि विशेष रूप से संसार के मानचित्र बनाने हेतु उपयोगी होते है।
5. कुछ रूढ़ प्रक्षेपों पर भी संसार के मानचित्र बनाये जाते है, जैसे – गोलाकार प्रक्षेप, मॉलवीड का समक्षेत्र प्रक्षेप, सिनुस्वायडल प्रक्षेप विछिन्न मॉलवीड प्रक्षेप तथा विच्छिन्न सिनुस्वायडल प्रक्षेप प्रयोग में लाये जाते है।

गुण और विशेषता के आधार पर प्रक्षेपों का चयन –

ऊपर विभिन्न क्षेत्रों के आधार पर उपर्युक्त प्रक्षेपों के बारे में हम पढ़ चुके है, अब हम कुछ प्रमुख प्रक्षेपों के गुण और विशेषता के आधार पर उनके प्रयोगों के बारे में पढ़ेंगें।

1. **एक मानक अक्षांश वाला शंक्वाकार प्रक्षेप** – इस प्रक्षेप पर ऐसे प्रदेशों के मानचित्र बनाना उपयुक्त होता है जो मध्य अक्षांशों में स्थित हो तथा अक्षांशीय विस्तार कम हो और किसी एक ही अक्षांश पर अधिक दूरी तक फैला हों।
2. **दो मानक अक्षांश वाला शंक्वाकार प्रक्षेप** – यूरोप एवं ऑस्ट्रेलिया में छोटे–छोटे देशों अथवा राज्यों का मानचित्र बनाने में इसका काफी प्रयोग हुआ है।

3. **बोन प्रक्षेप** – इसका प्रयोग ध्रुवीय महाद्वीपों को छोड़कर अन्य सभी महाद्वीपों में बड़े–बड़े क्षेत्रों का मानचित्र बनाने हेतु किया गया है क्योंकि इसके सभी अक्षांश मानक अक्षांश होते है जिससे हर क्षेत्र में क्षेत्रफल शुद्ध रहता है।
4. **समक्षेत्र बेलनाकार प्रक्षेप** – इस प्रक्षेप पर भूमध्य रेखीय देशों का मानचित्र बनाना श्रेयस्कर होता है परन्तु कभी–कभी इस पर संसार का वितरण मानचित्र भी बनाया जाता है। यह प्रक्षेप वितरण मानचित्रों हेतु सर्वोपयोगी है।
5. **मर्केटर प्रक्षेप** – यह शुद्ध आकृति एवं शुद्ध दिशा प्रक्षेप है। यह प्रक्षेप नौसंचालन, पवनों की दिशा तथा महासागरीय धाराओं को दर्शाने हेतु काफी उपयोग में लाया जाता है।
6. **गॉल प्रक्षेप** – इस प्रक्षेप पर संसार के सामान्य मानचित्र आसानी से बनाये जाते है।
7. **ध्रुवीय त्रिविम खमध्य प्रक्षेप** – यह एक संदर्श प्रक्षेप है, ध्रुवीय क्षेत्रों तथा किसी एक गोलार्द्ध का मानचित्र बनाने हेतु यह प्रक्षेप प्रयोग में लाया जाता है।
8. **लम्बकोणीय ध्रुवीय खमध्य प्रक्षेप** – इस प्रक्षेप पर क्षेत्रफल और आकृति बहुत अशुद्ध हो जाती है इसीलिए इसका प्रयोग काफी कम होता है।

6.6. निष्कर्ष (Conclusion)

लम्बकोणीय ध्रुवीय खमध्य प्रक्षेप एंव ध्रुवीय त्रिविम खमध्य प्रक्षेप का अध्ययन करने से हम ध्रुवीय क्षेत्रों का मानचित्र बनाने तथा ध्रुवीय देशों या महाद्वीपों जैसे अण्टार्कटिका आदि महाद्वीपों का मानचित्र बनाने के बारे में सीख गये। इससे विद्यार्थियों का ध्रुवीय क्षेत्रों के सम्बन्ध में सही–सही जानकारी उपलब्ध होगी और छात्र इसका लाभ अपने ज्ञानार्जन में ले सकेगें। मानचित्र निर्माण में किस क्षेत्र के मानचित्रण के लिए कौन सा प्रक्षेप उपयुक्त है तथा किस प्रक्षेप का कहाँ सही उपयोग हो सकता है, यह एक महत्वपूर्ण तथ्य है।

6.7. मॉडल प्रश्न (Model Questions)

प्रश्न.1 ग्लोब को किसी एक बिन्दु पर स्पर्श करने वाली समतल सतह पर प्रक्षेपित किये गये अक्षांश–देशान्तर रेखा जाल को किस प्रक्षेप के नाम से जाना जाता है?

(a) शंक्वाकार प्रक्षेप।
(b) बेलनाकार प्रक्षेप।
(c) खमध्य प्रक्षेप।
(d) रूढ़ प्रक्षेप।

प्रश्न .2 प्रकाश की स्थिति के अनुसार निम्न में से कौन खमध्य प्रक्षेप का प्रकार है–

(a) नोमोनिक प्रक्षेप।
(b) त्रिविम प्रक्षेप।
(c) लम्बकोणीय प्रक्षेप।
(d) उपरोक्त सभी।

प्रश्न .3 प्रक्षेपण तल की स्थिति के अनुसार कौन खमध्य प्रक्षेप का प्रकार है–

(a) ध्रुवीय खमध्य प्रक्षेप।
(b) तिर्यक खमध्य प्रक्षेप।
(c) भूमध्यरेखीय खमध्य प्रक्षेप।
(d) उपरोक्त सभी।

प्रश्न .4 ध्रुवीय क्षेत्रों के मानचित्रों के लिए कौन–सा प्रक्षेप सर्वाधिक उपयोग में लाया जाता है?

(a) त्रिविम ध्रुवीय खमध्य प्रक्षेप।
(b) लम्बकोणीय ध्रुवीय प्रक्षेप।
(c) केन्द्रीय ध्रुवीय खमध्य प्रक्षेप।

(d) ध्रुवीय खमध्य समक्षेत्र प्रक्षेप।

प्रश्न .5 ध्रुवीय क्षेत्रों में सैन्य ग्रिड तंत्र के प्रदर्शन हेतु किस प्रक्षेप का उपयोग किया जाता है?

(a) बोन प्रक्षेप।
(b) त्रिविक ध्रुवीय खमध्य प्रक्षेप।
(c) अन्तर्राष्ट्रीय प्रक्षेप।
(d) उपरोक्त में से कोई नहीं।

प्रश्न .6 आर0ई0 हैरीसन ने ''ए वार एटलस आफ अमेरिकन्स'' में किस प्रक्षेप पर मानचित्र बनाये है?

(a) लम्ब कोणीय ध्रुवीय खमध्य प्रक्षेप।
(b) त्रिविम ध्रुवीय खमध्य प्रक्षेप।
(c) केन्द्रीय ध्रुवीय खमध्य प्रक्षेप।
(d) उपरोक्त में से कोई नहीं।

प्रश्न .7 ध्रुवीय खमध्य समक्षेत्र प्रक्षेप की रचना सर्वप्रथम किसने की?

(a) जेम्स गॉल।
(b) एडवर्ड राइट।
(c) जे0एच0 लैम्बर्ट।
(d) प्लेट कैरी।

प्रश्न .8 ध्रुवीय क्षेत्रों के वितरण मानचित्रों हेतु विशेष रूप से कौन–सा प्रक्षेप उपयोगी होता है?

(a) खमध्य ध्रुवीय समक्षेत्र प्रक्षेप।
(b) लम्बकोणीय ध्रुवीय खमध्य प्रक्षेप।
(c) अन्तर्राष्ट्रीय प्रक्षेप।
(d) उपरोक्त में से कोई नहीं।

प्रश्न .9 लम्बकोणीय ध्रुवीय खमध्य प्रक्षेप की विशेषता है–

(a) अक्षांश रेखायें संकेन्द्रीय होती है।
(b) अक्षांश एवं देशान्तर रेखायें एक दूसरे को समकोण पर काटती है।
(c) प्रक्षेप केन्द्र से दूर चतुर्दिक दिशा शुद्ध होती है।
(d) उपरोक्त सभी।

प्रश्न.10 निम्न में से कौन से तथ्य ध्रुवीय खमध्य समदूरस्थ प्रक्षेप से सम्बन्धित है।

(a) अक्षांश वृत संकेन्द्रीय होते है।
(b) अक्षांशों के बीच की दूरी समान होती है।
(c) ध्रुव एक बिन्दु के रूप में होता है।
(d) उपरोक्त सभी।

प्रश्न 11– प्रदर्शक भिन्न 1:250000000 पर उत्तरी गोलार्द्ध का मानचित्र बनाने हेतु एक लम्बकोणीय ध्रुवीय प्रक्षेप की रचना कीजिए जिसका प्रक्षेपान्तर 10° हो।

प्रश्न 12– लम्बकोणीय ध्रुवीय खमध्य प्रक्षेप के गुण–दोष एंव प्रमुख विशेषताओं के बारे में बताइये।

प्रश्न 13– प्रदर्शक भिन्न 1:250000000 पर दक्षिणी गोलार्द्ध का मानचित्र बनाने हेतु एक ध्रुवीय त्रिविम खमध्य प्रक्षेप की रचना कीजिए जिसका प्रक्षेपान्तर 15° हो।

प्रश्न 14– ध्रुवीय क्षेत्रों के प्रदर्शन हेतु कुछ उपयोगी प्रक्षेपों का वर्णन कीजिए।

प्रश्न 15– ध्रुवीय त्रिविम खमध्य प्रक्षेप की क्या विशेषतायें है समझाइये।

प्रश्न 16. लम्बकोणीय ध्रुवीय खमध्य प्रक्षेप की विशेषताओं का वर्णन करते हुए उसकी उपयोगिता समझाइये।

प्रश्न 17. उत्तरी गोलार्द्ध के मानचित्र हेतु प्रदर्शक भिन्न 1:250 000 000 पर एक ध्रुवीय खमध्य समदूरस्थ प्रक्षेप की रचना कीजिए जिसका प्रक्षेपान्तर 15^0 हो।

प्रश्न 18. केन्द्रीय ध्रुवीय खमध्य प्रक्षेप की गणितीय विधि से रचना प्रक्रिया को संक्षेप में समझाइये।

प्रश्न 19. प्रक्षेपों के चयन का आधार बताइये।

प्रश्न 20. गुण एव विशेषता के आधार पर प्रक्षेपों के चयन प्रक्रिया को विस्तार से लिखिए।

6.8.सन्दर्भ पुस्तकें (Reference Books)

1. यादव, हीरा लाल (1987), प्रैक्टिकल जियोग्राफी, वसुंधरा प्रकाशन, गोरखपुर।
2- E. Raisz (1962), General Cartoigraphy, John Wiley and Sons, New York, 5th Edition.
3- F.J. Monkhouse and F.J. Wilkinson (1985), Maps and Diagrams, Methuen, London.
4. तिवारी, आर. सी. (2003), प्रयोगात्मक भूगोल, प्रयाग पुस्तक भवन, इलाहाबाद।
5- हीरा लाल (2009), प्रयोगात्मक भूगोल् के आधार, राधा पब्लिकेशन, नई दिल्ली।
6. हारून, मोहम्मद (2010), प्रयोगात्मक भूगोल, मिश्र ट्रेडिंग कारपोरेशन, मैदागिन, वाराणसी।
7- K. Sarkar (1997), Practical Geography: A Systematic Approach, Orient Longman, Kolkata.
8- L.R. Singh (2006), Fundamental of Practical Geography, Sharda Pustak Bhawan, Allahabad.
9- डी० आर० खुल्लर (2022), प्रयोगात्मक भूगोल, कल्याणी पब्लिकेशन नई दिल्ली।
10- Misra, R. P. and Ramesh, A. (1969), Fundamental of Cartography, University of Mysore, Mysore.
11. चौहान, पी आर (1998), प्रायोगिक भूगोल, वसुंधरा प्रकाशन, गोरखपुर।
12- Robinson, A.H. (2009), Elements of Cartography, Wiley; Sixth edition (1 January 2009), USA.
13- जे०पी० शर्मा (2011), प्रायोगिक भूगोल, (चतुर्थ संस्करण), रस्तोगी पब्लिकेशन्स मेरठ।
14- आर. एन. मिश्र एवं पी के शर्मा (2019), प्रायोगिक भूगोल, रावत पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली।
15. आर० एल० सिंह एवं राना पी बी सिंह (1993), प्रयोगात्मक भूगोल के तत्व कल्याणी पब्लिशर्स, नई दिल्ली।
16. आर०सी० तिवारी एवं सुधाकर त्रिपाठी (2018) अभिनव प्रयोगात्मक भूगोल, प्रवालिका पब्लिकेशन्स, इलाहाबाद।

इकाई - 7 (Unit - 7)

भौमिकीय मानचित्रों का आवश्यकता, संस्तर एवम संस्तर रेखा, नमन, नतिलम्ब

पाठ संरचना

(Structure of Lesson)

7.0 प्रस्तावना

7.1 उददेश्य

7.2 भौमिकीय मानचित्रों का महत्व

7.3 शैल एवं शैल निर्माणः

7,4 भौमिकीय समय मापक

7.5 संस्तर तल

7.6 युगों की सारिणी

7.7 संस्तर

7.8 समविन्यासी क्रम

7.9 शैल दृश्यांश

7.10 नमन

7.11 नतिलम्बः

7.12 नतिलम्ब रेखा का निर्धारणः

7.13 नमन का निर्धारणः

7.14 संस्तर की चौड़ाई से नमन ज्ञात करनाः

7.15 नमन की वृद्धिः

7.16 संस्तर की मोटाई

7.17 नमन कोण की दिशाः

7.18 मोटाई ज्ञात करने की विधियाँ

7.19 संस्तर की चौड़ाईः

7.20 पुरान्तःशायी और नवान्तःशायी चट्टानें

7.22 संदर्भ ग्रन्थ सूची

7,21 अभ्यास के प्रश्न

7.0 प्रस्तावना

प्रस्तुतिका इकाई में भौमकीय मानचित्र के मूल तत्वों का वर्णन किया गया है इस इकाई का अध्ययन करने से शिक्षार्थी भौमिकीय मानचित्रो की आवश्यकता, उसके महत्व, मानचित्र कितने प्रकार के होते हैं, शैल कैसी होती है, शैल कितने प्रकार के होते हैं, भौमिकीय की समय मापन क्या है, संस्तर क्या है, संस्तर तल क्या है, सम विन्यासी क्रम क्या होता है, शैल दृश्यांश क्या है, नमन क्या होता है, नमन आकलन कैसे करते हैं, कैसे बनाई जाती है, इसका निर्धारण कैसे करते हैं, संस्तर की चौड़ाई ज्ञात करने की विधियो, नमन की दिशा, संस्तर की मोटाई और संस्तर की मोटाई ज्ञात करने की विभिन्न विधियों का वर्णन किया गया है संस्तर की चौड़ाई का निर्धारण कैसे करते हैं चट्टानें कैसे बनती है इन समस्त बिंदुओं का अध्ययन इस प्रस्तुत इकाई में किया गया है इस इकाई के अध्ययन के उपरांत शिक्षार्थी भोमिकीय मानचित्र के प्रति एक व्यापक समझ दृष्टिकोण विकसित होता है ।

7.1 उददेश्य

- भौमिकीय मानचित्रों का महत्व शिक्षार्थी समझ सकेंगें
- शैल एवं शैल निर्माणः शिक्षार्थी समझ सकेंगें
- संस्तरो को शिक्षार्थी ब्याख्या कर सकेंगें
- शैल दृश्यांश की शिक्षार्थी समझ कर सकेंगें
- नमन की शिक्षार्थी ब्याख्या कर सकेंगें
- नतिलम्बः की शिक्षार्थी ब्याख्या कर सकेंगें
- नतिलम्ब रेखा का निर्धारण की शिक्षार्थी की ब्याख्या कर सकेंगें
- संस्तर की चौड़ाई का शिक्षार्थी ब्याख्या कर सकेंगें
- संस्तर की मोटाई की शिक्षार्थी ब्याख्या कर सकेंगें

7,2 भौमिकीय मानचित्रों का महत्व (Significance of Geological Map)

किसी भी क्षेत्र में शैल दृश्यांशों के वितरण एवं स्वरूप को प्रदर्शित करना भौमिकीय मानचित्र कहलाता है। उच्चावच के स्वरूप में भूगोलवेत्ताओं की प्रमुख रूप से रूचि होती है।

''किसी क्षेत्र की शैल संरचना एवं स्वरूप के ज्ञान के आधार पर उच्चावच को सही ढंग से समझा जा सकता है। भूगर्भिक शैलों की विशेषताएँ जैसे– संरचना, नमन व नमन की दिशा, वलन अक्ष, भ्रंश रेखा, भ्रंश कगार, भ्रंश तल आदि दृष्टिगत हो तो उस क्षेत्र के उच्चावच के स्वरूप का अध्ययन सरल होता है इसलिए भौमिकीय मानचित्रों का ज्ञान आवश्यक है। भूगर्भिक घटनायें अपरदन एवं निक्षेपण आदि क्रियाओं का प्रभाव भिन्न–भिन्न प्रकार की शैलों की संरचना एवं स्वरूप पर भिन्न होता है। भौमिकीय मानचित्रों के आधार पर किसी क्षेत्र की भौमिकीय इतिहास एवं उसके स्तर विन्यास के बारे में जानकारी प्राप्त की जा सकती है। भौमिकीय मानचित्र द्वारा उच्चावच संरचना का सम्बन्ध, भौमिकीय इतिहास, स्तर विन्यास, खनिज की संभावना को जाना जा सकता है।

इन्जीनियरिंग विज्ञान के विविध क्षेत्रों में भी जैसे– खदान खोदने, बांध, नहर, सुरंग आदि बनाने में मानचित्रों का उपयोग होता है। भौमिकीय मानचित्र दो प्रकार के होते हैं।

(1) ठोस भौमिकीय मानचित्र (Solid Geological Map)

इसे प्रौढ़ भौमिकीय मानचित्र भी कहते हैं इसमें केवल ठोस शैल दृश्यांश को दिखाया जाता है शैल दृश्यांश के ऊपर विभिन्न प्रक्रम से निक्षेपित अवसाद को प्रदर्शित नहीं करते हैं।

(2) अपोढ़ मानचित्र (Drift Map)

ऐसे मानचित्र के सभी प्रकार के जमाव को प्रदर्शित किया जाता है जैसे– रेत, मिट्टी आदि का जमाव। अपोढ़ मानचित्र कृषि एवं सिंचाई सम्बन्धित कार्यों में सहायक होते हैं।

कुछ भौमिकीय मानचित्रों में समोच्च रेखाओं के स्थान पर स्थानिक ऊँचाई जगह–जगह पर दी रहती है साथ ही विभिन्न संस्तरों का स्वरूप जैसे– नमन, नमन कोण, नमन दिशा आदि से सम्बन्धित सांकेतिक चित्र प्रस्तुत होते हैं। ऐसी स्थिति में स्थानिक ऊँचाई, नदी के ढाल स्वरूप, प्रारूप आदि को देखकर कल्पना के आधार पर पार्श्वचित्र बनाते हैं उपयुक्त सांकेतिक चिन्हों के अनुसार संस्तरों का रेखाचित्र पूर्ण करते हैं।

7.3 शैल एवं शैल निर्माणः

भौमिकीय मानचित्र द्वारा पृथ्वी की भूपर्पटी (Crust) की संरचना को प्रदर्शित किया जाता है जिसका निर्माण मुख्यतः 3 प्रकार की शैलों से हुआ है–

(1) आग्नेय शैल (gneous Rocks)

इसका निर्माण मैग्मा से होता है मैग्मा का जमाव वाह्य धरातल पर लावा के रूप में होता है। ठोस मैग्मा रूप लावा कहलाता है जो गैस विहीन होता है। मैग्मा धरातल के अन्दर एवम् बाहर दोनों स्थानों पर जमा होता है। आंतरिक भाग में जमा होने से आंतरिक आग्नेय शैल वाह्य भाग में जमा होने से वाह्य आग्नेय शैल कहा

जाता है जैसे ग्रेनाइट, सिएनाइट, डोलेराइट प्रमुख आंतरिक आग्नेय शैल हैं तथा बैसाल्ट प्रमुख वाह्य आग्नेय शैल है।

(2) परतदार या अवसादी शैल (Sedimentary Rocks)

अवसादी शैलों का निर्माण चट्टान चूर्ण तथा जीवावशेषों एवं वनस्पतियों के जमाव से होता है। प्रायः यह निक्षेपण क्षैतिज अवस्था में है। अवसादों का जमाव परत दर परत होता है इसीलिये इस चट्टान को परतदार चट्टान कहते हैं। अवसादी शैल जमाव प्रक्रिया एवम् समय के आधार पर समविन्यासी एवम् अपसमविन्यासी होती है।

समविन्यासी क्रम में एक ही युग में, एक ही क्रम में शैल संस्तर निक्षेपित होता है जबकि अपसमविन्यासी में शैल जमाव विभिन्न युगों में होता है।

(3) रूपान्तरित शैल (Metamorphic Rocks)

ये शैलें किसी भी शैलों के रूप, रंग, संरचना में परिवर्तन से बनती है जो अधिक ताप, दाब या भू–हलचल के कारण होता है। रूपान्तरण की प्रक्रिया द्वारा मूल चट्टान के स्वरूप एवं संगठन में परिवर्तन हो जाता है। इन्हें कायान्तरित या परिवर्तित शैल भी कहते हैं जैसे– चीका एवं शेल से स्लेट, बलुआ पत्थर से क्वार्टजाइट, चूना पत्थर से संगमरमर आदि। इन शैलों का वर्णन मूल शैलों के साथ ही किया गया है।

7.4 भौमिकीय समय मापक (Geological Time Scale)

पृथ्वी पर पायी जाने वाली शैलें ही उसके भौगर्भिक इतिहास के पन्ने या आधारशिला हैं। भूगर्भिक समय का निर्धारण इन चट्टानों की आयु के आधार पर किया जाता है। किसी क्षेत्र के भौमिकीय अध्ययन में शैलीय संरचना की आयु निर्धारण में भौमिकीय समय मापक की आवश्यकता होती है। भौमिकीय मानचित्रों के अध्ययन में अनेक शैल क्रमों (Series), शैल तंत्र (Rock System) एवं शैल समूह (Rock Group) के संस्तरों का विश्लेषण किया जाता है। भौगर्भिक इतिहास के पिता कास्ते द बफन हैं। पृथ्वी के इतिहास को महाकल्पों (Eras) एवं युगों (Periods) में बाँटा गया है जिनका सीधा सम्बन्ध इस स्तर विन्यास से है–

7.6 युगों की सारिणी

7.5 संस्तर (Bed or Strata)

संस्तर भौमिकीय मानचित्र का मूलभूत तत्व है धरातलीय स्वरूप पर संस्तर की विशेषताओं द्वारा धरातलीय स्वरूप अधिक प्रभावित होता है क्योंकि अपरदन तीव्रता अन्य कारकों के समान होने पर संस्तर की विशेषताओं पर निर्भर होती हैं। संस्तर चट्टान की परत है जो एक तरह के खनिज कणों से बनी होती है। संस्तर चट्टान की जमाव प्रक्रिया अनवरत् होती है एक के बाद जब दूसरा जमाव होता है तो वह द्वितीय संस्तर बन जाती है। अर्थात् प्रत्येक संस्तर की कुछ न कुछ मोटाई अवश्य होती है प्रायः भिन्न शैल संगठन वाले कई संस्तर एक दूसरे से सम्बन्धित मिलते हैं जिससे किसी दो संस्तरों के बीच एक उभयनिष्ठ संस्तर तल मिलता है।

चित्र 1.1 में तीन संस्तर है जो A, B, C से इंगित हैं। A नवीनतम, C प्राचीनतम संस्तर है B संस्तर की स्थिति मध्य की है। यह क्षैतिज संस्तर है। भौगर्भिक समय

7.6 युगों की सारिणी

सारिणी A

कल्प (Era)	युग (Period)	आयु (करोड़ वर्षों में) (Age)
1. नूतन कल्प (Neozoic)	आधुनिक युग (हिमयुग Pleistocene)	1.0
2. नवजीवन कल्प (Cinozoic)	प्लायोसीन (Pliocene) मायोसीन (Miocene) ओलिगोसीन (Oligocene) इयोसीन (Eocene)	1.5 3.5 5
3. मध्यजीव कल्प (Mesozoic)	क्रिटेशियस (Cretaceous) जुरासिक (Jurassic) ट्रियासिक (Triassic)	10 15
4 पुराजीव कल्प (Paleozoic)	परिमियन (Permian) कार्बोनीफरस (Carboniferous) डिवोनियन (Devonian) सिलूरियन (Silurian) आरडोवीसियन (Ordovician) केम्ब्रियन (Cambrian)	25 30 35 40 45 50
5 आद्य कल्प (Azoic)	पूर्व केम्ब्रियन या एलगोनिकन आर्कियन (Archaean)	120

अन्तर्राष्ट्रीय क्रम	भारतीय क्रम : कृष्णन् महोदय के अनुसार
Recent	Recent Alluvia
Pleistocene	Older Alluvia and Pleistocene system
Mio-Pliocene	Siwalik and Irrawaddy systems
Oligo-Micene Eocene	Murree and Pegu Systems Ranikhet-Laki-Kirthar Chharat series
Cretaceous	Uppwer Cretaeous of Southern India, Assam, Narbad valley, Glumat and Sikkim Series
Jurassic	Spiti shals, Kioto limestone
Permian Carboniferous	Lilang system Kuling system Linak and Po series } Gondwana system
Devonian	Muth Ouartzites
Silurian	Silurian
Ordovician	Ordovician
Cambrain	Cambrian
Algonkian	Dogra and Simlas hales } Vindhyan

में हुए अनेक भू–हलचल के कारण वास्तव में संस्तरों में बलन अथवा भ्रंशन आ गया है **चित्र 5.1** में संस्तर की बलित दशा है। **चित्र 6.4** में संस्तर पर भ्रंशन का प्रभाव है। भ्रंशन युक्त संस्तर प्रायः नीचे या ऊपर खिसके पाये जाते हैं। भ्रंशन के दौरान कभी–कभी अलग प्रकार की चट्टानें भी प्रवेश कर जाती हैं जैसे– **चित्र संख्या 7.1**

7.7 संस्तर तल (Bedding Plane)

तल वह सतह है जो संस्तर की सीमा निर्धारित करता है प्रत्येक संस्तर दो तलों द्वारा जुड़ा होता है। किसी भी संस्तर की ऊपरी सीमा निर्धारित करने वाले तल को ऊपरी संस्तर तल (Upper Bedding Plane) कहते

हैं तथा निचली सीमा निर्धारित करने वाले को निचला संस्तर (Lower Bedding Plane) कहते हैं। चित्र संख्या 1.1 में प्रदर्शित है निचला संस्तर प्राचीन होता है।

सामान्यतः संस्तर तल समतल ही होते हैं लेकिन इनका स्वरूप, संस्तरों के स्वरूप से प्रभावित होकर क्षैतिज, नत या बलित भी हो सकता है। इसी प्रकार दोनों संस्तर तल समानान्तर भी हो सकते हैं लेकिन ऐसी स्थिति एक लघु दूरी तक ही सम्भव हो सकती है।

7.8 समविन्यासी क्रम (Conformable Series)

समविन्यासी भौमिकीय मानचित्र में एक ही संस्तर तल का नमन कोण सभी संस्तरों के लिए माना जाता है। प्राचीन संस्तर नीचे एवम् नवीन संस्तर अपेक्षाकृत ऊपर होते हैं। भौमिकीय मानचित्र में शैल संस्तर सूची बनाते समय नीचे से ऊपर क्रमशः प्राचीन तल से नवीन तल शैल संस्तर प्रदर्शित करते हैं।

प्रत्येक संस्तर के ऊपर एवं नीचे का तल किसी दूसरे संस्तर का भी तल होता है क्योंकि चट्टानें एक दूसरे से सम्बन्धित होती हैं। प्राचीन संस्तर के ऊपर का तल उससे नवीन संस्तर का नीचे का तल होगा। उदाहरणार्थ यदि C संस्तर का ऊपरी तल t.b B संस्तर का निचला तल होगा तथा b संस्तर का ऊपरी तल hi A का निचला तल होगा।

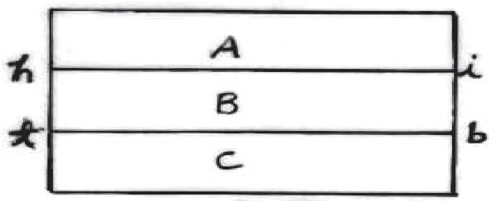

चित्र संख्या 7.1

संस्तर की अनेक विशेषताएँ होती हैं जिनमें शैल दृश्यांश (Outcrop), नमन (Dip) एवं मोटाई विशेष महत्वपूर्ण है। संस्तर का भौमिकीय अध्ययन करने के लिए इसकी विशेषताओं को समझना आवश्यक है।

7.9 शैल दृश्यांश (Outcrop)

अनाच्छादन से दृष्टिगत शैल संस्तर ही शैल दृश्यांश है अथवा संस्तर का किसी स्थान पर अनावृत्त (Exposed) भाग शैल दृश्यांश है। शैल दृश्यांश से संस्तर के भौमिकीय विस्तार का पता लगाया जाता है।

नतिलम्ब रेखा की दिशा एवम् उच्चावच द्वारा यह प्रभावित होता है। क्षैतिज संस्तर में नमन शून्य होता है जिससे उच्चावच एवम् शैल दृश्यांश एकीकृत होता है। जबकि लम्बवत् संस्तर तल में (90^0 नमन कोण) शैल दृश्यांश नतिलम्ब रेखा के अनुसार होगी। यहाँ शैल दृश्यांश कम प्रभावित होती है। नमन की मात्रा की वृद्धि के साथ नतिलम्ब दिशा का महत्व बढ़ता है।

समतल धरातल में दृश्यांश नतिलम्ब रेखा के अनुसार होती है। धरातल के ढाल एवम् दृश्यांश तथा नतिलम्ब रेखा (Strike Line) का सम्बन्ध व्युत्क्रमानुपाती होता है उपरोक्त दोनों सीमाओं के बीच दृश्यांश का वास्तविक स्वरूप के निर्धारण में नमन की मात्रा एवं नतिलम्ब दिशा का महत्व दोनों में वृद्धि होती है यदि धरातल सीधा सपाट है तो दृश्यांश नतिलम्ब रेखा के अनुसार दिखायी देता है। शैल दृश्यांश एवम् नतिलम्ब रेखा का सम्बन्ध घटने पर धरातल के ढाल की मात्रा में वृद्धि होती है।

7.10 नमन (Dip)

क्षैतिज तल और संस्तर तल के मध्य बने कोण को नमन कहते हैं। शैल संस्तर का जमाव भले ही क्षैतिज धरातल के समानान्तर हो परन्तु भूगर्भिक कारण से शैल संस्तर में बलन, भ्रंशन हुआ है। परिणामतः संस्तर तल और क्षैतिज तल के मध्य कोण निर्मित हो गया। यह कोण 0 से 90^0 के मध्य होता है। नमन दो प्रकार का होता है–

(1) यथार्थ नमन (True Dip)

(2) आभासी नमन (Apparent Dip)

(1) यथार्थ नमनः

यह नमन संस्तर के अधिकतम झुकाव की दिशा को व्यक्त करता है। संस्तर तल एवं क्षैतिज तल के मध्य अधिकतम अंशों का कोण यथार्थ नमन होता है

(2) आभासी नमनः

यह नमन क्षैतिज तल के सन्दर्भ में किसी भी दिशा में अधिकतम झुकाव का कोण होता है। ऊपरी सतह के सन्दर्भ में इसे मापा जा सकता है।

यह कोण यथार्थ कोण से कम ही होता है या अधिक से अधिक यथार्थ नमन के बराबर हो सकता है। वास्तव में ऊपरी सतह या ढाल के सापेक्ष मापा गया चट्टानों का कोण क्षैतिज तल की तुलना में कम होता है या बराबर भी हो सकता है। कभी भी आभासी नमन यथार्थ नमन से अधिक नहीं होता। वास्तविक और आभासी नमन के अन्तर्सम्बन्धों की दो स्थितियाँ होती हैं–

(a) जब किसी शैल का ऊपरी तल क्षैतिज तल के समानान्तर नहीं हो तो वास्तविक नमन से आभासी नमन कम होगा।

(b) जब शैल एवं क्षैतिज तल एक दूसरे के समानान्तर होते हैं तो नतिलम्ब संस्तर तल के समानान्तर होता है जिससे दोनों कोण बराबर होते हैं।

जब नमन का महत्व क्षेत्रीय स्तर पर होता है तो उसे क्षेत्रीय नमन कहते हैं इसमें नमन का कोण कम होता है और पूरे क्षेत्र में एक समान होता है ऐसा नमन अपनति–अभिनति युक्त वलित पर्वतीय क्षेत्र में पाया जाता है। नमन और ढाल दोनों समानार्थी लगते हैं जबकि दोनों में अन्तर होता है ढाल शब्द भूसतह के झुकाव और नमन संस्तर के झुकाव को इंगित करता है। नमन को नतिलम्ब रेखा के द्वारा निर्धारित करते हैं अतः नतिलम्ब के अध्ययनोपरान्त ही नमन के निर्धारण की विधियों का वर्णन होना चाहिए।

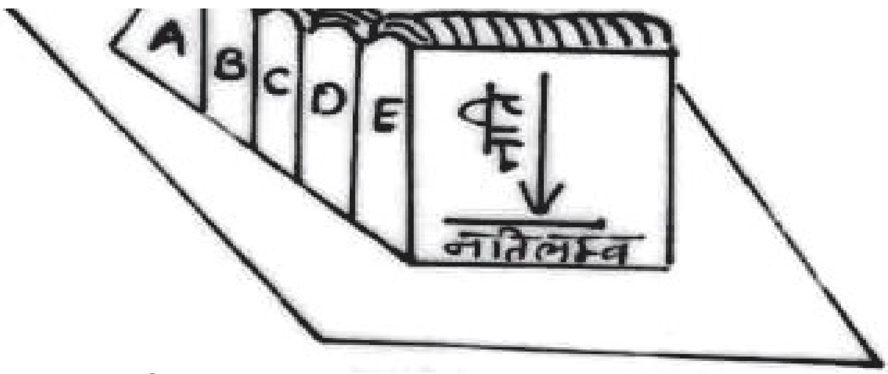

चित्र संख्या 7.2

7.11 नतिलम्बः (Strike)

यह कल्पित सरल रेखा है जो नमन के साथ हमेशा समकोण बनाती है। नमन दिशा का ढाल सदैव शून्य ही होता है। प्रस्तुत चित्र में A, B, C, D, E आदि रेखायें नत संस्तर के तल को इंगित करती हैं इन तलों का नमन तीर द्वारा अंकित है। इस तीर में समकोण बनाती खींची गयी रेखा AB रेखा या AB संस्तर के लिये नतिलम्ब रेखा है। यह नतिलम्ब शैल संस्तर की विभिन्न ऊँचाइयों को प्रदर्शित करता है। जिससे इसे संस्तरीय समोच्च रेखा कहते हैं। शैल संस्तर जब क्षैतिज होता है तो संस्तर तल एवं समोच्च रेखा आपस में समानान्तर होती हैं अन्यथा ये रेखायें संस्तर तल को काटती हैं और समोच्च रेखा संस्तर तल के कटान बिन्दु के आधार पर बनायी गयी सरल रेखा नतिलम्ब रेखा होती है। एक ही संस्तर पर बनायी गयी नतिलम्ब रेखायें प्रायः समान दूरी पर और सामानान्तर होती हैं।

7.12 नतिलम्ब रेखा का निर्धारणः (**Determination of strike Line**)

यह अत्यन्त सरल होती है। नतिलम्ब रेखा खींचने के लिए सर्वप्रथम जिस संस्तर पर नतिलम्ब रेखा खींचना होता है उस संस्तर तल पर किसी ऐसी एक समोच्च रेखा को ढूँढते हैं जो संस्तर तल को दो बिन्दुओं पर प्रतिच्छेदित करती है। इन प्रतिच्छेदित बिन्दुओं पर मापनी रखते हुए प्रतिच्छेदन बिन्दुओं को मिलाकर सरल रेखा बनाते हैं जो उस संस्तर तल की उस समोच्च रेखा के मान के बराबर की नतिलम्ब रेखा कही जाती है। उसी संस्तर तल को दूसरे मान की समोच्च रेखा द्वारा दो कटान बिन्दुओं को मिलाते हुए मापनी के द्वारा बनायी गयी सरल रेखा दूसरी नतिलम्ब रेखा होती है।

यह नतिलम्ब रेखा पहली नतिलम्ब रेखा के समानान्तर ही होती है। इन दोनों नतिलम्ब रेखाओं के सहयोग से अन्य नतिलम्ब रेखायें बनायी जाती हैं जो एक ही संस्तर तल पर होने के कारण आपस में समानान्तर एवं समान दूरी पर खींची जाती हैं।

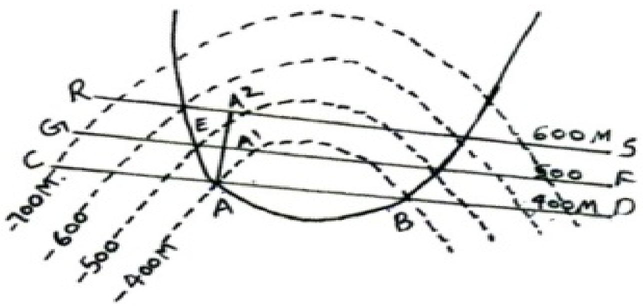

चित्र 7.3

जैसे चित्र 7.3 B में 400, 500, 600, 700 मीटर की समोच्च रेखायें प्रस्तुत भौमिकीय मानचित्र पर है जो चित्र के प्रस्तुत संस्तर तल को प्रतिच्छेदित करती है। 400 मीटर की समोच्च रेखा को देखा जाय तो यह संस्तर तल को AB दो बिन्दुओं पर काटती है और AB दोनों बिन्दुओं को मिलाकर एक सीधी रेखा बनाते हैं यहीं एक नतिलम्ब रेखा बनती है। इसका मूल्य समोच्च रेखा के मूल्य के बराबर 400 मीटर है इसी संस्तर पर पहली समोच्च रेखा के क्रम से दूसरी समोच्च रेखा 500 मीटर की है जो उसी संस्तर को E बिन्दु पर काटती है। E से पहली नतिलम्ब रेखा A B C D के समानान्तर खींची गयी दूसरी नतिलम्ब रेखा है जिसका मूल्य 500 मीटर है। इन दो नतिलम्ब रेखाओं के बनाने के बाद अन्य नतिलम्ब रेखाओं को खींचने के लिए पुनः दोनों के बीच की लम्बवत् दूरी को लेंगे। 400 मीटर की नतिलम्ब रेखा पर A^{-} से 500 मीटर की नतिलम्ब रेखा के A' पर AA' लम्ब डालते हैं। A' बिन्दु से पहली नतिलम्ब रेखा के समानान्तर रेखा बनाते हैं जो 500 मीटर की दूसरी नतिलम्ब रेखा होती है। इसी तरह तीसरी नतिलम्ब रेखा खींचने के लिए A_1 से A_2 लम्ब डालते हैं जो AA' के बराबर लम्बाई का हो पुनः A_2 से 500 मीटर वाली नतिलम्ब रेखा के समानान्तर रेखा खींचते हैं जो तीसरी नतिलम्ब रेखा बनती है। इसी प्रकार अन्य नतिलम्ब रेखा बनाते हैं। इसमें यदि मानचित्र शुद्ध और प्रक्रिया सही है तो नतिलम्ब रेखायें प्रतिच्छेदन बिन्दु से गुजरते हैं।

7.13 नमन का निर्धारणः

नमन का निर्धारण अनेक विधियों से होता है–

1. नमन का निर्धारण नतिलम्ब रेखा के सहयोग से बनते हैं। चित्र संख्या 7.4 में 3 संस्तर ABC हैं। B संस्तर के ऊपरी तल को 400 मीटर की समोच्च रेखा दो बिन्दुओं R,S पर काटती हैं पटरी की सहायता से इन प्रतिच्छेदित बिन्दुओं को मिलाकर बनायी गयी रेखा 400 मीटर की नतिलम्ब रेखा कही जाती है इसी चित्र में B संस्तर के ऊपरी तल को 500 मीटर की समोच्च रेखा M,N बिन्दु पर प्रतिच्देदित करती है जिसे पटरी की सहायता से मिला देने से 500 मीटर मान की नतिलम्ब रेखा बन जाती है।

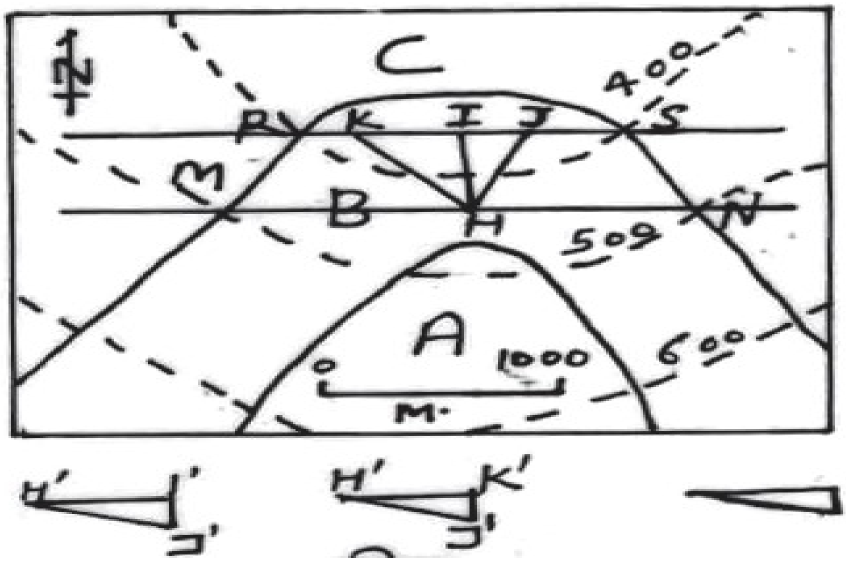

चित्र 7.4

प्रस्तुत चित्र में 400, 500 मीटर की नतिलम्ब रेखायें आपस में समानान्तर हैं। इनके बीच न्यूनतम दूरी के लम्ब के आधार पर (HI) रेखा के आधार पर बनाया कोण यथार्थ कोण होगा। इन दो नतिलम्ब रेखाओं के बीच का अन्तर 100 मीटर है अब चित्र में HI रेखा के बराबर चित्र के बाहर अन्यत्र H' I' रेखा बनाते हैं दोनों नतिलम्ब रेखाओं के मान के अन्तर 100 मीटर है। दिये गये मापनी के अनुसार परिवर्तित कर कम मान की समोच्च रेखा पर बने लम्ब के बिन्दु I' से अधोगामी लम्ब बनाते हैं। I' से बने अधोगामी I बिन्दु से बने लम्ब पर 100 मीटर मापक की दूरी के बराबर बिन्दु चिह्नित कर J बिन्दु निर्धारित करते हैं। अब H' और J को एक सरल रेखा द्वारा मिला देते हैं। इस तरह कोण J H'I अर्थात् $\angle H'$ = यथार्थ नमन कोण होता है।

नमन कोण की गणना का सूत्र निम्नवत् है–

$$\text{नमन} = \frac{\text{लम्बवत अन्तराल}}{\text{क्षैतिज अन्तराज}} = \frac{100}{500} = 1/5 = 12^0$$

इससे स्पष्ट है कि एक इकाई नमन प्रति 5 धरातलीय इकाई पर होता है। जिस तरह यथार्थ नमन का परिकलन करते हैं उसी विधि से आभासी नमन का भी परिकलन करते हैं। भिन्नता केवल दोनों नतिलम्ब के मध्य ली गयी दूरी के सन्दर्भ में होता है। जब दोनों नतिलम्ब के मध्य लम्बवत् दूरी के बजाय अन्यत्र दूरी ली जाय तो वह आभासी नमन को व्यक्त करेगा जैसा कि चित्र संख्या 1.4 में H,K रेखा की दूरी ली गयी है जो कोण K' H' J' आभासी नमन कोण व्यक्त करता है।

$$\text{नमन कोण} = \frac{\text{लम्बवत अन्तराल}(VI)}{\text{क्षैतिज अन्तराज}(HE)} = \frac{100}{500} = \frac{1}{6} \text{या लगभग } 10^0$$

भौमिकीय मानचित्र पर नमन के स्थान पर उसकी मात्रा तीर के द्वारा लिखकर प्रदर्शित किये जाते हैं जहाँ पर केवल संकेत होते हैं वहाँ यथार्थ नमन ही माना जाता है।

2. कभी–कभी नतिलम्ब रेखा बनाना कठिन होता है क्योंकि शैल दृश्यांश एक ऊँचाई पर दो स्थान पर नहीं मिलते तो नतिलम्ब रेखा का निर्धारण मुश्किल होता है। इस समस्या का निर्धारण त्रिविन्दु से करते हैं। चित्र 7.5 में ABC तीनों स्थान अलग–अलग ऊँचाई पर एक ही शैल दृश्यांश पर बने हैं। ऐसी परिस्थिति में इन तीनों बिन्दुओं A B C को एक सरल रेखा द्वारा मिला देते हैं जिसमें C बिन्दु 700 मीटर की ऊँचाई पर स्थित है। A और B बिन्दु के मध्य ऊँचाई का अन्तर 300 मीटर है। इस प्रकार 700 मीटर की ऊँचाई पर स्थित बिन्दु B से A की दूरी से 100/300 = 1/3 के अन्तर पर है क्योंकि A से B की दूरी 300 मीटर है। 500 से 800 मीटर की समोच्च रेखा क्रमशः गुजरती है और

बिन्दु C से 700 मीटर की समोच्च रेखा गुजरती है इसलिए A से C की ऊँचाई 300 का 2/3 है। अब AB रेखा को B बिन्दु से 1/3 दूरी लेकर बिन्दु D बना लेते हैं बिन्दु D से C को मिलाते यह DC रेखा 700 मीटर की नतिलम्ब रेखा बनती है अब CD के समानान्तर B बिन्दु को केन्द्र बिन्दु मानकर EF रेखा खींचते हैं जो 800 मीटर की नतिलम्ब रेखा होती है इस तरह CD और EF दो सरल समानान्तर रेखा खींची जाती है।

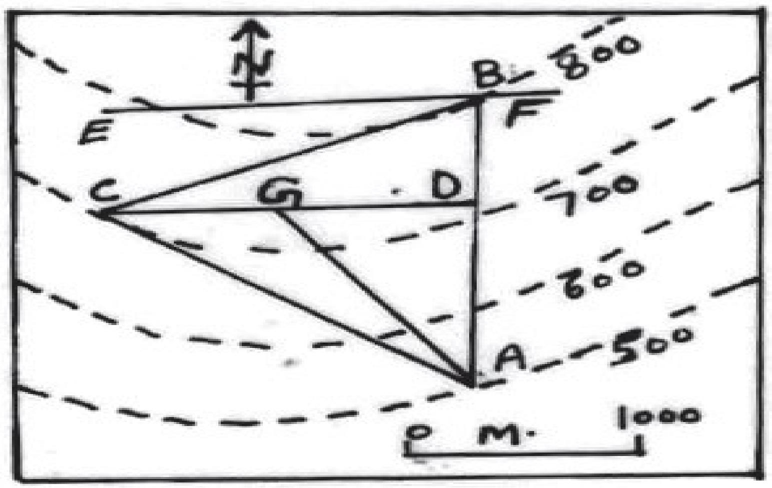

चित्र 7.5

नमन ज्ञात करने हेतु CD रेखा पर A बिन्दु से लम्ब डालते हैं जो CD रेखा में G बिन्दु पर काटती है यह AG रेखा की दूरी 200 मीटर है। मानचित्र पर प्रदर्शित मापक के अनुसार AG रेखा की दूरी 200 मीटर को मापनी के अनुसार बदलकर पूर्व वर्णित विधि के अनुसार नमन ज्ञात कर लेते हैं। नमन ज्ञात करने की यह विधि ABC तीनों बिन्दुओं के मिलाने से जब समद्विबाहु त्रिभुज बनता है तभी संभव है।

7.14 संस्तर की चौड़ाई से नमन ज्ञात करनाः

नमन निर्धारण संस्तर की ऊँचाई से भी होता है। चित्र 7.6 में A,B,C तीन संस्तर हैं D,E रेखा क्षैतिज भूतल को इंगित करती है E,F रेखा B संस्तर की मोटाई है। यह मोटाई नमन परिकलन के पूर्व ज्ञात होना जरूरी है। संस्तर की मोटाई को E,F में शैल दृश्यांश की चौड़ाई D,E से विभाजित कर दें तो भजनफल ही Sin होता है। इस Sin के मान को त्रिकोणमितीय के तालिका में Sin मान को परिवर्तित कर कोण को ज्ञात कर लेते हैं।

सूत्र अग्रांकित है–

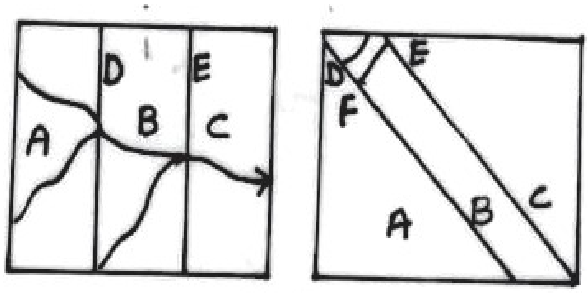

चित्र 7.6

$$Sin(\text{साइन})\angle = \frac{EF}{DE}$$

भूमि के बदलते ढाल के अनुसार संस्तर की चौड़ाई बदलती रहती है निम्न दो परिस्थितियाँ उत्पन्न होती हैं–

(a) जब धरातल की ढाल प्रवणता, नमन की दिशा में होता है तो B संस्तर का दृश्यांश D,E पर दिखायी देता है जो ढालदार सतह है। **चित्र 7.7**

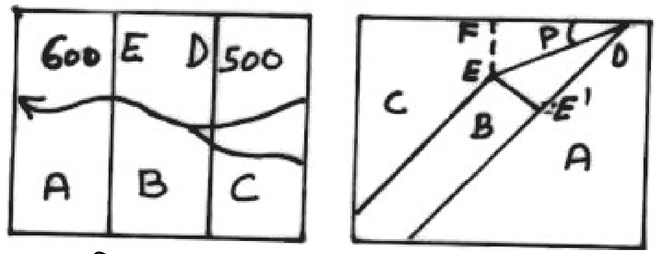

चित्र 7.7

अब चित्र में D,E के मध्य का अन्तर माप कर DFA क्षैतिज रेखा बनाते हैं अब F से DE पर लम्ब डालते हैं यह D,E के मध्य की ऊँचाई के अन्तर के बराबर है E को केन्द्र मानते हुए E'F' की त्रिज्या लेकर (यह त्रिज्या B संस्तर की मोटाई के बराबर है) एक अर्द्धवृत्त बनाते हैं। D से D'E' रेखा इतनी सावधानी से बनाते हैं कि वह वृत्त को स्पर्श करती हुई आगे बढ़े जैसा कि **चित्र 7.7** में प्रदर्शित है। इस तरह से बने चित्र में $\angle$ P ही नमन कोण हो जायेगा।

(b) जब संस्तर के ढाल एवं भूमि का ढाल एक दूसरे के व्युत्क्रमानुपाती हैं। चित्र 7.8 में स्पष्ट है। इस चित्र में B संस्तर D,E पर प्रदर्शित हैं जो भिन्न ऊँचाई पर है इसमें D,F एक क्षैतिज तल है। D,F रेखा से F,E पर लम्ब डाला गया संस्तर की मोटाई D,E की त्रिज्या के बराबर है इसी संस्तर की मोटाई को D,E की त्रिज्या मानकर D केन्द्र से एक अर्द्धवृत्त बनाते हैं। E'E' स्पर्श रेखा बनाते हुए रेखा को आगे बढ़ा देते हैं जो B संस्तर का निचला तल बनता है। इस रेखा के समानान्तर D को बिन्दु मानकर D,D'

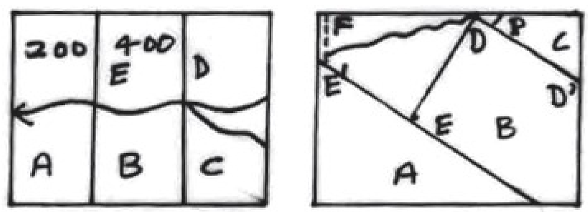

चित्र 7.8

रेखा को B के निचले तल के समानान्तर आगे बढ़ाते हैं। यह B संस्तर का ऊपरी तल बन जाता है। यहाँ पर बिन्दु P नमन कोण बन जाता है।

7.15 नमन की वृद्धिः

अनुप्रस्थ काट बनाते समय पार्श्वचित्र में लम्बवत् और क्षैतिज पैमाना समान होने पर भी कठिनाइयाँ उत्पन्न होती हैं जैसे यदि मानचित्र में सापेक्षिक उच्चावच में 100, 200, 300 मीटर का अन्तर हो तो पार्श्विका और आधार रेखा का अन्तर इतना सूक्ष्म हो जाता है कि संस्तरों का प्रदर्शन मुश्किल होता है और संस्तर स्पष्ट रूप से दिखायी नहीं देते हैं इसके निराकरण हेतु पैमानों को दो–तीन गुना या आवश्यकतानुसार बढ़ाना आवश्यक हो जाता है नहीं तो संस्तर पार्श्विका पर पूरी तरह क्षैतिज प्रदर्शित होते हैं। लम्बवत् पैमाने को बढ़ाने के साथ–साथ कोण को यदि नहीं बढ़ाया गया तो संस्तर बनाना प्रायः गलत समझा जाता है। नमन कोण की विधि के लिये अग्रांकित सूत्र प्रयोग में लाया जाता है–

$$1 - \tan\theta = y \times \tan\alpha$$

बढ़ा हुआ नमन कोण यथार्थ कोण को इंगित करता है नमन कोण के वृद्धि की मात्रा का गुणनफल बढ़े हुए नमन कोण के tan के लगभग बराबर होता है।

7.16 संस्तर की मोटाईः (Thickness of beds)

संस्तर की मोटाई वास्तव में ऊपरी तल एवं निचले तल के मध्य की दूरी होती है जब ऊपरी तल एवं निचले तल के मध्य की दूरी लम्बवत् माप ली जाती है तो उसे यथार्थ मोटाई कहते हैं। **चित्र 7.9** में N यथार्थ मोटाई है उर्ध्वाधर मोटाई उसे कहते हैं जब संस्तर की मोटाई का परिकलन धरातल की सतह से उर्ध्वाधर दिशा में मापी जाती है। **चित्र 7.9** में M दूरी संस्तर की उर्ध्वाधर मोटाई है।

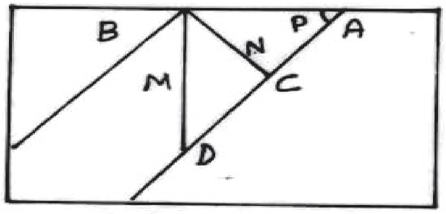

चित्र 7.9

7.17 नमन कोण की दिशाः

भौमिकीय मानचित्र में कोण की दिशा नतिलम्ब रेखाओं पर निर्भर है। दो नतिलम्ब रेखाओं में जिधर नतिलम्ब रेखाओं का मान कम होगा नमन की दिशा उधर ही मानी जाती है जैसे– नमन की दिशा उत्तर की ओर है तो नमन लिखते समय 10^0 उत्तर लिखेंगे।

7.18 मोटाई ज्ञात करने की विधियाँ (Method of Determination of Thickness)

मोटाई निर्धारण के लिये निम्नलिखित विधियाँ हैं–

1. जिस भौमिकीय मानचित्र में संस्तर पूर्णतया क्षैतिज हों वहाँ पर संस्तर की मोटाई का निर्धारण समोच्च रेखाओं के सहयोग से होता है क्योंकि ऐसे मानचित्र में संस्तर तल और समोच्च रेखायें दोनों समानान्तर पायी जाती हैं। इस भौमिकीय मानचित्र में संस्तर तल और समोच्च रेखाओं के मध्य कुछ दूरी होने से अनुमान द्वारा भी समोच्च रेखाओं और संस्तर के मान का परिकलन किया जाता है। इस आधार पर संस्तर के ऊपरी तल एवं निचले तल की ऊँचाई का अन्तर ज्ञात करते हैं जो संस्तर की मोटाई को प्रदर्शित करता है।
2. भौमिकीय मानचित्र में नत संस्तर की मोटाई का निर्धारण क्षैतिज संस्तर से बिल्कुल भिन्न होता है इसके निर्धारण के लिये दो विधियाँ हैं–
   (a) सम ऊँचाई विधि Equal Altitude method
   (b) नतिलम्ब विधि Strike method

सम ऊँचाई विधिः

इस विधि में एक ही समोच्च रेखा के द्वारा संस्तर के दोनों तलों पर मोटाई ज्ञात करते हैं इसलिए इसे समान ऊँचाई विधि कहते हैं। मानचित्र संख्या 6.4 में D संस्तर को 700 मीटर की समोच्च रेखा N,M दो बिन्दुओं पर प्रतिच्छेदित करती है। पैमाने के अनुसार इनके बीच का अन्तर 2000 मीटर है। नमन का ढाल 10^0 है। उर्ध्वाधर मोटाई की गणना निम्न सूत्र से करते हैं–

शैल दृश्यांश की चौड़ाई × ढाल = उर्ध्वाधर मोटाई अर्थात्

$\frac{2000\times 1}{10} = 200$ मी0 दक्षिण ही संस्तर की उर्ध्वाधर मोटाई है।

संस्तरों की मोटाई का परिकलन नमन कोण के द्वारा भी किया जाता है। **चित्र 7.9** में नमन कोण की सहायता से संस्तर की मोटाई की गणना की गयी है।

उर्ध्वाधर मोटाई = शैल संस्तर दृश्यांश की चौड़ाई $(AB)\times \tan\angle$ नमन कोण BAD यहाँ पर उर्ध्वाधर मोटाई = **चित्र 7.9** में BD है

यथार्थ मोटाई (BC) = शैल दृश्यांश की चौड़ाई

(AB) × Sin नमन कोण (Sin ∠ BAC)

यहाँ ∠ ABD = ∠ CAB

यथार्थ मोटाई (BC) = उर्ध्वाधर मोटाई (BD)× Cos नमन कोण (Cos ∠ BAC)

उपर्युक्त परिकलन की स्थितियाँ जब धरातल क्षैतिज होता है लेकिन जब धरातल ढालदार हो तो संस्तर की मोटाई का निर्धारण निम्न विधियों से की जाती है।

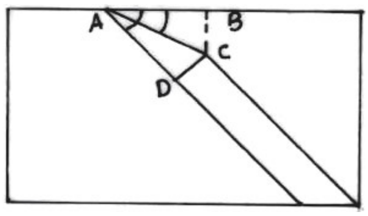

चित्र 7.10

i) जब धरातल का ढाल नमन की दिशा के अनुरूप हो तो गणना निम्नवत् है **चित्र 7.10** के अनुरूप CD = BD - BC अथवा AB × tan ∠ BAD - BC = अर्थात् शैल दृश्यांश की चौड़ाई × tan नमन कोण– ऊँचाई में अन्तर

ii) जब क्षैतिज धरातल का ढाल नमन की दिशा के व्युत्क्रमित हो तो संस्तर की मोटाई निम्नवत् विधि से ज्ञात की जाती है। **चित्र 7.11** में संस्तर की मोटाई = संस्तर की ऊँचाई का अन्तर + संस्तर की उर्ध्वाधर चौड़ाई × tan ∠ G

अर्थात् B और A = B'C' + C'D

= AC + CC' × tan ∠ G

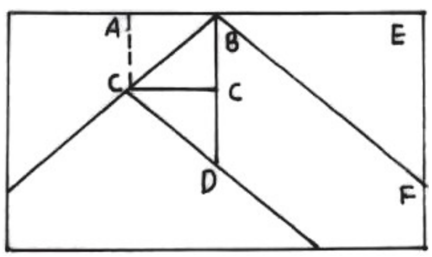

चित्र 7.11

त्रिकोणमिति विधि द्वारा मानचित्रों से उपलब्ध आंकड़ों के आधार पर भी मोटाई का निर्धारण किया जा सकता है। संस्तरों की मोटाई की गणना भौमिकीय मानचित्रों पर सही–सही अनुप्रस्थ काट बनाकर भी ज्ञात किया जा सकता है।

(B) नतिलम्ब विधि द्वारा संस्तर की मोटाई का निर्धारण:

नतिलम्ब की सहायता से नत संस्तर वाले भौमिकीय मानचित्रों में संस्तरों की मोटाई ज्ञात किया जाता है **चित्र संख्या 7.3** में C संस्तर, चूना पत्थर का जिसके निचले तल के लिए 600 मीटर की नतिलम्ब रेखा बनायी गयी और ऊपरी तल के लिए वही रेखा 900 मीटर की नतिलम्ब रेखा बन गयी है। 900–600 = 300 मीटर का अन्तर भी नत संस्तर चूना पत्थर की मोटाई है।

कभी–कभी ऐसा भी होता है कि नतिलम्ब रेखायें एक नहीं होती बल्कि कुछ दूरी पर होती हैं ऐसी स्थिति में नतिलम्ब रेखा का निर्धारण अनुमान के द्वारा किया जाता है इसमें अनुमान के आधार पर किसी एक तल की नतिलम्ब रेखा पर दूसरे तल की नतिलम्ब रेखा का मान क्या होगा, ज्ञात करना होगा और इन दोनों नतिलम्ब रेखाओं के अन्तर के आधार पर संस्तर की मोटाई ज्ञात की जाती है। यह सरल विधि है। क्षैतिज संस्तर के निचले

और ऊपरी तल के दृश्यांश का पार्श्वकाट को नतिलम्ब पर देखने पर वह क्षैतिज दिखायी देता है। यह पार्श्वकाट नतिलम्ब की दिशा से देखे जाने के कारण नतिलम्ब विधि कहते हैं।

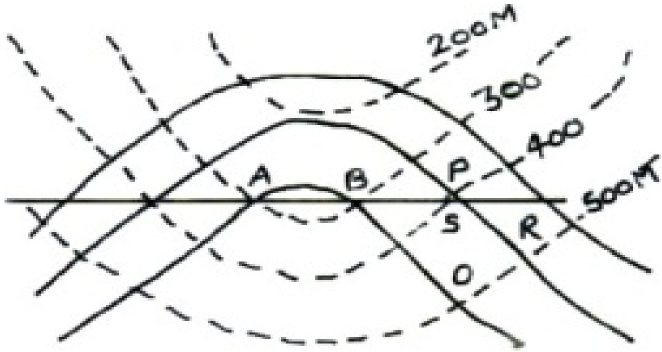

चित्र संख्या 7.12

जैसे चित्र संख्या 7.12 में (R.P. Chauhan की बुक चित्र 6.18) O संस्तर के ऊपरी तल को 300 मीटर की समोच्च रेखा दो स्थानों पर R,S पर काटती हैं इन बिन्दुओं को मिलाते हुए एक नतिलम्ब रेखा बनाते हैं यह निचले तल पर 400 मीटर की समोच्च रेखा के प्रतिच्छेदन बिन्दु N से न होकर P बिन्दु से गुजरती है जो 400 मीटर से कुछ ऊँचाई पर अवस्थित है। यहाँ पर 400 मीटर और 500 मीटर के निचले तल पर प्रतिच्छेदन बिन्दुओं के बीच की दूरी का अनुमान करते हुए P बिन्दु की ऊँचाई ज्ञात करते हैं। यहाँ यह लगभग 420 मीटर की है अतः ऊपरी तल के S बिन्दु और निचले तल के P बिन्दु के मध्य ऊँचाई का अन्तर 120 मीटर है। यही 120 मीटर O संस्तर की उर्ध्वाधर मोटाई है।

7.19 संस्तर की चौड़ाई:

संस्तर के दोनों तलों के मध्य शैल दृश्यांश की क्षैतिज दूरी संस्तर की चौड़ाई होती है। चित्र 7.13 में C,D,E,F संस्तर की चौड़ाई की दो भिन्न स्थितियाँ हैं A,B संस्तर की मोटाई है। संस्तर तलों के मध्य की लम्बवत् दूरी मोटाई कहलाती है और संस्तर तलों के दृश्यांशों के मध्य क्षैतिज दूरी चौड़ाई होती है। जब कोई संस्तर उर्ध्वाधर होता है तो संस्तर के दृश्यांशों के मध्य की दूरी संस्तर तलों के बीच की लम्बवत् दूरी बराबर होती है। संक्षेप में मोटाई एवं चौड़ाई बराबर होगी।

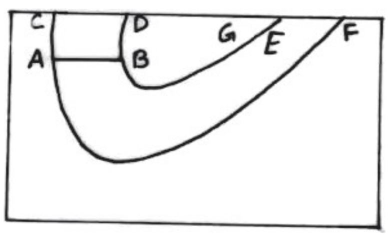

चित्र 7.13

चित्र 7.13 में CD = AB

AB संस्तर की मोटाई है, CD और EF चौड़ाई है G नमन कोण है।

किसी संस्तर की चौड़ाई को नियंत्रित करने वाले कारक निम्नलिखित हैं–

(1) धरातल का ढाल

(2) संस्तर का नमन

(3) संस्तर की मोटाई

संस्तर की चौड़ाई पर ढाल का प्रभाव स्पष्ट होता है। **चित्र 7.14** में समान मोटाई वाले क्षैतिज संस्तर में ढाल के कारण चौड़ाई में भिन्नता दिखती है। C,D तथा E,F एक मोटाई वाला शैल संस्तर है लेकिन ढाल की दो भिन्न अवस्थाओं में प्रदर्शित होने से यह भिन्न होती है।

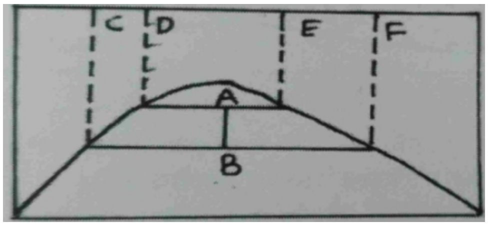

चित्र 7.14

संस्तर का नमन भी संस्तर की चौड़ाई को प्रभावित करता है जब संस्तर में नमन होता है तो चौड़ाई क्षैतिज संस्तर की तुलना में कम होती है।

नमन कोण के बढ़ने के साथ चौड़ाई कम होती जाती है और जब नमन कोण समकोण होगा तो चौड़ाई न्यूनतम मोटाई के बराबर होगी।

चित्र 7.13 संस्तर की मोटाई भी चौड़ाई को प्रभावित करती है। कम मोटे संस्तर कम चौड़े, अधिक मोटे संस्तर अधिक चौड़े होते हैं।

7.20 पुरान्तःशायी और नवान्तःशायी चट्टानें (**Outliers and Inliers Rocks**)

अन्तर्जात बल बहिर्जात बल प्रक्रम के कारण पहाड़ी चोटियों पर नवीन चट्टानें दिखायी देती हैं। इन नवीन शैल दृश्यांशों के चारो ओर मिलने वाली प्राचीन चट्टानों या उसके नीचे मिलने वाली चट्टानों को पुरान्तःशायी चट्टान कहते हैं। घाटियों में नवीन शैलों से आवृत्त प्राचीन संस्तरों के दृश्यांश होते हैं इन्हें नवान्तःशायी शैल कहते हैं।

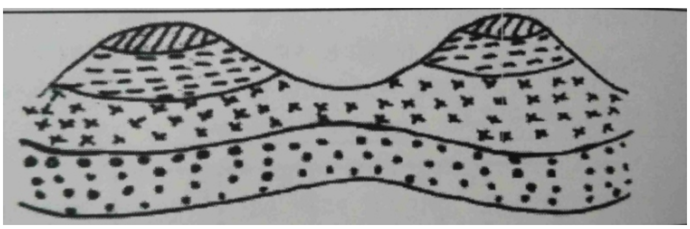

चित्र 7.15

ऐसी रचना एकाकी रूप में पायी जाती है क्योंकि विषम विन्यास में अध्यारोपण, भ्रंशन, बलन और धरातलीय ढाल में परिवर्तन होता है। पुरान्तः, नवान्तःशायी शैलों में अपरदन महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। अन्तर्जात एवं बहिर्जात बल से एकाकी शैल दृश्यांश बनता है। जब अपरदन के प्रक्रम द्वारा पहाड़ियों की चोटियों पर एकाकी शैल दृश्यांश शैल खण्ड के रूप में शेष होते हैं और समीपवर्ती चट्टानों का अपरदन हो जाता है। इन शैल समूह का भ्रंशन के प्रभाव से स्थानान्तरण होता है इससे द्रोणी का निर्माण होता है जिससे एकाकी शैल दृश्यांश प्रदर्शित होते हैं। अभिनतियों पर अपरदन तीव्र होता है।। जिससे प्राचीन शैल अनावृत्त होगा और नवान्तःशायी चट्टान का निर्माण होता है ऊँचे भागों पर अधिक अपरदन के कारण पुरान्तःशायी शैल दृश्यांश होते हैं इसी तरह होर्स्ट या टीला या पहाड़ी के नष्ट होने पर नवान्तःशायी चट्टान का विकास होता है। आग्नेय चट्टानों में ऐसी विलक्षण विशेषता दिखायी देती है। आंतरिक आग्नेय शैल बड़ी सरलता से किसी क्षेत्र में नवान्तःशायी शैल बन जाती है।

7.21 अभ्यास के प्रश्न

प्रश्न– 1. भौमिकीय मानचित्रों के महत्व की व्याख्या कीजिए

प्रश्न– 2. नमन की व्याख्या कीजिये

प्रश्न– 3. नतिलम्बः निर्धारण की व्याख्या कीजिए

प्रश्न– 4 नमन का निर्धारण की व्याख्या कीजिए

प्रश्न– 5 .संस्तर की मोटाई की व्याख्या कीजिए

प्रश्न– 6. संस्तर की चौड़ाई की व्याख्या कीजिए

प्रश्न– 7. पुरान्तःशायी और नवान्तःशायी चट्टानें की व्याख्या कीजिए

7.22 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. सिंह, संजय कुमार, भौमिकीय मानचित्रों का विश्लेषण 2019, वसुन्धरा प्रकाशन, गोरखपुर
2. शुक्ल, एस0 एम0 एवं एस0 पी0 सहाय, सांख्यिकी के सिद्धान्त, 2004, साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा
3. चौहान, पी0आर0, प्रयोगात्मक भूगोल, 2013, वसुन्धरा प्रकाशन, गोरखपुर
4. मोहम्मद, हारून, प्रयोगात्मक भूगोल, 2010, मिश्रा ट्रेडिंग कारपोरेशन, मैदागिन, वाराणसी

इकाई - 8 (Unit - 8)

भौमिकीय मानचित्र का समविन्यास संश्लिष्ट विषम विन्यास

पाठ संरचना

(Structure of Lesson)

8.0 प्रस्तावना
8.1 उद्देश्य
8.3 विषम–विन्यास
8.4 भौमिकीय मानचित्र का अध्ययनः–
8.5 अनुप्रस्थ काट का निर्माणः–1
8.6 भौमिकीय मानचित्र का इतिहास
8.7 प्रश्न अभ्यास संख्या–2
8.8 अनुप्रस्थ काटः–
8.9 भौमिकीय इतिहास
8.10 प्रश्न अभ्यास संख्या–3
8.11 अनुप्रस्थ काटः–
8.12 भौमिकीय मानचित्र का इतिहास
8.13 संश्लिष्ट विषम विन्यास
8.14 भौमिकीय अनुप्रस्थ काट की रचनाः–
8.15 नमन का निर्धारणः–
8.16 अनुप्रस्थ काट की रचनाः–
8.17 भौमिकीय मानचित्र का इतिहास
8.18 प्रश्न
8.19 संदर्भ ग्रन्थ सूची

8.0 प्रस्तावना

प्रस्तुत स्नातकोत्तर स्तर की इकाई संख्या आठ में लेखक द्वारा शिक्षार्थी के अध्ययन हेतु भौमकीय मानचित्रो की विषम विन्यास सम विन्यास संशलिष्टविषम विन्यास के अनेक भौमकीय मानचित्रो को प्रस्तुत करके उसकी अनुप्रस्थ काट बनाई गई है इसके साथ ही साथ भौगर्भिक इतिहास से जुड़े हुए बिंदु संस्तर, संरचना, उच्चावच का स्पष्ट उल्लेख किया गया है जिससे की शिक्षार्थी अनुप्रस्थ काट सम विन्यास विषम विन्यास के मानचित्र को बना सके तथा उसके भौगर्भिक इतिहास की व्याख्या कर सके प्रस्तुति इकाई में इससे संबंधित प्रश्न और सहायक पुस्तकों का भी उल्लेख किया गया जो शिक्षार्थी की समझ के लिए और आगे विश्लेषण व्याख्या के लिए आवश्यक है प्रश्नों के माध्यम से शिक्षार्थी अपना मूल्यांकन भी स्वयं कर सकता है

8.1. उददेश्य

- विषम–विन्यास की शिक्षार्थी व्याख्या कर सकेंगें।
- भौमिकीय मानचित्र का अध्ययन शिक्षार्थी कर सकेंगें।
- संश्लिष्ट विषम विन्यास की शिक्षार्थी की व्याख्या कर सकेंगें।
- नमन का निर्धारणः शिक्षार्थी कर सकेंगें।
- भौमिकीय अनुप्रस्थ काट की रचना का शिक्षार्थी व्याख्या कर सकेंगें।

8,3, विषम–विन्यास

इस शैल समूह का निर्माण विभिन्न भौगर्भिक युग में हुआ था। जब शैल समूह का निर्माण भिन्न–भिन्न युग में होता है तो इसे विषम विन्यास कहते हैं जिसमें संस्तर का कोण क्रम, दिशा सभी में भिन्नता पायी जाती है। दो या दो से अधिक युगों में निक्षेपित विभिन्न शैल समूहों के विसंगत सम्बन्ध को विषम विन्यास कहते हैं और शैल समूहों को अलग करने वाले तल को विषम विन्यास तल कहते हैं। **चित्र 8.1** में विभिन्न शैल समूहों को प्रदर्शित किया गया है। जिनका निर्माण दो भिन्न–भिन्न युगों में हुआ है जिसमें नवीन क्रम A, B, C, D, E संस्तर है जबकि प्राचीन क्रम में F, G, H तीन संस्तर हैं। दोनों क्रम के संस्तरों के नमन की दिशा और नमन का कोण दोनों में अन्तर है। R,S तल विषम विन्यास तल है जो दो शैल क्रम को अलग करता है। **चित्र 8.1** में C संस्तर, B संस्तर को अतिव्यापित करता है तथा G एवं H संस्तर को

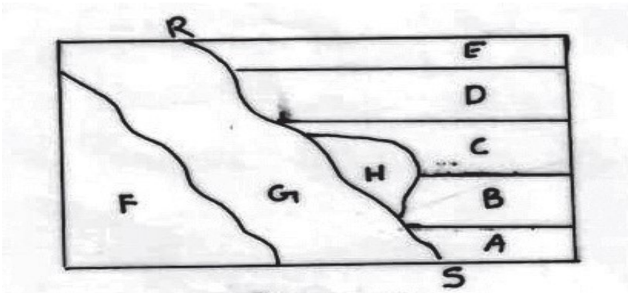

चित्र 8.1

स्पर्श करता है जो कि C की तुलना में अधिक प्राचीन है। अतिव्यापन उस प्रक्रिया को कहते हैं जब निक्षेपण ऐसी सतह पर होता है जिसका ढाल कम हो, सतह खुरदरी हो, प्राचीन शैल संस्तर अनाच्छादित हो तो ऐसी स्थिति में निक्षेपित होने वाला संस्तर अन्य संस्तरों के दृश्यांशों से प्रत्यक्ष रूप से स्पर्श हो जाता है जिसे अतिव्यापन (Overlap) कहा जाता है।

जब समुद्र के पीछे हटने के कारण निक्षेपण के नये संस्तर समुद्र से काफी दूर होते हैं तो ऐसी स्थिति में नवीन एवं प्राचीन संस्तर के बीच विषम विन्यास उत्पन्न होता है इसे ही दूरस्थ व्यापन (Off Lap) कहते हैं। भौमिकीय मानचित्रों में विषम विन्यस्त संस्तरों को निम्न प्रकार से पहचाना जा सकता है–

<u>प्रथमतः</u> सूची में निक्षेपित संस्तरों को अलग–अलग प्रदर्शित किया जाता है।

<u>द्वितीयः</u> विषम विन्यास तल नवीन संस्तर क्रम का सबसे निचला संस्तर तल होता है यह संस्तर तल पूर्व के निर्मित प्राचीन संस्तर तल को एक या अनेक जगह स्पर्श या काटते हुए दिखायी देता है। नवीन संस्तर ऊपर और प्राचीन क्रम का संस्तर प्रायः नीचे होता हैं।

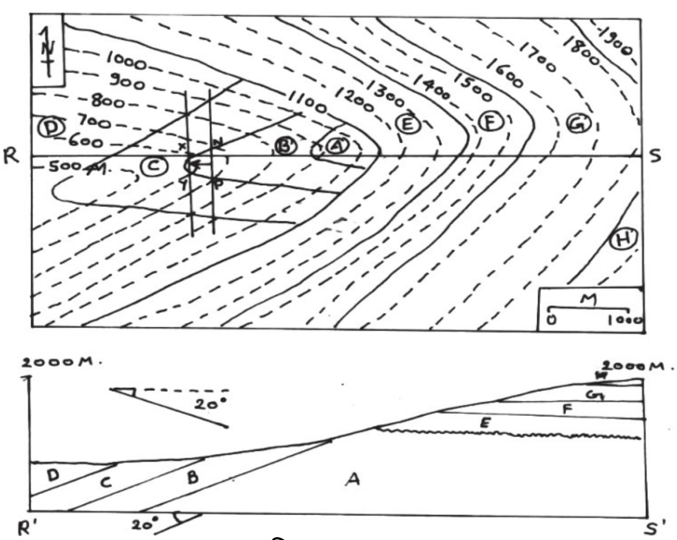

चित्र 8.2

8.4 भौमिकीय मानचित्र का अध्ययनः–

चित्र 8.2 में सूची प्रस्तुत की गयी है जिसमें दो युग के संस्तर क्रम प्रदर्शित हैं। नवीन क्रम की चट्टानें कार्बोनिफेरस युगीन हैं और प्राचीन क्रम की चट्टानें कैम्ब्रियन युगीन है। नवीन संस्तर का सबसे निचला तल प्राचीन क्रम के संस्तर अर्थात् कैम्ब्रियन युग के सभी संस्तर तलों को प्रत्यक्षतः स्पर्श करता है जो विषम विन्यास की स्थिति को स्पष्ट करता है। कार्बोनिफेरस युगीन संस्तर तलों के लगभग समानान्तर समोच्च रेखायें बनायी गयी हैं जो क्षैतिज स्थिति को स्पष्ट करती है। ये समोच्च रेखायें कैम्ब्रियन युगीन प्राचीन संस्तर की चट्टानों के संस्तर तलों को काटती प्रतिच्छेदित करती हैं जिससे इनकी नत स्थिति प्रकट होती हैं।

8.5 अनुप्रस्थ काट का निर्माणः–

चित्र 8.2 में R, S प्रस्तुत रेखा के बराबर R', S' रेखा की दूरी के बराबर क्रमिक परिच्छेदिका के निर्माण हेतु आधार रेखा बनायी जाती है इसके बाद R', S' को आधार मानकर 90^0 कोण के आधार पर दो लम्ब रेखाओं को ऊपर बढ़ाते हैं। इन लम्ब रेखाओं पर समोच्च रेखाओं के अनुसार 400, 900, 1400, 1900 की समोच्च रेखाओं को आधार मानकर दोनों लम्ब रेखाओं पर चिह्न बनाते हुए क्रमिक परिच्छेदिका का निर्माण करते हैं। अब बनी हुई क्रमिक परिच्छेदिका पर कागज की सहायता से भौमिकीय मानचित्र के R,S रेखा पर विभिन्न संस्तर तलों के कटान बिन्दु को ट्रेस कर लेते हैं इसके बाद उस कागज को भौमिकीय मानचित्र से लाकर R', S' पर रखकर क्रमिक परिच्छेदिका पर लम्ब डालकर विभिन्न संस्तर तलों का चिह्न अंकित करते हैं। अब भौमिकीय मानचित्र में शैल संस्तर के निचले संस्तर तल को N, P बिन्दु पर 700 मीटर की समोच्च रेखा प्रतिच्छेदित कर रही है जिसे मिलाकर एक नतिलम्ब रेखा बनायी जाती है। इसी संस्तर तल को 600 मीटर की समोच्च रेखा X, Y बिन्दु पर प्रतिच्छेदित करती है इस X, Y को मिलाकर एक नतिलम्ब रेखा बनाते हैं। अब इस आधार पर संस्तर का झुकाव पू0 से प0 दिशा में है इन दो नतिलम्ब रेखाओं के मध्य की दूरी अथवा लम्ब के आधार पर यथार्थ कोण का निर्माण करते हैं। नमन की दिशा के अनुरूप R', S' पर यथार्थ नमन बनाते हुए रेखा को आगे बढ़ाते हैं। ध्यातव्य है कि पूर्व वर्णित विधि के अनुसार विषम विन्यास तल को सबसे पहले बनाया जाता है। चूँकि यह तल प्रस्तुत मानचित्र में क्षैतिज है अतः इस भौमिकीय मानचित्र की अनुप्रस्थ बनाते समय इसके ऊपर के सभी संस्तर तलों को क्षैतिज रूप में बना लेते हैं और भौमिकीय मानचित्र के अनुसार विषम विन्यास तल को सांकेतिक चिह्न द्वारा प्रदर्शित करते हैं। इसके बाद आधार रेखा R'S' के सहयोग से बने हुए नमन के अनुसार नत संस्तर के तलों को समानान्तर क्रम में बनाते हैं जो चित्र से स्पष्ट है और इस तरह से विषम विन्यास वाले भौमिकीय मानचित्र का निर्माण पूर्ण हो जाता है।

8.6 भौमिकीय मानचित्र का इतिहास

1. <u>संरचनाः</u>– प्रस्तुत भौमिकीय मानचित्र में दो युगों में चट्टानों का निर्माण प्रदर्शित है इसके एक नदी घाटी का विकास स्पष्ट है। घाटी के निचले भाग में कैम्ब्रियन युगीन प्राचीन चट्टानों का संस्तर है जबकि ऊपरी भागों में कार्बोनिफेरस युगीन नवीन संस्तर है। घाटी का विकास सामान्य है निचले भागों में कठोर अवरोधी शैल संस्तर है जिससे ढाल तीव्र है। **चित्र 8.2** में कैम्ब्रियन और कार्बोनिफेरस दो भिन्न युगीन चट्टानों की संरचना है और इन भिन्न संस्तर क्रमों के मध्य विषम विन्यास तल पाया जाता है। नवीन संस्तर क्रम कार्बोनिफेरस युगीन है और प्राचीन संस्तर क्रम कैम्ब्रियन युगीन है। कैम्ब्रियन युगीन शैल फ्लैगस्टोन, मडस्टोन, चूना पत्थर, ऊपरी शेल आदि चार शैल संस्तर हैं। कैम्ब्रियन युग में लोअर ग्रिट, शेल, अपर ग्रिट एवं बलुआ पत्थर 4 शैल संस्तर हैं। कार्बोनिफेरस युग का प्राचीनतम संस्तर फ्लैगस्टोन है जो कैम्ब्रियनयुग के सभी संस्तर को स्पर्श करता है। जिससे यह स्पष्ट होता है कि यह विषम विन्यास वाला भौमिकीय मानचित्र है। कैम्ब्रियन युगीन संस्तर क्रम को समोच्च रेखायें विभाजित करती हैं जो नत तल होने का प्रमाण हैं जबकि नवीन संस्तर के समानान्तर समोच्च रेखायें है जो क्षैतिज तल का प्रमाण हैं। प्राचीन क्रम के संस्तर में लोअर ग्रिट संस्तर का सबसे पहले निक्षेपण हुआ और उसके बाद अन्य तीन संस्तर निक्षेपित हुए। भौगर्भिक हलचल के परिणामस्वरूप इसमें उत्थान एवं अपरदन कार्य हुआ इस उत्थान और अपरदन से इन संस्तरों में नमन उत्पन्न हो गया। प्राचीन क्रम के संस्तर तल के ऊपर नवीन संस्तर क्रम का निक्षेपण हुआ। जिससे ऊँचाई बढ़ी और वर्तमान स्थिति को प्राप्त हुआ।

2. उच्चावचः– भौमिकीय मानचित्र में एक नदी पूरब से पश्चिम दिशा में प्रवाहित होती है इससे नदी घाटी का विकास प्रदर्शित होता है नदी घाटी संकीर्ण है ढाल लगभग समान है। घाटी के ऊपरी भाग में गुजरने वाली 1900 मीटर की समोच्च रेखा घाटी के ऊपरी भाग में ऊँचाई को इंगित करती है। घाटी के निचले भाग में 500 मी0 की समोच्च रेखा गुजरती है जो घाटी के निचले भाग की ऊँचाई लगभग 500 मी0 व्यक्त करती है। घाटी में सापेक्षिक ऊँचाई 1900–500 = 1400 मी0 के लगभग है।

8.7 प्रश्न अभ्यास संख्या–2

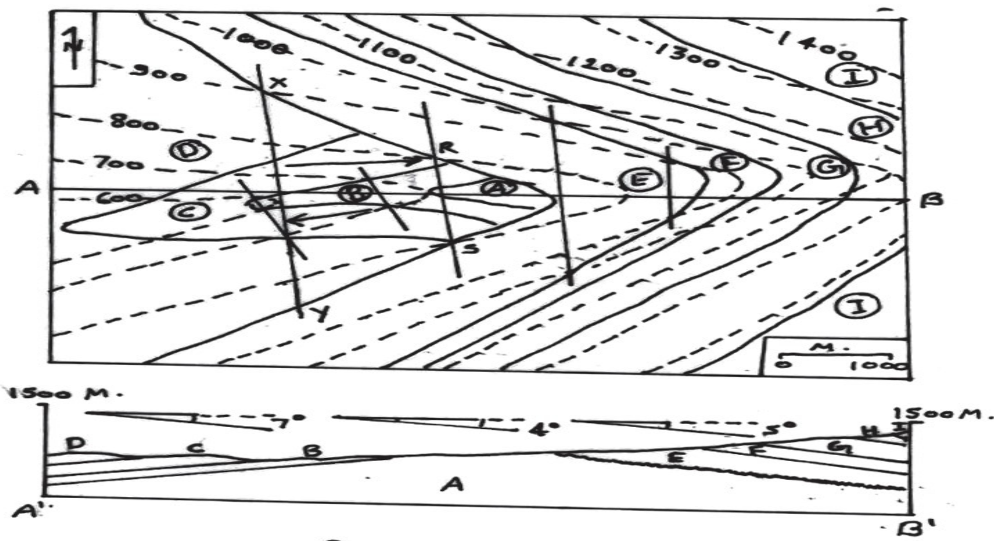

चित्र 8.3

चित्र 8.3 में दो भिन्न भौगर्भिक युगीन संस्तर क्रम प्रदर्शित हैं जिसमें कार्बोनिफेरस युगीन नवीन 5 संस्तर एवं कैम्ब्रियन युगीन 4 प्राचीन संस्तर हैं। इन संस्तरों के मध्य विषम विन्यास तल अवश्य है। कार्बोनिफेरस युग का सबसे प्राचीन संस्तर मडस्टोन है। इस मडस्टोन के निचले संस्तर तल को कैम्ब्रियन युगीन चारों संस्तर प्रत्यक्ष रूप से स्पर्श करते हैं जिससे स्पष्ट होता है कि मडस्टोन का निचला तल विषम विन्यास तल है और यह मानचित्र विषम विन्यास वाला भौमिकीय मानचित्र है तथा प्रस्तुत भौमिकीय मानचित्र में समोच्च रेखायें प्राचीन एवं नवीन दोनों संस्तर तलों को कहीं न कहीं विभाजित करती हैं इसलिए भौमिकीय मानचित्र के दोनों युगों में निर्मित संस्तर तल नत तल वाले हैं।

8.8 अनुप्रस्थ काटः–

प्रस्तुत भौमिकीय मानचित्र 8.3 में A,B रेखा के बराबर A',B' रेखा क्रमिक परिच्छेदिका के आधार के लिये बनाते हैं पूर्व वर्णित विधि के अनुसार A',B' बिन्दु से लम्ब बनाते हैं और समोच्च रेखा के मान के अनुसार 600, 700, 1400 मीटर मापनी के अनुसार चिह्नित कर लेते हैं इसके बाद एक दूसरा कागज लेकर भौमिकीय मानचित्र के A,B रेखा पर रखकर समोच्च रेखाओं के कटान बिन्दु को कागज पर ट्रेस कर लेते हैं और पुनः ट्रेस किये हुए कागज को A',B' रेखा के आधार पर समोच्च रेखाओं की ऊँचाई के अनुसार बढ़ाकर ऊपरी बिन्दु को मिलाते हुए क्रमिक परिच्छेदिका का निर्माण करते हैं और सफेद कागज को पुनः भौमिकीय मानचित्र के A,B रेखा पर रखकर विभिन्न संस्तर तलों की चिह्नित या ट्रेस करते हैं और इस ट्रेस किये हुए पेपर को A',B' पर रखकर क्रमिक परिच्छेदिका पर संस्तर तलों के चिह्न अंकित कर देते हैं। अब भौमिकीय मानचित्र में विषम विन्यास तल का नमन ज्ञात कर उसे पार्श्वचित्र के आधार रेखा A',B' के सहारे ढाल के अनुसार पूरब दिशा की ओर बनाते हैं। विषम विन्यास तल को 800 मी0 की समोच्च रेखा R,S बिन्दु पर काटती है जिसके सहारे नतिलम्ब रेखा का निर्माण करते हैं इसी तरह 900 मी0 की समोच्च रेखा इसी तल को X,Y बिन्दु पर काटती है अतः इस X,Y नतिलम्ब रेखा और R,S नतिलम्ब रेखा के आधार पर संस्तर तल का नमन ज्ञात करते हैं और उसे आधार रेखा A',B' पर बनाते हैं।

इसी तरह मडस्टोन के ऊपरी संस्तर तल को 900 मी0 और 1000 मी0 की समोच्च रेखा प्रतिच्छेदित करती है जिसका ढाल भी पूरब की ओर है इन दोनों नतिलम्ब रेखाओं के मध्य दूरी के आधार पर नमन कोण की गणना करते हुए आधार रेखा A',B' पर संस्तर तल के निर्माण हेतु इस नमन को भी निर्मित करते हैं। इसी तरह से कैम्ब्रियन युगीन शेल संस्तर को 600 मी0 और 700 मी0 की समोच्च रेखा निचले संस्तर तल को प्रतिच्छेदित करती है इस आधार पर भी दो नतिलम्ब रेखाओं का निर्माण करते हैं और इन नतिलम्ब रेखाओं के मध्य की दूरी के आधार रेखा A',B' पर नमन कोण को दिशानुरूप बनाते हैं अब अनुप्रस्थ काट की विधि अनुसार विषम विन्यास तल का नमन ज्ञात करने के बाद उसे पार्श्विका रेखा पर अंकित बिन्दु H से अभीष्ट दिशा में रेखा आगे बढ़ाते हैं जिससे विषम विन्यास तल का रेखांकन हो जाता है। इस विषम विन्यास तल के सहारे नवीन संस्तर तलों को बनाते हैं और भौमिकीय मानचित्र के अनुसार शैल संस्तरों को छायांकित कर देते हैं इसी तरह प्राचीन शैल संस्तरों को भी नमन की दिशा के अनुसार बनाते हैं और दिये गये भौमिकीय मानचित्र का अनुप्रस्थ काट पूर्ण हो जाता है।

8,9 भौमिकीय इतिहास

1. संरचनाः—

प्रस्तुत भौमिकीय मानचित्र **चित्र संख्या 8.3** में दो भिन्न युगीन संस्तर क्रम प्रदर्शित किया गया है जिसमें कार्बोनिफेरस युगीन संस्तर मडस्टोन, ऊपरी बलुआ पत्थर, चूना पत्थर, फ्लैगस्टोन, क्ले आदि नवीन संस्तर हैं जबकि लोअर ग्रिट, शेल, अपर ग्रिट, बलुआ पत्थर चार संस्तर कैम्ब्रियन युगीन प्राचीन क्रम के हैं जो भौमिकीय मानचित्र में घाटी में निचले क्रम में हैं और नवीन चट्टानें हैं।

इस भौमिकीय मानचित्र में मडस्टोन शैल संस्तर का निचला तल विषम विन्यास तल है प्राचीन संस्तर क्रम के सभी संस्तर विषम विन्यास तल से प्रत्यक्षतः स्पर्श करते हैं। इन भौमिकीय मानचित्र में एक नदी घाटी भी है जिसकी ऊँचाई 1400 मी0 की समोच्च रेखा द्वारा घाटी के ऊपरी भाग को प्रदर्शित किया जाता है जबकि 600 मी0 की समोच्च रेखा घाटी के निचले भाग को प्रदर्शित करती है। सभी समोच्च रेखायें नवीन एवं प्राचीन दोनों संस्तर तलों को काटती है इसलिए स्पष्ट होता है कि कार्बोनिफेरस एवं कैम्ब्रियन दोनों युगीन नत संस्तर हैं।

2. उच्चावचः—

प्रस्तुत भौमिकीय मानचित्र में एक नदी पू0 से प0 दिशा में प्रवाहित होती है। नदी घाटी का ढाल पूरी तरह से असमान है इस भौमिकीय मानचित्र की समोच्च रेखा 1400 मी0 की है जो मानचित्र के उ0पू0 एवं द0पू0 क्षेत्र में खींची गयी है जबकि प0 क्षेत्र में 600 मी0 की समोच्च रेखा सबसे कम मान की समोच्च रेखा है जो इस भौमिकीय मानचित्र के सागर तल से सबसे कम ऊँचाई को व्यक्त करती है। इस भौमिकीय मानचित्र की सापेक्षिक ऊँचाई 1400 — 600 = 800 मी. है।

8.10 प्रश्न अभ्यास संख्या—3

चित्र 8.4 में प्राचीन संस्तर B, C, D का दृश्यांश, भौमिकीय मानचित्र में दो बार स्पष्ट प्रदर्शित हो रहा है। B एवं C संस्तर का नमन विपरीत दिशा में प्रदर्शित है जो वलन की अपनति को प्रदर्शित करती है। इससे स्पष्ट होता है कि प्राचीन क्रम के संस्तर वलित हैं। जिसे समोच्च रेखायें काटती हैं जबकि नवीन क्रम के संस्तर वलित प्रतीत नहीं होते हैं क्योंकि समोच्च रेखायें संस्तर तल को नहीं काटती हैं संस्तर E, F नवीन संस्तर हैं, क्षैतिज हैं E संस्तर का निचला संस्तर तल प्राचीन संस्तर A, B, C, D के सभी संस्तर तलों को स्पर्श करती है जिससे विषम विन्यास की स्थिति स्पष्ट होती है। भौमिकीय मानचित्र वलन युक्त विषम विन्यास वाला है।

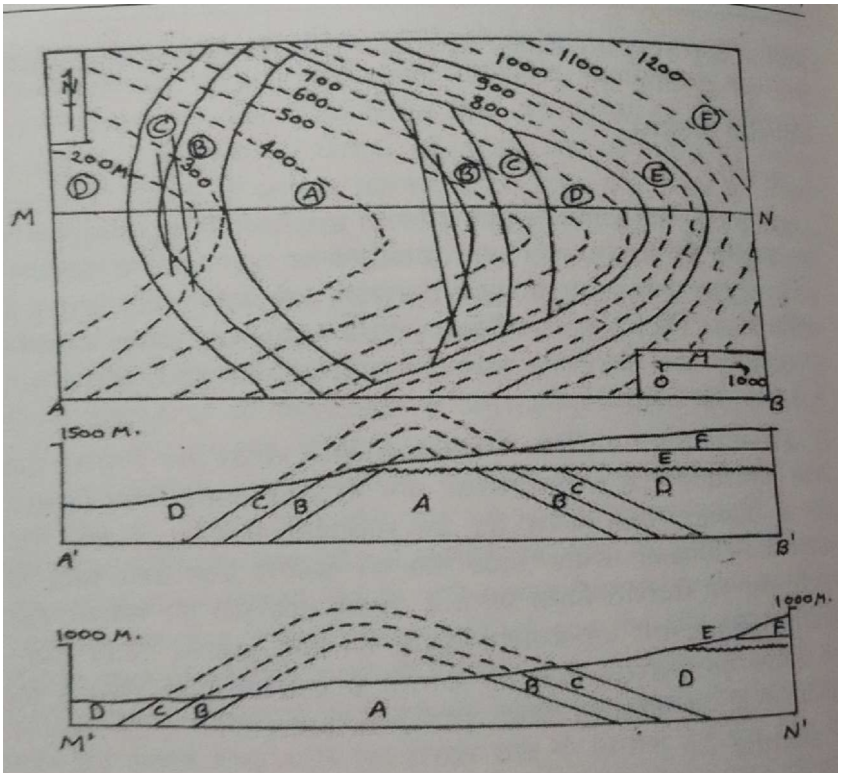

चित्र 8.4

8.11 अनुप्रस्थ काटः—

भौमिकीय मानचित्र में दिये गये M, N काट रेखा के आधार पर कागज पर क्रमिक परिच्छेदिका का निर्माण करने हेतु M, N रेखा के लम्बाई के बराबर M', N' रेखा बनाते हैं M' और N' बिन्दु को आधार मानते हुए 90^0 का कोण बनाकर लम्ब बनाते हैं जिस पर भौमिकीय मानचित्र में प्रस्तुत समोच्च रेखा 200 मी0 से 1200 मी0 के अनुसार दोनों लम्ब पर मापक के अनुसार समोच्च रेखाओं को प्रदर्शित कर लेते हैं। इसके बाद एक सादा कागज एवं पटरी की सहायता से भौमिकीय मानचित्र के समस्त समोच्च रेखाओं के कटान बिन्दु को चिह्नित कर M', N' को आधार मानते हुए समोच्च रेखा के अनुसार ऊँचाई का लम्ब बनाते हुए सभी लम्ब के शीर्षस्थ बिन्दु को मिलाकर क्रमिक परिच्छेदिका का निर्माण करते हैं। स्केल या सादे कागज को भौमिकीय मानचित्र के M, N काट रेखा पर रखकर समस्त संस्तर तलों के कटान बिन्दु को चिह्नित कर लेते हैं इन कटान बिन्दुओं को M', N' रेखा के आधार पर रखते हुए क्रमिक परिच्छेदिका पर चिह्न लगाते हैं और संस्तर तलों का निर्धारण करते हैं। इसके बाद प्रस्तुत भौमिकीय मानचित्र के संस्तर B को काटने वाली समोच्च रेखा 500, 600 मीटर तथा संस्तर तल B को पश्चिमी क्षेत्र में काटने वाली दो समोच्च रेखा 200, 300 मीटर के आधार पर नतिलम्ब रेखा का निर्माण करते हैं और इन नतिलम्ब रेखाओं के आधार पर नति कोण का निर्धारण करते हुए आधार रेखा M', N' पर भी नति कोण का निर्धारण कर क्रमिक परिच्छेदिका और इस नति कोण के आधार पर संस्तर तलों को अनुप्रस्थ काट हेतु निर्धारित करते हैं और उन संस्तर तलों में भौमिकीय मानचित्र में प्रदर्शित संस्तर के चिह्नों को अंकित कर देते हैं और भौमिकीय मानचित्र का अनुप्रस्थ काट पूर्ण करते हैं। इस तरह इस वलन युक्त विषम विन्यास वाले भौमिकीय मानचित्र का अनुप्रस्थ काट पूर्ण होता है।

चित्र 8.4 में दो पार्श्व काट बनाये गये हैं जो भौमिकीय मानचित्र की स्पष्ट व्याख्या करने हेतु इस भौमिकीय मानचित्र में AB रेखा दूसरी काट रेखा है जो भौमिकीय मानचित्र के बिल्कुल निचली सीमा रेखा है इस भौमिकीय मानचित्र में पार्श्व काट बनाने हेतु निम्न चरण अपनाते हैं—

1. एक सादे कागज को भौमिकीय मानचित्र के AB काट रेखा पर रखकर AB सम्पूर्ण समोच्च रेखाओं को चिन्हित कर लेते हैं। इस सादे कागज को भौमिकीय मानचित्र के नीचे रखकर A'B' आधार रेखा बनाते हैं उस आधार रेखा पर सम्पूर्ण समोच्च रेखाओं को भी चिन्हित कर लेते हैं। इन चिन्हित समोच्च रेखाओं के बिन्दुओं को उन समोच्च रेखाओं के मान के अनुसार मापनी में परिवर्तित कर लम्ब बनाते हैं। लम्ब के ऊपरी बिन्दुओं को मिलाकर क्रमिक पार्श्विका या परिच्छेदिका बना लेते हैं।

2. द्वितीय चरण में सादे कागज को भौमिकीय मानचित्र के AB काट रेखा पर रखकर विभिन्न संस्तर तलों एवं विषम विन्यासी तलों को चिन्हित कर लेते हैं। इसके बाद सादे कागज को A'B' आधार रेखा पर रखकर विषम विन्यास, संस्तर तल को चिन्हित कर बनी हुई क्रमिक परिच्छेदिका पर लम्ब के सहारे बिन्दु अंकित करते हैं। यही बिन्दु संस्तर तल, विषम विन्यास तल का बिन्दु होता है और इसी के सहारे M'N' आधार रेखा पर बनाये गये यथार्थ कोण की दिशा के अनुरूप समानान्तर रेखाओं को खींचकर संस्तर तलों को पूर्ण कर लेते हैं और द्वितीय पार्श्विका पूर्ण हो जाती है।

8.12 भौमिकीय मानचित्र का इतिहास

1. संरचनाः–

भौमिकीय मानचित्र में पश्चिम वाहिनी नदी में अपनति का अधिक अपरदन किया है और अपना मार्ग निर्धारित किया है। A संस्तर का अपरदन कम हुआ है जबकि B, C, D संस्तरों का अपरदन अधिक हुआ है इस भौमिकीय मानचित्र में दो भिन्न युगीन संरचना का निर्माण पाया जाता है। प्राचीन क्रम में A, B, C, D आदि 4 संस्तर हैं जो प्राचीन हैं एवं E, F संस्तर नवीन संस्तर हैं और इस संस्तर का झुकाव भी पूरब दिशा में है। संस्तर E प्राचीन सभी संस्तरों को स्पर्श करता है।

2. उच्चावचः–

इस भौमिकीय मानचित्र में एक नदी घाटी प्रस्तुत है जिसका प0 भाग निम्न घाटी क्षेत्र है एवं पूर्वी भाग उच्च घाटी क्षेत्र है। पूर्वी भाग में 1200 मी0 की समोच्च रेखा पायी जाती है जो भौमिकीय मानचित्र का सबसे ऊँचा भाग है। नदी तल का ढाल असमान है क्योंकि समोच्च रेखाओं के मध्य अंतराल असमान है। समोच्च रेखायें कहीं–कहीं नजदीक हैं और कहीं–कहीं पर बहुत अधिक दूर हैं। घाटी का पार्श्व ढाल भी असमान है।

संस्तरः–

यह भौमिकीय मानचित्र विषम संरचना वाला भौमिकीय मानचित्र है। इसमें कुल 6 संस्तर में 4 संस्तर प्राचीन हैं और दो संस्तर नवीन हैं। भौमिकीय मानचित्र को देखने से स्पष्ट होता है कि शायद समुद्री सतह के ऊपर उठने से प्राचीन चट्टानों के संस्तर वलित होंगे बाद में जब अपनति का अत्यधिक अपरदन हुआ और इसके पश्चात् पुरानी चट्टानों के पुनः निमज्जन हो जाने पर उस पर निक्षेपण का कार्य सम्पन्न हुआ। द्वितीय क्रम में भौगर्भिक हलचल के परिणामस्वरूप इस क्षेत्र में पुनः उभार हुआ जिससे नवीन क्रम की शैलें समुद्र तल के ऊपर क्षैतिज अवस्था में आ गयी जिससे वलित संस्तरों पर विषम विन्यास का निर्माण हुआ। नवीन संस्तरों में E संस्तर प्राचीन है और F संस्तर अपेक्षाकृत नवीन है। जबकि प्राचीन संस्तरों में A संस्तर सर्वाधिक प्राचीन तथा D संस्तर सर्वाधिक नवीन है। दोनों भुजाओं का ढाल लगभग समान है जिससे स्पष्ट होता है कि प्राचीन क्रम की शैलें अपनति का निर्माण करती हैं। इस भौमिकीय मानचित्र में देखने से स्पष्ट होता है कि संस्तरों का उन्मज्जन, निमज्जन और वलन हुआ है। सम्पीडन के कारण उन्मज्जन के दौरान संस्तर तलों में झुकाव से अपनति का निर्माण हुआ रहा होगा। नवीन चट्टानें अपनति तल पर ही जमा हुई होंगी। विखण्डित रेखायें अपनति के अपरदन को इंगित करती हैं।

8.13 संश्लिष्ट विषम विन्यास (Complex Unconformity)

कभी–कभी भौमिकीय मानचित्र में एक साथ भ्रंशन, विषम–विन्यास, वलन की स्थिति पायी जाती है जो भौमिकीय संरचना की अत्यधिक जटिलता को व्यक्त करता है। भ्रंशन, वलन, विषम–विन्यास की विशेषताओं के आधार पर ऐसे मानचित्र की पहचान की जाती है और इस मानचित्र में सर्वप्रथम उपयुक्त स्थान का चयन कर अनुप्रस्थ काट बनाते हैं।

प्रस्तुत चित्र 8.5 में एक ऐसी जटिल स्थिति है जहाँ पर एक साथ वलन, भ्रंशन, विषम–विन्यास तीनों की विशेषताएँ प्रदर्शित हैं।

भौमिकीय मानचित्र में भ्रंशित संस्तर की पहचान निम्न आधार पर की जा सकती है–

(1) भ्रंश तल मोटी रेखा से प्रदर्शित होता है।

(2) भ्रंश तल के एक ओर उत्क्षेपित संस्तर और दूसरी ओर अधःक्षेपित संस्तर क्रम होता है।

(3) भ्रंश तल को प्रदर्शित करने वाली रेखा प्रायः सीधी होती है लेकिन वक्र आकार की भी हो सकती है।

(4) भ्रंश रेखा के दोनों ओर एक प्रकार के संस्तर क्रम का क्षेपण होता है।

(5) ऐसे भौमिकीय मानचित्र जो विषम विन्यास वाले होते हैं उसमें भ्रंश तल के दोनों ओर के संस्तर क्रम, अधःक्षेपण या उत्क्षेपण की स्थिति में होते हैं।

8.14 भौमिकीय अनुप्रस्थ काट की रचनाः–

दिये गये मानचित्र 8.5 में भ्रंशित संस्तरों का क्रम इस मानचित्र में V, U, एवं O,P दो भ्रंश तल बनाये गये हैं। संस्तर तलों के निक्षेपण की प्रक्रिया और विषम विन्यासी संस्तर तल से स्पष्ट होता है कि इसमें V,U भ्रंश तल दूसरे भ्रंश तल की अपेक्षा प्राचीन है। V,U भ्रंश तल के दायीं ओर के संस्तर नीचे धँस गये हैं और बायीं ओर के संस्तर दायीं ओर 400 और 500 मीटर की समोच्च रेखा के मध्य में हैं जबकि H संस्तर तल बायीं ओर 500 और 600 मीटर की समोच्च रेखा के ऊपरी हिस्से से गुजरती है। बाद में भ्रंशन के बाद L,M,N नये संस्तर का

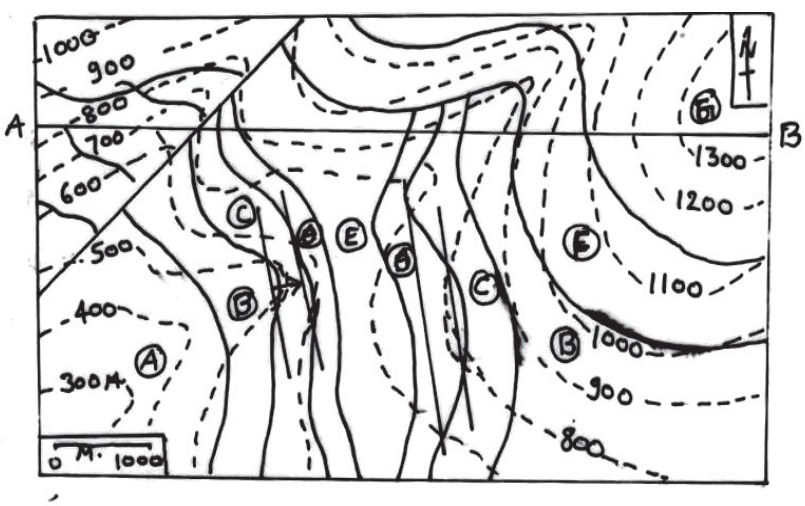

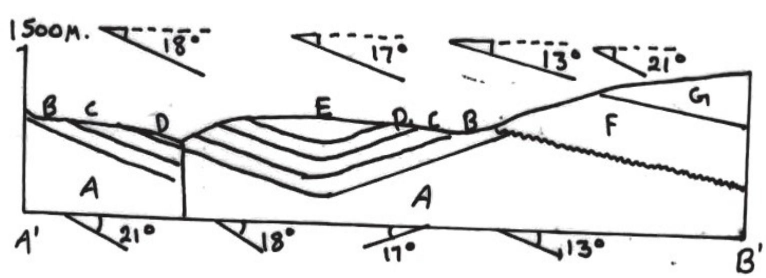

चित्र 8.5

जमाव हुआ। भौगर्भिक हलचल के कारण O,P नामक एक और भ्रंश का निर्माण हुआ जिसमें भी दायीं ओर के भ्रंश तल नीचे एवं बायीं ओर के भ्रश तल ऊपर उठे हुए हैं। यह भ्रशं तल सभी संस्तर तलों से होकर गुजरता है।

8,15 नमन का निर्धारणः–

इस भौमिकीय मानचित्र में दो संस्तर क्रम है इसलिए यह विषम विन्यास क्रम का मानचित्र है। इसमें H,I,J,K आर्डोविसियन युगीन है और L,M,N कार्बोनिफेरस युगीन है इसमें विषम–विन्यास के कारण दो स्थानों पर नमन ज्ञात करना जरूरी है। प्रस्तुत **चित्र 8.5** में पुराने भ्रंश तल के बायीं ओर H संस्तर के ऊपरी तल के संदर्भ में

नमन ज्ञात किया गया। H संस्तर के ऊपरी तल को 500 मी0 की समोच्च रेखा दो बिन्दुओं R और S पर प्रतिच्छेदित (काटती है) करती हैं। इसी R,S रेखा को मिलाते हुए जब आगे बढ़ाया जाता है तो यह R,S रेखा को P बिन्दु पर काटती है। H संस्तर के ऊपरी तल को दूसरी समोच्च रेखा जो 400 मीटर की है वह O बिन्दु पर काटती है। अब R,S रेखा के समानान्तर O बिन्दु के कटान बिन्दु से एक समानान्तर रेखा बनाते हुए रेखा की ओर आगे बढ़ाते हैं जो A, B रेखा को P बिन्दु पर काटती है। अब नमन मूल्य ज्ञात करने के लिए A, B रेखा पर अंकित P,Q सरल रेखा बनाते हैं। तदोपरान्त 500–400 मीटर = 100 मीटर की समोच्च रेखा के अन्तराल को मापक के अनुसार दूरी मापकर P बिन्दु से अधोगामी (नीचे की ओर) लम्ब बढ़ाते हैं। अब Q बिन्दु से लम्ब के सिरे को मिलाते हुए एक रेखा आगे बढ़ाते हैं। इस तरह से कोण Q एक आभासी नमन ज्ञात होता है और इस नमन की दिशा H की ओर है।

ध्यातव्य है कि द्वितीय विन्यास क्रम के L,M,N संस्तर हेतु दूसरे नमन का परिकलन करते हैं जो M संस्तर के ऊपरी तल के 800 मीटर की समोच्च रेखा Z, Y दो बिन्दुओं पर काटती है Z,Y को मिलाते हुए इस रेखा को जब आगे बढ़ाते हैं तो यह रेखा H,I रेखा के बढ़े भाग पर X बिन्दु पर काटती है। इसके बाद M संस्तर के ऊपरी तल को दूसरी 700 मीटर की समोच्च रेखा T बिन्दु पर काटती है। T से पहली नतिलम्ब Z, Y के समानान्तर रेखा खींचते हैं जो H,I रेखा के बढ़े हुए भाग को W बिन्दु पर काटती है। अब W और X के बीच की दूरी लेकर अलग से W,X की रेखा बनाते हैं और 800–700 = 100 मीटर की दूरी को मापक के अनुसार परिवर्तित कर X से अधोगामी लम्ब खींचकर लम्ब के सिरे को W से मिला देते हैं जो कि L,M,N संस्तर के लिये आभासी नमन माना जायेगा। प्रस्तुत मानचित्र में कोण W का नमन लगभग क्षैतिज है। यदि W,X रेखा को A', B' रेखा पर प्रक्षेपित किया जाय तो यह उसके बराबर या अधिक लम्बी हो जाती है। ऐसी स्थिति में गणितीय विधि से आभासी नमन ज्ञात करना सर्वाधिक उपयुक्त होगा।

8.16 अनुप्रस्थ काट की रचनाः–

प्रस्तुत विषम विन्यासी जटिल भौमिकीय मानचित्र की भौमिकीय संस्तरों के अनुप्रस्थ काट के निर्माण की प्रक्रिया अत्यन्त सरल है। इसमें सबसे पहले H, I रेखा की लम्बाई के बराबर A', B' रेखा कागज में परिच्छेदिका के आधार के रूप में बनाते हैं। इसके बाद A, B रेखा पर भौमिकीय मानचित्र में समोच्च रेखा के कटान बिन्दुओं को चिह्नित कर A', B' आधार रेखा पर चिह्न लगाकर मापक के अनुसार A', B' आधार रेखा पर विभिन्न समोच्च रेखाओं की ऊँचाई के अनुसार पार्श्विका (परिच्छेदिका) का निर्माण करते हैं।

भ्रंशित संस्तर की रचना में भ्रंश तल और संस्तर के नीचे की ओर धँसाव और ऊपर की ओर उठाव की मात्रा को निर्धारित कर लेते हैं। A, B रेखा पर L,M,N संस्तर को चिह्नित करते हुए प्रतिच्छेदन बिन्दु अंकित करते हैं और A', B' रेखा पर संस्तर के नमन को अंकित कर देते हैं इसके बाद पार्श्विका तल पर A, B रेखा पर रखे कागज पर बनाये गये L,M,N के कटान बिन्दु को अंकित करते हैं। इसके बाद A', B' आधार रेखा पर बनाये गये W की कोणीय रेखा के समानान्तर क्रमशः पार्श्विका पर क्रमशः बनाये गये L,M,N कटान बिन्दु के आधार पर समानान्तर रेखा खींच देते हैं। L संस्तर की निचली रेखा चूंकि विषम विन्यास तल को प्रदर्शित करती है इसलिए इस रेखा को नाम मात्र के वक्र के साथ बना देते हैं।

विषम विन्यास तल की रेखा बनाने के उपरान्त H,I,J,K संस्तर के निर्माण हेतु सर्वप्रथम O,P भ्रंश तल को A', B' आधार तल पर लम्बवत् रेखा के माध्यम से प्रदर्शित करते हैं। इस भ्रंश तल को पार्श्विका में प्रदर्शित करने के लिए जिस तरह से सादे कागज पर A, B रेखा के समोच्च रेखीय कटान बिन्दु को अंकित करते हैं और उसे आधार रेखा A', B' पर चिह्नित करते हैं उसी तरह भ्रंश रेखा को बनाते हैं।

संस्तर तलों को प्रदर्शित करने की विधियाँ भी वही हैं। प्रस्तुत भौमिकीय मानचित्र में O,P भ्रंश तल के दायीं ओर J संस्तर का ऊपरी तल है और बायीं ओर J संस्तर का निचला तल दोनों चित्र में एक सीध में जो इस बात के प्रमाण हैं कि भ्रंश रेखा के दाहिनी ओर J संस्तर नीचे धँस गया। इसी बिन्दु से J संस्तर के धँसाव का मूल्य ज्ञात करने के लिए बायीं ओर J संस्तर पर 300 मीटर की नतिलम्ब रेखा बनायी गयी। यह नतिलम्ब रेखा

भ्रंश तल के दायीं ओर J के निचले तल को प्रदर्शित करतें हैं जबकि बायीं ओर J के ऊपरी तल के सन्दर्भ में 500 मीटर की हो जाती है। इस तरह J संस्तर के ऊपरी तल, निचले तल के मध्य 500–300 = 200 मीटर का अंतर है। J संस्तर की मोटाई 100 मीटर है इसलिये J संस्तर में भ्रंश तल के सहारे 100 मीटर का धँसाव और उठाव (उत्थान) है। A' B' रेखा पर कोण Q की कोणीय रेखा और नमन की दिशा के आधार पर H,I,J,K संस्तर की नमन की दिशा निश्चित होती है। इसके बाद पार्श्विका तल पर अंकित भ्रंश तल से ऊपर 100 मीटर की दूरी पर 1 अंकित करेंगे। इस बिन्दु 1 से 100 मीटर नीचे भ्रंश तल पर दूसरा बिन्दु निश्चित करते हुए Q की कोणीय रेखा के समानान्तर रेखा खींचते हुए भ्रंश तल के दाहिनी ओर रेखा को आगे बढ़ाते हैं यही आगे बढ़ी हुई रेखा J संस्तर का ऊपरी तल के रूप में मानी जाती है और इसके ऊपर पार्श्विका पर शेष भाग K संस्तर होगा।

पुनः J और I की मोटाई पहले से बतायी गयी विधि के आधार पर परिकलित करते हुए (ज्ञात करते हुए) दायीं ओर के सभी संस्तरों की रचना पूरा करते हैं।

प्रस्तुत मानचित्र में J संस्तर की मोटाई 300 मीटर की नतिलम्ब से ज्ञात की जा सकती है। भ्रंश तल के दाहिनी ओर J संस्तर के निचले तल के लिये 300 मीटर की नतिलम्ब रेखा J के ऊपरी तल पर 400 मीटर की समोच्च रेखा से मिलती है इसलिए इस संस्तर की मोटाई 100 मीटर ज्ञात की गयी। अब भ्रंश तल पर J के ऊपरी तल से नीचे 100 मीटर की दूरी पर (मापक के अनुसार) भ्रंश तल से ऊपरी तल के समानान्तर रेखा बनाते हैं। I संस्तर के निचले तल पर 300 मीटर की नतिलम्ब रेखा बनाकर ऊपर बढ़ायेंगे तो यह ऊपरी तल को 550 मीटर पर काटती है इसलिए इस संस्तर की मोटाई 550–300 = 250 मीटर ज्ञात हुई। अब भ्रंश तल पर 250 मीटर की दूरी (मापक के अनुसार) का चिह्न J संस्तर के निचले तल से लगाते हैं। यह चिह्न I संस्तर का निचला तल हो जायेगा और J संस्तर के निचले तल के समानान्तर इस रेखा को खीचेंगे जिससे I संस्तर का निचला तल पूर्ण हो जायेगा। I संस्तर के निचले तल के नीचे जो अवशेष है वह H संस्तर होगा।

प्रस्तुत भौमिकीय मानचित्र में V,U दूसरा भ्रंश तल है। इस भ्रंश तल को A, B आधार रेखा पर सादे कागज पर चिह्नित कर A', B' आधार रेखा पर चिह्नित कर पार्श्विका तल बनाते हैं। इस भ्रंश तल के दायीं ओर के संस्तर नीचे धँसे हैं और बायीं ओर के ऊपर उठे हैं। चित्र में बायीं ओर H,J संस्तर का ऊपरी तल और दायीं ओर J संस्तर का ऊपरी तल एक बिन्दु पर मिलते हैं इससे स्पष्ट है कि V, U भ्रंश तल के बायीं ओर H संस्तर का ऊपरी तल 350 मीटर ऊपर उठा है और I संस्तर मात्र 100 मी0 ऊपर उठा है। J संस्तर 250 मीटर ऊपर उठा है। M, N भ्रंश तल के बायी ओर संस्तर बनाने के लिए H संस्तर के ऊपरी तल के कटान बिन्दु से 350 मीटर (मापक के अनुसार) की दूरी पर कोण Q की कोणीय रेखा के समानान्तर A' की ओर रेखा बनायेंगे जो H संस्तर का ऊपरी तल होगा और इसके बाद V',U' भ्रंश तल पर 350 मीटर के चिह्न से ऊपर 250 मीटर का चिह्न अंकित करेंगे और इसी 250 मी0 की दूरी पर अंकित चिह्न से कोण Q की कोणीय रेखा के समानान्तर रेखा बनाते हैं जो I संस्तर की ऊपरी तल होगी। इसके बाद 100 मी0 की (मापक के अनुसार) दूरी लेकर चिह्न लगाकर Q की कोणीय रेखा से समानान्तर रेखा खींचकर J संस्तर का ऊपरी तल बनाते हैं और शेष अवशिष्ट ऊपर की ओर का भाग K संस्तर के रूप में प्रदर्शित होता है।

8.17 भौमिकीय इतिहासः–

प्रस्तुत भौमिकीय **मानचित्र 8.5** में एक नदी घाटी है जिसके दोनों ओर पर्वत स्कन्ध हैं इसमें कार्बोनिफेरस युगीन L,M,N संस्तर विषम विन्यास का निर्माण करते हैं अपेक्षाकृत नवीन हैं और H,I,J,K संस्तर प्राचीन हैं। इस भौमिकीय मानचित्र में दो भ्रंश हैं प्रथम भ्रंशन के दायीं ओर का भाग नीचे धँस गया और बायीं ओर का भाग ऊपर उठ गया। बाद में इस भ्रंश के ऊपर L,M,N संस्तरों का जमाव हुआ जो विषम विन्यास क्रम का निर्माण करते हैं बाद में दोबारा भ्रंशन क्रिया होती है और इस भ्रंशन का प्रभाव H,I,J,K,L,M,N सभी संस्तरों पर होता है। इस भ्रंशन के बायीं ओर का भाग ऊपर उठ जाता है और दायीं ओर का भाग नीचे धँस जाता है यह भौमिकीय मानचित्र जटिल है क्योंकि इसमें संस्तर वलित है और दो भ्रंश हैं तथा संस्तर विभिन्न युगों में बने होने के कारण विषम विन्यासी हैं। इसमें अधिकतम उच्चावच 800 मीटर की समोच्च रेखा है जो अध्ययन क्षेत्र के उ0प0 में है। निम्न

क्षेत्र में उच्चावच की रेखा 300 मीटर है इस तरह से यहाँ पर सापेक्षिक उच्चावच लगभग 500 मीटर है। अध्ययन क्षेत्र में दो पर्वत स्कन्ध भी हैं।

भौमिकीय मानचित्र चित्र 8.6

चित्र 8.6 में प्रस्तुत भौमिकीय मानचित्र भी अत्यन्त जटिल हैं इसमें बलन, भ्रंशन, विषम–विन्यास के साथ अन्तर्वेधन की क्रिया से प्राचीन शैलों में डाइक का जमाव हुआ। इस कारण से यह अत्यन्त जटिल भौमिकीय मानचित्र है। इस तरह के भौमिकीय मानचित्र में अनुप्रस्थ काट बनाते हैं। सम्पूर्ण कार्य भौमिकीय मानचित्र संख्या 8.5 के अनुसार बनाने के

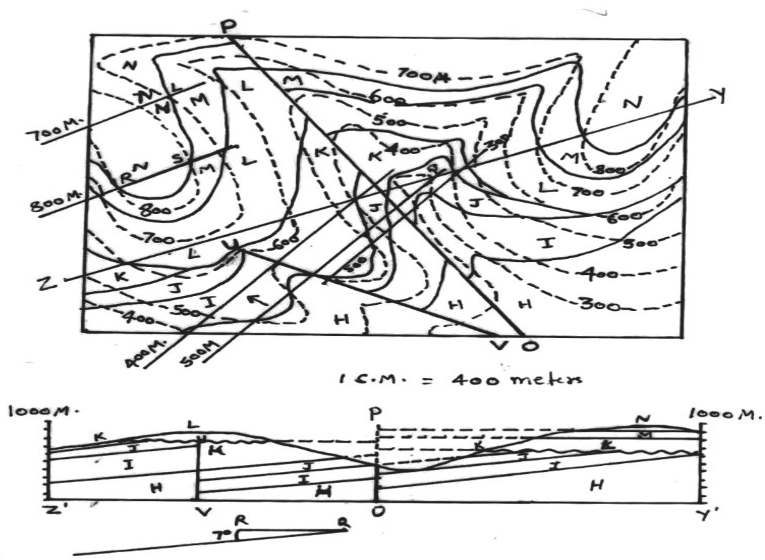

चित्र संख्या 8.6

उपरान्त बनी अनुप्रस्थ काट परिच्छेदिका पर डाइक को भी A,B आधार रेखा पर सादे कागज पर आधार रेखा पर रखे गये सादे चिह्नित करने के उपरान्त परिच्छेदिका के आधार पर सादे कागज को रखकर भ्रंश अथवा संस्तर तल की तरह इसे भी चिह्नित करके आधार रेखा से लम्ब रूप में परिच्छेदिका तक निर्मित करते हैं जिससे अनुप्रस्थ काट से बने आरेख में भ्रंश संस्तर के साथ डाइक भी निर्मित हो जाता है

अनुप्रस्थ काट रचना विधि

1. पूर्व वर्णित विधि के अनुसार दिये गये भौमिकीय मानचित्र में AB' रेखा आधार के रूप में उच्चावच प्रदर्शन हेतु बनाते हैं।

2. AB' रेखा पर सभी समोच्च रेखाओं के कटान बिन्दु को चिन्हित करते हुए A'B' रेखा के दोनों सिरों पर लम्ब बनाकर मापक के अनुसार लम्ब की ऊचाई निर्धारित करते हुए परिच्छेदिका का निर्माण करते हैं।

3. AB' रेखा पर संस्तरतल के कटान बिन्दु को चिन्हित करते हुए A'B' रेखा पर बनी परिच्छेदिका का चिन्ह बनाते हैं।

4. AB' रेखा पर भ्रंशतल का चिन्ह अंकित करते हुए A'B' आधारतल पर चिन्ह लगाकर परिच्छेदिका पर लम्ब डालते हैं जिससे भ्रंशतल का निर्माण परिच्छेदिका में हो जाता है।

5. विषम विन्यास का नमन पूर्व वर्णित विधि नतिलम्ब के सहयोग से ज्ञात करते हैं इसी नमन के आधार पर सेट स्ववायर के सहयोग से दोनों संस्तरों को बनाते है। विषम विन्यासतल को टेढ़ा मेढ़ा बनाते हैं।

6. भ्रंशतल के दक्षिण पूरव में बलित संस्तर है जिसकी नमन एवं दिशा ज्ञात करते हैं नति लम्ब रेखा के आधार पर।

7. भ्रंशतल के पश्चिम दिशा में संस्तर का धँसाव है अधःक्षेपित भाग है तथा पूरव में उत्क्षेपित (उभरा) भाग है संस्तर का उभार एवम् धँसाव लगभग 200 मीटर है। धँसे संस्तरों का नमन 20° अंकित है। इस आधार पर संस्तरों को पूर्ण करेंगे।

8. 'B' आधार रेखा पर क्रमशः 13,17,18,21 का नमन रेखा बनाकर सेटस्क्वायर के सहयोग से वलिसंस्तरों को पूर्ण करते हैं।

भौमिकीय इतिहास

1 संस्तर क्रम– चित्र संख्या 8,6 में अर्जेविसियन एवम् कार्डोनिफेरस युगीन क्वार्टजाइट, कांगलोमेट, मेडस्टोन, शेल बलुआ पत्थर आदि पाँच संस्तरों का विकास हुआ है। अर्डोविसियन युगीन संस्तर में बलन, भ्रंशन की घटना हुई थी। इस कारण पूरवी भाग में अपनति का विकास हुआ है। भ्रंशन के कारण संस्तर टूट गये 200 मीटर का धँसाव/उभार आया अपनति के दोनों ओर की भुजाओं का नमन अलग अलग है। विषम विन्यासी संस्तर का नमन भी भिन्न–भिन्न है। कार्बोनिफेरस युग में चूनापत्थर एवम् फलैगस्टोन दो संस्तर है। इस संस्तर का भौमिकीय इतिहास अत्यन्त जटिल है। आर्डोविसियन में क्वार्टजाइट सर्व प्राचीन है। प्राचीन शैल संस्तरों में निमज्जन उन्मज्जन भ्रंशन, वलन के बाद नवीन संस्तर का जमाव हुआ। नवीन संस्तरों के निक्षेपन के बाद जब उन्मज्जन हुआ तो उसमें नति का विकास हुआ ऐसा विषम विन्यास से स्पष्ट है।

संरचना एवम् उच्चावच

भ्रंशन के कारण विकसित तल के सहारे भ्रंशघाटी का विकास हुआ जिसमें नदी का प्रवाह पाया जाता हैं मुख्यघाटी में समाहित होने वाली जलधारा से अन्य सहायक नदी घाटी का विकास हुआ होगा। परस्पर प्रतिरोधी शैल के कारण नदी घाटी एवम् उनके बीच के स्कन्धों का ढाल असमान विकसित हो गया। इस भौमिकीय मानचित्र में दो नही घाटियां है। उत्तर पश्चिम की घाटी भ्रंशतल के बिल्कुल समानान्तर पायी जाती है। दूसरी घाटी उपरदित है। घाटियों के मध्य स्कन्धों का विकास पाया गया है। स्कन्ध का ढाल असमान है पूर्वी क्षेत्र के स्कन्ध अत्यन्त ऊँचा एवम् विस्तृत है।

8.18 अभ्यास के प्रश्न

1. किसी दिये सम विन्यास भौमिकीय मानचित्र की अनुप्रस्थ काट बनाते हुए भौमिकीय इतिहास की व्याख्या कीजिए।

2.. किसी दिये विषम विन्यास भौमिकीय मानचित्र की अनुप्रस्थ काट बनाते हुए भौमिकीय इतिहास की व्याख्या कीजिए।

8.19 संदर्भ ग्रन्थ सूची

सिंह, संजय कुमार, भौमिकीय मानचित्रों का विश्लेषण 2019, वसुन्धरा प्रकाशन, गोरखपुर।

शुक्ल, एस0 एम0 एवं एस0 पी0 सहाय, सांख्यिकी के सिद्धान्त, 2004, साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा।

चौहान, पी0आर0, प्रयोगात्मक भूगोल, 2013, वसुन्धरा प्रकाशन, गोरखपुर।

मोहम्मद, हारून, प्रयोगात्मक भूगोल, 2010, मिश्रा ट्रेडिंग कारपोरेशन, मैदागिन, वाराणसी।

इकाई - 9 (Unit - 9)

नत संस्तर वलित संस्तर भौमिकीय मानचित्र अनुप्रस्थ काट बनाने की प्रक्रिया

पाठ संरचना

(Structure of Lesson)

9.0 प्रस्तावना
9.1 उददेश्य
9.2 नत संस्तर
9.3 अनुप्रस्थ काट बनाने की प्रक्रिया
9.4 भौमिकीय इतिहास
9.5 अनुप्रस्थ काट बनाने की प्रक्रिया
9.6 भौमिकीय इतिहास
9.7 वलित संस्तर
9.8 अनुप्रस्थ काट बनाने की विधिः
9.9 भौमिकीय इतिहास
9.10 अभ्यास के प्रश्न
9.11 संदर्भ ग्रन्थ सूची

9.0 प्रस्तावना

स्नातकोत्तर चतुर्थ सेमेस्टर के पाठ्यक्रम मानचित्र कला एवं सांख्यिकीय विधियो के इस इकाई में भौमकीय मानचित्र के नत संस्तर और वलित संस्तर के मानचित्रो की अनुप्रस्थ काट बनाने की विधियो का वर्णन किया गया है इसके साथ भौमकीय मानचित्र के भूगर्भिक इतिहास उसके संस्तर, संरचना, उच्चावच, संस्तर क्रम आदि का विस्तृत विश्लेषण किया है अनुप्रस्थ काट बनाने के लिए शिक्षार्थी को बार–बार अभ्यास हेतु अनेक मानचित्रो को प्रस्तुत किया गया है इस इकाई के अध्ययन से छात्र लाभान्वित होंगे और वलित संस्तर के अनुप्रस्थ काट बनाने में विश्लेषण करने में सक्षम हो सकेंगे।

9.1 उददेश्य

- नत संस्तर का अनुप्रस्थ काट बना सकेंगें ।
- वलित संस्तर का अनुप्रस्थ काट बना सकेंगें।
- नत संस्तर एवम् वलित संस्तर भौमिकीय इतिहास का शिक्षार्थी व्याख्या कर सकेंगें।

9.2 नत संस्तर

जब संस्तर क्षैतिज तल के सहारे कुछ झुके होते हैं तो नत संस्तर कहलाते हैं। इसमें नमन होता है। समोच्च रेखायें संस्तर तलों को प्रतिच्छेदित करती है। अन्यथा संस्तर तल को समोच्च रेखायें प्रतिच्छेदित नहीं करती, बल्कि समानान्तर होती है। **चित्र 9.1** में प्रस्तुत पहाड़ी के बिन्दु A, B, C, D, E, 5 नत संस्तर हैं।

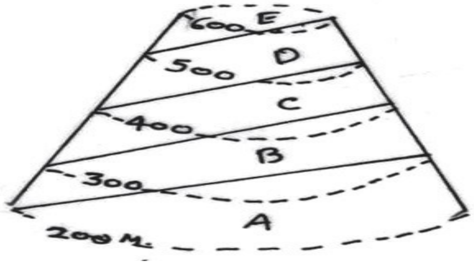

चित्र संख्या 9.1

चित्र 9.1 में प्रस्तुत वक्र रेखायें समोच्च रेखायें हैं जो संस्तर में झुकाव के कारण प्रतिच्छेदित करती हैं। संस्तरों को समोच्च रेखाओं के द्वारा प्रतिच्छेदन के आधार पर झुके संस्तर वाले भौमिकीय मानचित्र को सरलता से पहचाना जा सकता है जैसा कि **चित्र 9.2** में है।

9,3 अनुप्रस्थ काट बनाने की प्रक्रियाः–

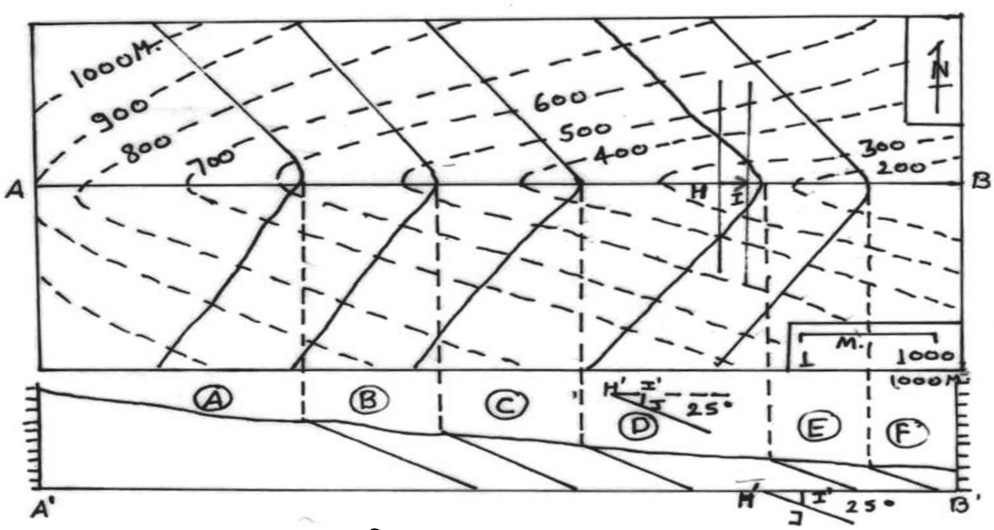

चित्र संख्या 9.2

प्रस्तुत भौमिकीय मानचित्र में A,B रेखा के बराबर बगल में A',B' एक दूसरी रेखा बनाते हैं। यह A,B रेखा जिस–जिस बिन्दु पर संस्तर तलों को काटती है उन बिन्दुओं से पार्श्वचित्र की वक्र रेखा पर लम्ब डालकर संस्तर तल के कटे हुए बिन्दुओं को चिह्नित करते हैं।

नत संस्तर में नमन ज्ञात करने हेतु नतिलम्ब रेखा बनायी जाती है। **चित्र 9.2** में D संस्तर के निचले स्तर पर क्रमशः 300, 400 मीटर की समोच्च रेखा दो बिन्दुओं पर काटती है परिणामतः दोनों कटान बिन्दुओं को मिलाकर 300, 400 मीटर की नतिलम्ब रेखा बनाते हैं।

इन दोनों नतिलम्ब रेखाओं के मध्य क्षैतिज दूरी H, I (जो लम्ब है) के बराबर H' I' रेखा A' B' रेखा के सहारे बना लेते हैं। चित्र में प्रस्तुत मापक के अनुसार 400, 300 मी0 के अन्तराल के बराबर 100 मी0, के मापक के अनुसार दूरी परिवर्तित कर I' बिन्दु के सहारे एक लम्ब रेखा I'J बनाते हैं। I'J को मिलाकर सरल रेखा खींचते हैं इस प्रकार I'H'J का कोण ही यथार्थ नमन कोण है।

ढाल के अनुसार नमन की दिशा निश्चित करते हैं जो कम मान की नतिलम्ब रेखा की ओर होती है। **चित्र 9.2** में नमन पूरब दिशा की ओर है। आधार रेखा A',B' पर यथार्थ नमन कोण के बराबर उसी नत के झुकाव की दिशा में रेखा खींचते हैं। चूँकि नमन पूर्व दिशा में है तो नमन रेखा दायीं ओर जायेगी, जो चित्र **9.2** से स्पष्ट है। यहाँ नमन कोण सभी संस्तर तलों के लिए एक ही माना जाता है क्योंकि सभी संस्तरों का जमाव एक ही भौमिकीय युग में हुआ है। यह संस्तर समविन्यस्त क्रम (Conformaval series) का है। जमाव की दशायें एक समान हैं अतः झुकाव समान है।

आधार रेखा A' B' पर नमन कोण के अनुसार खींची गयी रेखा H' J की सहायता से इसी H' J के समानान्तर सेट स्क्वायर की सहायता से समानान्तर रेखा बनाते हैं। पार्श्व रेखा पर F संस्तर का प्रतिच्छेदन बिन्दु हैं। यह समानान्तर रेखा परिच्छेदिका के F कटान बिन्दु से होकर गुजरेगी।

H'J रेखा के समानान्तर कटान बिन्दु F संस्तर तल के सहारे पार्श्विका (Profile) पर समानान्तर रेखा बनाते हैं जो F संस्तर का निचला E संस्तर का ऊपरी तल है। इसी तरह से पार्श्विका पर विभिन्न संस्तर के कटान बिन्दु के सहारे जैसे E,D,C,B,A से समानान्तर रेखा बनाकर पार्श्विका के आधार को मिलाते हैं। इससे अनुप्रस्थ रेखाओं को प्रदर्शित कर दिया जाता है। संस्तर के प्रदर्शित चिह्नों के अनुसार अनुप्रस्थ काट के प्रत्येक संस्तर को प्रदर्शित कर देते हैं। इस तरह अनुप्रस्थ काट का पूर्ण प्रदर्शन होता है।

9.4 भौमिकीय इतिहास

उच्चावचः– **चित्र 9.2** में पूर्व दिशा की ओर एक नदी प्रवाहित होती हुई दिखायी देती है। नदी घाटी के दोनों पार्श्व का ढाल लगभग समान है। नदी घाटी के उ0प0 में एवं द0प0 में 1000 मीटर की समोच्च रेखा गुजरती है जिससे स्पष्ट होता है कि यहां पर ऊँचाई 1000 मीटर अथवा इससे अधिक है। प्रस्तुत मानचित्र के पूर्वी हिस्से में 200 मीटर की समोच्च रेखा गुजरती है जिससे स्पष्ट होता है कि पूर्वी भाग में नदी घाटी का निचला हिस्सा 200 मी0 अथवा कम ऊँचा है।

संस्तर क्रमः– मानचित्र में A,B,C,D,E,F संस्तर हैं। सभी संस्तर नत हैं। समविन्यासी क्रम के हैं। इनका नमन 25^0 है जो प0 से पू0 दिशा में है। A संस्तर सर्वाधिक प्राचीन एवं A संस्तर सर्वाधिक नवीन है। A और F संस्तर के मध्य ही अन्य संस्तरों की आयु है। नतिलम्ब रेखा के द्वारा E संस्तर की मोटाई ज्ञात की गयी है। E संस्तर की 300 मी0 की नतिलम्ब रेखा निचले संस्तर तल पर है जबकि यही नतिलम्ब रेखा ऊपरी संस्तर तल पर 600 मी0 की नतिलम्ब रेखा बन जाती है। दोनों नतिलम्ब रेखाओं (600-300=300) का अन्तर 300 मी0 है। जो E संस्तर की लम्बवत् मोटाई है। इसी प्रकार अन्य संस्तरों की मोटाई ज्ञात की जाती है।

संरचनाः–

अनुप्रस्थ काट से स्पष्ट है कि संस्तर के झुकाव की दिशा नदी के अनुकूल है। समोच्च रेखाओं की परस्पर दूरी भिन्न है जिससे स्पष्ट होता है कि नदी घाटी का तल असमान है। इससे संस्तर की संरचना में असमानता स्पष्ट होती है।

भौमिकीय **मानचित्र 9.3** में संस्तरों के नमन की दिशा भूमि ढाल के विपरीत है। **मानचित्र संख्या 9.2** में नमन दिशा भूमि ढाल के अनुरूप थी। इस मानचित्र का अनुप्रस्थ काट पूर्व वर्णित विधि से बनाया गया है। प्रस्तुत पार्श्व चित्र बनाने के बाद संस्तर संख्या D जिसके ऊपरी तल पर बनायी गयी 800 मीटर तथा 900 मीटर की नतिलम्ब रेखा के सहयोग से वास्तविक कोण 7^0 की गणना की गयी है। जिसकी दिशा पूरब से पश्चिम है। अनुप्रस्थ काट रेखा NP संस्तरों को सीधे न काटकर कोण बनाते हुए या तिरछे काटती है। इससे वास्तविक कोण की सहायता से बने संस्तर में गलती होने की संभावना बनी रहती है जिसे दूर करने हेतु आभासी नमन की आवश्यकता होती है। आभासी नमन की गणना 5^0 है। अब ST रेखा की क्षैतिज लम्बाई के सन्दर्भ में गणना किया गया कोण आभासी है। इसी के आधार पर अनुप्रस्थ काट के संस्तरों को पूर्ण किया गया है।

9.5 चित्र संख्या 9.3 का अनुप्रस्थ काटः–

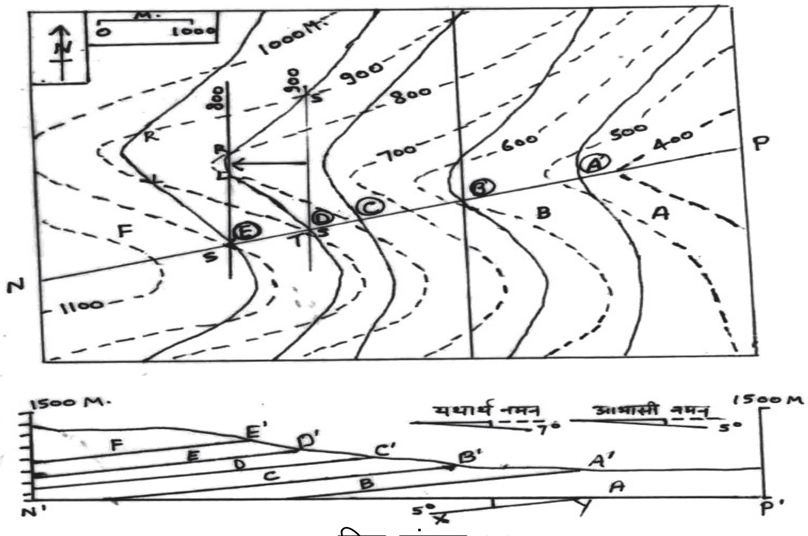

चित्र संख्या 9.3

चित्र संख्या 9.3 नत संस्तर का भौमिकीय मानचित्र है जिसमें A,B,C,D,E,F 6 संस्तर हैं। A संस्तर सर्वाधिक प्राचीन है। अनुप्रस्थ काट बनाने के क्रमशः निम्न चरण हैं–

(1) भौमिकीय मानचित्र 9.3 में NP आधार रेखा खींची गयी है जो सभी संस्तरों को काटती है। इस NP रेखा पर सादा कागज रखकर NP एवं समस्त समोच्च रेखा के बिन्दुओं को कागज पर अंकित कर लेते हैं उसके बाद अनुप्रस्थ काट बनाने हेतु अथवा भौमिकीय मानचित्र का पार्श्व चित्र बनाने हेतु भौमिकीय मानचित्र के नीचे साफ कागज पर बिन्दु N',P' को चिन्हित कर एक आधार रेखा बनाते हैं अब N बिन्दु और P बिन्दु को केन्द्र मानकर भौमिकीय मानचित्र के सर्वोच्च मान की समोच्च रेख को ध्यान में रखकर मापक के अनुसार NP रेखा पर लम्ब खींचते हैं। इन बने लम्बों पर मापनी के अनुसार 400, 500, 600, 700, 800, 900, 1000 समोच्च रेखाओं को प्रदर्शित करने हेतु चिन्ह बना लेते हैं। इस कार्य के उपरान्त पूर्व में चिन्हित समोच्च रेखाओं वाले कागज को N',P' आधार रेखा पर कागज रखकर इन समोच्च रेखाओं के चिन्हित या कटान बिन्दुओं के अनुसार N',P' आधार रेखा पर चिन्ह लगा देते हैं। N',P' रेखा पर विभिन्न समोच्च रेखाओं के कटान बिन्दुओं से बने चिन्ह को केन्द्र मानकर उस केन्द्र से उतने ही मान की समोच्च रेखा को मापनी के अनुसार लम्ब के रूप में ऊपर रेखा खींचते हैं इसी तरह N',P' आधार रेख पर 400–1000 तक की समोच्च रेखाओं के चिन्हित बिन्दुओं को केन्द्र मानकर समोच्च रेखा के मान के बराबर लम्ब बना लेते हैं इन बने लम्बों के ऊपरी बिन्दुओं को मुक्त हस्त अर्थात् हाथ से मिलाकर एक परिच्छेदिका बना लेते हैं।

(2) अब सादे कागज को पुनः भौमिकीय मानचित्र के NP रेखा पर रखकर सभी संस्तरों के संस्तर तल को चिन्हित कर लेते हैं। अब इस चिन्हित कागज को N'P' पर रखकर संस्तर तल के चिन्हित बिन्दुओं के अनुसार चिन्ह लगा लेते हैं। इन चिन्हित बिन्दुओं को केन्द्र मानकर क्रमशः A,B,C,D,E,F सभी संस्तर तलों के चिन्ह पर मापनी की सहायता से पूर्व में बनायी गयी क्रमिक परिच्छेदिका पर कटान चिन्ह बना लेते हैं इस तरह A',B',C',D',E' परिच्छेदिका पर नये बिन्दु प्राप्त हो जाते हैं।

(3) नमन ज्ञात करने हेतु संस्तर के झुकाव के अनुसार किसी भी संस्तर को लेकर नतिलम्ब रेखा का निर्धारण करते हैं। प्रस्तुत चित्र 9.3 में D संस्तर के निचले तल को 800 मीटर, 900 मीटर, की समोच्च रेखा क्रमशः दो–दो बिन्दुओं पर काटती है इन कटान बिन्दुओं S,T,R,L को मिलाकर नतिलम्ब रेखा का निर्धारण कर लेते हैं। ST 900 मी0 की, RL 800 मी0 की नतिलम्ब रेखा है। संस्तर का झुकाव ST से RL की ओर है अब ST एवं RL नतिलम्ब रेखा के सहयोग से बीच में तीर बनाकर मापनी के अनुसार आलेखी या गणितीय विधि से नति ज्ञात करते हैं। इस नति

के अनुसार N'P' आधार रेखा पर एक यथार्थ नति बना लेते हैं, यथार्थ नति ज्ञात करने की विधियाँ अध्याय–1 में विस्तृत वर्णन है।

(4) आधार N,P पर N'P' बनी यथार्थ नति की रेखा XY रेखा के सहयोग से परिच्छेदिका पर A',B',C',D',E' बिन्दुओं को केन्द्र मानते हुए सेट स्क्वायर यंत्र के सहयोग से संस्तर के ढाल के अनुसार समानान्तर रेखा बनाते हैं जैस XY पर एक सेट स्क्वायर रखते हैं और दूसरा A' (परिच्छेदिका पर चिन्हित बिन्दु) बिन्दु पर रखकर दोनों सेट स्क्वायर को समानान्तर व्यवस्थित कर नति के ढाल की दिशा में XY के समानान्तर रेखा खींच लेते हैं। इसी तरह से B',C',D' सभी बिन्दुओं पर सेट स्क्वायर रखकर XY के समानान्तर बना लेते हैं। इस तरह परिच्छेदिका पूर्ण हो जाती है।

9.6 भौमिकीय इतिहासः— विवरण निम्नवत् है—

1. <u>उच्चावचः</u>— भौमिकीय **मानचित्र संख्या 9.3** में एक स्कन्ध एवं एक नदी घाटी प्रदर्शित है। नदी पूर्व दिशा की ओर संस्तर के ढाल के विपरीत प्रवाहित हो रही है। नदी घाटी के दक्षिण दिशा में स्कन्ध है जिसकी ऊँचाई समोच्च रेखा अनुसार 12 मीटर है।

2. संस्तर क्रमः— अनुप्रस्थ काट एवं मानचित्र के विश्लेषण से स्पष्ट है कि अध्ययन क्षेत्र में 6 नत संस्तर है। जिसकी नमन दिशा द0 8^0 प0 है। आभासी नमन 5^0 है। सूची क्रम के अवलोकन से स्पष्ट है कि संस्तरों का निक्षेपण एक युग में हुआ। परिणामतः ये समविन्यासी क्रम का संस्तर है। नवीनतम संस्तर बलुआ पत्थर है। प्राचीनतम संस्तर कांग्लोमरेट है। इसके अलावा अन्य संस्तर शेल, मडस्टोन, चूना पत्थर, ग्रिट आदि संस्तर भी निक्षेपित है। चूना पत्थर संस्तर की मोटाई नतिलम्ब विधि से ज्ञात की गयी है। प्रस्तुत चूना पत्थर संस्तर के निचले संस्तर तल पर 600 मी0 की नतिलम्ब रेखा और ऊपरी संस्तर पर 900 मीटर की नतिलम्ब रेखा बनती है। इसका लम्बवत् अन्तर 300 मी0 है। अतः चूना पत्थर संस्तर की लम्बवत् मोटाई 300 मी0 मापी गयी। इस विधि में अन्य संस्तरों की मोटाई को ज्ञात किया जा सकता है।

3. संरचनाः— नदी घाटी का तल असमान है जो विभिन्न संरचना की चट्टानों की उपस्थिति का द्योतक है। मार्ग में अनेक अवरोधी चट्टानें भी हैं यह विशेषता स्कन्ध के विषम ढाल से भी स्पष्ट होता है।

9.7 वलित संस्तर

पृथ्वी धरातल पर पृथ्वी की आंतरिक शक्तियाँ सदैव उच्चावचीय विषमता उत्पन्न करती है। जब किसी भौगर्भिक हलचल के परिणामस्वरूप अवसादी चट्टानें मुड़ जाती हैं तो इस क्रिया को वलन क्रिया कहते हैं। चट्टानों में बने मोड़ को बलन कहते हैं। चट्टानों में सम्पीडन और उर्ध्वाधर दबाव होता है। उर्ध्वाधर गति व सम्पीडनकारी दबाव के कारण अवसादी चट्टानें मुड़कर अपनति–अभिनति में बदल जाती हैं। अपनति ऊँचा उठा भाग एवं अभिनति नीचे धँसा भाग होता है। ऐसे संस्तर को बलित संस्तर कहते हैं। क्षैतिज दबाव से उत्संवलन से ऊपर उठकर मेहराब जैसे मोड़ को अपनति, अवसंवलन के कारण नीचे की ओर झुके को अभिनति कहते हैं। अभिनति और अपनति को जोड़ने वाले भाग को बलन की भुजा कहते हैं।

- ❖ अभिनति या अपनति के तल या शीर्ष के भाग को 0 कोण के मान को मिलाने वाली रेखा को वलन अक्ष कहते हैं।
- ❖ अक्षीय तल को काटने वाली भूमि सतह से खींची गयी रेखा अक्षीय रेखा होती है।
- ❖ अक्षीय तल एक कल्पित तल है जो वलन की भुजाओं से समान दूरी पर होता है और विभिन्न संस्तर को प्रतिच्छेदित करता है। वलन अनेक प्रकार के होते हैं जिसमें सममित, असममित, प्रतिबलन, समनत वलन, शयान वलन, नापे, अक्षनति वलन आदि महत्वपूर्ण हैं।

9.8 अनुप्रस्थ काट बनाने की विधिः—

भौमिकीय **मानचित्र संख्या 9.4** का अनुप्रस्थ काट एवं पार्श्वचित्र बनाना है। पूर्व भौमिकीय मानचित्रों की तरह वर्णित विधि के अनुसार NP रेखा के सहयोग से उच्चावच का पार्श्वचित्र N' P' पार्श्वचित्र बनाते हैं। पार्श्वचित्र की वक्र रेखा पर अथवा क्रमिक परिच्छेदिका पर सभी संस्तर तलों को पूर्व वर्णित विधि से अंकित करते हैं जैसा

कि प्रस्तुत चित्र में A, B, C, D, E, F, G, H पर बिन्दु संस्तर तल और NP रेखा के इनके कटान बिन्दुओं को दिखाया गया है। भौमिकीय मानचित्र में वलित संस्तर प्रदर्शित है जिसमें नमन कोण और उसकी दिशा को विभिन्न स्थलों पर ज्ञात करना आवश्यक है। चित्र 9.3 में वर्णित विधि द्वारा नतिलम्ब रेखा बनाकर उसे प्रस्तुत मानचित्र पर अंकित किया गया। इस भौमिकीय मानचित्र में एक अभिनति एवं एक अपनति है। बनायी गयी नतिलम्ब रेखा के सहयोग से अपनति की दोनों भुजाओं तथा अभिनति की दोनों भुजाओं के संस्तर तलों के नमन का कोण ज्ञात किया जाता है।

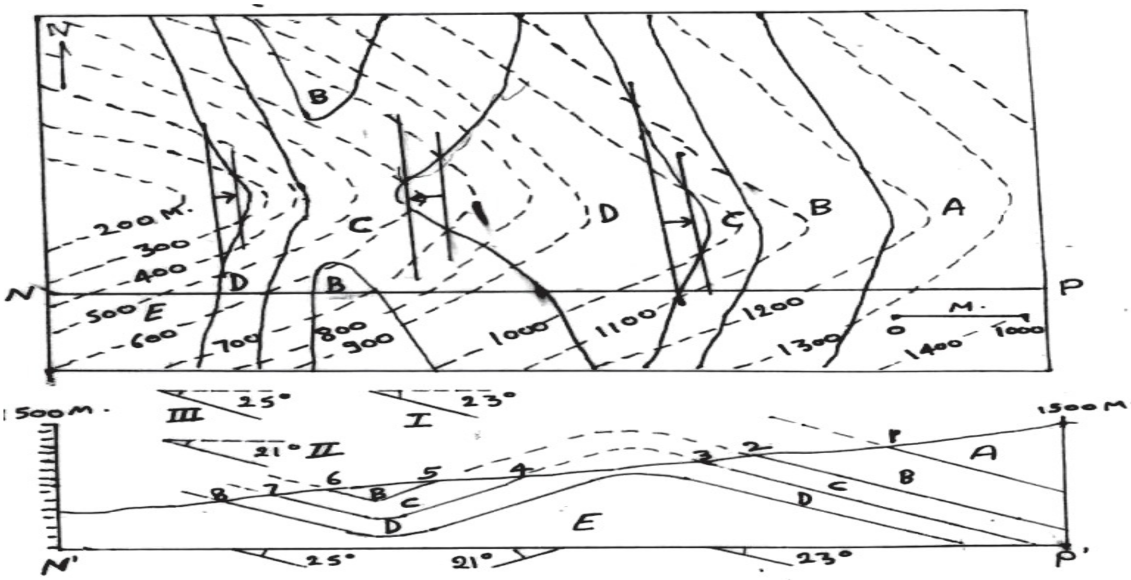

चित्र संख्या 9.4

भौमिकीय **मानचित्र** 9.4 में E संस्तर के ऊपरी तल का नमन ज्ञात किया गया है जो अपनति की दोनों भुजाओं के नमन को व्यक्त करता है। E संस्तर के ऊपरी तल का नमन ज्ञात कर अभिनति के एक भुजा के नमन की प्रकृति को स्पष्ट किया गया है। अभिनति एवं अपनति की एक भुजा उभयनिष्ठ है। भौमिकीय मानचित्र में बनी तीर नमन की दिशा को व्यक्त करती है। भौमिकीय मानचित्र में पूर्व वर्णित विधि से ज्ञात नमन का कोण 23^0, 21^0, 25^0 है। भौमिकीय मानचित्र के संस्तर तल को प्रदर्शित करने हेतु पार्श्वचित्र के 8' के नीचे आधार रेखा N' P' रेखा पर 25^0 मान के आधार पर पूर्व दिशा की ढाल के अनुरूप नमन रेखा बनाते हैं। इस रेखा के सहारे 8, 7, 6, समानान्तर रेखायें बनायी जाती हैं जो E,D,C,B संस्तरों को प्रदर्शित करती है। इसी अनुसार 4' बिन्दु के लम्बवत् N' P' पर लम्ब बनाकर 21^0 के कोण के आधार पर नमन रेखा बनाते हैं जो ढाल के अनुसार पश्चिम दिशा की ओर है। अब 5,4 बिन्दु से समानान्तर रेखा बनाकर D,C,B संस्तरों का निर्माण करते हैं। इसी तरह बिन्दु संख्या F, के सहारे N' P' आधार रेखा पर लम्ब रेखा खींचते हैं और उस कटान बिन्दु पर ढाल के अनुसार 23^0 कोण बनाते हुए दाहिने ओर रेखा को आगे बढ़ाते हैं। जिस रेखा के आधार पर बिन्दु 3,2,1 से 23^0 नमन रेखा के समानान्तर रेखा बनाकर अपनति के पूरब में D,C,B,A संस्तर को पूरा करते हैं। बिन्दु 8,7 से बनायी गयी समानान्तर रेखा D संस्तर के निचले एवं ऊपरी तल को प्रकट करती है जिससे D संस्तर की मोटाई ज्ञात की जाती है इसी मोटाई के आधार पर D संस्तर को अपनति के पूर्वी भुजा में और अभिनति के पूरब का कार्य पूरा करते हैं जिससे E संस्तर सबसे नीचे स्वयं प्रदर्शित होता है। ध्यातव्य है कि अपनति वाले भाग में E संस्तर कहीं भी दृष्टिगत नहीं है लेकिन D संस्तर के नीचे है। E संस्तर का निचला तल स्पष्ट नहीं है अतः गहराई स्पष्ट नहीं हो पाती है। ऐसी स्थिति में E संस्तर की गहराई असीमित मान ली जाती है। प्रस्तुत भौमिकीय मानचित्र के अपनति के अक्षीय क्षेत्र में पुरानी संस्तरों का अनाच्छादन हुआ है। अपरदन की पूर्व स्थिति एवं बाद की स्थिति स्पष्ट हो जाने से अपरदन मात्रा स्पष्ट हो जाती है। यदि अनुप्रस्थ काट बनाने के बाद संस्तरों को काल्पनिक रूप से ऊपर बढ़ाया जाय तो

अपरदन की पूर्व स्थिति की जानकारी हो जाती है और खण्डित रेखायें अनुप्रस्थ काट में इसी स्थिति को प्रदर्शित करती हैं। दोनों के अन्तर के आधार पर संस्तर के अपरदन की मात्रा को अनुमानित किया जा सकता है।

9.9 भौमिकीय इतिहासः–

प्रस्तुत भौमिकीय मानचित्र के मध्यवर्ती भाग में स्थित नदी घाटी उस क्षेत्र के उच्चावचीय स्वरूप की मुख्य विशेषता है। नदी का प्रवाह पश्चिम दिशा की ओर है। प्रस्तुत क्षेत्र की अधिकतम ऊँचाई 300 मी0 है। घाटी की न्यूनतम ऊँचाई 200 मी0 है। नदी के दोनों किनारों एवं तल का ढाल असमान है।

संरचनाः– नदी घाटी के ऊपरी भाग की ओर कम अपरदन कठोर संरचना को इंगित करता है जबकि निचले भाग में अधिक अपरदन संस्तर की मुलायम संरचना को इंगित करता है। अपनति के ऊपरी भाग में स्थित A B C संस्तरों का अपरदन अधिक हुआ है।

संस्तर क्रमः– प्रस्तुत भौमिकीय मानचित्र संख्या 9.1 में 5 संस्तर A, B, C, D, E हैं। इन संस्तरों का वलन हुआ है जिससे संस्तरों में अपनति और अभिनति का विकास हुआ है। सबसे प्राचीन संस्तर E है एवं सबसे नवीन संस्तर A है अन्य संस्तर की आयु इसके मध्य में है।

सामान्यतः संस्तरों का स्वरूप असममित वलन जैसा है क्योंकि इन संस्तरों के बलन की भुजाओं का नमन अलग–अलग है। भौगर्भिक क्रियाओं की सक्रियता से इस तरह के वलन का विकास होता है। वलन क्रिया संस्तर की तुलना में नवीन है क्योंकि पहले संस्तर बनता है बाद में वलन क्रिया प्रभावी होती है। भौमिकीय मानचित्र के पार्श्वकाट से ज्ञात होता है कि संस्तरों की मोटाई में भी अन्तर है।

9.10 अभ्यास के प्रश्न

1. किसी दिये नत संस्तर भौमिकीय मानचित्र की अनुप्रस्थ काट बनाते हुए भौमिकीय इतिहासः की व्याख्या कीजिए

2.. किसी दिये वलित संस्तर भौमिकीय मानचित्र की अनुप्रस्थ काट बनाते हुए भौमिकीय इतिहासः की व्याख्या कीजिए

9.11 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. सिंह, संजय कुमार, भौमिकीय मानचित्रों काविश्लेषण 2019, वसुन्धरा प्रकाशन, गोरखपुर

2 .शुक्ल, एस0 एम0 एवं एस0 पी0 सहाय, सांख्यिकी के सिद्धान्त, 2004, साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा

3. चौहान, पी0आर0, प्रयोगात्मक भूगोल, 2013, वसुन्धरा प्रकाशन, गोरखपुर

4. मोहम्मद, हारून, प्रयोगात्मक भूगोल, 2010, मिश्रा ट्रेडिंग कारपोरेशन, मैदागिन, वाराणसी

इकाई–10 (Unit- 10)
भूगोल में सांख्यिकी, भूगोल में सांख्यिकी की उपयोगिता एवं आंकड़ों के प्रकार
(Statistics in Geography, Utilization of Statistics in Geography and Types of Data)

पाठ संरचना (Structure of Lesson)

10.1 उद्देश्य (Objectives)
10.2 प्रस्तावना (Introduction)
10.3 सांख्यिकी का अर्थ एवं परिभाषा (Meaning and Definition of Statistics)
10.4 भूगोल में सांख्यिकी (Objectives)
10.5 भूगोल में सांख्यिकीय की उपयोगिता (Utilization of Statistics in Geography)
10.6 सांख्यकी के महत्व एवं कार्य (Importance of Statistics and Functions)
10.7 सांख्यिकीय की अविश्वसनीयता या अविश्वास (Distrust in Statistics)
10.8 आंकड़ों के प्रकार (Types of Data)
10.9 आंकड़ों को एकत्र करने की विधियां (Methods of Collecting data)
10.10 प्राथमिक आंकड़ों को एकत्र करने की विधियां (Methods of collecting primary data)
10.11 द्वितीयक आंकड़ों को एकत्र करने की विधिया (Methods of collecting primary data)
10.12 द्वितीयक आंकड़ों के प्रयोग में सावधानियां (Precautions in the use of Secondary Data)
10.13 निष्कर्ष (Conclusion)
10.14 मॉडल प्रश्न (Model Questions)
10.15 संदर्भ पुस्तकें (Referenced Books)

10.1 उद्देश्य (Objectives)–

1. प्रस्तुत अध्ययन का उद्देश्य छात्रों को सांख्यकीय प्रविधिकी से अवगत कराना है।
2. आंकड़ों के सारणीयन, वर्गीकरण एवं आलेखीय प्रदर्शन का भी ज्ञान कराना है।
3. सांख्यिकीय में प्रयुक्त होने वाली नूतन प्रविधिकी का ज्ञान छात्रों को कराना है।
4. सामाजिक विषयों के अध्ययन में सांख्यिकीय के महत्व से भी छात्रों को परिचित कराना है।

10.2 प्रस्तावना (Introduction)

वर्तमान के संदर्भ में भूगोल एवं सांख्यिकी एक दूसरे के पूरक विषय के रूप में स्थापित होते जा रहे हैं। जैसे–जैसे भूगोल विषय की प्रासंगिकता में वृद्धि हो रही है वैसे वैसे इस विषय में सांख्यिकी के प्रयोग में भी अभिवृद्धि हो रही है। किसी विषय वस्तु के अध्ययन हेतु आंकड़ों के संकलन, आगणन, सारणीयन, विवेचन एवं इन अध्ययनों पर आधारित निष्कर्ष आदि सभी विन्दुओं पर सांख्यिकी का प्रभाव स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर हो रहा है। वर्तमान में मानविकी के भी सभी विषयों की अध्ययन विधियों में परिवर्तन हुआ है एवं इन विषयों में वैज्ञानिकता के समावेश हेतु व्यापक बदलाव किये गये हैं। नयी शिक्षा नीति–2020 के समावेश के उपरान्त तो यह और अधिक परिवर्तित एवं वैज्ञानिक हो गया है। इन तथ्यों को ध्यान में रखते हुये उन्नीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में ही भूगोलविदों के द्वारा भूगोल विषय को और अधिक वैज्ञानिक बनाने हेतु सांख्यिकीय विधियों का समावेश किया गया। इसी सदी में साख्यिकीय एवं गणित का उपयोग भूगोल में किया जाने लगा। बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में भौगोलिक समस्याओं को हल करने एवं उनके विश्लेषण में नियमित रूप से साख्यिकीय विधियों का उपयोग होने लगा जिसे अमेरिका में मात्रात्मक क्रान्ति (Quantitative Revolution) नाम दिया गया। धीरे धीरे सांख्यिकीय भूगोल एक स्वतंत्र शाखा के रूप में पढ़ाया जाने लगा।

सांख्यिकीय तकनीकों का व्यवहार इतना व्यापक है तथा हमारे जीवन में एवं हमारी आदतों में सांख्यकीय का प्रभाव इतना अधिक है कि इसके महत्व की उपेक्षा नहीं की जा सकती है। वास्तव में सांख्यकीय अनुसंधान का युग आ गया है और पर्याप्त सीमा तक आधुनिक सभ्यता ''सांख्यकीय सभ्यता'' हो गयी है और समंकों के विश्लेषण के अभाव में आधुनिक जीवन की मशीनरी स्थिर हो जायेगी। एम0 जे0 मोरोनी लिखते हैं कि, ''तुम कुछ भी क्यों न हो, यदि तुम्हारा कार्य समंकों के निर्वाचन से सम्बधित है तो तुम समंकों के बिना कोई भी कार्य नहीं कर सकते हो।'' माध्य, अपकिरण, सहसम्बन्ध, निदर्शन, आलेख और सांख्यकीय विधियों को जाने बिना मनोविज्ञान, अर्थशास्त्र, वित्त प्रबन्धन, सामाजिक विज्ञान तथा भौतिक विज्ञानों को अत्यन्त प्रारम्भिक स्तर पर भी समझना असम्भव है। यही नहीं सांख्यकीय विधियों का प्रयोग उन व्यक्तियों द्वारा भी किया जाता है जिन्हें सांख्यकीय विज्ञान का ज्ञान भी नहीं होता हैं। ऐसी स्थिति में इनके प्रयोग में अत्यन्त सावधानी बरतना पड़ता है।

सामान्य व्यक्तियों के प्रतिदिन के निर्णयों में, जाने अनजाने में, सांख्यकीय विधियों का प्रयोग किया जाता है। जब कोई व्यक्ति रेडियों अथवा मशीन खरीदना चाहता है तो वह कई कम्पनियों की मूल्य सूची का अध्ययन करता है। इस प्रकार के अध्ययन का मुख्य उद्देश्य मुल्यों के विस्तार का पता लगाना है जिसके आधार पर वह सही वस्तु का क्रय करता है। जब एक किसान किसी एक निश्चित मौसम में एक निश्चित तापमान, निश्चित आर्द्रता, निश्चित वर्षा की आशा प्रकृति से करता है जिससे उसकी फसल अच्छी हो सके। इससे यह ज्ञात होता है कि किसान को वर्षा की मात्रा तथा उत्पादन के सहसम्बन्ध का ज्ञान है। श्रमिक जिसने निर्देशांक के बारे में सुना भी न हो उसे मूल्यों में वृद्धि एवं ह्रास का औसत ज्ञान हो जाता है। इस प्रकार किसी भी अध्ययन में सांख्यकीय विधियों का प्रयोग विषय को और अधिक वैज्ञानिक एवं सुगम बना देता है जिसके आधार पर प्राप्त निष्कर्ष सत्यता के अत्यत निकट एवं वैज्ञानिक समावेष से युक्त होता है।

10.3. सांख्यिकी का अर्थ एवं परिभाषा (Meaning and Definition of Statistics)

जनसंख्या, कृषि, उत्पादों, उत्पादन, मौसम आदि से सम्बन्धित आंकड़ों को इकट्ठा करने की विधि प्राचीन समय से ही प्रचलित है। कालान्तर में जब इन आंकड़ों के वर्गीकरण, सारणीयन, आगणन एवं वर्गीकरण की आवश्यकता महसूस हुई तो इसमें सांख्यकीय विधियों का सूत्रपात हुआ जिसके आधार पर इसे और अधिक वैज्ञानिक बनाने का प्रयास किया गया जिसके आधार पर निष्कर्ष को प्राप्त किया जा सके। इसके लिये इसमें विभिन्न सांख्यकीय विधियों का अनुप्रयोग सुनिश्चित किया गया। वर्तमान भौगोलक अध्ययनों के संदर्भ में किसी भी प्रदेश या भू क्षेत्र का अध्ययन तब तक पूर्ण नहीं माना जाता जब तक उन अध्ययनों में सांख्यकीय विधियों का प्रयोग नहीं किया जाय। उदाहरण के लिये वर्तमान में जनसंख्या, कृषि एवं आर्थिक भूगोल का अध्ययन भूगोल विषय का मुख्य विषयवस्तु है परन्तु इन अध्ययनों को तब तक पूर्ण नहीं माना जा सकता जबकि इनमें सांख्यकीय विधियों का प्रयोग नहीं किया जाय। किसी जनसंख्या सम्बन्धी अध्ययन में जनसंख्या वितरण, जनसंख्या वृद्धि, जनसंख्या घनत्व, साक्षरता, लिंगानुपात, भाषा, धर्म, पारिवारिक संरचना, जीवन स्तर का अध्ययन एक आवश्यक बिन्दु है जिसके माध्यम से हम जनसंख्या सम्बन्धी अध्ययन में निष्कर्ष को प्राप्त कर पाते हैं परन्तु इन बिन्दुओं के वैज्ञानिक अध्ययन हेतु सांख्यकीय विधियों का प्रयोग अति आवश्यक है। इसी प्रकार आर्थिक भूगोल में भी मानव की आर्थिक गतिविधियों का अध्ययन किया जाता है जिसमें कृषि, रोजगार, उद्योग धन्धे, परिवहन आदि बिन्दु मुख्यतया सम्मिलित किये जाते हैं। उपरोक्त विन्दुओं के अध्ययन, विश्लेषण एवं निकर्ष को प्राप्त करने हेतु सांख्यकीय विधियों का प्रयोग अति आवश्यक एवं अपरिहार्य है जिसके माध्यम से इन अध्ययनों में वैज्ञानिकता का सूत्रपात किया जा सकता है। इन्हीं तथ्यों को ध्यान में रखते हुये उन्नीसवीं सदी में भूगोल विषय की इन शाखाओं में सांख्यकीय विधियों के प्रयोग का सूत्रपात किया गया।

डॉ0 बाउले के अनुसार ''सांख्यिकी गणना का विज्ञान है।''

प्रोफेसर बॉडिंगटन के अनुसार ''सांख्यिकी अनुमानों और संभाविताओं का विज्ञान है।''

प्रोफेसर किंग के अनुसार ''गणना अथवा अनुमानों के संग्रह के विश्लेषण के आधार पर प्राप्त परिणामों से सामुहिक, प्राकृतिक अथवा सामाजिक घटनाओं पर निर्णय करने की रीति को सांख्यिकीय विज्ञान कहते हैं।''

उपरोक्त विद्वानों द्वारा दी गयी परिभाषाओं के आलोक में स्पष्ट मूल तत्वों जैसे सांख्यिकी की प्रकृति, विषय सामग्री, उद्देश्य, एवं सांख्यिकीय रीतियों का उपयुक्त परिभाषा में समावेश किया जा सकता है। सांख्यिकी की एक उपयुक्त परिभाषा निम्नवत् हो सकती है–

''सांख्यिकीय एक विज्ञान और कला है जो सामाजिक, आर्थिक, प्राकृतिक व अन्य समस्याओं से सम्बन्धित समंकों के संग्रहण, वर्गीकरण, सारणीयन, प्रस्तुतीकरण, सम्बन्ध स्थापन, निर्वचन और पूर्वानुमान से सम्बन्ध रखती है ताकि निर्धारित उद्देश्य की पूर्ति हो सके।'' इस प्रकार हम यह कह सकते हैं कि सांख्यकीय अध्ययन की विधियां अनुसंधान के उद्देश्य के अनुसार हों, अर्थात सांख्यकीय इकाई को परिभाषित करना अनुसंधान के उद्देश्य पर निर्भर करता है। क्योंकि अनुसंधान का उद्देश्य एवं अनुसंधान इकाई एक दूसरे के व्युाकृत हैं। उद्देश्य की उपेक्षा करके सांख्यकीय इकाई को परिभाषित नहीं किया जा सकता है तथा

सांख्यकीय इकाई की स्पष्ट परिभाषा के बिना उद्देश्य की रूपरेखा नहीं बनायी जा सकती है। सांख्यकीय इकाई की परिभाषा सरल, स्पष्ट तथा आत्म परिचयात्मक होनी चाहिये। अनुसंधान कार्य में अनेक गणकों की सेवायें ली जाती हैं। ऐसी दशा में यह आवश्यक हो जाता है कि प्रत्येक गणक सांख्यकीय इकाई से एक ही आशय समझे। सांख्यकीय इकाई निश्चित तथा विशिष्ट होनी चाहिये अन्यथा ऐसे भी समंकों का संग्रह हो जायेगा जिनका अनुसंधान के उद्देश्य से कोई सम्बन्ध ही न हो तथा सम्बन्धित समंक संकलन में छूट जायेंगे।

इस प्रकार हम यह कह सकते हैं कि सांख्यिकीय सामाजिक एवं वैज्ञानिक अध्ययन की एक ऐसी विधा है जिसके माध्यम से हम किसी भी विषय का वैज्ञानिक अध्ययन कर सकते हैं। यदि इसके माध्यम से समंक संचयन, सारणीयन, गणना, विश्लेषण, व्याख्या एवं निष्कर्ष में सावधानी बरती जाय तो निश्चित रूप से किसी भी विषय के अध्ययन में इनसे प्राप्त निष्कर्ष वैज्ञानिक एवं सत्यता के अत्यन्त ही निकट होंगे। इनके अध्ययन के आधार पर प्रतिपादित सिद्धान्त भी अध्ययन की सार्वभौमिकता को प्रमाणित करेंगे साथ ही विषय के महत्व में भी अभिवृद्धि करेंगे।

10.4. भूगोल में सांख्यिकी (Statistics in Geography)

प्रारम्भ में भूगोल विषय में सांख्यकीय विधियों का प्रयोग एक निश्चित सीमा तक ही होता था परन्तु कालान्तर में नयी शाखाओं के विकास एवं अध्ययन के उपरान्त सांख्यकीय विधियों के समावेश में और अधिक तीव्रता आयी। जनसंख्या भूगोल, कृषि भूगोल, आर्थिक भूगोल, विपणन भूगोल आदि भूगोल की ऐसी शाखायें हैं जिनमें सांख्यकीय विधियों के समावेश के बिना वैज्ञानिक अध्ययन सम्भव ही नहीं है। वर्तमान में भूगोल विषय में जितनी भी नयी शाखाओं का सूत्रपात हुआ है उनमें सांख्यकीय अध्ययनों का चलन और तीव्र गति से बढ़ा है। जैसे जैसे भूगोल विषय में वैज्ञानिकता का समावेश होता जा रहा है वैसे वैसे इनमें सांख्यकीय विधियों का प्रयोग भी बढ़ रहा है जिसके कारण विषय और अधिक वैज्ञानिक होता जा रहा है जिसके परिणाम स्वरूप भूगोल में सांख्यिकीय का प्रयोग निरन्तर बढ़ रहा है।

बदलते सामाजिक परिवेश में कल्याणपरक भूगोल की संकल्पना को फलीभूत करने हेतु भूगोल विषय में परिवर्तन का सूत्रपात हुआ है। इस परिवर्तन को फलीभूत करने हेतु नवीनतम अध्ययन विधियों का सूत्रपात किया गया है जिसमें सांख्यकीय विधियों का समावेश भी एक बिन्दु है जिसके माध्यम से विविध नये आयामों का सूत्रपात हुआ है जो किसी क्षेत्र विशेष एवं बिन्दु विशेष के अध्ययन में सहायक सिद्ध हो रहा है। भूगोल में सांख्यिकीय आंकड़ों का सारणीयन एवं विश्लेषण किया जाता है जिसके माध्यम से ऐसे परिणाम प्राप्त होते हैं जिनसे विभिन्न दशाओं के कार्य कारण सम्बन्ध को स्पष्ट करके एक सामान्य निष्कर्ष को प्राप्त किया जा सके। सांख्यिकीय आंकड़ों एवं समंकों का वैज्ञानिक विधि से विश्लेषण ही इसका मूल आधार है।

10.5. भूगोल में सांख्यिकीय की उपयोगिता (Utilization of Statistics in Geography)–

सांख्यिकीय वह प्रविधि या कार्यपद्धति है जिसको संख्यात्मक तथ्यों के संकलन या संग्रह, प्रस्तुतीकरण तथा विश्लेषण करने के लिये प्रयोग में लाया जाता है। सांख्यकीय प्रविधियों के प्रयोग से भूगोल विषय में ऐसे परिणाम प्राप्त किये जाते हैं जिनके माध्यम से विभिन्न दशाओं के बीच कार्य कारण सम्बन्ध को स्पष्ट करके

निष्कर्ष को प्राप्त किया जाता है। भूगोल की कुछ शाखायें ऐसी हैं जिनके अध्ययन हेतु आंकड़ों के संग्रहण, आगणन, सारणीयन, मानचित्रण अति आवश्क होता है जिनके माध्यम से विषय वस्तु के निष्कर्ष को प्राप्त किया जा सकता है। भूगोल के अध्ययन में सांख्यिकीय विधियों के प्रयोग को वैज्ञानिक आधार के रूप में देखा जाता है। यह भौगोलिक अध्ययन हेतु प्राप्त आंकड़ों के समूह को कुछ संख्यात्मक मापों के रूप में संक्षिप्त करने में सहायता करता है जिसके माध्यम से हम विषय वस्तु के अध्ययन में और अधिक वैज्ञानिक एवं तथ्य परक बना पाते हैं। भौगोलिक अध्ययनों में आंकड़ों के संकलन, प्रदर्शन, वर्गीकरण, आगणन आदि पर विशेष रूप से ध्यान दिया जाता है, सांख्यिकीय विधियां इनमें बहुत अधिक योगदान देती हैं।

भूगोल में सांख्यिकीय की उपयोगिता को हम निम्नलिखित बिन्दुओं के माध्यम से स्पष्ट कर सकते हैं।—

1. भूगोल विषय में सांख्यिकीय का महत्वपूर्ण कार्य विषय से सम्बन्धित तथ्यों को संख्या रूप में प्रस्तुत करना होता है। इसी माध्यम से समस्याओं को हम अधिक सरल रूप में समझ सकते हैं एवं इनका निदान भी प्रस्तुत कर सकते हैं।

2. सामान्यतः भूगोल की विभिन्न शाखाओं के अध्ययनों में वर्णनात्मक (Descriptive), विवरण के साथ साथ विभिन्न तथ्यों के संख्यात्मक पहलूओं अर्थात समंकों को भी अध्ययन में सम्मिलित किया जाता है, जैसे ऊँचाई, दूरी, तापमान, आर्द्रता, वर्षा, वायुदाब, भूमि उपयोग, कृषि उत्पादन, सिंचाई के साधन एवं आर्थिक विकास, जनसंख्या वृद्धि, वितरण एवं क्षेत्रीय संसाधनों की उपलब्धता, साक्षरता, प्रतिव्यक्ति आय—व्यय, जनसंख्या भार एवं संसाधनों का तुलनात्मक अध्ययन एवं प्रादेशिक नियोजन आदि अनेक भौगोलिक तथ्यों के अध्ययनों में सम्बन्धित संख्यात्मक पहलुओं (समंकों) के साथ ही भौगोलिक अध्ययनों को सुव्यवस्थित रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है जिसके लिये सांख्यिकीय अति आवश्यक है।

3. वर्तमान समय में भौगोलिक सूचना तन्त्र, उपग्रहों एवं दूरस्थ संवेदन तकनीक से क्षेत्रीय सूचनायें एवं सम्बन्धित समंक संकलित करते हुये एवं कम्प्यूटर के माध्यम से इनका विश्लेषण करते हुये प्रादेशिक संसाधन विकास एवं नियोजन में सहयोग लिया जा रहा है।

4. सांख्यकीय भूगोल या भूगोल में मात्रात्मक विधियां नामक प्रश्न पत्र पूर्ण रूप से भूगोल में सांख्यकीय विधियों के उपयोग पर ही आधारित है जिसके माध्यम से हम आंकड़ों का अध्ययन, विश्लेषण, मानचित्रण एवं तत्पश्चात निष्कर्ष को प्राप्त करते हैं।

5. वर्तमान में अधिकांश भौगोलिक शोध कार्यों में किसी न किसी रूप में सांख्यकीय विधियों का प्रयोग किया जा रहा है एवं इन तकनीकों के प्रयोग से प्राप्त निष्कर्ष लगभग सत्यता पर आधारित होते हैं। किसी क्षेत्र के विकास हेतु किये जा रहे नियोजन में भी में इनसे बहुत मदद मिलती है। आंकड़ों के विश्लेषण पर आधारित नियोजन अधिक सटीक एवं वैज्ञानिक होता है, जिसके आधार पर किसी क्षेत्र के विकास हेतु रूप रेखा प्रस्तुत की जा सकती है।

उपरोक्त विन्दुओं को ध्यान में रखते हुये भूगोल में सांख्यकीय अध्ययन से सम्बन्धित वर्णनात्मक सांख्यिकीय एवं निदर्शन या अनुमानात्मक सांख्यिकीय का विशेष प्रयोग किया जा रहा है जिसके माध्यम से इस विषय में नवाचार का सूत्रपात हुआ है एवं इसमें नवीनतम तकनीक का सूत्रपात हुआ है साथ ही भूगोल विषय के अध्ययन में भी वैज्ञानिकता का समावेश हुआ है एवं दिन प्रति दिन यह विषय और अधिक वैज्ञानिक होता जा रहा है।

10.6. सांख्यिकीय के महत्व एवं कार्य (Importance of Statistics and Functions)

सांख्यिकीय के महत्व का अध्ययन हम निम्नलिखित शीर्षकों के अन्तर्गत कर सकते हैं—

(क) अर्थशास्त्र में सांख्यिकीय का महत्व

(ख) आर्थिक नियोजन में सांख्यिकीय

(ग) प्रशासन में महत्व

(घ) व्यवसाय एवं प्रबन्धन में महत्व

(च) कृषि में महत्व
(छ) शिक्षा में महत्व
(ज) अनुसंधान में महत्व
(झ) सामाजिक अध्ययनों में महत्व
(य) व्यक्तिगत अध्ययनों में महत्व
(र) राष्ट्रीय एवं अन्तराष्ट्रीय अध्ययनों हेतु महत्व
सांख्यिकीय के प्रमुख कार्य निम्नलिखित हैं–
(क) जटिल तथ्यों को सरल बनाना
(ख) तथ्यों को संख्यात्मक रूप में प्रगट करना
(ग) तथ्यों को निश्चितता प्रदान करना
(घ) तथ्यों की तुलना करना
(च) तथ्यों के बीच सम्बन्ध का अध्ययन करना
(छ) व्यक्तिगत ज्ञान एवं अनुभव में वृद्धि करना
(ज) नियमों एवं सिद्धान्तों की सत्यता की जांच
(झ) नीति निर्धारण में सहायता प्रदान करना
(य) प्रभावों को मापना
(र) आयोजन तथा भविष्यवाणी करना
(ल) विस्तार का अनुभव करने की योग्यता प्रदान करना

इस प्रकार उपरोक्त विन्दुओं के माध्यम से सांख्यिकीय के महत्व एवं कार्य का अध्ययन किया जा सकता है। भारत जैसे देश में जहाँ विगत वर्षों में सामाजिक अध्ययनों एवं वैज्ञानिक अध्ययनों के प्रति समाज में और अधिक जागरूकता आयी है वहाँ इस प्रकार के अध्ययन और अधिक महत्वपूर्ण हो जाते हैं।

10.7. सांख्यिकीय की अविश्वसनीयता या अविश्वास (Distrust in Statistics)

साख्यकी का उपयोग जैसे–जैसे सार्वभौम होता जा रहा है उसी गति से सांख्यिकीय के प्रति अविश्वास भी पैदा होता जा रहा है एवं यह धारणा उत्पन्न होने लगी है कि सांख्यिकीय में कुछ भी सिद्ध नहीं किया जा सकता है। सांख्यिकीय पर अविश्वास के सम्बन्ध में निम्नलिखित बातें कही जाती हैं–

1. सांख्यिकीय कुछ भी सिद्ध नहीं करती।
2. सांख्यिकीय पूरी तरह से कल्पना पर आधारित है।
3. इसके माध्यम से किये गये अध्ययन प्रमाणित नहीं होते हैं।
4. सामाजिक एवं वैज्ञानिक अध्ययनों में इसके द्वारा प्राप्त परिणाम प्रमाणिक नहीं होते हैं।
5. यह वैज्ञानिक अध्ययनों हेतु पूर्णतया अनुपयुक्त है।

सांख्यिकीय पर अविश्वास के निम्नवत कारण हैं।

1. समंकों का अनुचित विश्वास
2. जनसामान्य की अनभिज्ञता
3. सांख्यकीय सीमाओं की उपेक्षा
4. समंकों की प्रमाणिकता
5. सतर्कता का अभाव
6. पक्षपातपूर्ण व्यवहार के साथ ही संमंकों का दुरूपयोग

अविश्वास को दूर करने के उपाय–

समंकों के प्रति बढ़ते अविश्वास को रोकने तथा समाप्त करने के लिये निम्नलिखित सावधानियां अपेक्षित हैं–

1. समंकों का बुद्धिमत्तापूर्ण प्रयोग–

समंकों का प्रयोग उसी व्यक्ति द्वारा किया जाना चाहिए, जो सम्बन्धित विषय का ज्ञान रखता हो तथा आंकड़ों के प्रयोग की तकनीक से अवगत हो। अन्यथा इसका वैज्ञानिक प्रयोग असम्भव हो जायेगा तथा आंकड़ों सार्थक प्रयोग नहीं हो पायेगा जिससे अध्ययन का परिणाम भी प्रभावित हो जायेगा।

2. आत्म संयम–

सांख्यकीय अध्ययन एक प्रकार की कला है। अतः इस कला का प्रयोग करने वाले व्यक्ति को भी अपने कार्य में निपुण एवं कुशल होना चाहिये। अध्ययनकर्त्ता को आत्म संयम का पालन करना चाहिये अर्थात किसी भी परिस्थिति में किसी पक्ष विशेष के प्रति झुकाव नहीं होना चाहिये। आत्म संयम के अभाव में अध्ययन प्रभावित हो सकता है जिसके कारण एक पक्षीय अथवा अभिनत निष्कर्ष प्राप्त होने का भय बना रहता है।

3. पक्षपात रहित–

अनुसंधानकर्त्ता को पक्षपात रहित होना चाहिये। इसे केवल विशेषज्ञों द्वारा ही किया जाना चाहिये। इसके अभाव में अध्ययन का परिणाम प्रभावित हो सकता है जिसकी व्याख्या एवं निष्कर्ष भी पक्षपातपूर्ण हो जायेगा। विशेषज्ञों द्वारा आंकड़ों का प्रयोग सावधानी पूर्वक किये जाने से गलतियों की सम्भावना अत्यन्त कम हो जायेगी तथा अध्ययन से प्राप्त निष्कर्ष सत्यता पर आधारित होगा।

4. सांख्यकीय सीमाओं की ओर ध्यान–

सांख्यकीय विधियों का प्रयोग करते समय सांख्यकीय सीमाओं का ध्यान रखा जाना चाहिये। इसके अभाव में अध्ययन का परिणाम प्रभावित हो सकता है। विद्वानों द्वारा जो सांख्यकीय विधियां निर्धारित हैं उनके प्रयोग से अध्ययन के उपरान्त प्राप्त निष्कर्ष सही एवं सटीक होगा।

5. अन्य सुझाव–

(क) समंकों को तथा सांख्यकीय रीतियों को वैज्ञानिक ढ़ंग से प्रशिक्षित व्यक्ति द्वारा ही प्रयोग किया जाना चाहिए।

(ख) समंकों के संकलन के श्रोत विशाल, वृहद एवं संतुलित होने चाहिए।

(ग) अध्ययन हेतु विशेषज्ञों द्वारा निधारित विधियों का ही प्रयोग किया जाना चाहिए।

(घ) अध्ययन की विधियां एवं अध्ययनकर्त्ता पक्षपातपूर्ण न होकर वैज्ञानिक होना चाहिए।

10.8. आंकड़ों के प्रकार (Types of data)–

आंकड़ों के संग्रहण के उपरान्त इसके विश्लेषण हेतु इसे दो भागों में विभक्त किया जाता हैं–

(क) प्राथमिक आंकड़े (Primary data), एवं (ख) द्वितीयक आंकड़े (Secondary data)

(क) प्राथमिक आंकड़े (Primary data)–

प्राथमिक आंकड़े वें आंकड़े हैं जिन्हें अनुसंधान करने वाला अपने प्रयोग में लाने के लिये पहली बार इकट्ठा करता है। प्रथम बार संकलित होने के कारण इन्ह प्राथमिक आंकड़ें कहा जाता है। होरेस सेक्राइस्ट के कथनानुसार ''प्राथमिक आंकड़ों से यह आशय है कि वे मौलिक हैं अर्थात जिनका समूहीकरण बहुत ही कम या नहीं हुआ है, घटनाओं का अंकन या गणना उसी प्रकार किया गया है जैसा पाया गया है। मुख्य रूप से ये कच्चे पदार्थ होते हैं।'' जैसे कोई व्यक्ति ग्रामीण ऋण के बारे में प्रथम बार नये सिरे से आंकड़े एकत्र करता है तो संकलित सामग्री उसके लिये प्राथमिक कहलायेगी। इस प्रकार के आंकड़ों को शोधकर्त्ता या अध्ययनकर्त्ता के द्वारा ही एकत्र किया जाता है।

प्राथमिक आंकड़ों की कुछ प्रमुख विशेषतायें निम्नवत् हैं–

1. प्राथमिक आंकड़े मौलिक होते हैं। अर्थात मौलिक रूप से प्रथम बार एकत्रित किये जाते हैं।
2. प्राथमिक आंकड़े कच्चे माल की भांति होते हैं।
3. प्राथमिक आंकड़े अनुसंधान के उद्देश्य के सर्वथा अनुकूल होते हैं। इन्हें बिना किसी संशोधन के काम में लिया जा सकता है।

4. प्राथमिक आंकड़ों के संकलन में अधिक समय, परिश्रम, व धन की आवश्यकता होती है।
5. प्राथमिक आंकड़ों के प्रयोग में सतर्कता की आवश्यकता नहीं होती है।

(ख) द्वितीयक आंकड़े (Secondary data)–

ये वे आंकड़े हैं जिनका संकलन पहले से किसी अन्य व्यक्ति या संस्था द्वारा किया जा चुका है और अनुसंधानकर्त्ता उनको ही अपने प्रयोग में लाता है। यहाँ वह संग्रहण नहीं करता वरन किसी अन्य उद्देश्य के लिये संकलित सामग्री को ही प्रयोग में लाता है। उदाहरण के लिये यदि कोई व्यक्ति सरकार द्वारा प्रकाशित विदेशी आयात निर्यात के समंकों का प्रयोग भुगतान–संतुलन ज्ञात करने के लिये करता है तो यहाँ आयात–निर्यात के समंक उसके लिये द्वितीयक आंकड़े होंगे। इस प्रकार की सामग्री अपने मौलिक रूप में नहीं होती है, वरन सारणी, प्रतिशत, आदि में व्यक्त होती है। ब्लेयर के शब्दों में ''द्वितीयक समंक वे हैं जो पहले से अस्तित्व में हैं और जो वर्तमान प्रश्नों के उत्तर में नहीं, बल्कि किसी दुसरे उद्देश्य के लिये एकत्रित किये गये हैं।''

द्वितीयक आंकड़ों की कुछ प्रमुख विशेषतायें निम्नवत् हैं–

1. द्वितीयक आंकड़े मौलिक नहीं होते हैं। अर्थात वह पहले से विद्यमान होते हैं और अनुसंधानकर्त्ता केवल उनका उपयोग करता है।
2. द्वितीयक आंकड़े निर्मित माल की भांति होते हैं क्योंकि वे सांख्यकीय यंत्र में से यह बार निकल चुके होते हैं।
3. द्वितीयक आंकड़े किसी दूसरे उद्देश्य से एकत्र किये जाने के कारण वर्तमान उद्देश्य के अनुकूल नहीं होते हैं। इन्हें काम में लेने से पहले आवश्यक संशोधन करना पड़ता है।
4. द्वितीयक आंकड़े अधिकतर पत्र, पत्रिकाओं, सरकारी तथा गैर–सरकारी प्रकाशनों, आदि से सरलता से उलपब्ध हो जाते हैं।
5. द्वितीयक आंकड़ों के प्रयोग में सर्तकता की आवश्यकता होती है।

यद्यपि प्राथमिक एवं द्वितीयक आंकड़ों में उपयुक्त विवरण के अनुसार अन्तर किया जा सकता है परन्तु उनके बीच पाये जाने वाले अन्तर मुख्य रूप से केवल अवस्था का है। एक ही प्रकार के आंकड़े एक व्यक्ति के लिये प्राथमिक हैं तो दूसरे के लिये द्वितीयक आंकड़े बन जाते हैं। सेक्राइस्ट के शब्दों में ''जनगणना के आंकड़े सरकार के लिये प्राथमिक हैं परन्तु अन्य प्रयोगकर्त्ताओं के लिये द्वितीयक आंकड़े होंगे। प्राथमिक एवं द्वितीयक आंकड़ों में भेद केवल अंशों का है जो आंकड़े एक पक्ष के लिये द्वितीयक हैं वे ही अन्य पक्ष के लिये प्राथमिक होते हैं।'' उदाहरण के लिये भारतीय जनगणना के समंक सरकार के लिये जहाँ प्राथमिक हैं वहाँ अन्य प्रयोगकर्त्ताओं के लिये द्वितीयक होंगे।

10.9 आंकड़ों को एकत्र करने की विधियां (Methods of collecting data)

10.10 प्राथमिक आंकड़ों को एकत्र करने की विधियां (Methods of collecting primary data)– प्राथमिक आंकड़ों को एकत्र करने की विधियां (चाहे संगणना अनुसंधान हो या निदर्शन अनुसंधान हो) निम्नलिखित है–

1. प्रत्यक्ष व्यक्तिगत अनुसंधान (Direct personal investigation)
2. अप्रत्यक्ष मौखिक अनुसंधान (Indirect personal investigation)
3. स्थानीय स्रोतों या सम्वाददाताओं द्वारा सूचना प्राप्ति (Information from local correspondents)
4. सूचना देने वालों द्वारा प्रश्नावली के माध्यम से सूचनाओं को एकत्र करना (Questionnaires to be filled in by informations or respondents)
5. प्रगणकों के द्वारा अनुसूचियों को भरना (Schedules to be filled in by enumerators)

उपरोक्त पाँच बिन्दुओं को आधार बना करके ही किसी क्षेत्र के अध्ययन हेतु आंकड़ों का एकत्रीकरण किया जाता है। इनका विस्तार पूर्वक विवेचन निम्नवत स्पष्ट है–

1. प्रत्यक्ष व्यक्तिगत अनुसंधान **(Direct personal investigation)**–

इस विधि में अनुसंधानकर्त्ता सूचना देने वाले से प्रत्यक्ष रूप से सम्बन्ध स्थापित करके आंकड़ों को एकत्र करता है। आकड़ों को एकत्र करने की यह एक सरल एवं बोधगम्य विधि है। इस विधि में अनुसंधानकर्त्ता को निरीक्षण या अवलोकन का भी सहारा लेना पड़ता है। इसकी निम्न विशेषतायें हैं–

1. अनुसंधान की समस्या से प्रत्यक्ष सम्बन्ध रखने वाले व्यक्तियों से सम्पर्क करके सूचनायें एकत्र की जाती है।
2. अनुसंधानकर्त्ता स्वयं क्षेत्र में जाकर सूचनायें एकत्र करता है।
3. यह विधि सीमित क्षेत्र के लिये ही उपयुक्त मानी जाती है।
4. इस विधि का प्रयोग अधिकांश व्यक्तिगत अनुसंधानों के लिये ही किया जाता है।
5. इसमें समय, परिश्रम व धन अधिक लगता है।

2. अप्रत्यक्ष मौखिक अनुसंधान **(Indirect personal investigation)**–

अनुसंधान का क्षेत्र विस्तृत होने पर अनुसंधानकर्त्ता के लिये यह सम्भव नहीं हो पाता कि वह प्रत्यक्ष रूप से अनुसंधान के क्षेत्र की सभी ईकाइयों से प्रत्यक्ष सम्पर्क स्थापित कर आंकड़ों को एकत्र कर सके। इस दशा में वह किसी ऐसे व्यक्ति से सूचनायें एकत्र करता है जिसे उस विषय की जानकारी उपलब्ध है। अप्रत्यक्ष मौखिक अनुसंधान तब भी आवश्यक होता है जब सूचनादाता सही तथ्यों का छिपाना चाहता है। इसकी निम्न विशेषतायें हैं–

1. अनुसंधान की समस्या से अप्रत्यक्ष सम्बन्ध रखने वाले व्यक्तियों से सूचनायें प्राप्त की जाती है।
2. इस विधि में अनुसंधान कार्य अन्य व्यक्तियों द्वारा किया जाता है।
3. इस विधि को विस्तृत क्षेत्र हेतु उपयुक्त माना गया है।
4. इस विधि का उपयोग प्रायः जांच समितियों या आयोगों द्वारा किया जाता है।
5. इस विधि में समय, परिश्रम व धन कम लगता है।

3. स्थानीय स्रोतों या संवाददाताओं द्वारा सूचना प्राप्ति **(Information from local corresponents)**–

इस विधि में अनुसंधानकर्त्ता विभिन्न स्थानों पर स्थानीय व्यक्ति नियुक्त कर देता है जो समय समय पर अपने अनुभवों के आधार पर अपेक्षित सूचनायें प्रदान करते हैं। ये लोग संवाददाता कहलाते हैं। इसकी विशेषतायें निम्नवत हैं–

1. इस विधि द्वारा दूर–दूर तक फैले अनुसंधान क्षेत्र से सूचनायें प्राप्त की जा सकती हैं।
2. इस विधि में धन, श्रम व समय की बचत होती है।
3. इस विधि के द्वारा सूचनायें नियमित रूप से प्राप्त होती रहती हैं।
4. यह विस्तृत क्षेत्र हेतु एक उपयुक्त विधि है।
5. समाचार पत्रों, पत्रिकाओं, आकाशवाणी, दूरदर्शन आदि के द्वारा भी सूचनाओं का एकत्रीकरण इस विधि के द्वारा किया जाता है।

4. सूचना देने वालों द्वारा प्रश्नावली के माध्यम से सूचनाओं को एकत्र करना **(Questionnaires to be filled in by informations or respondents)**–

इस विधि के माध्यम से अनुसंधानकर्त्ता आंकड़ों को एकत्र करने के लिये एक प्रश्नावली तैयार करता है और उन व्यक्तियों को भरने के लिये भेजता है जिनसे उसे सूचना प्राप्त करनी है। यदि सूचकों के पास प्रश्नावली को डाक से भेजा जाता है तो इस विधि को डाक प्रश्नावली विधि कहा जाता हैं। प्रश्नावली के साथ एक अनुरोध पत्र भी लगाया जाता है जिसमें आंकड़ों को एकत्र करने का उद्देश्य भी प्रदर्शित किया जाता है। सूचना प्रदान करने वाले व्यक्तियों को यह आश्वासन दिया जाता है कि उनके द्वारा दी गयी सूचनायें गुप्त रखी जायेंगी। डाक

द्वारा प्रश्नावली वापस मंगाने के लिये टिकट एवं पता लिखा हुआ लिफाफा भी भेजा जाता है। इसकी विशेषतायें निम्नवत हैं–

1. इस विधि का प्रयोग विस्तृत क्षेत्र में आंकड़ों को एकत्र करने के लिये किया जा सकता है।
2. इसमें परिश्रम, समय एवं धन का व्यय कम से कम होता है।
3. इस विधि द्वारा प्राप्त आंकड़े मौलिक एवं विश्वसनीय होते हैं। क्योंकि ये प्रश्नावलियां स्वयं सूचना प्रदान करने वाले व्यक्ति द्वारा प्रत्यक्ष रूप से दी जाती हैं।
4. इस विधि को दोष यह है कि इसका प्रयोग अशिक्षित व्यक्ति नहीं कर सकता।
5. सूचना देने वाले व्यक्ति पर कोई प्रतिबन्ध न होने के कारण अधिकतर सूचनायें अपूर्ण एवं भ्रामक होती हैं जिससे निष्कर्ष प्रभावित होता है।
6. इस प्रकार की सूचनाओं में विश्वनीयता की कमी होती है।

5. प्रगणकों के द्वारा अनुसूचियों को भरना (Schedules to be filled in by enumerators)–

इस विधि के अन्तर्गत प्रगणकों को अनुसूचियां देकर विभिन्न क्षेत्रों में भेजा जाता है वहाँ वह सूचकों से सम्पर्क करके उनके उत्तर अनुसूची में लिखते हैं। इस विधि के द्वारा आंकड़ों को एकत्र करने हेतु अधिक धन व्यय करना पड़ता है। अनुसूचियों को तैयार करने में भी अधिक धन एवं समय की आवश्यकता होती है। इसलिये इस विधि का प्रयोग सरकार या केवल बड़ी संस्थाओं के द्वारा ही किया जाता है। विश्व के सभी देशों में जनगणना इसी विधि द्वारा की जाती है। इसकी विशेषतायें निम्नवत हैं–

1. इस विधि द्वारा एक व्यापक क्षेत्र से सूचनाओं को एकत्र किया जा सकता है।
2. इसमें प्रगणकों द्वारा अनुसूचियों में भरी गयी सूचनाओं की शुद्वता की पूर्ण आशा होती है।
3. प्रगणक प्रायः दोनों ही प्रकार की मनोवृत्तियों के होते हैं। अतः इस विधि में पक्षपात की सम्भावना अत्यन्त ही कम होती है।
4. सूचकों से प्रगणकों का व्यक्तिगत सम्पर्क रहता है। फलस्वरूप प्राप्त सूचनायें अधिक विश्वनीय एवं सत्य होती है।
5. सूचकों के अशिक्षित होने की स्थिति में भी इस रीति का प्रयोग किया जा सकता है।
6. इस विधि के माध्यम से आंकड़ों को एकत्र करने हेतु अधिक धन एवं समय की आवश्यकता होती है।
7. यह एक जटिल विधि है जिसमें प्रगणकों के चयन, उनके प्रशिक्षण, उनके कार्यों का निरीक्षण आदि एक कठिन कार्य है।
8. इसमें पक्षपात की सम्भावना भी बनी रहती है जिससे अध्ययन का उद्देश्य एवं निष्कर्ष प्रभावित हो जाता है।
9. आंकड़ों के संकलन की शुद्धता ही अध्ययन को सही निष्कर्ष पर पहुंचाती है। अतः इस कार्य में विशेष सतर्कता बरती जानी चाहिये।
10. प्रगणकों का चुनाव भी ठीक प्रकार से किया जाना चाहिये इसके अभाव में अध्ययन प्रभावित हो जाता है।
11. प्रश्नावली के निर्माण, अध्ययन स्थल के चयन आदि में अत्यत सावधानी बरतने की आवश्यकता होती है जिससे अध्ययन को और अधिक वैज्ञानिक और परिष्कृत बनाया जा सकता है।

10.11. द्वितीयक आंकड़ों को एकत्र करने की विधियां (Methods of collecting primary data)–

अन्य किसी अनुसंधानकर्त्ता द्वारा एकत्रित, विश्लेषित एवं प्रकाशित सांख्यकीय आंकड़े द्वितीयक आंकड़े कहलाते हैं। द्वितीयक आंकड़ों के प्रयोग में समंकों के मौलिक संकलन की समस्या उत्पन्न नहीं होती है। अतः यह कहा जा सकता है कि द्वितीयक आंकड़ों का संग्रहण नहीं बल्कि उनका उपयोग किया जाता है।

द्वितीयक आंकड़ों के स्रोत (Sources of Secondary data)

अ. प्रकाशित स्रोत (Published sources), ब. अप्रकाशित स्रोत (Unpublished sources)।

अ. प्रकाशित स्रोत (Published sources)–

विभिन्न विषयों पर सरकारी व गैरसरकारी संस्थाएं तथा अन्य अनुसंधानकर्त्ता महत्वपूर्ण आंकड़े एकत्र करके उन्हें समय समय पर प्रकाशित करते रहते हैं। प्रकाशित आंकड़ों के प्रमुख स्रोत निम्नलिखित हैं–

1. सरकारी प्रकाशन–

प्रत्येक देश की सरकारें सम्बन्धित आंकड़े एकत्र करती हैं एवं इनका प्रकाशन कराती हैं। ये समंक बहुत ही विश्वसनीय एवं महत्वपूर्ण होते हैं। आजकल भारत में लगभग सभी मंत्रालयों के द्वारा अनेक प्रकार की सूचनायें एवं आंकड़े प्रकाशित कराये जाते हैं।

2. अर्ध–सरकारी संस्थाओं के प्रकाशन–

नगरपालिकायें, नगर निगम, जिला बोर्ड आदि विभिन्न प्रकार के आंकड़े संकलित करा कर प्रकाशित कराते हैं जैसे जन्म–मरण रजिस्टर, स्वास्थ्य, शिक्षा एवं चिकित्सा सम्बन्धी आंकड़े।

3. अन्तर्राष्ट्रीय प्रकाशन–

अन्तर्राष्ट्रीय संस्थायें जैसे संयुक्त राष्ट्र संघ, अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संघ, अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष आदि समय समय पर आंकड़ों का प्रकाशन करती रहती हैं। विदेशी सरकारों के प्रकाशन भी इसी वर्ग में आते हैं। ये प्रकाशन द्वितीयक आंकड़ों के स्रोत हैं।

4. आयोग व समिति की रिर्पोट–

सरकार या किसी अन्य संस्था के द्वारा आयोग या समितियां नियुक्त की जाती रहती हैं। देश की विभिन्न संस्थाओं के अध्ययन के लिये ये आयोग या समितियां संबन्धित आंकड़े संकलित करके अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत करती हैं, जैसे वित्त आयोग के प्रतिवेदन, वेतन आयोग के प्रतिवेदन, योजना आयोग के प्रतिवेदन आदि ।

5. व्यापारिक व वित्तीय संस्थाओं के प्रकाशन–

व्यापार परिषदें जैसे–भारतीय उद्योग व वाणिज्य संघ, जूट मिल्स एसोसिएशन, आदि संस्थायें, हिन्दुस्तान लीवर लिमिटेड, बिरला ग्रुप, टाटा एण्ड सन्स लि0 भी अनेक प्रकार के समंक एकत्र करके प्रकाशित करवाती हैं।

6. विश्वविद्यालय एवं शोध संस्थाओं के प्रकाशन–

विश्वविद्यालय, रिसर्च ब्यूरो व शोध संस्थाओं के द्वारा अनेक प्रकार के आंकड़े एकत्र किये जाते हैं एवं उनका प्रकाशन भी किया जाता है। इन्हें संकलित एवं प्रकाशित करने वाले कुछ प्रमुख संस्थान निम्नलिखित हैं–

(i) भारतीय साख्यिकीय संस्थान

(ii) व्यवहारिक आर्थिक शोध की राष्ट्रीय परिषद

(iii) राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण संगठन

(iv) विश्वविद्यालय शोध ब्यूरो

(v) केन्द्रीय सांख्यकीय संगठन

7. समाचार पत्र एवं पत्रिकाएं–

बहुत से समाचार पत्र एवं पत्रिकाएं अनेक प्रकार के आंकड़े एकत्र करके प्रकाशित करती हैं। इनमें से कुछ प्रमुख पत्र एवं पत्रिकाएं निम्न हैं–

(i) इकोनामिक टाइम्स	दैनिक
(ii) दी फाइनैन्शियल एक्सप्रेस	दैनिक
(iii) कामर्स	साप्ताहिक
(iv) योजना	पाक्षिक
(v) ट्रान्सपोर्ट	मासिक

8. व्यक्तिगत शोधकर्त्ताओं के प्रकाशन–

व्यक्तिगत शोधकर्त्ता भी अपने शोध सम्बन्धी आंकड़ों का प्रकाशन शोध ग्रन्थों, पुस्तकों, शोध पत्रों, विविध पत्रिकाओं आदि के माध्यम से करते हैं। इनसे प्राप्त आंकड़े व्यक्तिगत रूप से एकत्रित किये गये होते है जिनकी विश्वसनीयता आधिक होती है।

ब. अप्रकाशित स्रोत (Unblished sources)–

अनेक शोध संस्थानों, अर्ध–सरकारी संस्थानों, गैर–सरकारी संस्थानों, सार्वजनिक प्रतिष्ठानों, विश्वविद्यालयों, महाविद्यालयों आदि में योग्य एवं अनुभवी व्यक्तियों के द्वारा एकत्र बहुत से आंकड़े अप्रकाशित रह जाते हैं। यदि ये आंकड़े उपलब्ध हो जाय तो इन्हें द्वितीयक आंकड़ों के रूप में प्रयोग किया जा सकता है।

10.12. द्वितीयक आंकड़ों के प्रयोग में सावधानियां (Precautions in the use of secondary data)–

द्वितीयक आंकड़ों के प्रयोग के समय बहुत सावधानी रखने की आवश्यकता पड़ती है क्योंकि द्वितीयक आंकड़े अनेक स्तरों पर त्रुटिपूर्ण हो सकते हैं। इन त्रुटियों के अनेक कारण हो सकते हैं, जैसे सांख्यिकीय इकाई की परिभाषा में परिवर्तन, सूचना में अपूर्णता, पक्षपात, क्षेत्र व उद्देश्य में भिन्नता, आदि। अतः यह आवश्यक है कि द्वितीयक आंकड़ों के प्रयोग के समय उनकी आलोचनात्मक जांच तथा विश्वसनीयता की परख होना आवश्यक है।

बाउले के अनुसार–

''प्रकाशित आंकड़ों को बिना उनका अर्थ एवं सीमाएं जाने जैसा का तैसा स्वीकार कर लेना खतरे से खाली नहीं और यह सर्वथा आवश्यक है कि उन तर्कों की आलोचना कर ली जाय जो उन पर आधरित किये जा सकते हों''

कानर के अनुसार–

''आंकड़े विशेषतः अन्य व्यक्ति के द्वारा एकत्रित समंक प्रयोगकर्त्ता के लिये कमियों से पूर्ण होते हैं, जब तक उनका प्रयोग सावधानी से न किया जाये।''

आंकड़ों को संग्रह करने हेतु एवं गणना हेतु निदर्शन विधि मुख्य रूप से प्रयोग में लायी जाती है। यह विधि अधिक उपयुक्त मानी जाती है। यदि निदर्शन विधि का प्रयोग किया गया है तो यह अवश्य विचार करना चाहिये कि न्यायदर्श का आकार उचित था या नहीं और न्यायदर्श लेने की विधि उपयुक्त थी या नहीं?

अतः द्वितीयक आंकड़ों के प्रयोग से पूर्व उनकी विश्वसनीयता एवं उपयुक्तता की जांच करने के लिये निम्नलिखित बिन्दुओं पर ध्यान दिया जाना आवश्यक है–

2. अनुसंधानकर्त्ता की योग्यता–

यदि पूर्व में किसी अनुसंधानकर्त्ता के द्वारा आंकड़े एकत्र किये गये थे उसकी योग्यता, कार्यक्षमता, साधन व ईमानदारी पर विचार करना होगा। यदि अनुसंधानकर्त्ता योग्य व ईमानदार तथा पक्षपात रहित है तो उनके द्वारा एकत्र किये गये आंकड़े अवश्य ही विश्वसनीय हो सकते हैं।

3. जांच का अभिप्राय–

प्राथमिक जांच का उद्देश्य क्या था ? यदि प्राथमिक जांच का उद्देश्य और बाद का उद्देश्य समान या मिलता जुलता है तब आप भी उन आंकड़ों का प्रयोग कर सकते हैं, अन्यथा नहीं।

4. इकाई की परिभाषा–

पूर्व में किये गये अनुसंधान में ईकाइयों को किस प्रकार परिभाषित किया गया था तथा प्रस्तुत अनुसंधान के लिये वे इकाइयां अनुकूल या उपयुक्त हैं या नहीं, अध्ययन के पूर्व एवं आंकड़ों के संग्रहण के पूर्व यह देखना अति आवश्यक एवं अपरिहार्य हैं। यदि दोनों अनुसंधानों की इकाइयों में सजातीयता का अभाव हुआ तो द्वितीयक आंकड़े प्रयोग हेतु उपयुक्त नहीं माने जायेंगे क्योंकि ये आंकड़े परिणाम को पूरी तरह प्रभावित कर सकते हैं एवं एक पक्षीय भी हो सकते हैं।

5. शुद्धता का स्तर–

पूर्व में किये गये अनुसंधान में शुद्धता का स्तर क्या था ? यदि शुद्धता का स्तर आज की वर्तमान समस्या के अनुकूल रहा हो तो आप उन आकड़ों एवं उनसे प्राप्त निष्कर्षों पर विश्वास कर सकते हैं अन्यथा ये आंकड़ों परिणामों को प्रभावित कर सकते हैं जिससे अध्ययन का निष्कर्ष भी प्रभावित हो सकता है। इसलिये पूर्व में प्राप्त आंकड़ों के विश्वसनीयता के स्तर का वैज्ञानिक मापन अति आवश्यक है जिसके आधार पर हम सही एवं सटीक निष्कर्षों को प्राप्त कर सकते हैं।

6. उपसादन का स्तर–

पूर्व में किये गये अध्ययनों में सन्नीकटीकरण या उपसादन (Approximation) के विषय में क्या नीति अपनायी गयी थी ? यह विन्दु भी अध्ययन के परिणाम को प्रभावित करने वाला विन्दु होता है। जितना ही कम अंशों में सन्नीकटीकरण या उपसादन किया गया होगा, आंकड़े उतने ही सत्यता के नजदीक होंगे। यदि सन्नीकटीकरण अधिक अंशों में हुआ होगा तो वह विन्दु परिणाम एवं निष्कर्ष को प्रभावित कर सकता है।

7. समंक संग्रहण का समय व परिस्थितियां–

किसी क्षेत्र में समंक संग्रहण का समय व परिस्थितियां भी परिणाम को प्रभावित करने हेतु उत्तरदायी होती हैं। आंकड़ों के संग्रहण का समय क्या था, यदि कम समय में तथा सामान्य समय में आंकड़े एकत्र किये गये हों तो वे अधिक विश्वसनीय हो सकते हैं अन्यथा नहीं। असामान्य परिस्थितियों में आंकड़े केवल उसी समय के लिये उपयुक्त होते हैं अन्यथा अनुसंधान में वे उपयोगी सिद्ध नहीं हो सकते। क्योंकि कुछ समय विशेष में एकत्र किये गये आंकड़े उन परिस्थितियों हेतु ही उपयुक्त माने जाते हैं, कालान्तर में उनकी सत्यता सिद्ध नहीं हो पाती है।

8. उद्देश्य की पूर्ति हेतु उपयुक्तता–

इस बात की जांच अवश्य होनी चाहिये कि उपलब्ध द्वितीयक सामग्री वर्तमान अनुसंधान के उद्देश्य को किस सीमा तक पूरा कर सकती है। यदि व अध्ययन के उद्देश्य को पूरा कर पाने में असमर्थ है तो उनका प्रयोग अध्ययन हेतु नहीं किया जाना चाहिये।

9. अन्य द्वारा संकलन से तुलना–

क्या उसी विषय के किसी अन्य स्रोत द्वारा संग्रहीत आंकड़े भी प्राप्त किये गये हैं ? यदि हाँ तो दोनों का तुलनात्मक अध्ययन किया जाना चाहिये एवं यह पता करना चाहिये कि ये आंकड़े कितने विश्वसनीय एवं अध्ययन हेतु सत्यता के निकट हैं। यदि इनकी विश्वसनीयता पर किसी भी प्रकार का संदेह हो तो आंकड़ों का संग्रहण एवं विश्लेषण तथा निष्कर्ष की प्राप्ति नये सिरे होनी चाहिये।

10. परीक्षणात्मक जांच–

परीक्षणात्मक जांच अध्ययन के दौरान आंकड़ों के परीक्षण पर आधारित है। आंकड़ों को संग्रह करने के उपरान्त इनका परीक्षणात्मक जांच अति आवश्यक होता है जिसके उपरान्त ही इनका सारणीयन एवं विश्लेषण किया जाना चाहिये। इसे अभाव में अध्ययन प्रभावित हो सकता है।

13. निष्कर्ष **(Conclusion)**

निष्कर्ष के रूप में यह कहा जा सकता है कि द्वितीयक आंकड़ों का परीक्षण करने पर यदि वे विश्वसनीय, पर्याप्त एवं उपयुक्त प्रतीत हों तो प्रस्तुत अनुसंधान के लिये इनका प्रयोग किया जाना चाहिये अन्यथा इनके उपयोग से अध्ययन का परिणाम एवं निष्कर्ष प्रभावित हो सकता है। जे0 एम0 बैवन के अनुसार, ''अन्य व्यक्तियों के परिणामों का अपनाना ही हमारे शोध को उचित दिशा देने के लिये पर्याप्त नहीं होगा। हमें सामान्य ज्ञान, दूरदर्शिता तथा विद्यमान ज्ञान का उपयोग करते हुये उनकी गहराई में जा कर अज्ञानता के क्षेत्र जिसमें हम अनुसंधान कर रहे हैं, की खोज करनी चाहिये।'' सांख्यकीय अध्ययनों हेतु प्राथमिक एवं द्वितीयक आंकड़ों के संकलन में अध्ययनकर्त्ता के द्वारा विशेष सावधानी बरती जानी चाहिये। इसके अभाव में अध्ययन का परिणाम प्रभावित हो सकता है।

अध्ययन स्थल के चयन, प्रतिदर्शों के चयन, आदि में भी पारदर्शिता होनी चाहिये। इन्हीं के आधार पर हम वैज्ञानिक निष्कर्षों को प्राप्त कर सकते हैं एवं उन पर आधारित सिद्धान्तों का प्रतिपादन कर सकते हैं। सांख्यकीय तकनीकों का व्यवहार इतना व्यापक है तथा हमारे जीवन एवं हमारी आदतों में सांख्यिकीय का प्रभाव इतना अधिक है कि इसके महत्व की उपेक्षा नहीं की जा सकती है। वास्तव में सांख्यिकीय का युग आ गया है और पर्याप्त सीमा तक आधुनिक सभ्यता ''सांख्यकीय सभ्यता'' में परिवर्तित हो चुकी है।

समंको की अनुपस्थिति में आधुनिक जीवन की मशीनरी स्थिर हो जायेगी। माध्य, अपकिरण, सहसम्बन्ध, निदर्शन, आलेख आदि को जाने बिना मनोविज्ञान, अर्थशास्त्र, वित्त प्रबन्धन, सामाजिक विज्ञान तथा भौतिक विज्ञानों को अत्यन्त प्रारम्भिक स्तर पर भी समझना असम्भव है। यही नहीं, सांख्यकीय विधियों का प्रायोग उन व्यक्तियों द्वारा भी किया जाता है जिन्हें सांख्यकीय विज्ञान का ज्ञान नहीं होता है।

सामान्य व्यक्तियों द्वारा भी प्रतिदिन के निर्णयों में, जाने अनजाने में सांख्यकीय विधियों का प्रयोग किया जाता है। जब कोई व्यक्ति रेडियों अथवा मशीन खरीदना चाहता है तो वह कई कम्पनियों की मूल्य सूचियों का अध्ययन करता है। इस प्रकार के निश्चित अध्ययन का उद्देश्य मूल्यों के विस्तार का पता लगाना होता है। जब एक किसान किसी मौसम में एक निश्चित मात्रा में वर्षा की अपेक्षा करता है जिससे फसल अच्छी हो सके तो इससे पता चलता है कि उसे वर्षा की मात्रा तथा उत्पादन के मध्य सहसम्बन्ध का ज्ञान है। वह श्रमिक जिसने निर्देशांक के बारे में सुना भी न हो, मूल्यों की घटा–बढ़ी आसानी से औसत रूप से बता देता है।

इस प्रकार हम यह कह सकते हैं कि मनुष्य के दैनिक जीवन में सांख्यिकीय अध्ययन का बहुत महत्व है और यह महत्व दिनों दिन और अधिक बढ़ता जा रहा है जिससे कि विविध सामाजिक एवं वैज्ञानिक अध्ययनों में इसका समावेश निरन्तर होता जा रहा है।

14. मॉडल प्रश्न (Model Questions)

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1. सांख्यिकी की परिभाषा तथा विषय क्षेत्र को स्पष्ट कीजिए ?

प्रश्न 2. ''सांख्यिकी एक विज्ञान नहीं है, वह एक वैज्ञानिक विधि है।'' इस कथन का आलोचनात्मक परिक्षण कीजिए ?

प्रश्न 3. 'सांख्यिकी अनुमानों और सम्भावनाओं का विज्ञान है।'' इस कथन की व्याख्या कीजिए ?

प्रश्न 4. साख्यिकी की प्रमुख सीमायें क्या हैं ? क्या इन कमियों को दूर किया जा सकता है ?

प्रश्न 5. आर्थिक विश्लेषण तथा नियोजन में सांख्यिकी की उपयोगिता बताइये ?

प्रश्न 6. ''सांख्यिकी अनुमानों और सम्भावनाओं का विज्ञान है'' इस कथन की विवेचना कीजिए ?

प्रश्न 7. सांख्यिकीय विधियों की उपयोगिता के कुछ विशिष्ट एवं स्पष्ट उदाहरण देते हुये व्यवसाय एवं वाणिज्य में सांख्यिकीय विधियों की भूमिका का विवेचन कीजिए ?

प्रश्न 8. प्राथमिक आंकड़ों के संकलन में किन किन बातों का ध्यान रखना चाहिये ?

प्रश्न 9. सामाजिक अध्ययनों में द्वितीयक आंकड़ों का क्या महत्व है ?

प्रश्न 10. द्वितीयक आंकड़ों के संकलन के प्रमुख श्रोत क्या हैं ?

लधु उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1. सांख्यिकीय की प्रकृति की विवेचना कीजिए ?

प्रश्न 2. ''सांख्यिकीय गणना का विज्ञान है।'' स्पष्ट कीजिए?

प्रश्न 3. क्या सांख्यिकीय एक विज्ञान है ?

प्रश्न 4. क्या सांख्यिकीय कला एवं विज्ञान दोनों हैं ?

प्रश्न 5. साख्यिकीय की एक आदर्श परिभाषा दीजिए ?

प्रश्न 6. व्यवहारिक सांख्यिकीय क्या है ?

प्रश्न 7. ''सांख्यिकीय समूह का अध्ययन करती है।'' इस कथन का क्या आशय है ?

प्रश्न 8. प्राथमिक आंकड़ों के प्रमुख श्रोत कौन कौन से हैं ?

प्रश्न 9. द्वितीयक आंकड़ों के प्रमुख श्रोत कौन कौन से हैं ?

प्रश्न 10. प्राथमिक आंकड़ों के संकलन हेतु क्षेत्र का चयन किस प्रकार किया जाता है ?

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

प्रश्न 1. 'सांख्यिकी अनुमानों और सम्भावनाओं का विज्ञान है।'' यह कथन किसका है ?

(a) वेबस्टर (b) बाउले

(c) बॉडिंगटन (d) सैलिंगमैन

प्रश्न 2. सांख्यिकी शब्द के जन्मदाता हैं ?

(a) मार्शल (b) गाटफ्राइड आकेनवाल

(c) गाल्टन (d) बाउले

प्रश्न 3. सांख्किीय शब्द का अर्थ लिया जाता है ?

(a) एकवचन (b) द्विवचन

(c) बहुवचन (d) इनमें से कोई नहीं

प्रश्न 4. ''सांख्यिकीय को उचित रूप में माध्यों का विज्ञान कहा जा सकता है।'' यह परिभाषा दी है–

(a) बाउले (b) सैक्राइस्ट

(c) सैलिगमैन (d) बॉडिगटन

प्रश्न 5. सांख्यिकीय शब्द का अर्थ है–

(a) आंकड़ों एवं सांख्यकीय विधियां दोनों से (b) केवल आंकड़ों से

(c) केवल सांख्यकीय विधियों से (d) इनमें से कोई नहीं

प्रश्न 6. सांख्यिकीय का उचित प्रयोग सम्भव है–

(a) विशेषज्ञों द्वारा (b) शोधकर्त्ताओं द्वारा

(c) विद्यार्थियों द्वारा (d) सामाजिक कार्यकर्त्ताओं द्वारा

प्रश्न 7. एकवचन में सांख्यिकीय का प्रयोग होता है–

(a) वैज्ञानिक अध्ययनों (b) कला विज्ञान में

(c) सामाजिक अध्ययनों में (d) सांख्यिकीय विज्ञान में

प्रश्न 8. सांख्यिकीय शब्द का उद्‌गम लैटिन भाषा के किस शब्द से हुआ है–

(a) स्टेटस (b) स्टेटसा

(c) स्टेटा (d) इनमें से कोई नहीं

प्रश्न 9. प्राथमिक आंकड़ों का संकलन किया जाता है–

(a) सरकार द्वारा (b) शोधकर्त्ता द्वारा

(c) किसानों द्वारा (d) इनमें से कोई नहीं

प्रश्न 10. द्वितीयक आंकड़ों का संकलन किया जाता है–

(a) सरकारी संस्थाओं द्वारा (b) सामाजिक कार्यकर्त्ताओं द्वारा

(c) छात्रों द्वारा (d) शोधकर्त्ताओं द्वारा

15.संदर्भ पुस्तकें (Referenced Books)

- शुक्ल, एस0 एम0 एवं एस0 पी0 सहाय, सांख्यिकी के सिद्धान्त, 2004, साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा
- चौहान, पी0आर0, प्रयोगात्मक भूगोल, 2013, बसुन्धरा प्रकाशन, गोरखपुर
- मोहम्मद, हारून, प्रयोगात्मक भूगोल, 2010, मिश्रा ट्रेडिंग कार्पोरेशन, मैदागिन, वाराणसी
- सिन्हा, वी0सी0 एवं आलोक गुप्ता, व्यावसायिक सांख्यिकी, 2010 एस बी पी डी पब्लिकेशन्स, आगरा

इकाई–11 (Unit- 11)
केन्द्रीय प्रवृत्ति की माप
(Measures of Central Tendency)

पाठ संरचना **(Structure of Lession)**

11.1. उद्देश्य (Objectives)
11.2. प्रस्तावना (Introduction)
11.3. केन्द्रीय प्रवृत्ति की माप की परिभाषायें (Meaning and Definition Measures of central tendency)
11.4. समान्तर माध्य (Arithmetic mean)
11.5. माध्यिका (Median)
11.6. बहुलक (Mode)
11.7. निष्कर्ष (Conclusion)
11.8. मॉडल प्रश्न (Model Questions)
11.9. संदर्भ पुस्तकें (Referenced Books)

उद्देश्य (Objectives)

1. छात्रों को आंकड़ों के केन्द्रीय प्रवृत्ति से अवगत कराना है।
2. समान्तर माध्य की गणनाओं से अवगत करना है।
3. माध्यिका की गणना में प्रयुक्त विधियों एवं सामाजिक विज्ञानों में इसके प्रयोग तथा महत्व को बताना है।
4. बहुलक की परिभाषा एवं इसके महत्व से छात्रों को अवगत कराना है।
5. सामाजिक विज्ञानों में प्रयुक्त अन्य सांख्यिकीय प्रविधिकी से छात्रों को परिचित कराना है।

1. प्रस्तावना (Introduction)

सांख्यिकीय अध्ययन में केन्द्रीय प्रवृत्ति की मापों का अध्ययन विशेष महत्वपूर्ण है। इससे आंकड़ों की प्रवृत्ति की जानकारी प्राप्त होती है। सामाजिक अध्ययनों में जहाँ आंकड़ों की प्रवृत्ति अत्यन्त भिन्न पायी जाती है वहाँ इन विधियों के अध्ययन से सही तथ्यों को ज्ञात कर सकते हैं। इनमें समान्तर माध्य, माध्यिका एवं बहुलक को शामिल किया गया है। ये तीनों ही आंकड़ों की केन्द्रीय प्रवृत्ति का अध्ययन करने में सहायक सिद्ध होते हैं। अतः सांख्यिकीय अध्ययनों में इनका विशेष महत्व है। किसी भी संग्रहित आंकड़ों में एक निश्चित प्रकार का गुण पाया जाता है जिसका अध्ययन अन्वेषण के समय किया जाता है। इनके अध्ययन से ही अनुसंधानकर्त्ता अपने निष्कर्ष को प्राप्त कर पाता है। संग्रहित किये गये आंकड़ों में किसी बिन्दु के चारों ओर एकत्र होने की प्रवृत्ति पायी जाती है। जिसे हम केन्द्रीय प्रवृत्ति कहते हैं एवं इनके मापन को केन्द्रीय प्रवृत्ति की मापन कहते हैं। उन बिन्दु को जिसके आस–पास अन्य बिन्दुओं का जमाव होने की प्रवृत्ति पायी जाती है, केन्द्रीय बिन्दु या केन्द्रीय प्रवृत्ति की माप कहा जाता है क्योंकि व्यक्तिगत चर–मूल्य अधिकतम उसके चारों ओर जमा होते हैं।

2. केन्द्रीय प्रवृत्ति की माप की परिभाषायें (Meaning and Definition Measures of Central Tendency)

केन्द्रीय प्रवृत्ति की माप की कुछ प्रमुख परिभाषायें निम्न हैं–

सिम्पसन एवं काफ्का के अनुसार, ''केन्द्रीय प्रवृत्ति की माप एक ऐसा प्रतिरूपी मूल्य है जिसकी ओर अन्य संख्यायें संकेन्द्रित होती हैं।''

क्रॉक्सटन व कॉउडेन के अनुसार, ''माध्य समंकों के विस्तार के अन्तर्गत स्थिर एक मूल्य है जिसका प्रयोग श्रेणी के सभी मूल्यों का प्रतिनिधित्व करने के लिये किया जाता है। चूंकि एक माध्य आंकड़ों के विस्तार के अन्तर्गत ही कहीं होता है, इसलिये कभी–कभी यह केन्द्रीय प्रवृत्ति की माप कहा जाता है।''

किसी आंकड़ों में स्थित केन्द्रीय प्रवृत्ति की माप की गणना हेतु समान्तर माध्य, माध्यिका एवं बहुलक को ही आधार बनाया जाता है।

1. समान्तर माध्य(Arithmetic mean)

समान्तर माध्य, गणितीय माध्यों में सबसे उत्तम माना जाता है और यह अत्यन्त लोकप्रिय है। सामान्यतः 'औसत' या 'माध्य' शब्द का प्रयोग इसी माध्यम के लिये किया जाता है।

परिभाषा– ''समान्तर माध्यम वह मूल्य है जो किसी श्रेणी के पदो ंके मूल्यों के योग में उनकी संख्या का भाग देने से प्राप्त होता है।''

उदाहरण के लिये 40, 48, 52, तथा 44 चार संख्याओं का समान्तर माध्य

$$\frac{40+48+52+44}{4} = \frac{184}{4} = 46$$

समान्तर माध्यम को प्रायः x से निरूपित करते हैं।

समान्तर माध्य के प्रकार–

समान्तर माध्य दो प्रकार के होते हैं–

1. सरल समान्तर माध्य (Simple Arithmetic Mean or Avrage)
2. भारित समान्तर माध्यम (Weighted Arithmetic Mean or Avrage)

1. सरल समान्तर माध्य– जब किसी पदमाला में समस्त आंकड़ों को समान महत्व दिया जाय तो पदों के योग में पदों की संख्या से भाग दे देते हैं। इस माध्यम को सरल समान्तर माध्य कहते हैं।

2. भारित समान्तर माध्य–कभी कभी माला के सभी पदों को सभी पदों का समान महत्व नहीं होता है और उनमें काफी भिन्नता होती है। ऐसी दशा में आवश्यकतानुसार पदों को महत्ता प्रदान करना अनिवार्य हो जाता है। इसलिये पदमाला के प्रत्येक पद को उसकी व्यक्तिगत महत्ता के अनुसार भार प्रदान करके प्रत्येक पद के मूल्य को उसके भार से गुणा कर देते हैं और इस प्रकार प्राप्त हुये गुणनफलों के योग में भारों के योग का भाग दे देते हैं।

भार निरपेक्ष और सापेक्ष दो प्रकार के होते हैं। यथासम्भव निरपेक्ष भारों का प्रयोग करना चाहिये। यदि निरपेक्ष भार न मिले तो सापेक्ष भारों का प्रयोग किया जा सकता है।

समान्तर माध्य ज्ञात करने की विधियां–

समान्तर माध्य ज्ञात करने की तीन विधियां हैं–

1. प्रत्यक्ष विधि (Direct Method)
2. लघु विधि (Short-cut Method)
3. पद–विचलन विधि (Step-Deviation Method)

1. प्रत्यक्ष विधि

प्रत्यक्ष विधि (Direct Method)–

व्यक्तिगत श्रेणी में माध्य की गणना विधि काफी सरल है चाहे पदों की संख्या अथवा व्यक्तिगत पदो ंके मूल्यों का आकार कितना भी क्यों न हो।

उदाहरण के लिये–

आठ व्यक्तियों की मासिक आमदनी रूपयों में निम्न है। इनका समान्तर माध्यम ज्ञात कीजिए?

4000, 4500, 5000, 4200, 4400, 5200, 6200, 4100

हल–

क्रम संख्या	मासिक आमदनी (रूपयों में)
1	4000
2	4500
3	5000
4	4200
5	4400
6	5200
7	6200
8	4100
N = 8	Σx= 37700

$\Sigma x = \quad \overline{x}/N \qquad 37600\overline{x}/8 = 4700$

2. लघु विधि (Short-cut Method)–

इस विधि से समान्तर माध्य ज्ञात करने के लिये लगभग मध्य के पद को कल्पित माध्य मान लेते हैं इसके बाद विचलन ज्ञात किया जाता है जिसके लिये $d_x = x - a$ सूत्र का प्रयोग किया जाता है तत्पश्चात पदों की संख्या n ज्ञात करते हैं एवं निम्नलिखित सूत्र का प्रयोग करते हैं–

$$\overline{\mathbf{x}} = \frac{\Sigma d_x}{\mathbf{a + n}}$$

उदाहरण–

दस छात्रों के किसी परीक्षा में प्राप्तांक निम्न प्रकार से हैं। प्राप्तांकों के माध्यम की गणना लघु विधि से कीजिए?

अनुक्रमांक	01	02	03	04	05	06	07	08	09	10
प्राप्तांक	43	48	65	57	31	60	37	48	78	59

हल–

प्राप्तांक	$d_x = x - a$
43	43–50 = –7
48	48–50 = –2
65	65–50 = + 15
57	57–50 = + 7
31	31–50 = –19

60	60–50 = +10
37	37–50 = –13
48	48–50 = –2
78	78–50 = + 28
59	59–50 = + 9
	69–43 = 26

कल्पित माध्य a = 50 (माना)

$$\bar{x} = \frac{\Sigma d_x}{\mathbf{a + n}}$$

26

$\bar{x}$ = 50 + 10= 50 +2.6

= 52.6 अंक उत्तर

3. पद–विचलन विधि (Step-Deviation Method)–

यह विधि तब प्रयोग में लायी जाती है जब X के मूल्यों में कोई उभयनिष्ठ गुणनखण्ड (Common factor) होता है। इसमें मूल विन्दु का परिवर्तन तथा पैमाने का परिवर्तन किया जाता है। केवल पैमाने का परिवर्तन भी किया जा सकता है।

खण्डित श्रेणी के लिये माध्य की गणना

(Calculation of Mean in Discrete Series)–

प्रत्यक्ष विधि (Direct Method)-

सर्व प्रथम चर को X तथा आवृत्ति को F से व्यक्त करते हैं। इसके उपरान्त F में X से गुणा करते हैं। पुनः Σfx ज्ञात करते हैं एवं कुल आवृत्ति N की गणना करते हैं। इसके उपरान्त निम्नलिखित सूत्र का प्रयोग करते हैं–

$$\bar{x} = \frac{\Sigma fx}{N}$$

उदाहरण–

निम्नलिखित सारणी के आधार पर माध्य की गणना कीजिए?

पद आकार	6	7	8	9	10	11	12
आवृत्ति	5	8	9	12	6	6	4

हल–

पद आकार (X)	आवृत्ति (F)	F X X
6	5	30
7	8	56
8	9	72

9	12	108
10	6	60
11	6	66
12	4	48
	N =50	Σfx = 440

$$\bar{x} = \frac{\Sigma fx}{N}$$

$$\bar{x} = \frac{440}{50} = 8.8$$

लघु विधि (Short-cut Method)-

इस विधि में पद आकार में लगभग मध्य के अंक को कल्पित माध्य मान लिया जाता है। कल्पित माध्य के आधार पर d_x की गणना की जाती है इसके पश्चात $d_x x\ f$ की गणना की जाती है। इस गुणनफलों के योग से Σfd_x प्राप्त किया जाता है एवं निम्नलिखित सूत्र का प्रयोग किया जाता है–

$$\bar{x} = A + \frac{\Sigma fd_x}{N}$$

उदाहरण–

निम्नलिखित आवृत्ति वितरण से छात्रों की माध्य ऊँचाई ज्ञात कीजिए?

ऊँचाई (इन्च में)	64	65	66	67	68	69	70	71	72	73
छात्रों की संख्या	1	6	10	22	21	17	14	5	3	1

ऊँचाई (x)	छात्रों की संख्या (f)	विचलन (x-68)	f x d_x
64	1	64–68 = – 4	–4
65	6	65–68 = –3	–18
66	10	66–68 = –2	–20
67	22	67–68 = –1	–22
68	21	68–68 = 0	0
69	17	69–68 = +1	+17
70	14	70–68 = +2	+28
71	5	71–68 = +3	+15
72	3	72–68 = +4	+12

72	1	72–68 = +5	+ 5
	Σf= 100		Σfd_x= +13

हल–

$$\bar{x} = A + \frac{\Sigma fd_x}{N}$$

$$\bar{x} = 68 + \frac{13}{100}$$

$$\bar{x} = 68 + 0.13$$

$$\bar{x} = 68.13$$

वर्गीकृत श्रेणी के लिये माध्य की गणना

(Calculation of Mean in Grouped Series)

1. **प्रत्यक्ष विधि (Direct Method)-**

वर्गीकृत श्रेणी में यह ज्ञात नहीं होता कि कौन सा मूल्य कितनी बार आया है। माध्य ज्ञात करने के लिये यह मान लिया जाता है कि आवृत्तियां संगत वर्ग के मध्य विन्दु पर केन्द्रित हैं। अतः प्रत्येक विन्दु का मध्य विन्दु ज्ञात कर लिया जाता है तत्पश्चात F X x प्राप्त कर लिया जाता है।इसके पश्चात निम्नलिखित सूत्र का प्रयोग करते हैं–

$$\bar{x} = \frac{\Sigma fx}{N}$$

उदाहरण–

निम्न आवृत्ति वितरण से माध्य की गणना कीजिए?

वर्ग अन्तराल	0–1	1–2	2–3	3–5	5–10	10–25	25–50	50–100	100–1000
व्यक्तियों की सं0	13	90	81	117	66	27	6	2	2

हल–

वर्ग	मध्य मूल्य	बारम्बारता	fx
0–1	0.5	13	6.5
1–2	1.5	90	135.0
2–3	2.5	81	202.5
3–5	4.0	117	468.0
5–10	7.5	66	495.0
10–25	17.5	27	472.5
25–50	37.5	6	225.0
50–100	75.0	2	150.0
100–1000	550.0	2	1100.05
		404	3254.5

$$\bar{x} = \frac{\Sigma fx}{N}$$

$$\bar{x} = \frac{3254.5}{404}$$

$$\bar{x} = 8.06$$

लघु विधि (Short-cut Method)-

वर्गीकृत श्रेणी में लघु विधि से माध्य की गणना करने के लिये सबसे पहले वर्ग अन्तराल का मध्य विन्दु ज्ञात करते हैं। इसमें से मध्य के किसी एक विन्दु को कल्पित माध्य मान लेते हैं। कल्पित माध्य से विचलन ज्ञात करके d_x ज्ञात किया जाता है। उसके बाद d_x को आवृत्ति से गुणा कर दिया जाता है। माध्य की गणना हेतु निम्नलिखित सूत्र का प्रयोग किया जाता है–

$$\bar{x} = A + \frac{\Sigma fd_x}{N}$$

उदाहरण–

निम्नलिखित सारणी से समान्तर माध्य की गणना कीजिये–

प्राप्तांक	0–10	10–20	20–30	30–40	40–50
छात्रों की सं0	10	12	20	18	10

हल–

वर्ग अन्तराल	मध्य मूल्य	आवृत्ति	कल्पित माध्य से विचलन	विचलन व आवृत्तियों का गुणनफल ($f \times d_x$)
0–10	5	10	–20	–200
10–20	15	12	–10	–120
20–30	25	20	0	0
30–40	35	18	+10	+180
40–50	45	10	+20	+200
		N = 70		Σfd_x= 60

$$\bar{x} = A + \frac{\Sigma fd_x}{N}$$

$$\bar{x} = 25 + \frac{60}{70}$$

$$\bar{x} = 25.86$$

समान्तर माध्य के गुण (Merits)

1. इसकी गणना क्रिया अत्यन्त सरल एवं बोधगम्य होती है।

2. इसे ज्ञात करते समय सभी पदों को समान महत्व दिया जाता है।
3. इससे बीजगणितीय प्रयोग सम्भव है।
4. इसमें पदों को क्रमबद्ध करना आवश्यक नहीं है।
5. समान्तर माध्य सदा निश्चित होता है।

दोष (Demerits)

1. इसकी गणना करते समय सभी मूल्यों को अनावश्यक महत्व दिया जाता है जिससे कभी कभी परिणाम सत्यता से परे हो जाता है।
2. विन्दु रेखा द्वारा इसका प्रदर्शन सम्भव नहीं हो पाता है।
3. अनुपात व दर ज्ञात करने हेतु अनुपयुक्त है।
4. अवलोकन द्वारा माध्य का निर्धारण सम्भव नहीं होता है।

2. माध्यिका (Median)

यदि आंकड़ों को उनके परिमाण के अनुसार आरोही (Ascending) या अवरोही (descending) क्रम में रखा जाय तो उस श्रेणी के माध्य का पद माध्यिका कहलाता है।

माध्यिका की गणना (Computation of Median)-

1. **व्यक्तिगत श्रेणी (Individual Series)-**
   सर्व प्रथम आंकड़ों को आरोही या अवरोही क्रम में व्यवस्थित किया जाता है उसके पश्चात निम्नलिखित सूत्र का प्रयोग करते हैं–

$$M = \frac{N+1}{2} \text{ वें पद का मान}$$

जहाँ
M = माध्यिका (median)
N = पदों की संख्या (Number of items)

उदाहरण–निम्न समंकों की माध्यिका ज्ञात कीजिए?

520, 20, 340, 190, 35, 800, 1120, 50, 80

हल–

पदों को आरोही क्रम में रखने पर–

क्रम संख्या	पद
1	20
2	35
3	50
4	80
5	190
6	340
7	520
8	800
9	1210

$$M = \frac{9+1}{2} \text{ वें पद का मान}$$

M = 5वें पद का मान

M = 190

विच्छिन्न श्रेणी

(Discrete Series)

इस वर्ग में भी माध्यिका ज्ञात करने हेतु भी उसी सूत्र का अनुपालन किया जाता है परन्तु इसमें संचयी बारम्बारता ज्ञात किया जाता है जिससे माध्यिका की क्रम संख्या ज्ञात हो जाती है।। जिस संचयी आवृत्ति में क्रम संख्या प्रथम बार आती है उस संचयी आवृत्ति के सामने का मूल्य ही माध्यिका होता है।

उदाहरण—निम्नलिखित सारणी के आधार पर माध्यिका ज्ञात कीजिए?

पद	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13	14	15
आवृत्ति	2	3	8	10	12	16	10	8	6	5	6	4	3	1

हल—

यहाँ पर आरोही क्रम में पहले ही आकड़ों को रखा गया है।

पद	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13	14	15
आवृत्ति	2	3	8	10	12	16	10	8	6	5	6	4	3	1
सं0आ0	2	5	13	23	35	51	61	69	75	80	86	90	93	94

$$M = \frac{94 + 1}{2} \text{ वें पद का मान}$$

$$M = \frac{95}{2} \text{ वें पद का मान}$$

M = 47.5 वें पद का मान

ये पद संचयी आवृत्ति 51 में आते हैं। उसके सामने वाले पद का आकार 7 है।

सतत या अविच्छिन्न श्रेणी—

सतत या अविच्छिन्न श्रेणी में माध्यिका की गणना करने के लिये आंकड़ों को अपवर्जी विधि में बना लेना चाहिये तत्पश्चात संचयी आवृत्ति की गणना की जाती है। संचयी आवृत्ति की गणना के उपरान्त निम्नलिखित सूत्र के माध्यम से माध्यिका संख्या की गणना की जाती है।

N

माध्यिका संख्या = $\frac{}{2}$ वें पद का मान

माध्यिका वर्ग से माध्यिका ज्ञात करने के लिये निम्नलिखित सूत्र का प्रयोग किया जाता है–

$$M = l_1 + \frac{m-c}{f} \times (l_2 - l_1)$$

M = माध्यिका

l_1 = माध्यिका वर्ग की निचली सीमा

l_2 = माध्यिका वर्ग की उपरी सीमा

f = माध्यिका वर्ग की बारम्बारता

c = माध्यिका वर्ग के पहले वर्ग की संचयी बारम्बारता

उदाहरण–

निम्नलिखित सारणी से माध्यिका मूल्य ज्ञात कीजिए?

मजदूरी	20–21	21–22	22–23	23–24	24–25	25–26	26–27	27–28	28–29
कर्मचारियों की सं0	8	10	11	16	20	25	16	9	6

हल–

मजदूरी (रूपयों में)	कर्मचारियों की संख्या (f)	संचयी आवृत्ति (cf)
20–21	8	8
21–22	10	18
22–23	11	29
23–24	16	45
24–25	20	65
25–26	25	90
26–27	16	106
27–28	9	115
28–29	6	121

माध्यिका संख्या = $\frac{N}{2}$ वें पद का मान

माध्यिका संख्या = $\frac{121}{}$ वें पद का मान

2

माध्यिका संख्या = 60.50

यह संचयी आवृत्ति 65 में आ रहा है। उसके सामने वाला वर्ग (24–25) माध्यिका वर्ग होगा।

$$M = 24 + \frac{60.5-45}{20} \times (25-24)$$

$$M = 24 + \frac{15.5}{20} \times 1$$

$$M = 24 + 0.775$$

M = 24.775 रूपये उत्तर

माध्यिका के गुण (Merits)

1. इसकी गणना सरल एवं बोधगम्य होती है।
2. माध्यिका के मूल्य सुगमता से ज्ञात किये जा सकते हैं।
3. इसका विन्दु रेखीय प्रदर्शन किया जा सकता है।
4. इसका मूल्य सर्वदा निश्चित होता है।

दोष (Demerits)

1. इसे ज्ञात करने हेतु आरोही या अवरोही क्रम में व्यवस्थित करना पड़ता है।
2. इसका बीजगणितीय विवेचन सम्भव नहीं है।
3. माध्यिका प्रतिचयन के परिवर्तनों से प्रभावित होती है।

ग–बहुलक (Mode)

समंक श्रेणी में वह पद मूल्य जिसकी आवृत्ति सबसे अधिक हो (Most frequently occurring value) वह बहुलक कहलाता है।

बहुलक ज्ञात करने की विधियां (Methods of Computing mode)

व्यक्तिगत श्रेणी–

इस विधि में यह ज्ञात करना होता है कि कौन सा मूल्य सबसे अधिक बार आ रहा है। जिस मूल्य की बारम्बारता सर्वाधिक होगी वही बहुलक होगा।

उदाहरण–

किसी कक्षा के 10 विद्यार्थियों की आयु निम्नवत है। इनका बहुलक ज्ञात कीजिए?

15, 12, 13, 15, 10, 18, 14, 16, 15, 12

हल–

आंकड़ों को आरोही क्रम में रखने पर–

10, 12, 12, 13, 14, 15, 15, 15, 16, 18

उपरोक्त आंकड़ों के अवलोकन से स्पष्ट है 15 वर्ष की बारम्बारता सर्वाधिक है। अतः 15 दिये गये आंकड़ों का बहुलक है।

अ खण्डित श्रेणी में बहुलक ज्ञात करने की विधि (Methods of Computing Mode in Discrete Series) -

अखण्डित श्रेणी में भी बहुलक ज्ञात करने की उसी विधि का अनुसरण किया जाता है। अर्थात जिस पद की बारम्बारता सर्वाधिक होगी वह पद मूल्य ही बहुलक होगा।

उदाहरण–निम्नलिखित सारणी की सहायता से बहुलक की गणना कीजिए?

ऊँचाई (सेमी0 में)	150	160	170	180	190	200	210
व्यक्तियों की सं0	2	4	8	10	6	5	3

हल–

श्रेणी के अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि 180 सेमी0 एक ऐसा मूल्य है जिसकी आवृत्ति सबसे अधिक है। अर्थात इस लम्बाई वाले लोगों की संख्या यहाँ सबसे अधिक है। इसलिये यही पद मूल्य बहुलक होगा।

वर्गीकृत आंकड़ों में बहुलक की गणना–

वर्गीकृत आंकड़ों में बहुलक की गणना के पूर्व बहुलक वर्ग की गणना की जाती है। जिस वर्ग की आवृत्ति सबसे अधिक होती है वह बहुलक वर्ग माना जाता है। तत्पश्चात निम्नलिखित सूत्र की सहायता से बहुलक की गणना की जाती है।

$$Z = L_1 + \frac{f_1 - f}{2f_1 - f - f_2} \times (L_2 - L_1)$$

जहाँ–

Z = बहुलक

L_1 = बहुलक वर्ग की निम्नसीमा

L_2 = बहुलक वर्ग की उच्च सीमा

f_1 = बहुलक वर्ग की आवृत्ति

f_2 = बहुलक वर्ग के बाद की बारम्बारता

f = बहुलक वर्ग के पहले वर्ग की बारम्बारता

उदाहरण–एक कारखाने में मजदूरी का विवरण निम्न सारणी में दिया गया है। इनके बहुलक की गणना कीजिए?

मजदूरी (रू0 में)	0–10	10–20	20–30	30–40	40–50	50–60	60–70
कर्मचारियों की सं0	6	9	10	16	12	8	7

हल–

आंकड़ों के अध्ययन से स्पष्ट है कि 30–40 वर्ग अन्तराल की बारम्बारता सर्वाधिक अर्थात 16 है। अतः

$L_1 = 30$

$L_2 = 40$

$f_1 = 16$

$f_2 = 12$

$f = 10$

$$Z = 30 + \frac{16-10}{2 \times 16-10-12} \times (40-30)$$

$$Z = 30 + \frac{6}{10} \times 10$$

$$Z = 30 + 6$$

$$Z = 36$$

बहुलक के गुण (Merits of Mode)

1. बहुलक को निरीक्षण मात्र से ज्ञात किया जा सकता है। यह स्वभाव से एकत्र किये गये आंकड़ों का अर्थ स्पष्ट कर देता है।
2. बिन्दु रेखीय विधि से इसको सरलता से स्पष्ट किया जा सकता है।
3. यह सर्वाधिक सम्भावित मूल्यों की सम्भावनाओं पर आधारित है।
4. बहुलक आवृत्तियों के अधिकतम घनत्व वाला पद होता है।
5. दैव निदर्शन द्वारा चाहे जितनी बार न्यायदर्श लिये जाय, बहुलक समान ही आयेगा।

बहुलक के दोष (Demerits of Mode)

1. इसमें चरम मूल्यों की उपेक्षा की जाती है।
2. साधारण अंकगणितीय विधियों के द्वारा इसे ज्ञात नहीं किया जा सकता है।
3. यह बीजगणितीय विवेचन के लिये अनुपयुक्त माना जाता है।
4. इसका मान अनिश्चित एवं अस्पष्ट होता है।
5. इसमें सभी वर्गों का समान प्रतिनिधित्व नहीं हो पाता है।

निष्कर्ष (Conclusion)

केन्द्रीय प्रवृत्ति की मापों के अध्ययन से आंकड़ों की प्रवृत्ति, उनके गुण, दोष एवं अन्य तथ्यों की जानकारी प्राप्त होती है। उपरोक्त अध्ययनों एवं गणनाओं से स्पष्ट है कि यह सामाजिक एवं आर्थिक अध्ययनों हेतु अत्यन्त ही उपयोगी एवं लाभप्रद है। विशेष रूप से सामाजिक अध्ययनों में जहाँ आंकड़ों की प्रकृति अत्यन्त ही भिन्न होती है वहाँ भी इनकी अत्यधिक उपयोगिता है। अतः सांख्यिकीय अध्ययनों में केन्द्रीय प्रवृत्ति की मापों का अध्ययन अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

मॉडल प्रश्न (Model Questions)

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. केन्द्रीय प्रवृत्ति की माप से क्या अभिप्राय है ? इसके क्या उद्देश्य हैं ?
2. सांख्यिकीय माध्य से आप क्या समझते हैं ? माध्य में क्या क्या गुण होने चाहिए ?
3. केन्द्रीय प्रवृत्ति की माप में माध्य, माध्यिका और बहुलक के सापेक्ष गुण दोषों की व्याख्या कीजिए? इनमें से कौन सा माप अधिक उपयुक्त है ?
4. केन्द्रीय प्रवृत्ति की माप की विभिन्न विधियों का उल्लेख कीजिएएवं प्रत्येक विधि की उपयोगिता पर प्रकाश डालिए ?
5. अच्छे बहुलक की क्या विशेषतायें हैं ? इसकी परिभाषा भी दीजिए ?
6. ग्राफ द्वारा भूयिष्ठक कैसे निकाला जा सकता है ?
7. बहुलक के गुण दोष की विवेचना कीजिए ?

8. समान्तर माध्य, माध्यिका एवं बहुलक को परिभाषित कीजिएऔर बताइये कि खण्डित आवृत्ति में ये किस प्रकार ज्ञात किये जाते हैं ?
9. विभिन्न प्रकार के सांख्यकीय माध्यों के सापेक्षिक गुण दोषों की विवेचना कीजिए ?
10. केन्द्रीय प्रवृत्ति की माप के गुण दोषों की विवेचना कीजिए ?

लधु उत्तरीय प्रश्न

1. केन्द्रीय प्रवृत्ति से आप क्या समझते हैं ?
2. माध्यिका की परिभाषा दीजिये ?
3. उत्तम माध्य की क्या विशेषतायें हैं ?
4. एक माध्य से किस उद्देश्य की पूर्ति होती हैं ?
5. आदर्श माध्य के क्या गुण हैं ?
6. सांख्यकीय औसत से आप क्या समझते हैं ?
7. समान्तर माध्य की आदर्श परिभाषा क्या होगी ?
8. बहुलक किसे कहते हैं ?
9. माध्यिका के गुण एवं दोषों की विवेचना कीजिए?
10. माध्यिका और बहुलक किस प्रकार एक दूसरे से भिन्न हैं ?

बहुविकल्पीय प्रश्न

1. 100 विद्यार्थियों का औसत 50 है तो कुल अंक होंगे–
   (a) 5000 (b) 4000
   (c) 3000 (d) 1000

2. 11, 12 व 13 का समान्तर माध्य होगा–
   (a) 11 (b) 12
   (c) 13 (d) 14
3. यदि बहुलक 15, माध्यिका 12 हो तो समान्तर माध्य होगा–
   (a) 28 (b) 15
   (c) 12 (d) 16
4. अंको को आरोही या अवरोही क्रम में किसकी गणना के लिये रखा जाता है–
   (a) हरात्मक माध्य (b) गुणोत्तर माध्य
   (c) भारित माध्य (d) माध्यिका
5. माध्यिका कौन सा चतुर्थक होता है–
   (a) प्रथम (b) द्वितीय
   (c) तृतीय (d) चतुर्थ
6. विश्लेषण विधि का प्रयोग होता है–
   (a) समान्तर माध्य में (b) माध्यिका में
   (c) बहुलक में (d) हरात्मक माध्य में
7. आंकड़ों का आरोही क्रम क्या होता है–
   (a) बढ़ता क्रम (b) घटता क्रम
   (c) मध्य पद (d) इनमें से कोई नहीं
8. आंकड़ों का अवरोही क्रम क्या होता है–

(a) बढ़ता क्रम (b) घटता क्रम
(c) मध्य पद (d) इनमें से कोई नहीं

9. केन्द्रीय प्रवृत्ति की माप में मुख्य गुण क्या होता है–
(a) केन्द्र की ओर लौटने की प्रवृत्ति (b) बाहर निकलने की प्रवृत्ति
(c) पुनरावृत्ति की प्रवृत्ति (d) इनमें से कोई नहीं

10. समान्तर माध्य का विवेचन सम्भव है–
(a) बीज गणितीय (b) अंकगणितीय
(c) आर्थिक (d) सामाजिक

संदर्भ पुस्तकें (Referenced Books)

- शुक्ल, एस0 एम0 एवं एस0 पी0 सहाय, सांख्यिकी के सिद्धान्त, 2004, साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा
- चौहान, पी0आर0, प्रयोगात्मक भूगोल, 2013, बसुन्धरा प्रकाशन, गोरखपुर
- मोहम्मद, हारून, प्रयोगात्मक भूगोल, 2010, मिश्रा ट्रेडिंग कारपोरेशन, मैदागिन, वाराणसी
- सिन्हा, वी0सी0 एवं आलोक गुप्ता, व्यावसायिक सांख्यिकी, 2010 एस बी पी डी पब्लिकेशन्स, आगरा

इकाई–12 (Unit- 12)
सहसम्बन्ध (Correlation)

पाठ संरचना (Structure of Lesson)

1. उद्‌देश्य (Objectives)
2. प्रस्तावना (Introduction)
3. सांख्यिकी का अर्थ एवं परिभाषा (Meaning and Definition of Statistics)
4. सहम्बन्ध के अध्ययन का महत्व (Significance of the study of correlation)
5. सहसम्बन्ध तथा कारण परिणाम सम्बन्ध (Correlation and Causation)
6. सहसम्बन्ध के प्रकार (Types of Correlation)
7. सहसम्बन्ध ज्ञात करने की विधियां (Methods of Determining Correlation)
8. सहसम्बन्ध का परिमाण (Degree of correlation)
9. स्पियरमैन की श्रेणी–अन्तर विधि (Spearman's Ranking Method)
10. कार्ल पियर्सन सहसम्बन्ध गुणांक के मुख्य लक्षण (Main Characteristics of Karl Pearson's Coefficient of Correlation)
11. कार्ल पियर्सन सहसम्बन्ध गुणांक की परिकल्पनायें (Assumptions of Karl Pearson's Coefficient of Correlation)
12. कार्ल पियर्सन का सहसम्बन्ध गुणांक निकालने की विधि (Method of Calculation of Karl Pearson's Coefficient of Correlation)
13. निष्कर्ष (Conclusion)
14. मॉडल प्रश्न (Model Questions)
15. संदर्भ पुस्तकें (Referenced Books)

उद्‌देश्य (Objectives**)**

प्रस्तुत अध्ययन का उद्‌देश्य सामाजिक विज्ञानों के अध्ययन में प्रयुक्त होने वाले दो चरों के मध्य सहसम्बन्ध का अध्ययन करना है। ये चर विविध प्रकृति, आचार व्यवहार एवं गुण वाले हो सकते हैं। इनके अध्ययन से सामाजिक अध्ययनों में बहुत सारे तथ्यों को ज्ञात करने में सुविधा होती है। अतः सह सम्बन्ध के अध्ययन के माध्य से इनका वैज्ञानिक अध्ययन सम्भव हो पाता है।

प्रस्तावना (Introduction)

दो चरों के मध्य पाये जाने वाले सम्बन्ध को सहसम्बन्ध कहा जाता है। यह दो चरों से सम्बन्धित युग्म मापों (paired measurements) के रूप में प्रस्तुत समंकों के अध्ययन द्वारा ज्ञात किया जाता है। इन समंकों के अध्ययन के माध्यम से किसी भी शोध कार्य में व्यापक सुविधा होती है एवं इससे प्राप्त निष्कर्ष वैज्ञानिकता से युक्त होता है। इसलिये किसी भी प्रकार के सामाजिक अध्ययनों में सहसम्बन्ध का प्रयोग सुविधाजनक होता है एवं इससे प्राप्त निष्कर्ष वैज्ञानिकता से युक्त होता है।

सहसम्बन्ध का अर्थ एवं परिभाषा (Meaning and Definition of Correlation)

जब दो चरों के चर–मूल्य सहानुभूति में परिवर्तित होते हैं या परिवर्तित होते हुये दिखाई देते हैं, जिसमें एक चर में होने वाले परिवर्तनों के फलस्वरूप दूसरे चर में भी परिवर्तन होने की प्रवृत्ति पायी जाती है तो वे चर सहसम्बन्धित (Correlated) कहलाते हैं तथा चरों में साथ–साथ परिवर्तन होने की इस प्रवृत्ति को सहसम्बन्ध (Correlation) कहते हैं।

प्रो0 किंग के अनुसार, ''दो चरों (या श्रेणियों) के बीच कार्य–कारण सम्बन्ध को ही सहसम्बन्ध कहते हैं।''

प्रो0 कार्नर के अनुसार, ''जब दो या अधिक राशियां सहानुभूति में परिवर्तित होती हैं, जिससे एक में परिवर्तन के कारण दूसरे में भी परिवर्तन होता है तो वे सहसम्बन्धित कहलाती हैं।''

सहसम्बन्ध का प्रयोग उन समस्त क्षेत्रों (आर्थिक, सामाजिक, व्यावसायिक, आदि) में किया जाता है जहाँ दो या दो चरों के मध्य कारण–परिणाम सम्बन्ध पाया जाता है परन्तु अर्थशास्त्र में इस तकनीक का विशेष महत्व है। मूल्य तथा मांग, उत्पादन तथा रोजगार, मजदूरी तथा मूल्य सूचकांक, विनियोजित पूँजी एवं अर्जित लाभ तथा अन्य ऐसे ही तथ्यों में निकट का सम्बन्ध पाया जाता है।

सहम्बन्ध के अध्ययन का महत्व (Significance of the study of correlation)-

सांख्यकीय विश्लेषण में सहसम्बन्ध तकनीक का बहुत महत्व है। इस तकनीक का सर्व प्रथम आविष्कार सर फ्रान्सिस गाल्टन ने विन्दु रेखीय रूप से सम्बन्ध स्थापित करने में किया था किन्तु सन् 1896 में प्रसिद्ध सांख्यिकीविद कार्ल पिर्यसन ने सहसम्बन्ध गुणांक द्वारा सहसम्बन्ध ज्ञात करने की गणितीय विधि का प्रतिपादन कर उसे लोकप्रिय बनाया। इस तकनीक का भौतिक और सामाजिक विज्ञानों में अत्यधिक महत्व है। सहसम्बन्ध का महत्व निम्नलिखित विन्दुओं से स्पष्ट हो जायेगा–

1. चरों के मध्य सम्बन्धों को जानना–

आर्थिक, सामाजिक व वैज्ञानिक क्षेत्र में अक्सर दो या दो से अधिक समंक श्रेणियों में कुछ सम्बन्ध पाया जाता है। उदाहरण के लिये कीमत और पूर्ति अथवा आय व व्यय में कुछ सम्बन्ध होता है जिनमें आश्रितता का विधिवत अध्ययन सहसम्बध के अन्तर्गत किया जाता है।

2. एक चर के मूल्य के आधार पर दूसरे चर के मूल्य का लगना–

जब हमें यह विदित हो जाता है कि दो समंक श्रेणियां आपस में सम्बन्धित हैं तो एक दिये हुये निश्चित चर मूल्य के आधार पर दूसरी श्रेणी के सम्भावित चर मूल्य का अनुमान लगाया जा सकता है। यह प्रतीपगमन की सहायता से ज्ञात किया जाता है।

3.व्यवसाय में सहायक होना–

सहसम्बध विश्लेषण व्यवसाय के क्षेत्र में व्यवस्थापक को अपनी उत्पादित वस्तु की लागत बिक्री कीमत के अनुमान लगाने में सहायक होता है। इसका कारण यह है कि विज्ञापित व्यय एवं बिक्री की मात्रा के बीच घनिष्ठ सम्बन्ध होता है। अतः व्यवसायी विज्ञापन व्यय के आधार पर वस्तु की बिक्री की मात्रा के सम्बन्ध में निर्णय ले सकता है।

4. शोध को बढ़ाने तथा ज्ञान के नये क्षेत्रों की खोज में सहायक होना–

विभिन्न चरों के बीच पारस्परिक सम्बन्धों के अध्ययन से शोध को बढ़ाने तथा ज्ञान के नये क्षेत्रों को ज्ञात करने में सहसम्बध एक महत्वपूर्ण तकनीक हैं

5. अनिश्चितता की सीमा को कम करना–

सहसम्बध विश्लेषण पर आधारित अनुमान अधिक विश्वसनीय एवं निश्चित होते हैं। टिपैट का कथन है कि '' सहसम्बध का प्रभाव हमारी भविष्यवाणी की अनिश्चितता के विस्तार को कम करना है।''

6. अन्य महत्व–

सहसम्बध विश्लेषण आर्थिक व्यवहारों को समझाने में अधिक सहायक है। प्रतीपगमन और विचरण सहसम्बन्ध की माप पर ही आधारित होते हैं।

इस प्रकार व्यवहारिक जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में दो या दो से अधिक सम्बन्धित घटनाओं का तुलनात्मक अध्ययन करने, उनमें पारस्परिक सम्बन्ध को विवेचन करने तथा पूर्वानुमान लगाने में सहसम्बध के सिद्धान्त बहुत ही उपयोगी सिद्ध होते हैं।

सहसम्बन्ध तथा कारण परिणाम सम्बन्ध (Correlation and Causation)-

सहसम्बन्ध की सांख्यकीय तकनीक दो चरों के मध्य अत्यन्त ही घनिष्ठ सम्बन्ध स्पष्ट करती है, परन्तु उससे उनके बीच विद्यमान कारण परिणाम सम्बन्ध के बारे में कुछ भी स्पष्ट नहीं करती है और नहीं यह पता

लग पाता है कि कौन सा चर दूसरे की प्रतिक्रिया का कारण है। केवल तर्क अथवा आर्थिक चरों में व्यवहार का ज्ञान ही इसको स्पष्ट कर सकता है और इन प्रश्नों का उत्तर देने में सहायक हो सकता है। दो या अधिक चरों के मध्य प्रकार्य सम्बन्ध स्थापित करने के लिये सांख्यकीय विश्लेषण से बाहर अन्य कारकों की जानकारी आवश्यक होती है। प्रकार्य से तात्पर्य दो चरों के बीच आत्मनिर्भरता से है। प्रकार्य सम्बन्ध के बिना सहसम्बन्ध केवल सह–विचरण ही स्थापित करता है, जो अर्थहीन भी हो सकता है।

दो चरों के बीच उच्च–परिमाणीय सहसम्बन्ध विद्यमान होने के निम्नलिखित कारण हो सकते हैं–

1. एक चर दूसरे पर प्रभाव डालता हो–

ऐसी दशा में दोनों चरों में से एक चर वास्तव में स्वतंत्र होता है और इसीलिये अन्य प्रभावों से मुक्त रह कर दूसरे चर को जो वास्तव में आश्रित होता है, क्योंकि वह स्वतंत्र चर के परिवर्तनों से प्रभावित करता है। उदाहरण स्वरूप वर्षा तथा उत्पादन के मध्य सहसम्बन्ध ज्ञात करने में यह स्पष्ट ही है कि वर्षा कृषि उत्पादन का कारण है, कृषि उत्पादन वर्षा होने का कारण नहीं हो सकता।

2. दो चर एक दूसरे पर प्रतिक्रिया करते हों–

ऐसी दशा में चर एक दूसरे को प्रभावित करते हैं। उदाहरणार्थ, यदि किसी वस्तु की मांग व उसके मूल्य में उच्च परिमाणीय सहसम्बन्ध पाया जाय तो यह सम्भव हो सकता है कि मूल्य व मांग एक दूसरे पर प्रभाव डालते हों।

3. दो चर किन्हीं बाहरी प्रभावों के कारण आपस में प्रतिक्रिया करते हों–

ऐसी दशा में दो चरों के मध्य घनिष्ठ सहसम्बन्ध हो सकता है। क्योंकि दोनों ही बाहरी कारकों से अत्यधिक प्रभावित होते हैं। उदाहरण स्वरूप, कृषि उपज तथा खाद की प्रयुक्त मात्रा के मध्य घनिष्ठ सहसम्बन्ध वर्षा अथवा सिंचाई की सुविधाओं, बीज की किस्म, धूप आदि अन्य वाह्य कारकों के कारण हो सकता है। इन सभी कारकों का प्रभाव इन दो चरों पर पड़ता है जो आपस में मिल कर प्रतिक्रिया करते हैं। परन्तु जहां तक कृषि उपज तथा खाद के प्रयोग का सम्बन्ध है वे एक दूसरे को प्रभावित नहीं करते और न ही एक दूसरे के परिवर्तनों का कारण है।

सहसम्बन्ध के प्रकार

(Types of Correlation)-

सम्बन्धित चरों के मध्य परिवर्तन की दिशा, अनुपात एवं समंकमालाओं की संख्या के आधार पर सहसम्बन्ध के प्रकार निम्नवत् हैं–

1. धनात्मक तथा ऋणात्मक सहसम्बन्ध (Positive and Negative Correlation)- यदि दो पदमालाओं का परिवर्तन एक ही दिशा में होता है तो उनमें सहसम्बन्ध को प्रत्यक्ष अनुलोम अथवा धनात्मक सहसम्बन्ध कहते हैं। उदाहरण के लिये किसी वस्तु की मांग में वृद्धि के साथ ही उस वस्तु के मुल्य में भी वृद्धि होती है तो उसके बीच के सम्बन्ध को अनुलोम, प्रत्यक्ष या धनात्मक सहसम्बन्ध कहेंगे। प्रायः मांग एवं मूल्य में धनात्मक सम्बन्ध होता हैं इसके विपरीत यदि दो पद मालाओं में परिवर्तन एक ही दिशा में न होकर विपरीत दिशाओं में होते हैं तो उन दो मालाओं के सहसम्बन्ध को प्रतीप (Inverse), अप्रत्यक्ष, विलोम या ऋणात्मक करते हैं। उदाहरण के लिये यह देखा जाता है कि पूर्ति की वृद्धि के साथ साथ मूल्य घटता जाता है इसलिये पूर्ति व मूल्य में ऋणात्मक सहसम्बन्ध है।

2. रेखीय और अरेखीय या वक्ररेखीय सहसम्बन्ध (Linear and Curvilinear Correlation)-जब दो चरों में परिवर्तन का अनुपात स्थाई रूप से समान होता है अर्थात जब दो चरों में विचरण का अनुपात सदैव एक सा हो, तो इस प्रकार के सम्बन्ध को रेखीय सहसम्बन्ध कहते हैं। इसे यदि विन्दु रेखीय पत्र पर अंकित किया जाय तो एक सीधी रेखा बनेगी। इस प्रकार का सहसम्बन्ध भौतिक तथा गणितीय विज्ञानों में पाया जाता है। सामाजिक तथा आर्थिक क्षेत्रों में यह सम्भव नहीं है। उदाहरण स्वरूप यदि किसी कारखाने में मजदूरों की संख्या को दोगुना कर देने पर उत्पादन भी दो गुना हो जाय तो इसे रेखीय सहसम्बन्ध कहेंगे। इसके विपरीत यदि परिवर्तन का अनुपात स्थायी रूप से समान नहीं होता तो सहसम्बन्ध को अरेखीय या वक्र रेखीय कहते हैं।

3. सरल, बहुगुणी एवं आंशिक सहसम्बन्ध (Simple, Multiple and Partial Correlation)-दो चर मुल्यों के बीच पाये जाने वाले सहसम्बन्ध को सरल सहसम्बन्ध कहते हैं। इस दो चर मूल्यों में से एक कारण तथा स्वतंत्र श्रेणी कहलाता है और दूसरा परिणाम या आश्रित श्रेणी कहलाता है। बहुगुणी सहसम्बन्ध तब होता है जब दो या दो से अधिक स्वतंत्र चर मूल्य होते हैं और आश्रित चर मूल्य केवल एक होता है। इन सभी स्वतंत्र मूल्यों का आश्रित चर मूल्यों पर सम्मिलित प्रभाव पड़ता है। आंशिक सहसम्बन्ध तब होता है जब दो से अधिक चर मूल्यों का अध्ययन किया जाता है परन्तु अन्य चर मूल्यों के प्रभाव को स्थिर रख कर केवल दो चर मूल्यों में सहसम्बन्ध ज्ञात किया जाता है।

सहसम्बन्ध ज्ञात करने की विधियां (Methods of Determining Correlation)-

दो या दो से अधिक श्रेणियों में सहसम्बन्ध ज्ञात करने की निम्नलिखित विधियां हैं–

1. विन्दुरेखीय विधि (The Graphic Methods)
2. विक्षेप विन्दु (Scatter Diagram)
3. सहसम्बन्ध सारणी (Correlation Table)
4. स्पियरमैन की श्रेणी–अन्तर विधि (Spearman's Ranking Method)
5. संगामी विचलन गुणांक (Coefficient of Concurrent Deviation)
6. कार्ल पियर्सन का सहसम्बन्ध गुणांक (Karl Pearson's Cofficient of Correlation)
7. न्यूनतम वर्ग विधि (Coefficient of Correlation by the method of Least Squares)

उपरोक्त 7 विधियों द्वारा ही सहसम्बन्ध की गणना की जाती है परन्तु स्पियरमैन की श्रेणी–अन्तर विधि एवं कार्ल पियर्सन के सहसम्बन्ध गुणांक के माध्यम से ही सहसम्बन्ध ज्ञात करने की विधियां विशेष रूप से प्रचलित हैं।

सहसम्बन्ध का परिमाण (Degree of correlation)

सहसम्बन्ध गुणांक के द्वारा सहसम्बन्ध का अंकीय परिमाण ज्ञात किया जाता है। इसी आधार पर धनात्मक और ऋणात्मक सहसम्बन्ध के निम्नलिखित परिमाण हो सकते हैं–

1. पूर्ण सहसम्बन्ध (Perfect correlation)-

जब दो समंक मालाओं के परिवर्तन एक ही दिशा में और समान अनुपात में हों तो उनमें पूर्ण धनात्मक सहसम्बन्ध होगा। ये पूर्ण धनात्मक सहसम्बन्ध +1 के रूप में प्रकट किया जाता है। इसके विपरीत जब दो समंक मालाओं में परिवर्तन का अनुपात तो समान हो परन्तु विपरीत दिशा में हो तो वहाँ पूर्ण ऋणात्मक सहसम्बन्ध होता है। ऐसी स्थिति में सहसम्बन्ध गुणांक –1 होता है। यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि पूर्ण सहसम्बन्ध बहुत कम मिलता है। यह भौतिक तथा गणित सम्बन्धी विज्ञानों में ही पाया जाता है।

2. सहसम्बन्ध की अनुपस्थिति (Absence of correlation)–

जब दो समंकमालाओं के परिवर्तन के मध्य किसी प्रकार की आश्रितता नहीं पायी जाती अर्थात एक श्रेणी के परिवर्तन का प्रभाव दूसरी श्रेणी पर बिल्कुल नहीं पड़ता तो वहाँ सहसम्बन्ध की अनुपस्थिति होती है। इसे हम सहसम्बन्ध का अभाव कह कर पुकारते हैं। यहाँ पर सहसम्बन्ध गुणांक की मात्रा शून्य होती है।

3. सहसम्बन्ध का सीमित परिमाण (Limited Degrees of correlation)––

जब दो समंकमालाओं में न तो सहसम्बन्ध का अभाव होता है और न ही उसमें पूर्ण सहसम्बन्ध होता है अर्थात दोनों के मध्य की स्थिति होती है तब वहाँ सीमित मात्रा का सहसम्बन्ध पाया जाता है। यहाँ सहसम्बन्ध गुणांक शून्य (0) और एक (1) के मध्य होता है। यह धनात्मक एवं ऋणात्मक दोनों ही हो सकता है। सामाजिक एवं व्यावसायिक क्षेत्रों में अधिकतर इसी प्रकार का सहसम्बन्ध पाया जाता है।

सीमित सहसम्बन्ध भी निम्नलिखित तीन प्रकार का होता है–

(अ) उच्च स्तरीय सहसम्बन्ध (High Degree of correlation)––

जब श्रेणियों में सहसम्बन्ध पूर्ण न हो फिर भी अधिक मात्रा में हो तो वहाँ उच्च स्तर का सहसम्बन्ध पाया जाता है। ऐसी स्थिति में सहसम्बन्ध गुणांक 0.75 एवं 1 के मध्य पाया जाता है। सामान्यतः यह .9 के समीप होता

है। सहसम्बन्ध गुणांक धन (+) होने पर उच्च स्तर का धनात्मक सहसम्बन्ध तथा (–) ऋण होने पर उच्च स्तर का ऋणात्मक सहसम्बन्ध होता है।

(ब) मध्य स्तर का सहसम्बन्ध (Moderate Degree of correlation)––

जब सहसम्बन्ध की मात्रा न तो उच्च स्तर की हो न बहुत ही कम हो तो वहाँ मध्य स्तर का सहसम्बन्ध होता है। यहाँ सहसम्बन्ध गुणांक .50 और .75 के मध्य होता है। यह धनात्मक एवं ऋणात्मक दोनों ही हो सकता है।

(स) निम्न स्तर का सहसम्बन्ध (Low Degree of correlation)––

जब दो समंकमालाओं में सहसम्बन्ध तो होता है, परन्तु बहुत ही कम मात्रा में तो वहाँ निम्न स्तर का सहसम्बन्ध पाया जाता है। यहाँ सहसम्बन्ध गुणांक शून्य (0) एवं .5 के मध्य होता हैं यह भी धनात्मक एवं ऋणात्मक दोनों ही हो सकता है।

सहसम्बन्ध परिमाण

सहसम्न्ध परिमाण	धनात्मक (Positive) सहसम्बन्ध गुणांक का मान	ऋणात्मक (Negative) सहसम्बन्ध गुणांक का मान
पूर्ण (Perfect)	+1	–1
उच्च स्तरीय (High Degree)	+0.75 तथा +1 के मध्य	–0.75 तथा –1 के मध्य
मध्य स्तरीय (Moderate Degree)	+0.5 तथा + 0.75 के मध्य	–0.5 तथा –0.75 के मध्य
निम्न स्तरीय (No Correlation)	0 (शून्य)	0 (शून्य)

स्पियरमैन की श्रेणी–अन्तर विधि

(Spearman's Ranking Method)

प्रोफेसर चार्ल्स स्पियरमैन ने सहसम्बन्ध गुणांक ज्ञात करने की विधि का अन्वेषण किया है। इस विधि को स्पियरमैन की श्रेणी या क्रमान्तर विधि अथवा अनुस्थिति विधि भी कहते हैं। यहाँ सहसम्बन्ध गुणांक ज्ञात करते समय श्रेणियों के मूल्य का ज्ञात होना आवश्यक नहीं केवल मूल्य के अनुसार पदों का क्रम जान लेने से ही काम चल जाता है। सबसे बड़े मूल्य को पहला क्रम, उससे छोटे को दूसरा, उससे छोटे को तीसरा इसी क्रमानुसार क्रम देते हैं।

यह विधि वहाँ के लिये भी उपयुक्त है जहाँ तथ्य को निश्चित संख्या में व्यक्त करना कठिन हो परन्तु उन्हें क्रम में व्यक्त किया जा सके, जैसे गुणात्मक तथ्य। उदाहरण के लिये कुछ व्यक्तियों में यह देखना है कि सुन्दरता एवं स्वास्थ्य में किस मात्रा का सहसम्बन्ध गुणांक है ? सुन्दरता को संख्या में वयक्त करना कठिन है। इसलिये मान लीजिये वहाँ उन व्यक्तियों को सुन्दरता के विचार से क्रमवार रख दिया गया है, जैसे पहला, दूसरा, तीसरा, आदि। इसी प्रकार शरीर का गठन, ऊँचाई, वजन, रोग, शक्ति आदि का विचार करके स्वास्थ्य को निश्चित संख्या में व्यक्त करने की अपेक्षा क्रमवार रखना सरल है। अब सुन्दरता व स्वास्थ्य में सहसम्बन्ध गुणांक ज्ञात किया जा सकता है।

विशेषतायें–

स्पियरमैन विधि की निम्नलिखित विशेषतायें हैं–

1. यह एक अत्यन्त सरल एवं बोधगम्य विधि है जिसकी गणना अत्यन्त ही सरल है।
2. यदि पदों के वास्तविक मान ज्ञात न हों परन्तु उनका क्रम ज्ञात हो तो सहसम्बन्ध गुणांक की गणना की जा सकती है।

3. यह विधि व्यक्तिगत अध्ययनों हेतु भी उपयुक्त है। इसमें पद मूल्यों के निरपेक्ष मान का उतना महत्व नहीं है जितना उसके सापेक्ष या तुलनात्मक मानों का है।
4. यह विधि वहाँ सरलता व सफलता पूर्वक अपनायी जा सकती है जहाँ पदों की अधिक से अधिक संख्या लगभग 25 से 30 हो। पदों की संख्या बहुत अधिक होने पर इसका प्रयोग कठिन हो जाता है।

कोटि सहसम्बन्ध गुणांक निकालने की क्रिया विधि–

1. दोनों श्रेणी के पद मूल्यों को अलग–अलग क्रम प्रदान करते हैं, सबसे बड़े पद मूल्य को 1, उससे छोटे को 2 और इसी प्रकार क्रम बढ़ता जाता है।

समान पद मूल्य होने पर–

कभी कभी ऐसा भी हो सकता है कि दो या अधिक पद मूल्य समान हों तो इसको क्रम प्रदान करने की दो विधियां अपनायी जाती हैं–

(i) कोष्ठ क्रम विधि (Bracket Rank Method)-

समान पद मूल्यों को समान क्रम दिया जाय परन्तु उनके बाद वाले पद को वही क्रम दिया जायेगा जो पदों के समान न रहने पर दिया जाता है। उदाहरण के लिये 20, 25, 22, 21 एवं 22 संख्यायें हैं। यहाँ 25 को क्रम 1 और दोनों 22 को 2 एवं तीन क्रम, 21 को 4 एवं 20 को क्रम 5 दिया जायेगा।

(ii) माध्य क्रम विधि (Average Rank Method)-

(1) समस्त समान पदों को उनके क्रम पदो के माध्य क्रम से क्रम दिया जाता है। जैसे एक श्रेणी का सबसे बड़ा पद 30 है और उसमें 25 तीन बार आया है, अतः 30 को क्रम 1 तथा तीनों 25 को 3–3 क्रम दिया जायेगा। क्योंकि 2+3+4 = 9 = 3 परन्तु इस 25 के बाद वाले पद का क्रम 5 वां होगा।

(2) दोनों श्रेणियों के क्रमों को क्रमशः घटा कर क्रम–अन्तर (D) ज्ञात कर लेते हैं। क्रमान्तर का योग (ΣD) सर्वदा शून्य होता है।

(3) इन क्रमान्तरों का वर्ग निकाल लेते हैं, अर्थात D^2।

(4) क्रमान्तरों के वर्गों को जोड़ लेते हैं। यह ΣD^2 होता है।

(5) निम्नलिखित सूत्र का प्रयोग करके क्रमान्तर सहसम्बन्ध गुणांक की गणना करते हैं।

$$r_s = 1- \frac{6\ \Sigma D^2}{N\ (N^2-1)}$$

समान क्रम होने पर सूत्र में परिवर्तन हो जाता है। यदि किसी श्रेणी में एक से अधिक पदों का मूल्य समान होता है तो उपरोक्त सूत्र में परिवर्तन करना पड़ता है।

$$r_s = 1- \frac{6[\ \Sigma D^2 + 1/12\ (m^3-m) + \text{------}]}{N\ (N^2-1)}$$

पदमाला के जितने पदों की पुनरावृत्ति होगी, उतनी ही बार 6 ΣD^2 में $1/12\ (m^3-m)$ को जोड़ते हैं। यहाँ उस पद की आवृत्ति है जो एक से अधिक बार आया है।

उदाहरण– किसी सुन्दरता प्रतियोगिता में 10 प्रतियोगियों को तीन निर्णायकों द्वारा निम्न क्रम में रखा गया–

प्रथम निर्णायक	1	6	5	10	3	2	4	9	7	8

द्वितीय निर्णायक	3	5	8	4	7	10	2	1	6	9
तृतीय निर्णायक	6	4	9	8	1	2	3	10	5	7

कोटि सहसम्बन्ध का प्रयोग करते हुये यह ज्ञात कीजिएकि निर्णायकों के किस जोड़े की सुन्दरता के प्रति निकटतम समान रूचि है।

हल–

तीनों निर्णायकों के दो–दो के जोड़े बना कर तीन कोटि सहसम्बन्ध गुणांक ज्ञात करें–

प्रथम जज द्वारा प्रदत्त कोटि–R_1

द्वितीय जज द्वारा प्रदत्त कोटि–R_2

तृतीय जज द्वारा प्रदत्त कोटि–R_3

R_1	R_2	R_3	$D_{12} = R_1 - R_2$	D^2_{12}	$D_{23} = R_2 - R_3$	D^2_{23}	$D_{13} = R_1 - R_3$	D^2_{13}
1	3	6	–2	4	–3	9	–5	25
6	5	4	1	1	1	1	2	4
5	8	9	–3	9	–1	1	–4	16
10	4	8	6	36	–4	16	2	4
3	7	1	–4	16	6	36	2	4
2	10	2	–8	64	8	64	0	0
4	2	3	2	4	–1	1	1	1
9	1	10	8	64	–9	81	–1	1
7	6	5	1	1	1	1	2	4
8	9	7	–1	1	2	4	1	1
योग	–	–	00	200	00	214	00	60

$$r_s(I, II) = 1 - \frac{6\,\Sigma D^2}{N(N^2-1)}$$

$$r_s(I, II) = 1 - \frac{6 \times 200}{10 \times 99}$$

$$r_s(I, II) = 1 - 1.212 = -.212$$

$$r_s(II, III) = 1 - \frac{6\,\Sigma D^2_{23}}{N(N^2-1)}$$

6x 214

$$r_s(II, III) = 1 - \frac{}{10 \times 99}$$

$$r_s(II, III) = 1 - 1.297 = -.297$$

$$r_s(I, III) = 1 - \frac{6\ \Sigma D^2_{13}}{N(N^2-1)}$$

$$r_s(I, III) = 1 - \frac{6 \times 60}{10 \times 99}$$

$$r_s(I, III) = 1 - .364 = +.636$$

गणना से स्पष्ट है कि जजों I, III के जोड़े की सुन्दरता के प्रति निकटतम समान रूचि है। जजों II, III के जोड़े की सुन्दरता के प्रति असमान रूचि है।

उदाहरण– कोटि अन्तर की विधि द्वारा X व Y के मध्य सहसम्बन्ध गुणांक की गणना कीजिए ?

X	20	22	24	25	30	32	28	21	26	35
y	16	15	20	21	19	18	22	24	23	25

हल–

X	R_x	y	R_y	$D = R_x - R_y$	D^2
20	10	16	9	+1	1
22	8	15	10	−2	4
24	7	20	6	+1	1
25	6	21	5	+1	1
30	3	19	7	−4	16
32	2	18	8	−6	36
28	4	22	4	0	0
21	9	24	2	+7	49
26	5	23	3	+2	4
35	1	25	1	0	0
N = 10		N= 10			$\Sigma D^2 = 112$

$$r_s = 1 - \frac{6\ \Sigma D^2}{N(N^2-1)}$$

$$r_s = 1 - \frac{6 \times 112}{}$$

10x 99

r = + 0.32 लगभग

निम्न परिमाण का धनात्मक सहसम्बन्ध।

कार्ल पियर्सन सहसम्बन्ध गुणांक के मुख्य लक्षण (Main Characteristics of Karl Pearson's Coefficient of Correlation)

1. सह–विचरण का अच्छा माप
2. दिशा का मान
3. सीमाओं व मात्रा का ज्ञान
4. आवृत्ति का महत्व
5. कार्य–कारण सम्बन्ध नहीं बताता
6. आदर्श माप
7. गणना कठिन
8. परिमाण के निर्वचन की आवश्यकता

कार्ल पियर्सन सहसम्बन्ध गुणांक की परिकल्पनायें (Assumptions of Karl Pearson's Coefficient of Correlation)

कार्ल पियर्सन सहसम्बन्ध गुणांक की परिकल्पनायें निम्नवत हैं–

1. दोनों श्रेणियों में रेखीय सम्बन्ध होता है।
2. समंक माला को प्रभावित करने वाले स्वतंत्र कारणों में आपस में कारण व प्रभाव का सम्बन्ध होता है।
3. जो समंक मालायें सहसम्बन्धित होती हैं उन्हें अनेक स्वतंत्र कारण प्रभावित करते हैं। फलस्वरूप अंक बंटन में प्रसामान्यतया और सम्भाविता होती है।

कार्ल पियर्सन का सहसम्बन्ध गुणांक निकालने की विधि (Method of Calculation of Karl Pearson's Coefficient of Correlation)

प्रत्यक्ष विधि (Direct Method)–

इस विधि से सहसम्बन्ध गुणांक निकालने की विधि निम्नवत् है–

सूत्र–

$$r = \frac{\text{सह–विचरण की माप}}{(X \text{ का प्रमाप विचलन}) \times (Y \text{ का प्रमाप विचलन})}$$

$$r = \frac{\Sigma D_X D_Y / N}{\sigma_x \sigma_y}$$

जहाँ $D_X = X - \bar{x}$ या X के माध्य से विचलन

$D_Y = Y - \overline{YY}$ या Y के माध्य से विचनलन

1. यहाँ दोनों श्रेणियों का समान्तर माध्य ज्ञात करते हैं।
2. समान्तर माध्यों से दोनों तत्सम्बन्धी श्रेणियों के पदों का अलग अलग विचलन निकालते हैं। सामान्यतः पहले श्रेणी के विचलन को D_X एवं दूसरे श्रेणी के विचलन को D_Y कहते हैं।

3. दोनों श्रेणियों के पदों के आमने सामने के विचलन को गुणा (D_XD_Y) करके उन सबका योग (ΣD_XD_Y) प्राप्त कर लेते हैं।
4. दोनों श्रेणियों का अलग अलग प्रमाप विचलन (σ_x और σ_y) ज्ञात करते हैं।
5. अब दोनों श्रेणियों के विचलनों के गुणनफलों के योग (ΣD_XD_Y) में पदों की संख्या, तथा पहली श्रेणी के प्रमाप विचलन और दूसरी श्रेणी के प्रमाप विचलन के गुणनफल ($\sigma_x \sigma_y$)का भाग दे देते हैं। प्राप्त भजनफल सहसम्बन्ध गुणांक होता है।

जहाँ–

r = सहसम्बन्ध गुणांक
ΣD_XD_Y= X और Y श्रेणी के विचलनों के गुणनफलों का योग
N = पदों की संख्या
σ_x = X श्रेणी का प्रमाप विचलन
σ_y = Y श्रेणी का प्रमाप विचलन

सरल प्रत्यक्ष विधि–

उपयुक्त विधि के अनुसार दोनों श्रेणियों के अलग अलग प्रमाप विचलन ज्ञात करने होते हैं जिसमें काफी समय लगता है। अतः कार्लपियर्सन सूत्र में σ_x और σ_y के स्थान पर उनके सूत्र को रख कर इसे सरलता पूर्वक किया जा सकता है। इस स्थिति में सूत्र इस प्रकार होगा–

$$r = \frac{\Sigma D_XD_Y / N}{\sqrt{\frac{\Sigma d^2_X}{N} \times \frac{\Sigma d^2_X}{N}}}$$

$$r = \frac{\Sigma D_XD_Y}{\sqrt{\Sigma d^2_X \times \Sigma d^2_y}}$$

उदाहरण–

निम्न आंकड़ों की सहायता से कार्ल पियर्सन सहसम्बन्ध गुणांक की गणना कीजिए?

X	11	10	9	8	7	6	5
Y	20	18	12	8	10	5	4

हल–

X	$D_X = x - \bar{x}$	d^2_x	y	$D_Y = Y - \overline{YY}$	d^2_y	d_xd_y
11	3	9	20	9	81	27
10	2	4	18	7	49	14
9	1	1	12	1	1	1
8	0	0	8	–3	9	0
7	–1	1	10	–1	1	1
6	–2	4	5	–6	36	12
5	–3	9	4	–7	49	21
Σx =10	00	Σd^2_x = 28	Σy =10	00	Σd^2_Y = 226	Σd_xd_y= 76

चूंकि एवं पूर्णांक है, अतः वास्तविक माध्य से विचलन (प्रत्यक्ष विधि) ही उचित है।

$$\bar{x} = \frac{\Sigma x}{N}$$

$$\bar{x} = \frac{56}{7}$$

$$\bar{x} = 8$$

$$\overline{YY} = \frac{\Sigma y}{N}$$

$$\overline{YY} = \frac{77}{7}$$

$$\overline{Y}\overline{Y} = 11$$

कार्ल पियर्सन सहसम्बन्ध गुणांक,

$$r = \frac{\Sigma D_X D_Y}{\sqrt{\Sigma d^2_X x\ \Sigma d^2_y}}$$

$$r = \frac{76}{\sqrt{28 \times 226}}$$

$$r = \frac{76}{\sqrt{79.55}}$$

$$r = 0.96$$

कार्ल पियर्सन सहसम्बन्ध गुणांक के मुख्य लक्षण–

1. सह–विचरण का अच्छा माप–

यह गुणांक श्रेणी के सभी पदों पर आधारित है और सभी को महत्व प्रदान करता है। सह–विचरण की मात्रा, दोनों श्रेणियों के समान्तर माध्यों से लिये गये विचलनों के गुणनफलों के योग में पदों की संख्या से भाग देकर प्राप्त की जाती है।

सहसम्बन्ध को परिभाषित करते समय सह–विचरण की निरपेक्ष माप को गुणांक में परिवर्तित करने के लिये इसे दोनों श्रेणियों के प्रमाप विचलनों के गुणनफल से भाग दिया जाता है। अतः सहसम्बन्ध गुणांक वास्तव में सह–विचरण के माप का ही गुणांक है अर्थात सहसम्बन्ध गुणांक सह–विचरण की मात्रा को भी स्पष्ट रूप से व्यक्त करता है।

2. दिशा का मान–

गुणांक में धन का चिन्ह (+) धनात्मक सहसम्बन्ध एवं ऋण का चिन्ह (–) ऋणात्मक सहसम्बन्ध को प्रदर्शित करता है।

3. सीमाओं व मात्राओं का ज्ञान–

+1 एवं –1 के बीच सहसम्बन्ध गुणांक सदैव रहता है। +1 पूर्ण धनात्मक सहसम्बन्ध गुणांक एवं –1 पूर्ण ऋणात्मक सहसम्बन्ध गुणांक का प्रकट करता है। सहसम्बन्ध गुणांक यदि शून्य हो तो वहाँ सहसम्बन्ध को अभाव परिलक्षित होता है।

4. आवृत्ति को महत्व–

सहसम्बन्ध गुणांक समंक श्रेणियों की दिशाओं (+ और –) के साथ उनकी आवृत्ति को भी महत्व देता है अर्थात प्रत्येक मूल्य की मात्रा को भी ध्यान में रखता है।

5. कार्य–कारण सम्बन्ध को नहीं बताता–

यह गुणांक सहसम्बन्ध बताता है, परन्तु इस विषय पर कुछ भी प्रकाश नहीं डालता कि श्रेणियों के बीच कार्य–कारण सम्बन्ध है अथवा नहीं।

6. आदर्श माप–

यह गुणांक समान्तर माध्य तथा प्रमाप विचलन पर आधारित है, अतः इसे सहसम्बन्ध का आदर्श माप कहा जा सकता है।

7. गणना कठिन–

इस गुणांक की गणना अपेक्षाकृत कठिन होती है, अतः गणित का सामान्य ज्ञान रखने वाला विद्यार्थी ही इसकी गणना कर सकता है।

8. परिमाण के निर्वाचन की आवश्यकता–

इसके परिमाण यदि यूँ ही लिख दिये जाय तो जनसाधारण के लिये समझना कठिन है। इस परिमाण को ऐसे सरल शब्दों में प्रगट करने की आवश्यकता पड़ती है जो सर्वसाधारण की समझ में सरलता से आ जाये।

कार्ल पियर्सन सहसम्बन्ध गुणांक की परिकल्पनायें
(Assumption of Karl Pearson's Coefficient of Correlation)

कार्लपियर्सन सहसम्बन्ध गुणांक निम्नलिखित परिकल्पनाओं पर आधारित है–

1. जो समंकमालायें सहसम्बन्धित होती हैं उन्हें अनेक स्वतंत्र कारण प्रभावित करते हैं। फलस्वरूप अंक बंटन में प्रसामान्यतया (normality) और सम्भाविता (Probability) होती है।
2. समंकमाला को प्रभावित करने वाले स्वतंत्र कारणों में आपस में कारण व प्रभाव (cause and effect) का सम्बन्ध होता है।
3. दोनों श्रेणियों में रेखीय (linear relation) सम्बन्ध होता है।

निष्कर्ष (Correlation)

सहसम्बन्ध के उपर्युक्त अध्ययन से स्पष्ट है कि सहसम्बन्ध का प्रयोग किसी भी सामाजिक विज्ञान के अध्ययन में किया जा सकता है। अध्ययनों में इसके प्रयोग से वैज्ञानिक तथ्यों के समावेश होता है जिससे सम्बधित विषय को वैज्ञानिक बनाया जा सकता है तथा तथ्य पूर्ण निष्कर्षों को प्राप्त किया जा सकता है। साथ ही यह तथ्य

भी ध्यान देने योग्य है कि वर्तमान में के परिवेष में सहसम्बन्ध गुणांक का अध्ययन विविध तथ्यों के अध्ययनों में सहायक सिद्ध हो रहा है एवं इन अध्ययनों में वैज्ञानिकता का समावेश हो रहा है।

मॉडल प्रश्न (Model Questions)

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. निम्नलिखित आंकड़ों की सहायता से कार्लपियर्सन सहसम्बन्ध गुणांक की गणना कीजिए?

x	40	45	28	42	48	20	36	40
y	50	47	38	40	45	28	38	48

उत्तर–r = 0.82

2. निर्यात X एवं आयात Y के निम्न आंकड़ों से कार्लपियर्सन सहसम्बन्ध गुणांक की गणना कीजिए?

X	42	44	58	55	89	98	66
Y	56	49	53	58	65	76	59

उत्तर–r = 0.904

3. निम्न आंकड़ों की सहायता से कार्लपियर्सन सहसम्बन्ध गुणांक की गणना कीजिए?

मजदूरी	100	101	102	102	100	99	97	98	96	95
सूचकांक	98	99	99	97	95	92	95	94	90	91

उत्तर–r = 0.847

4. निम्नलिखित आंकड़ों की सहायता से स्पियरमैन कोटि विधि द्वारा सहसम्बन्ध गुणांक की गणना कीजिए?

X	80	78	75	75	68	67	60	59
Y	110	111	114	114	114	116	115	117

उत्तर–r = 0.93

5. निम्नलिखित आंकड़ों की सहायता से स्पियरमैन कोटि विधि द्वारा सहसम्बन्ध गुणांक की गणना कीजिये?

X	115	109	112	87	98	98	120	100	98	118
Y	75	73	85	70	76	65	82	73	68	80

उत्तर–r = 0.73

6. सहसम्बन्ध से आप क्या समझते हैं ? धनात्मक और ऋणात्मक सहसम्बन्ध में अन्तर स्पष्ट कीजिए?
7. कोटि सहसम्बन्ध से आप क्या समझते हैं ?
8. स्पियरमैन का कोटि सहसम्बन्ध गुणांक की परिभाषा दीजिये तथा इसकी सीमायें बताइयें ?
9. अनुस्थिति क्या है ? अनुस्थिति और अनुस्थिति सहसम्बन्ध गुणांक के उपयोग का एक उदाहरण दीजिए ?
10. कार्ल पियर्सन सहसम्बन्ध गुणांक की परिभाषा दीजिये तथा इनकी सीमायें बताइये ?

लघुउत्तरीय प्रश्न

1. सहसम्बन्ध किसे कहते हैं ? इसे मापने की दो विधियां बताइये ?
2. बहुगुणी रेखीय प्रतिमान का क्या आशय है ?
3. सहसम्बन्ध गुणांक का सम्भाव्य विभ्रम क्या है ?
4. सहसम्बन्ध गुणांक में विलम्बना और अग्रगमन से क्या आशय है ?
5. सह विचरण को सूत्र सहित स्पष्ट कीजिए?
6. अन्तर रीति से सहसम्बन्ध गुणांक कैसे ज्ञात किया जाता है।
7. सहसम्बन्ध गुणांक में निश्चयन गुणांक की व्याख्या कीजिए?
8. सहसम्बन्ध के विभिन्न प्रकार की मात्रा समझाइये ?
9. सहसम्बन्ध की संगामी विचलन रीति को स्पष्ट कीजिए?

10. सहसम्बन्ध के विभिन्न प्रकार क्या हैं ?

11. शून्य श्रेणी के सहसम्बन्ध गुणांक से आप क्या समझते हैं ?

12. सरल, आंशिक और बहुगुणी सहसम्बन्ध को समझाइये ?

13. बहुगुणी रेखीय प्रतीप गमन का क्या आशय है ?

14. कार्ल पियरसन सहसम्बन्ध गुणांक की विशेषतायें बताइये ?

15. विक्षेप चित्र से आप क्या समझते हैं ?

बहुविकल्पीय प्रश्न

1. धनात्मक पूर्ण सहसम्बन्ध होता है–

(a) +1 (b) −1

(c) 0 (d) इनमें से कोई नहीं

2. सहसम्बन्ध की गणना रीति नहीं है–

(a) कार्ल पियर्सन सहसम्बन्ध गुणांक

(b) फिशर का सहसम्बन्ध गुणांक

(c) स्पियर मैन का श्रेणी अन्तर रीति

(d) संगामी विचलन रीति

3. सहसम्बन्ध का अभाव होता है–

(a) विभिन्न विन्दु चारों ओर बिखरे हों

(b) इनमें कोई निश्चित प्रवृत्ति स्पष्ट न हो

(c) उपर्युक्त दोनों

(d) उपर्युक्त में से कोई नहीं

4. कार्ल पिर्यसन रीति का प्रतिपादन हुआ था–

(a) 1890 (b) 1980

(c) 1900 (d) 1920

5. सहसम्बन्ध का प्रमाण नहीं होता–

(a) जब r सम्भाव्य विभ्रम से अधिक हो

(b) जब r सम्भाव्य विभ्रम से कम हो

(c) जब r सम्भाव्य विभ्रम के बराबर हो

(d) उपर्युक्त में से कोई नहीं

6. सहसम्बन्ध सार्थक होता है–

(a) जब r सम्भाव्य विभ्रम का दुगुना हो

(b) जब r सम्भाव्य विभ्रम का तिगुना हो

(c) जब r सम्भाव्य विभ्रम का छः गुना हो

(d) जब r सम्भाव्य विभ्रम का चार गुना हो

7. निश्चियन गुणांक सहसम्बन्ध गुणांक को होता है–

(a) r^2 (b) r^3

(c) r (d) r^4

8. कार्ल पिर्यसन का सहसम्बन्ध गुणांक दिखाया जाता है–

(a) r^n (b) r^c (c) r (d) r^k

9. सम्भाव्य विभ्रम की गणना हेतु प्रयोग किया जाता है–

(a) 0.6745 (b) 0.6754

(c) 0.6725 (d) 0.6741

10. संगामी विचलन रीति का प्रतिपादन किया –

(a) कार्ल पिर्यसन (b) स्पियरमैन

(c) प्रो0 संगामी (d) इनमें से कोई नहीं

संदर्भ पुस्तकें(Referenced Books)

- शुक्ल, एस0 एम0 एवं एस0 पी0 सहाय, सांख्यिकी के सिद्धान्त, 2004, साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा
- चौहान, पी0आर0, प्रयोगात्मक भूगोल, 2013, बसुन्धरा प्रकाशन, गोरखपुर
- मोहम्मद, हारून, प्रयोगात्मक भूगोल, 2010, मिश्रा ट्रेडिंग कारपोरेशन, मैदागिन, वाराणसी
- सिन्हा, वी0सी0 एवं आलोक गुप्ता, व्यावसायिक सांख्यिकी, 2010 एस बी पी डी पब्लिकेशन्स, आगरा

इकाई–13 (Unit- 13)
लारेंज वक्र (Lorenz Curve)

पाठ संरचना (Structure of Lesson)

1. उद्देश्य (Objectives)
2. प्रस्तावना (Introduction)
3. व्यक्तिगत श्रेणी में लारेंज वक्र (Lorenz Curve in Individual Series)
4. खण्डित श्रेणी में लारेंज वक्र (Lorenz Curve in Discrete Series)
5. सतत् श्रेणी में लारेंज वक्र (Lorenz Curve in Continuous Series)
6. लारेन्ज वक्र का विश्लेषण व निष्कर्ष (Analysing and Summarising the Lorenz Curve)
7. लारेन्ज वक्र के गुण–दोष (Merits and Demerits of Lorenz Curve)
8. प्रकीर्णन आरेख (Scatter Diagram)
9. उच्चतामितीय वक्र (Hypsographic Curve)
10. प्रतिशत उच्चतादर्शी वक्र (Percentage Hypsographic Curve)
11. संदर्भ पुस्तकें (Referenced Books)

उद्देश्य (Objectives)

लारेंज वक्र के अध्ययन का उद्देश्य प्रस्तुत आंकड़ों को और अधिक वैज्ञानिक ढ़ंग से व्यवस्थित करके उनका आलेखीय प्रदर्शन भी करना है जिससे कि आंकड़ों की सही स्थिति का ज्ञान हो सके। इसके माध्यम से विभिन्न प्रकार के आंकड़ों का आलेखीय प्रदर्शन किया जा है जिससे कि विषय वस्तु का ठीक ढ़ंग से आकलन किया जा सके एवं इसके माध्यम से निष्कर्ष को प्राप्त किया जा सके।

प्रस्तावना (Introduction)

अपकिरण की विभिन्न मापें, जिनका विवेचन किया गया है, एक अर्थ में असमानता (Inequality) की मापें हैं। अपकिरण की मात्रा जितनी अधिक होगी, समग्र की इकाइयों में अध्ययन असमानता भी उतनी ही अधिक होगी। यदि प्रसरण (Variance) शून्य होता है तो समग्र की सभी इकाईया समान होती हैं और इस प्रकार उनमें समानता पायी जाती है। यदि एक विशेष प्रकार की तुलना के लिये अपकिरण की एक सापेक्षिक माप को विकसित करना उपयोगी रहता है जो अपकिरण की अपेक्षा असमानता पर प्रकाश डाले।

ऐसा आय, सम्पत्ति, सामाजिक वस्तु आदि का समग्र की इकाइयों के मध्य वितरण जानने के लिये आवश्यक होता है। क्योंकि इनके वितरण में असमानताओं को सामाजिक दृष्टिकोण से अनुचित माना जाता है। अध्ययनकर्त्ता वर्ग, धन, आय जैसे तथ्यों के वितरण में वास्तविक दशा को जानने हेतु इच्छुक रहता है। यह जानना चाहता है कि समाज में धन व आय के वितरण में कितनी विषमता है अर्थात समान वितरण में कितनी विषमता है। लारेंज वक्र एक वर्ग समूह में धन व आय की विषमता को प्रदर्शित करता है। इस तकनीक की सहायता से यह ज्ञात किया जा सकता है कि दो देशों या वर्ग समूहों में अथवा दो समयावधियों में से आय व धन के वितरण में विषमता किसमें अधिक है।

लारेंज वक्र किसी भी भौगोलिक तथ्य के प्रकीर्णन (Dispersion) स्वरूप को प्रदर्शित करने की एक लेखाचित्रीय विधि है। इसका नाम इसके प्रथम आविष्कारक Max O. Lorenz के नाम पर रखा गया है। ग्राफ पेपर पर इसका प्रदर्शन आसानी से हो जाता है। लारेंज वक्र विधि एक ऐसी विधि है जो आर्थिक तत्वों जैसे धन आदि के स्वामित्व के केन्द्रीकरण का प्रदर्शन करने में प्रयुक्त की जाती है। यदि आय आदि चरों के संचयी वितरण को कोटि अक्ष पर तथा संचयी आवृत्ति वितरण को भुज पर दिखाया जाय तो वास्तविक वितरण का वक्र लारेंज वक्र बनेगा। यह वितरण इस मान्यता पर आधारित है कि समान वितरण की दशा में वक्र स्थिति समान ही होगी।

किसी अर्थ व्यवस्था में आय का वितरण लारेंज वक्र द्वारा दर्शाया जाता है और आय की असमानता की डिग्री को गिनी गुणांक के माध्यम से मापा जाता है। हमारी सरकार के पांच प्रमुख और सामान्य समष्टि लक्ष्यों में से एक है आय का न्याय संगत वितरण, जिसको इसी वक्र के द्वारा प्रदर्शित किया जाता है। लारेंज वक्र (आय का वास्तविक वितरण वक्र) को मैक्स लोरेंजिंन द्वारा सन् 1906 ई0 में विकसित धन का आलेखीय वितरण, जनसंख्या के किसी भी भाग द्वारा अर्जित अनुपात दर्शाने के लिये प्रयोग किया गया। इस वक्र पर 45^0 कोण पर स्थित रेखा बिल्कुल समान आय वितरण दिखाती है जबकि दूसरी रेखा आय का वास्तविक वितरण दिखाती है। विकर्ण से जितना यह रेखा दूर होगी, आय का वितरण का आकार उतना असामान्य होगा।

गिनी गुणांक जो लारेंज वक्र से प्राप्त होता है इसका उपयोग किसी देश में आर्थिक विकास के सूचक के रूप में किया जाता है। गिनी गुणांक किसी जनसंख्या में आय समानता की मात्रा को मापता है। गिनी गुणांक शून्य (0) पूर्ण समानता से एक (1) पूर्ण असमानता तक भिन्न हो सकता है। शून्य का गिनी गुणांक का अर्थ है कि सभी की आय समान है जबकि एक का गुणांक दर्शाता है कि एक ही व्यक्ति को सारी आय प्राप्त हो रही है।

व्यक्तिगत श्रेणी में लारेंज वक्र

(Lorenz Curve in Individual Series)

व्यक्तिगत श्रेणी में लारेंज वक्र की रचना हेतु दो वक्रों को आधार बनाया जाता है जिसके आधार पर इनकी गणना की जाती है।

उदाहरण– दो व्यावसायिक फर्मों के 5 वर्षों के शुद्ध लाभ निम्न प्रकार है। इनका वितरण दर्शाने हेतु लारेंज वक्र बनाइये।

वर्ष	2004	2005	2006	2007	2008
लाभ (000 में) फर्म A	15	30	45	60	50
लाभ (000 में) फर्म B	20	30	45	60	45

लारेंज वक्र द्वारा प्रदर्शित ग्राफ

(Graph showing Lorenz Curve)

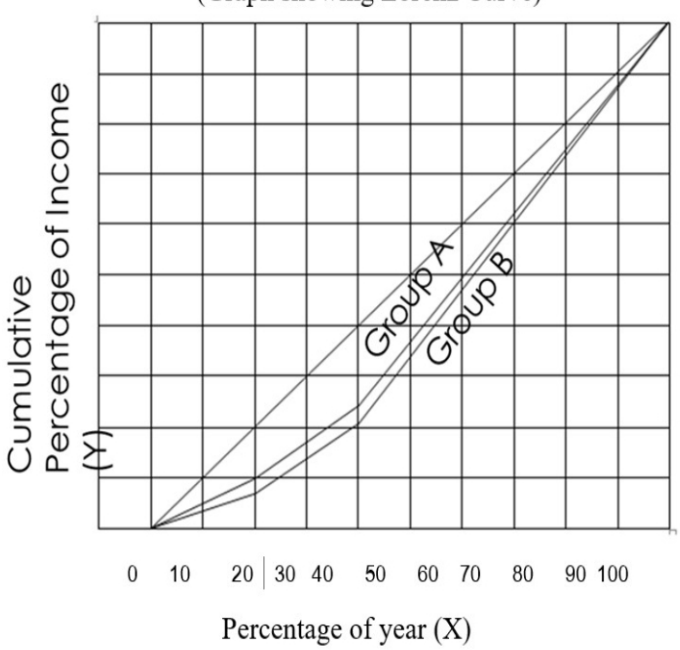

हल–

वर्ष	संचयी वर्ष	प्रतिशत	फर्म A			फर्म B		
			लाभ (000 में)	संचयी लाभ	प्रतिशत	लाभ (000 में)	संचयी लाभ	प्रतिशत
2004	1	20	15	15	7.5	20	20	10
2005	2	40	30	45	22.5	30	50	25
2006	3	60	45	90	45.0	45	95	47.5
2007	4	80	60	150	75.0	60	155	77.5
2008	5	100	50	200	10.0	45	200	100.0

खण्डित श्रेणी में लारेंज वक्र (Lorenz Curve in Discrete Series) –

खण्डित श्रेणी में लारेंज वक्र की रचना हेतु दो वक्रों को आधार बनाया जाता है जिसके आधार पर इनकी गणना की जाती है।

उदाहरण–

मासिक आय (रूपये में)	व्यक्तियों की संख्या (समूह A)	व्यक्तियों की संख्या (समूह B)
1000	6000	15000
1200	8000	10000
1400	12000	9000
1600	9000	11000
2000	10000	3000
2800	5000	2000

लारेंज वक्र द्वारा प्रदर्शित ग्राफ
(Graph showing Lorenz Curve)

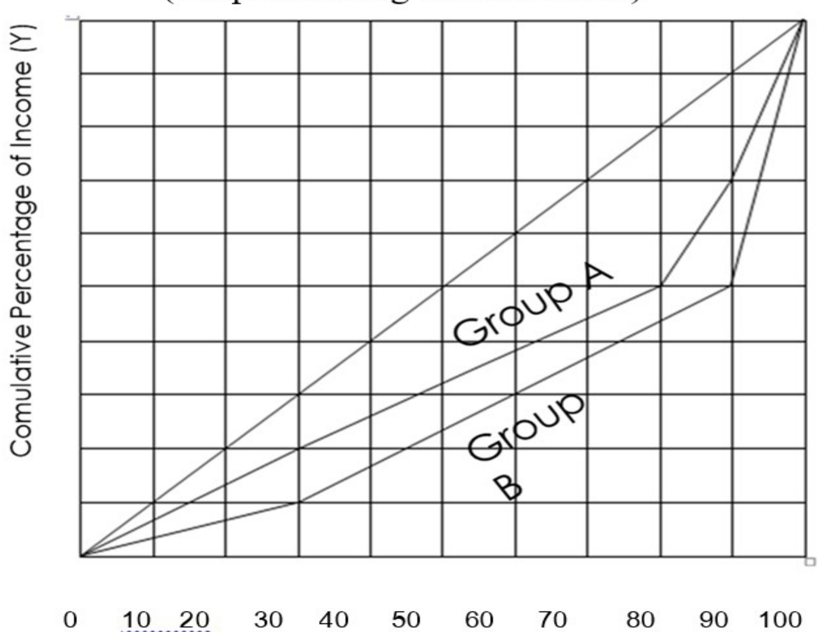

Cumulative Percentage of Persons (X)

हल–

मासिक आय (रूपये में)	संचयी योग	संचयी प्रतिशत	समूह A			समूह B		
			व्यक्तियों की संख्या	संचयी योग	संचयी प्रतिशत	व्यक्तियों की संख्या	संचयी योग	संचयी प्रतिशत
1,000	1,000	10	6,000	6,000	6,000	15,000	15,000	30
1,200	2,200	22	8,000	14,000	14,000	10,000	25,000	50
1,400	3,600	36	12,000	26,000	26,000	9,000	34,000	68
1,600	5,200	52	9,000	35,000	35,000	11,000	45,000	90
2,000	7,200	72	10,000	45,000	45,000	3,000	48,000	96
2,800	1,0000	100	5,000	50,000	50,000	2,000	50,000	100

समूह A की तुलना में समूह B में असमानता अधिक है।

5. सतत् श्रेणी में लारेंज वक्र (Lorenz Curve in Continuous Series) –

उदाहरण–एक व्यक्तियों के वर्ग के आय का वितरण दिया गया है। दिये गये आंकड़ों के आधार पर लारेंज वक्र बनाइये ?

आय (रूपये में)	आयकर्त्ता
40 से कम	21
40–64	223
64–80	101
80–120	68
120 से अधिक	24
योग	437

हल–

आय (रू0 में)	आयकर्त्ताओं की संख्या	कुल आय (रू0 में)	संचयी प्रतिशत		
			आयकर्त्ता (x)	आय (y)	विन्दु
40 से कम	21	480	4.8	1.5	(x_1, y_1)
40–64	223	11920	55.8	39.7	(x_2, y_2)
64–80	101	7280	78.9	63.1	(x_3, y_3)
80–120	68	7360	94.5	86.7	(x_4, y_4)
120 से अधिक	24	4160	100	100.0	
योग	437	31200			

6. लारेन्ज वक्र का विश्लेषण व निष्कर्ष (Analysing and Summarising the Lorenz Curve)

पूर्ण समान की रेखा 45^0 के कोण पर होती है। सभी विन्दु इस रेखा पर ही होंगे यदि समग्र की इकाइयों में समान वितरण होगा। लारेंज वक्र इस समानता रेखा के नीचे होता है तथा अधिकाधिक नीचे होता जायेगा, जैसे जैसे वह समग्र के शून्य प्रतिशत से लेकर 100 प्रतिशत तक बढ़ता है। यह केवल अनुमानतः माप ही स्पष्ट करता है।पूर्ण समान की रेखा 45^0 के कोण पर होती है। सभी विन्दु इस रेखा पर ही होंगे यदि समग्र की इकाइयों में समान वितरण होगा। लारेंज वक्र इस समानता रेखा के नीचे होता है तथा अधिकाधिक नीचे होता जायेगा, जैसे जैसे वह समग्र के शून्य प्रतिशत से लेकर 100 प्रतिशत तक बढ़ता है। यह केवल अनुमानतः माप ही स्पष्ट करता है।

लारेंज वक्र द्वारा प्रदर्शित ग्राफ

(Graph showing Lorenz Curve)

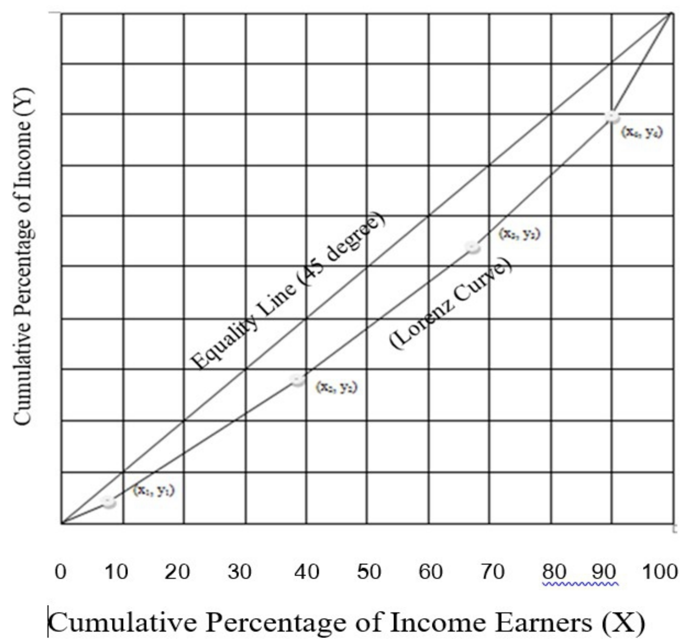

7. लारेन्ज वक्र के गुण–दोष **(Merits and Demerits of Lorenz Curve)**–

यह अपकिरण ज्ञात करने की दृष्टिगत विधि है। यह आकर्षक एवं प्रभावशाली ढ़ंग से दो वितरणों में समान आधार से सरलतापूर्वक तुलना करता है। एक दृष्टि में स्थिति का अनुमान लगाने के लिये यह वक्र अत्यन्त उपयोगी होता है। उद्योगों में एकाधिकार अथवा केन्द्रीकरण ज्ञात करने के लिये भी लारेन्ज वक्र उपयोगी होता है।

इसका सबसे बड़ा दोष यह है कि इससे किरण की अंकात्मक माप नहीं की जा सकती है। दूसरे, इस वक्र की संरचना क्रिया कठिन है और इसको बनाने के पूर्व पर्याप्त गणना कार्य करना पड़ता है।

अभ्यास हेतु प्रश्न

1.निम्न सूचना के आधार पर लारेन्ज वक्र की रचना कीजिए?

वर्ष	2004	2005	2006	2007	2008
बिक्री(हजार में)	5	8	12	9	16

2. निम्न समंकों के आधार पर लारेंज वक्र की रचना कीजिए?

आय (हजार में)	व्यक्तियों की संख्या	
	कक्षा A	कक्षा B
20	10	16
40	20	14
60	30	10
100	40	6
160	50	4

3. निम्न सारणी से जो कि दो कारखानों में श्रमिकों व मजदूरों से सम्बन्धित है, लारेन्ज वक्र की रचना कीजिए?

दैनिक मजदूरी	कर्मचारियों की संख्या	
	फैक्ट्री A	फैक्ट्री B

20	60	150
24	80	100
28	120	90
32	90	110
40	100	30
56	50	20

8. प्रकीर्णन आरेख (Scatter Diagram)–

प्रकीर्णन आरेख के माध्यम से दो चरों में सहसम्बन्ध को अभिव्यक्त किया जाता है। इसकी रचना भी ग्राफ पेपर पर की जाती है। वास्तव में दो चरों के बीच सहसम्बन्ध ज्ञात करते समय औसत से कितना बिखराव है, इसी का आलेखीय प्रदर्शन प्रकीर्णन आरेख के माध्यम से किया जाता है। आंकड़ों के प्रदर्शन हेतु ग्राफ पेपर पर दो अक्षों X अक्ष एवं Y अक्ष की कल्पना की जाती है जिसकी सहायता से दोनों चरों का प्रदर्शन किया जाता है।

प्रश्न–

निम्नलिखित तालिका में पूर्वी उत्तर प्रदेश का जनपदवार क्षेत्रफल और जनसंख्या दी गयी है। दिये गये आंकड़ों के आधार पर एक प्रकीर्णन आरेख की रचना कीजिए?

क्रम संख्या	जनपद	क्षेत्रफल (00 वर्ग किमी0 में)	जनसंख्या (लाख में)
1	प्रयागराज	54.82	44.81
2	वाराणसी	15.35	36.77
3	मिर्जापुर	45.21	24.96
4	जौनपुर	40.38	44.94
5	गाजीपुर	33.77	36.20
6	बलिया	29.81	29.35
7	गोरखपुर	34.48	44.40
8	देवरिया	25.40	31.01
9	बस्ती	26.88	24.64
10	आजमगढ़	40.54	46.13
11	अयोध्या	25.22	24.71
12	गोण्डा	40.03	34.33
13	बहराइच	46.97	34.87
14	सुल्तानपुर	26.73	35.97
15	प्रतापगढ़	37.30	32.09

हल– प्रकीर्णन आरेख में बिन्दुओं की वितरण प्रणाली की प्रवृत्ति ही क्षेत्रफल और जनसंख्या में सहसम्बध को व्यक्त करती है। यदि बिन्दु दूर दूर बिखरे हैं तो दोनों चरों में कोई सहसम्बन्ध नहीं है, यदि विन्दु रेखीय रूप में बांये से दांये ऊपर की ओर हैं, तो धनात्मक सहसम्बन्ध और यही प्रतिरूप नीचे दायें से बायें ऊपर की ओर हों तो ऋणात्मक सहसम्बन्ध मिलता है।

प्रकीर्णन आरेख बिल्कुल सरल ढ़ंग से दो चरों में सहसम्बन्ध और बिखराव को व्यक्त करता है। पुनः दोनों चरों के औसत का अक्षीय निर्धारण करके ग्राफ निर्मित वर्गों को चार चतुर्थांशों में विभक्त करके औसत से अधिक या औसत से कम धनात्मक या ऋणात्मक सहसम्बन्ध को व्यक्त किया जा सकता है और विशिष्ट वर्गों में आने

वाले जनपद समूह का निर्धारण हो सकता है। इसलिये दोनों चरों के बीच स्थापित कार्यकारण सम्बन्धों की व्याख्या आसानी से की जा सकती है।

प्रकीर्णन आरेख (Scatter Diagram)

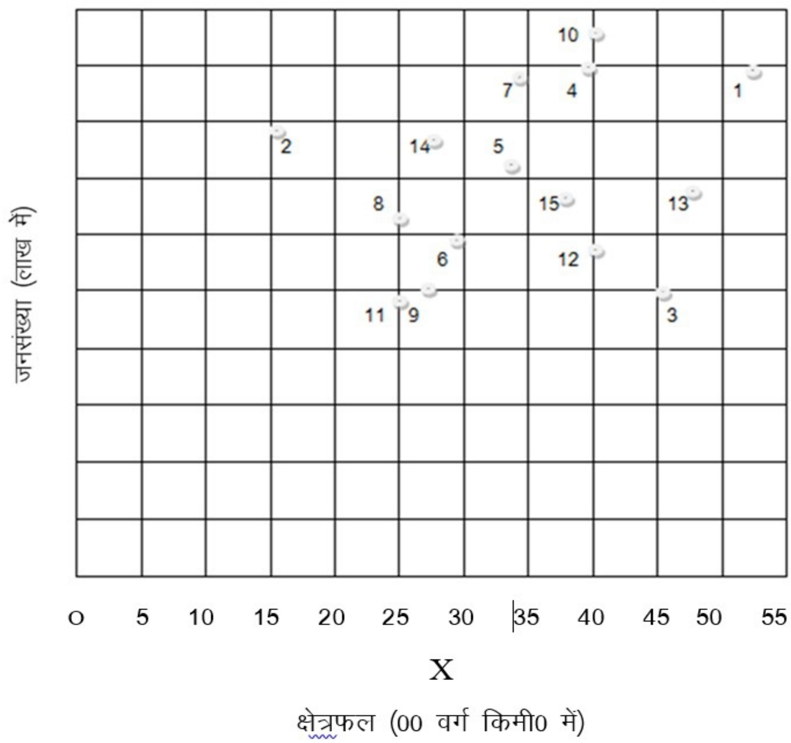

9. उच्चतामितीय वक्र (Hypsographic Curve)–

इस वक्र को समोच्च रेखा मानचित्र के किसी आधार तल (Datum Line) से ऊपर या नीचे की ओर विभिन्न ऊँचाई के संदर्भ में निरपेक्ष सापेक्ष क्षेत्रफल पाया जाता है। उसी का समानुपातिक प्रदर्शन इस वक्र द्वारा होता है।

इसकी रचना विधि इस प्रकार है–

1. सर्वप्रथम ऊँचाई वर्ग के अनुसार क्षेत्रफल निकालते हैं।
2. क्षेत्रफल निकालने के लिये प्लेनीमीटर के अतिरिक्त अन्तर्खण्डों का प्रयोग आसान होता है।
3. प्राप्त आंकड़ों के अनुसार ऊँचाई वर्ग और सम्बन्धित क्षेत्रफल का सारणीयन करते हैं।
4. दोनों तत्वों का संचयी मान ज्ञात करते हैं।
5. वक्र की रचना हेतु ग्राफ पेपर या सादे कागज पर आधार अक्ष पर क्षेत्रफल तथा लम्बे अक्ष पर ऊँचाई को प्रदर्शित करते हैं। इस प्रकार प्रत्येक क्षेत्रफल से सम्बन्धित ऊँचाई को अंकित कर वक्र के द्वारा सभी अंकित विन्दुओं को मिला कर उच्चतामितीय वक्र की रचना करते हैं।

प्रश्न– निम्नलिखित आंकड़ों के आधार पर एक उच्चतामितीय वक्र की रचना कीजिए?

ऊँचाई (फीट में)	ऊँचाई अन्तराल	संचयी ऊँचाई (फीट में)	कुल क्षेत्रफल का प्रतिशत	क्षेत्रफल का संचयी प्रतिशत
2000 से कम	2000	2000	1.38	100
2000–3000	1000	3000	2.44	100 –1.38 = 98.62

3000—4000	1000	4000	4.98	98.62—2.44 = 96.18
4000—5000	1000	5000	18.38	96.18—4.98 = 91.20
5000—6000	1000	6000	23.83	91.20—18.33 = 72.87
6000—7000	1000	7000	29.45	72.87—23.83 = 49.04
7000—8000	1000	8000	17.37	49.04—29.45 = 19.59
8000 से अधिक	1000	8000	2.22	19.59—17.37 = 2.22
			100.00	

टिप्पणी— क्षेत्रफल का संचयी प्रतिशत इस प्रकार ज्ञात किया गया है कि सम्पूर्ण समोच्च रेखीय मानचित्र 2000 फीट से ऊँचा है। इसलिये उसे 100 प्रतिशत मान कर नीचे वाले भाग का संचयी प्रतिशत ज्ञात करने के लिये क्रमशः ऊपर के कुल क्षेत्रफल का प्रतिशत जोड़ कर घटा दिया गया है। इस प्रकार उपरोक्त तालिका के लिये संचयी प्रतिशत ज्ञात किया गया है।

हल—

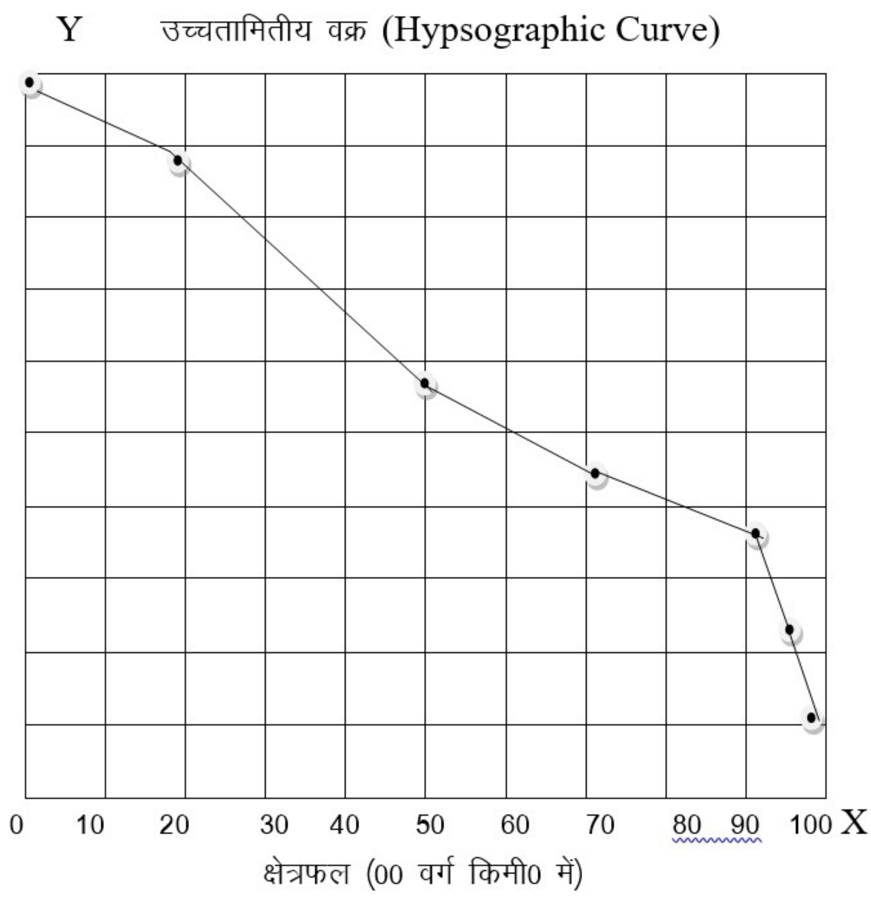

10. प्रतिशत उच्चतादर्शी वक्र (**Percentage Hypsographic Curve**)—

इस वक्र की रचना भी उच्चतादर्शी वक्र की भांति ही की जाती है। अर्थात यह वक्र भी पूर्वोक्त वक्र ही है। अन्तर केवल इतना है कि इसमें ऊँचाई और क्षेत्रफल के निरपेक्ष मानों की जगह प्रतिशत मान दिखाये जाते हैं जिनका परिकलन निम्नलिखित सूत्रों की सहायता से किया जाता है—

$$II = \frac{\text{दो समोच्च रेखाओं के मध्य का क्षेत्रफल}}{\text{कुल क्षेत्रफल}} X\ 100$$

$$II = \frac{\text{दो समोच्च रेखाओं के मध्य का क्षेत्रफल}}{\text{कुल क्षेत्रफल}} X\ 100$$

उपरोक्त सूत्रों के आधार पर क्षेत्रफल तथा ऊँचाई को प्रतिशत में बदल कर संचयी क्षेत्रफल तथा संचयी ऊँचाई का प्रतिशत ज्ञात करते हैं।

प्रश्न—निम्नलिखत तालिका के आधार पर प्रतिशत उच्चतादर्शी वक्र (Percentage Hypsographic Curve) की रचना कीजिए?

ऊँचाई का वर्ग अन्तराल (मी0में)	ऊँचाई आवृत्ति	प्रतिशत
300 से कम	86	48.3
300—400	51	28.6
400—500	8	4.5
500—600	8	4.5
600—700	1	0.6
700—800	3	1.7
800—900	2	1.1
900—1000	2	1.1
1000—1100	3	1.7
1100—1200	1	0.6
1200—1300	3	1.7
1300—1400	6	3.4
1400 से अधिक	4	2.2
कुल योग	178	100

हल—

प्रतिशत उच्चतादर्शी वक्र

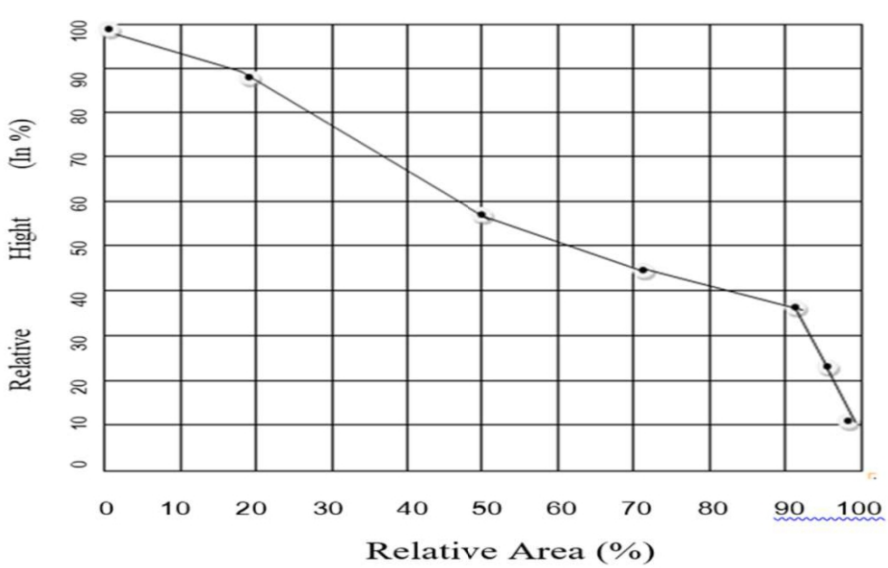

निकर्ष–

इस प्रकार हम यह कह सकते हैं कि लारेंज वक्र दो चरों के मध्य सम्बन्ध को प्रदर्शित करने की लेखाचित्रीय विधि है। जिसमें X और y दो अक्षों पर दो चरों को प्रदर्शित किया जाता है। यह किसी उद्योग सम्बन्धी, कृषि सम्बन्धी, रोजगार सम्बन्धी, जनसंख्या सम्बन्धी, आंकड़ों एवं उससे सम्बन्धित चरों को प्रदर्शित करने की एक वैज्ञानिक विधि है जिसके माध्यम से आंकड़ों का प्रदर्शन सुगमता पूर्वक किया जा सकता है। इस विधि में गणना आदि की बहुत अधिक आवश्कता नहीं पड़ती है।

दीर्ध उत्तरीय प्रश्न

1. अपकिरण का क्या अर्थ है ? अपकिरण को मापने की विभिन्न विधियां क्या हैं ? उनकी तुलनात्मक उपयोगिता की विवेचना कीजिए?
2. लारेन्ज वक्र पर टिप्पणी लिखिए ?
3. लारेन्ज वक्र में कितने चरों को समाहित किया जाता है एवं उनका लेखाचित्रीय प्रदर्शन किस प्रकार किया जाता है।
4लारेन्ज वक्र के गुण दोषों की विवेचना कीजिए?
5. लारेन्ज वक्र के माध्यम से चरों के गुण एवं दोषों का प्रदर्शन किस प्रकार किया जाता है ?
6. लारेन्ज वक्र के लेखाचित्रीय प्रदर्शन में कितने अक्षों का सम्मिलित किया जाता है ?
7. लारेन्ज वक्र बनाने की विधि का वर्णन कीजिए?
8. लारेन्ज वक्र के गुण दोषों का वर्णन कीजिए?
9. क्या असमानता के विश्लेषण की सर्वाधिक उपयोगी माप लारेन्ज वक्र है, स्पष्ट कीजिए?
10 सतत श्रेणी में लारेन्ज वक्र के निर्माण की क्या क्या विशेषतायें होती हैं, स्पष्ट कीजिए?

लधु उत्तरीय प्रश्न

1. लारेन्ज वक्र पर एक संक्षिप्त टिप्पणी लिखिये ?
2. लारेन्ज वक्र के निमार्ण में किन विधियों का प्रयोग किया जाता है ?
3. असमानता विश्लेषण का प्रदर्शन लारेंज वक्र पर किस प्रकार किया जाता है ?
4. एक आदर्श एवं वैज्ञानिक लेखाचित्र के रूप में लारेन्ज वक्र की उपयोगिता पर प्रकाश डालिये ?
5. लारेन्ज वक्र के निर्माण में किन दो अक्षों को सम्मिलित किया जाता हैं ?
6. लारेन्ज वक्र के गुण दोष की विवेचना कीजिए?
7. लारेन्ज वक्र की वैज्ञानिकता को परिभाषित कीजिए?
8. लारेंज वक्र के गिनी गुणांक को की उपयोगिता को स्पष्ट कीजिए?
9. लारेंज वक्र के सापेक्ष फिलिप्स वक्र की व्याख्या कीजिए?
10. स्टेगफ्लेशन की उपयोगिता बताइये ?

बहुविकल्पीय प्रश्न

1. अपकिरण की माप जितनी ही कम होती है, उस पदमाला में स्थायित्व अधिक होता है–

(a) सापेक्ष (b) निरपेक्ष
(c) दोनों (d) इनमें से कोई नहीं

2. प्रथम अपकिरण घात कहते हैं–

(a) समान्तर माध्य (b) माध्य विचलन
(c) प्रमाप विचलन (d) चतुर्थक विचलन

3. अपकिरण का सबसे लोकप्रिय माप है–

(a) प्रमाप विचलन (b) माध्य विचलन

(c) माध्यिका (d) इनमें से कोई नहीं

4. निम्नलिखित में से कौन लारेंज वक्र द्वारा मापा जाता है–

(a) निरक्षरता (b) बेरोजगारी

(c) जनसंख्या वृद्धिदर (d) आय की असमानता

5. लारेंज वक्र के निर्माण में कितने अक्षों का प्रयोग किया जाता है–

(a) एक अक्ष (b) दो अक्ष

(c) तीन अक्ष (d) इनमें से कोई नहीं

संदर्भ पुस्तकें (Referenced Books)

- शुक्ल, एस0 एम0 एवं एस0 पी0 सहाय, सांख्यिकी के सिद्धान्त, 2004, साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा
- चौहान, पी0आर0, प्रयोगात्मक भूगोल, 2013, बसुन्धरा प्रकाशन, गोरखपुर
- मोहम्मद, हारून, प्रयोगात्मक भूगोल, 2010, मिश्रा ट्रेडिंग कारपोरेशन, मैदागिन, वाराणसी
- सिन्हा, वी0सी0 एवं आलोक गुप्ता, व्यावसायिक सांख्यिकी, 2010 एस बी पी डी पब्लिकेशन्स, आगरा

इकाई–14 (Unit- 14)

सुदूर संवेदन तकनीक अर्थ, परिभाषा एवं महत्व, भारत में सुदूर संवेदन तकनीक का इतिहास, प्रयास एवं उपयोग

(Meaning, Definition and importance of Remote Sensing Technique, Evolution, Attempts and Application of Remote Sensing Technique in India)

पाठ संरचना **(Lesson Structure)**

1. उद्देश्य **(Objectives)**
2. प्रस्तावना **(Introduction)**
3. सुदूर संवेदन तकनीक का अर्थ एंव परिभाषा **(Meaning and Definition of Remote Sensing Techniques)**
4. सुदूर संवेदन तकनीक का महत्व **(Importance of Remote Sensing Techniques)**
5. भारत में सुदूर संवेदन तकनीक का विकास **(Evolution of Remote Sensing Techniques in India)**
6. भारत में सुदूर संवेदन तकनीक के प्रयास एवं अनुप्रयोग
   (Application and Attempts of Remote Sensing Techniques in India)
7. निष्कर्ष **(Conclusion)**
8. मॉडल प्रश्न **(Model Questions)**
9. सन्दर्भ पुस्तक **(Reference Books)**

उद्देश्य (Objectives)

1. छात्र सुदूर संवेदन तकनीक के बारे में समझ सकेगें।
2. छात्र सुदूर संवेदन हेतु प्रयुक्त होने वाले उपकरणों एवं विधियों को जानेंगें।
3. छात्र सुदूर संवेदन के विकास क्रम को जान सकेंगें।
4. छात्र सुदूर संवेदन का भौगोलिक अध्ययन में उपयोगों को समझ सकेंगें।
5. छात्र सुदूर संवेदन तकनीकों का व्यवहारिक जीवन में महत्व के बारे में समझ सकेंगें।
6. छात्रों को भारत में इस क्षेत्र में हो रहे शोधों/प्रयासों/ उपयोगों के बारे में विस्तार से जानकारी प्राप्त होगी।

प्रस्तावना (Introduction)

जैसा कि विदित है कि हमारे प्राचीन धर्मग्रन्थों एवं कहानियों में आकाशवाणी, दिव्यदृष्टि, ध्यान पद्धति से जानकारी प्राप्त करना एवं हवाई संदेशों का विवरण मिलता है। जिसमें दूरस्थ घट रही घटनाओं को देख लेना एवं सुन लेना आम बात थी। रामायण में शब्द भेदी बाण की घटना एंव महाभारत युद्ध का दूर राजमहल में बैठकर संजय द्वारा युद्धभूमि (कुरूक्षेत्र) की घटनाओं का जीवंत वर्णन दूर सवेंदन का अप्रतिम उदाहरण है। इस प्रकार, सुदूर संवेदन **(Remote Sensing)** कोई आश्चर्य का विषय नहीं है, परन्तु कुछ दशकों से इस तकनीकी में इतना विकास हुआ कि यह भूमण्डलीय दशाओं के साथ–साथ अन्य खगोलीय पिण्डों को समझने का एक महत्वपूर्ण साधन बन गया है।

आज से छः दशक पूर्व तक हमारी पृथ्वी सहित सौर परिवार के सदस्यों (सूर्य, उपग्रह, छुद्रग्रह, उल्कापिण्ड आदि) के सम्बन्ध में जानकारी एवं प्रत्यक्षीकरण हेतु हम स्व–अवलोकन **(Self Observation)** तथा उनसे निस्सृत प्रकाश एवं ध्वनियाँ **(Visual Lights and Sounds)** पर आश्रित थे। दूरस्थ स्थानों एवं वस्तुओं के अवलोकन करने हेतु दूरबीनों **(Telescopes)** या गुब्बारों, ऊँची इमारतों एवं वायुयानों में बैठकर खींचे गये छायाचित्रों का सहारा लेना पड़ता था परन्तु आज इस वैज्ञानिक एवं विकसित प्रौद्योगिकी के दौर में दूरस्थ देशों एवं नगरों में आयोजित कार्यक्रमों, खेलों, घटनाओं एवं भाषणों तथा संवादों को सीधा प्रसारण **(Live Broadcasting)** द्वारा रेडियों पर सुन

सकते है तथा टेलीविजन एवं मोबाइल **(Smartphones)** पर देख सकते हैं। यह ऐसे उपकरण होते है जो दृश्य प्रकाश के तरंग–दैर्घ्य **(Wavelength)** से कहीं बड़े तरंग–दैर्घ्यों पर ब्रह्मण्ड के अन्य नजदीकी पिण्डो को देख सकते हैं। सुदूर स्थित इन ब्रह्मण्डीय पिण्डों, पृथ्वी पर दूरस्थ स्थित क्षेत्रों, अगम्य स्थानों को अध्ययन करने हेतु उपकरणों को वायुयानों एवं कृत्रिम उपग्रहों **(artificial satellites)** में लगाकर इन लक्ष्यों का प्रतिबिम्ब **(images)** प्राप्त किया जाता है तथा इन छायाचित्रों **(imageris)** का विश्लेषण करके भूमण्डलीय वातावरण भूमि उपयोग, नगरीकरण, कृषि, प्राकृतिक संसाधनों एवं संकटों का अध्ययन किया जाता है।

अतः टेलीविजन, रेडियो, टेलीफोन, मोबाइल फोन, बेतारयन्त्र, इंटरनेट आदि यन्त्रों एवं उपकरणों की मदद से दूर स्थित घटनाओं, व्यक्तियों या वस्तुओं के पास बिना पहुंचे सूचना प्राप्त करने की तकनीक की सुदूर संवेदन तकनीक **(Remote Sensing Technique)** कहते हैं। परन्तु इस तकनीक में हवाई छायाचित्रों **(Aerial Photographs)** एव उपग्रहों **(Satellites)** से प्राप्त प्रतिकृतियों का एकत्रण तथा उसके विश्लेषण को ही सम्मलित किया जाता है।

सुदूर संवेदन तकनीक : अर्थ एवं परिभाषाएं

सुदूर संवेदन का शाब्दिक अर्थ ''दूर से सूचना प्राप्त करना है'' अर्थात् किसी स्थान पर बिना पहुंचे तथा किसी वस्तु को बिना स्पर्श किये, उसके बारे में जानकारी एवं आंकड़ा एकत्र करना ही सुदूर संवेदन है । सुदूर संवेदन का अंग्रेजी शब्द **'Remote Sensing'** का हिन्दी रूपान्तरण है। यहाँ **Remote** का शाब्दिक अर्थ है सुदूर अर्थात वह वस्तु या स्थान जो पास में न हो अर्थात 'हम से दूर हो'। **Sensing** (संवेदन) एक मनोविज्ञान का शब्द है जिसका अर्थ मानवीय ज्ञानेन्द्रियों (नाक, कान, आँख, जीभ एवं त्वचा) द्वारा प्राप्त सूचनाओं से है। मानवीय ज्ञानेन्द्रियाँ संवेदन **(Sensor)** की तरह कार्य करते हुए सूचनाओं को तदनुरूपी आवेगों के माध्यम से मस्तिष्क को भेजती हैं, मस्तिष्क तुरन्त उसका विश्लेषण कर हमें उस संवेदित वस्तु, व्यक्ति व स्थान तथा घटना का विश्लेषण कर हमें ज्ञान प्रदान करता है। इस प्रकार 'संवेदन' का अर्थ है 'सूचना' या 'ज्ञान' प्रदान करना। इस प्रकार 'सुदूर संवेदन' का शाब्दिक अर्थ 'दूर की वस्तु, स्थिति या घटना के बारे में सूचना प्राप्त होना या प्राप्त करना होता है। सुदूर संवेदन एक ऐसा विज्ञान अथवा कला है जिसके अन्तर्गत किसी स्थान, वस्तु एवं घटना का किसी मशीनी उपकरण (संवेदक) द्वारा ग्रहण किये गये परावर्तित प्रकाश के आवेगों का विश्लेषण करके, सूचनाओं को प्रतिबिम्बों अथवा आकड़ों के माध्यम से प्राप्त करते हैं। अर्थात, इस प्रक्रिया में सूचनाअें को प्राप्त करना **(Collection)** संसाधित करने **(Processing)** एवं व्याख्या करना **(Explain)** करने की सम्पूर्ण प्रक्रिया शामिल होती है।

उपरोक्त तथ्यों एवं विवरणों से स्पष्ट होता है कि सुदूर संवेदन सर्वेक्षण की एक ऐसी तकनीक है जिससे ''लक्ष्यित एंव संधानित स्थानों, वस्तुओं एंव घटनाओं के समीप या सम्पर्क में बिना गये उससे सम्बन्धित सूचनाओं का एकत्रीकरण एवं उनके गुणों या विशेषताओं की गणना करना संभव है।'' (पार्कर एंव वोल्फ, 1956) **(Remote Sensing is the equisition of information and measurement of some property of objects which is not in intimate contact with information gathereing device).**

अमेरिकन भूगर्भिक सर्वेक्षण विभाग **(U.S. Geological Survey)** के अनुसार ''सुदूर संवेदन किसी क्षेत्र के भौतिक विशेषताओं का उस क्षेत्र में उत्सर्जित एंव परावर्तित विकिरणों को दूर से (आमतौर पर उपग्रह या विमान से) मापकर पता लगाने एवं निगरानी करने की प्रक्रिया है।) **(Remote Sensing is the process of detecting and monitoring the physical characteristics of an area by measuring its reflected and emitted radiation at a distance typically from satellite or aircraft).**

मासेल **(Mausel)** ने 1973 में **'Professional Geographer'** में प्रकाशित अपने लेख **'An Application of Remotely Sensed Data'** में सुदूर संवेदन की निम्नालिखित परिभाषा दी है। ''सुदूर संवेदन तकनीक सुदूर स्थित लक्ष्यों एवं तत्वों से सम्बन्धित सूचना एवं आकड़ों को इकट्ठा करता है तथा उन तत्वों के कुछ विशेषताओं का परिमापन बिना लक्ष्यों के प्रत्यक्ष सम्पर्क किये प्राप्त करता है।'' **(Remote Sensing is collection of information**

and data of for off objects and features and measurement of some properties of the objects without coming to the direct contact to the objects).

फ्लॉयड एफ. साबिन्स के अनुसार ''दूर संवेदन' शब्द का तात्पर्य उन विधियों से है जिनमें किसी लक्ष्य को पहचानने तथा उसके लक्षणों को मापने के लिए विद्युत चुम्बकीय ऊर्जा जैसे– प्रकाश, ऊष्मा व रेडियों तरंगों को प्रयोग में लाया जाता है।'' **(The term Remote Sensing refers to methods that employ electro magnetic energy, such as light, heat and radio waves, as the means of detecting and measuring target characterstics – Floyd F. Sabins).**

उपरोक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है कि सुदूर संवेदन तकनीक से सूचनाओं को प्राप्त करने के कई यन्त्र होते है, परन्तु सुदूर वायुमण्डल या अंतरिक्ष में भेजे गये या अवस्थित मंचों **(Plateforms)** जैसे – गुब्बारे, पतंग, हवाई जहाज या कृत्रिम उपग्रहों में लगे फोटो कैमरा या अन्य संवेदकों **(Sensors)** द्वारा प्राप्त भूसतह के चित्रों या अन्य रूपों (सी0डी0, डी0वी0डी0 हार्ड डिस्क व कम्प्यूटर) में प्राप्त सूचनाओं को ही सम्मिलित किया जाता है जो भू सतह पर स्थित विविध तत्वों या लक्ष्यों के ज्ञान, पहचान, विश्लेषण या उनमें होने वाले परिवर्तनों के ज्ञान के लिए बहुत उपयोगी होते हैं।

सुदूर संवेदन की प्रक्रियाएँ

इस तकनीक से प्राप्त छायाचित्रों तथा प्रतिकृतियों में लक्ष्यों की अनुकृति उनके द्वारा उत्सर्जित ऊर्जा **(Emitted Energy)** के प्रकार एवं मात्रा पर निर्भर करता है जिसका अभिलेखन **(Recording)** यन्त्रों एंव उपकरणों के माध्यम से छायाचित्रों या प्रतिकृतियों के रूप में होता है, इस प्रकार सुदूर संवेदन तकनीक पूर्णतः ऊर्जा अभिलेखन **(Recording of Enegry)** पर आधारित तकनीक है जिसके माध्यम से सूचनाओं का अधिग्रहण होता है। सुदूर संवेदन की प्रक्रियाएँ दो बड़े वर्गों में वियोजित की जाती है (चित्र 14.1)–

1. आंकड़ो की प्राप्ति **(Data acquisition)**
2. आंकड़ो की विश्लेषण **(Data analysis)** अर्थात् आंकड़ों या सूचनाओं की प्राप्ति से लेकर विश्लेषण एवं निष्कर्ष तक की प्रक्रियाएँ इसमें निहित हैं, तथा कई चरणों में सम्पन्न होती हैं, जो निम्नलिखित हैं–
3. सूर्य या संवेदकों द्वारा उत्पादित ऊर्जा को विद्युत चुम्बकीय ऊर्जा **(Electro-magnetic Energy)** के रूप में उत्सर्जन।
4. उत्सर्जित ऊर्जा का अपने स्रोत से चलकर वायुमण्डल को पार करके भू–सतह पर स्थित सभी लक्ष्यों तक पहुंचाना।
5. भू–सतह एवं विविध तत्व अपने स्वरूपानुरूप प्राप्त विद्युत चुम्बकीय ऊर्जा का शोषण, उत्सर्जन एवं परावर्तन करते है।

6. इस परावर्तित ऊर्जा का वायुमण्डल से होकर वायुमण्डल या अन्तरिक्ष में अवस्थित मंचों **(Platforms)** पर स्थित संवेदकों तक पहुंचाना।

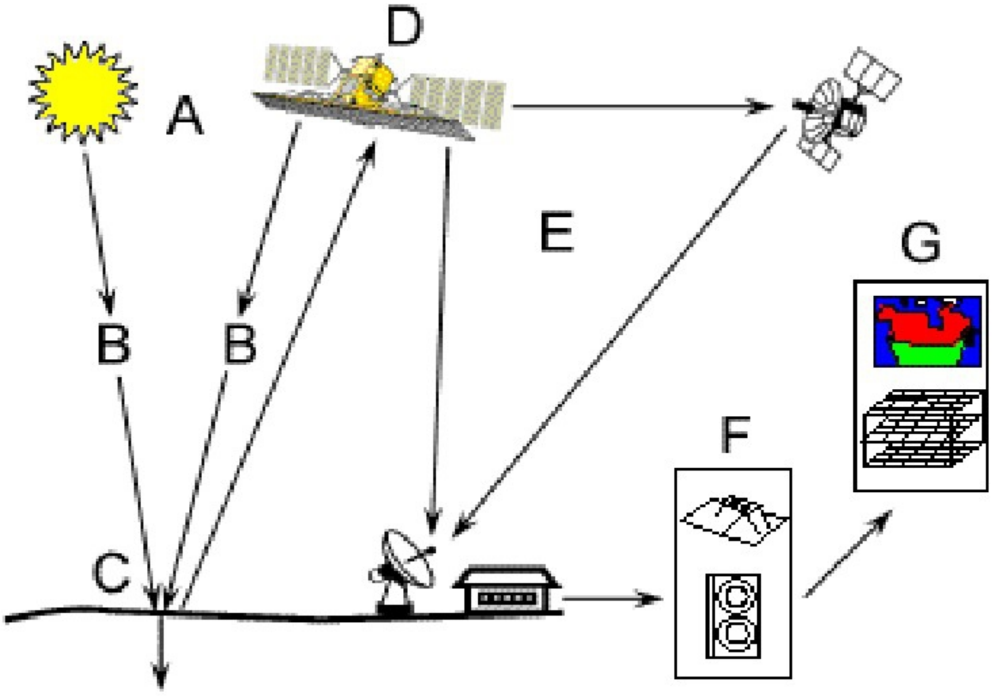

चित्र 14.1: **सुदूर संवेदन की प्रक्रियाएँ**

7. संवेदकों द्वारा ऊर्जा का छायाचित्र **(image)** या अंकीय आभा के रूप में मापन एंव अभिलेखन **(Measuring and Recording)** होना।
8. संवेदकों का अभिलेखित आकड़ों या चित्रों का धरातल पर स्थित नियंत्रक केन्द्रों **(Control Centres)** को प्रेषित करना।
9. विभिन्न उपकरणों (साफ्टवेयर) एवं विधियों द्वारा इन आकड़ों एंव छायाचित्रों का विश्लेषित करना एंव पुनरोत्पादन करके अनुप्रयोग हेतु उपयुक्त बनाना।
10. पुर्नोत्पादित आकड़ों एवं चित्रों के आधार पर पृथ्वी के विभिन्न तत्वों, पदार्थों, वस्तुओं एवं लक्ष्यों को पहचान करना एवं विश्लेषित करके निष्कर्ष पर पहुंचना। ध्यान रहें इसके लिए सन्दर्भित वस्तुओं, तत्वों एवं पदार्थों के बारे में पूर्व ज्ञान की मुख्य भूमिका होती है।

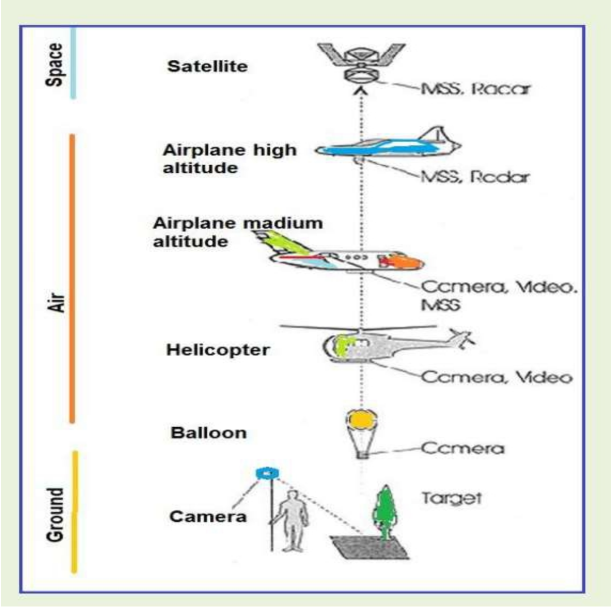

चित्र 14.2:**सुदूर संवेदन के प्लेटफार्म**

सुदूर संवेदन के प्लेटफार्म एवं संवेदक – सुदूर संवेदन में 'प्लेटफार्म या मंच' के रूप में स्थिर या गतिमान किसी भी ऐसे आधार, उपकरण या वाहन का प्रयोग होता रहा है जिस पर कैमरा या संवेदन को लगाकर या रखकर सर्वेक्षण सम्पन्न किया जाता है। सुदूर संवेदन में तकनीकी की उत्तरोत्तर प्रगति, कार्यक्रम के उद्देश्य, मंच की ऊँचाई, संवेदकों के प्रकार, भार वहन की क्षमता, परिभ्रमण, दूरी, समय, लागत आदि को ध्यान में रखते हुए इन मंचों **(Plateforms)** को निम्न वर्गों में विभाजित किया जाता है(चित्र 14.2)-

(अ) भू–आधारित मंच (Ground based Platforms) – संवेदन हेतु ऐसे मंच जो धरातल पर स्थित होते है जैसे– लकड़ी या लोहे से निर्मित स्टैण्ड या त्रिपाद, घर की छत, ऊँची मीनारें, गतिशील सीढ़ियां आदि(चित्र 14.3)।

(1)

(2)

चित्र 14.3: **भू–आधारित मंच**

(ब) वायुमण्डलीय मंच (Air Borne Platforms) – इन मंचों का प्रयोग हवाई छायाचित्रों को प्राप्त करने हेतु किया जाता है जिसमें डोर रहित गुब्बारें, डोरी लगे गुब्बारें, शक्ति युक्त गुब्बारे, पक्षी (कबुतर), विभिन्न तरह के पतंगें, हेलीकाप्टर, वायुयान तथा रॉकेट आदि का उपयोग होता है। इनमें से पराम्परागत उपकरणों की जगह शक्ति युक्त गुब्बारें, हेलीकाप्टर एवं वायुयानों का अत्यधिक प्रचलन है(चित्र 14.4 एवं14.5)।

गुब्बारा : एक हवाई मंच

हेलिकॉप्टर : एक हवाई मंच

चित्र 14.4: **वायुमण्डलीय मंच**

(स) अन्तरिक्षीय मंच (Space Borne Platforms) – इस तरह के आधार में केवल कृत्रिम भू–उपग्रहों को शामिल किया जाता है। बीसवीं सदी के छठें दशक में भू–उपग्रहों का प्रमोचन पृथ्वी की कक्षा में प्रारम्भ हुआ। सर्वप्रथम 1957 में रूस ने स्पूतनिक नामक उपग्रह का प्रक्षेपण किया तत्पश्चात संयुक्त राज्य अमेरिका (1959) एवं जापान, भारत सहित यूरोपीय राष्ट्रों ने विविध उद्देश्यों हेतु उपग्रहों का प्रमोचन किया। कृत्रिम उपग्रह अपने वेग, प्रक्षेपित ऊँचाई एवं परिक्रमण काल के अनुरूप कार्य करता है तथा इनकी पूर्व निर्धारित परिक्रमण कक्षा **(orbit)** होती है। ये कक्षाएं दो प्रकार की होती है। जिनके आधार पर इन उपग्रहों का प्रकार निश्चित होता है।

चित्र 14.5: फिलिक्स टार्ननस (1820.1910)
गुब्बारे में बैठकर हवाई छायाचित्र लेते हुए

08 अक्टूबर 1860 को बोस्टन (संयुक्त राज्य अमेरिका) के अखबारों ने एक असाधारण घटना के लिए एक विज्ञापन प्रकाशित किया था। फोटोग्राफर जेम्स वालेस ब्लैक शहर के ऊपर मंडराते एक गर्म हवा के गुब्बारे से बोस्टन की तस्वीर लेंगे। ब्लैक ने इस बहुप्रचारित उपलब्धि को पांच दिन बाद पूरा किया। अखबार बोस्टन हेराल्ड ने जल्द ही नीचे की धरती का देश का पहला विहंगम दृश्य प्रकाशित किया। यह संयुक्त राज्य अमेरिका में ली गई पहली हवाई छवि थी, किसी भी शहर की पहली हवाई छवि थी, और जीवित रहने के लिए ज्ञात सबसे पुरानी हवाई छवि है। जबकि जनता आश्चर्यचकित थी, संयुक्त राज्य अमेरिका की सेना ने ब्लैक के स्टंट के सैन्य मूल्य को तुरंत देख लिया।

(1) **भू–तुल्यकालिक कक्षा (Geosynchronous Orbit)** – इस कक्षा के उपग्रहों को पृथ्वी से 3000 किमी0 से अधिक ऊँचाई पर स्थापित किया जाता है। इन उपग्रहों की गति एवं दिशा का पृथ्वी की घूर्णन गति एवं दिशा से ऐसा सामंज्य होता है कि उपग्रह सदैव पृथ्वी के किसी एक भाग के सम्मुख रहे। इस प्रकार इन उपग्रहों के पृथ्वी के सापेक्ष में स्थिर होने के कारण इन्हें भू–स्थिर **(Geo-Stationary)** उपग्रह भी कहते हैं। ये उपग्रह अपनी वृत्ताकार कक्षा में 24 घण्टे में पश्चिम से पूर्व पृथ्वी के सदृश घूमते हैं। पृथ्वी से अधिक दूरी की कक्षा में स्थापित होने के कारण इन भू–स्थिर उपग्रहों में लगाये गये संवेदकों **(Sensors)** का स्थल विभेदीकरण **(Ground Resolution)** बहुत कम हो जाता है फिर भी अपनी उत्कृष्ट स्थापित कक्षा एवं परिक्रमण विशेषताओं के कारण वायुमण्डलीय दशाओं (वैश्विक मौसमी प्रतिरूपों के निगरानी एवं पूर्वानुमान), महासागरीय दशाओं एवं बड़े नगरीय केन्द्रों को रात्रि के प्रकाश में दृश्य स्थिति को दर्शाते हैं। भूमध्य रेखा पर (3600 से 4000 किमी0 ऊँचाई) इस प्रकार के भू–स्थिर उपग्रहों की एक श्रृंखला स्थापित है जिनका विवरण निम्नलिखित हो–

1. संयुक्त राज्य अमेरिका द्वारा 1960 में स्थापित **TIROS (Television and Infra – Red Observation Satellite)** एवं 1974 में स्थापित **GOES (Geostationary Operational Environmental Satellite)**। ये दोनों उपग्रह श्रृंखला उत्तरी एंव दक्षिणी अमेरिकी महाद्वीपों सहित पूर्वी प्रशान्त महासागर की निगरानी रखते है।
2. रूस का **GOMS (Geostationary Operational Meteorological Satellite)-** यह अफ्रीका महाद्वीपीय, निकटवर्ती द्वीपों एंव यूरोपीय क्षेत्रों की निगरानी के लिए स्थापित है।

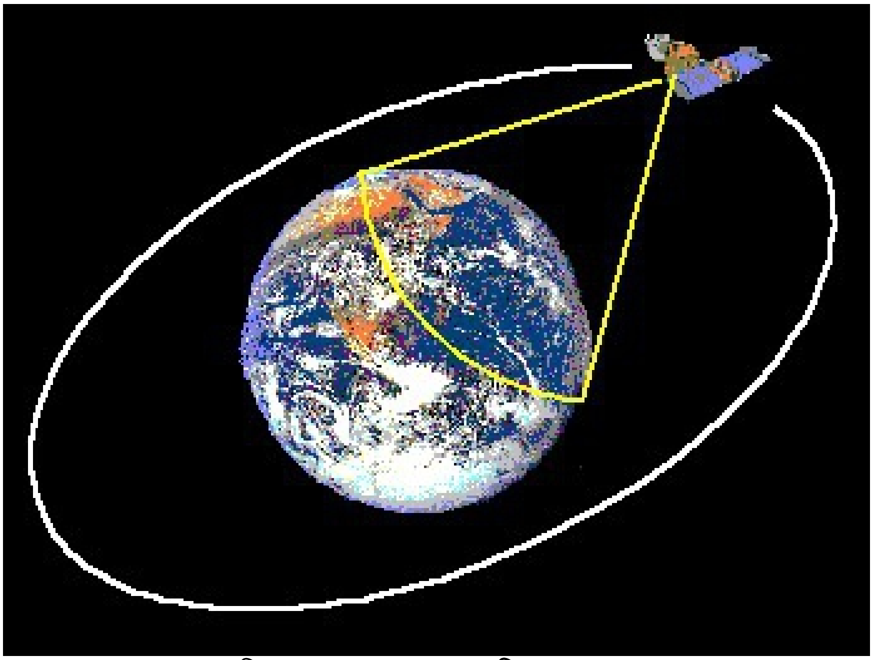

चित्र 14.6: भू–तुल्यकालिकउपग्रह

3. भारत का **INSAT (भारतीय राष्ट्रीय उपग्रह तंत्र)** हिन्द–प्रशान्त क्षेत्र के घरेलू संचार एवं प्रसार, मौसमी परिघटनाओं, खोजी एवं बचाव कार्यो हेतु महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।
4. जापान का **GMS (Geostationary Meteorological Satellite)** जिसको स्थानीय भाषा में 'हिमावरी (सूर्यमुखी) भी कहते है, का प्रयोग हिन्द–प्रशान्त क्षेत्र में मौसम पूर्वानुमान, उष्ण कटिबन्धीय चक्रवात पर नजर रखने एवं जलवायु सम्बन्धी शोधों हेतु किया जाता है।
5. चीन का **FY (Feng Yun)** उपग्रहों को मुख्यतः मौसम सम्बन्धी निगरानी हेतु जाना जाता है। प्रशान्त क्षेत्र में प्राकृतिक आपदाओं से लोगों के जीवन और सम्पत्ति की रक्षा करने में फेंग्युन **(Feng Yun)** उपग्रह का उपयोग सराहनीय है।

(2) सूर्य–तुल्यकालिक कक्षा (Sun-synchronous Orbit) – इस प्रकार के उपग्रहों को ध्रुव कक्षीय उपग्रह **(Polar Orbital Satellite)** भी कहा जाता है। इनकी कक्षा 700–1500 किमी0 की ऊँचाई पर होती हैं। इन उपग्रहों द्वारा पूर्ण निश्चित समय–अन्तराल के अनुसार पृथ्वी के प्रत्येक भाग का लगातार संवेदन करना संभव होता है क्योंकि पृथ्वी पश्चिम से पूर्व की ओर घूर्णन करती है। अतः उपग्रह की कक्षा का धरातलीय मार्ग, सूर्य की दिशा में अर्थात् पूर्व से पश्चिम की ओर निरंतर बढ़ता रहता है तथा एक निश्चित अवधि के भीतर वह उपग्रह सम्पूर्ण पृथ्वी को संवेदित कर पृथ्वी का एक प्रतिकृति प्राप्त कर लेता है। चूंकि ये उपग्रह निश्चित समय अंतराल पर प्रतिकृति देते रहते हैं। अतः इनकी मदद से पृथ्वी के संसाधनों के सर्वेक्षण, आंकलन एंव अन्य उपयोगों के साथ ही इनमें होने वाले परिवर्तनों की निगरानी **(Monitoring)** एवं प्रबंधन **(Management)** किया जाता है। पृथ्वी की कक्षा में स्थापित कुछ महत्वपूर्ण सूर्य–तुल्यकालिक उपग्रह **(Sun-synchronous Satellites)** का विवरण निम्नलिखित है–

I. लैण्डसेट **Landsat – I** का प्रक्षेपण अमेरिकी अंतरिक्ष एजेन्सी **NASA** द्वारा 1972 में किया गया। पूर्व में इसका नाम **ERTS-I (Earth Resources Technology Satellite-I)** था लेकिन इसके द्वारा बड़े स्तर पर बहु वर्णक्रमी पार्थिव अवलोकित आंकड़ों **(Multi Spectral Terrestrial Data)** की जाँच की जाती हैं। अतः इनको लैण्डसेट कहा जाने लगा। यह नासा एवं संयुक्त राज्य भूगर्भिक सर्वेक्षण की संयुक्त परियोजना है।

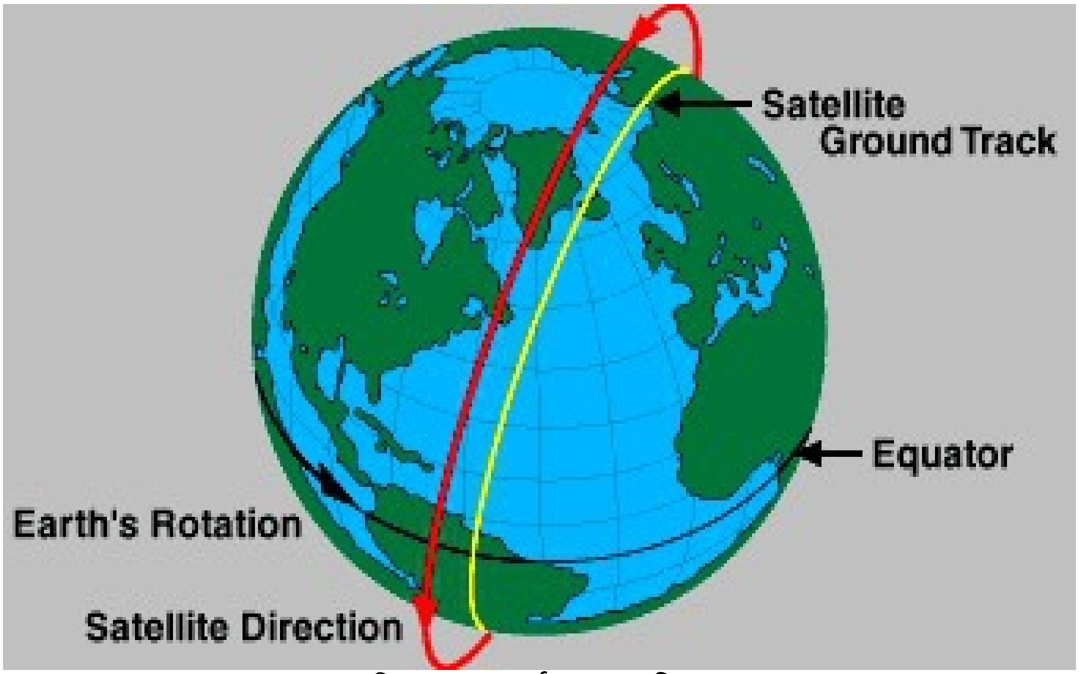

चित्र 14.7: सूर्य–तुल्यकालिक उपग्रह

II. **SPOT (System Pour+I Observation Dela Terre)** – यह सूर्य तूल्यकालिक उपग्रह फ्रांस की **CNES** द्वारा बेल्जियम एवं स्वीडन की सहायता से 1984 में प्रक्षेपित किया गया। इस उपग्रह द्वारा त्रिविमिय छायाचित्र प्राप्त होते है।

III. **IRS (Indian Remote Sensing Satellite)** – यह उपग्रह लैण्डसेट उपग्रह सदृश है जिसमें 3 सैंसरो **(PAN** कैमरा, स्केनर एवं स्पेन्सर) का प्रयोग होता है। यह एक भारतीय उपग्रह श्रृंखला है।

IV. उपरोक्त के अतिरिक्त संसाधन की खोज सर्वेक्षण एवं प्रबंधन हेतु नोआ उपग्रह, समुद्री निगरानी हेतु **MOS** श्रृंखला, **NIMBUS** श्रृंखला, तथा आइकोनोस उपग्रह का महत्वपूर्ण स्थान है।

संवेदक **(Sensors)**

ऐसे यन्त्र या उपकरण जो सुदूर स्थित वस्तुओं, तत्वों, लक्ष्यों या भू–दृश्यों से सम्बन्धित सूचनाओं का अभिलेखन उसे छायाचित्र या प्रतिकृति या अंकीय अभिलेख या अन्य सूचना के रूप में उपलब्ध कराते है उन्हें संवेदक कहते है। इनमें हवाई कैमरा, स्कैनर, रडॉर एवं लीडार प्रमुख हैं। सुदूर संवेदन तकनीक में प्रयुक्त संवेदक निम्न हैं–

a. एक लेंस–फ्रेम कैमरा
b. बहु लेंस फ्रेम कैमरा
c. स्ट्रिप कैमरा
d. वृहददर्शी कैमरा **(Wide Range Camera)**
e. इलेक्ट्रानिक कैमरा
f. टेलिविजन कैमरा **(VTC)**
g. प्रतिगमन प्रकाश पुंज विडिकान
h. बहु वर्णक्रमी क्रमवीक्षक **(Multi Spectral Scanner)**
i. तापीय क्रमवीक्षक **(Thermal Scanner)**
j. लघुतरंग संवेदक **(Microwave Scanner)**
k. रडार तन्त्र **(Radar System)**
l. लघु तंरग ऊर्जाकायी **(Micro Wave Detector)**
m. लीडार **(Lidar)**

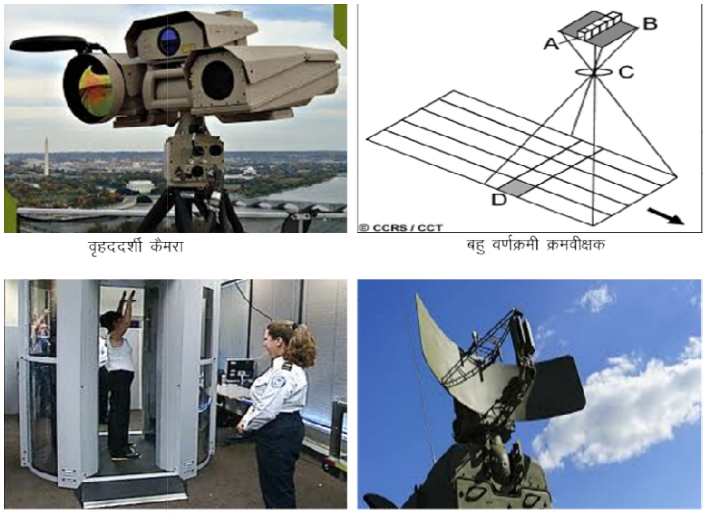

वृहददर्शी कैमरा — बहु वर्णक्रमी क्रमवीक्षक

लघुतरंग संवेदक — रडार तन्त्र

चित्र 14.8: संवेदक

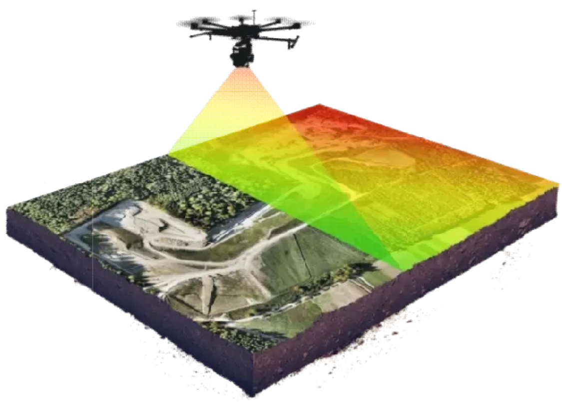

चित्र 14.8: लीडारड्रोन

सुदूर संवेदन तकनीक का इतिहास (Evolution of Remote Sensing)

विदित है कि फोटोग्राफी का जन्म कैमरा के आविष्कार के साथ–साथ 1839 में हुआ एवं सुइट संवेदन तकनीक का विकास हवाई छायाचित्र **(Arial Photography)** के साथ हुआ जब 1859 ई0 में फारसी छायाचित्रकार गैसपर्ड फैलिक्स टूर्नांचन **(Gasparal Felix Tournachon)** ने वायुमण्डल में उड़ते हुए छायाचित्र प्राप्त किया। इसी वर्ष फ्रांसीसी छायाकार लासडेल **(Laussedalt)** ने फ्रांस में तथा 1860 में जेम्स वालेस ब्लैक **(J.W. Black)** ने गुब्बारें में बैठकर 365 मी0 की ऊँचाई से अमेरिका में बोस्टन नगर का वायु छायाचित्र प्राप्त किया। शुरूवाती दिनों में वायु छायाचित्र प्राप्त करने एवं अध्ययन हेतु प्रयोग का चलन बहुत श्रम साध्य, समय साध्य एवं महंगा था लेकिन बाद में हेलीकाप्टर्स, हवाई जहाज, कृत्रिम भू–उपग्रह तथा अन्य उच्च गुणवत्ता युक्त संवेदकों के आविष्कार एवं अनुप्रयोगों के कारण इस तकनीकी का प्रचलन बढ़ा है। इसके उद्भव से एक सदी के बाद, सन् 1960 में इवेलिन प्रुट **(Ms. Evelyn Pruitt)** द्वारा सर्वप्रथम सुदूर संवेदन **(Remote Sensing)** शब्द प्रयोग किया गया।

अपने विकास के प्रारम्भिक चरणों में अर्थात प्रथम विश्वयुद्ध की समाप्ति तक हवाई छायांकन का मूल उद्देश्य–सामान्य मानचित्रण, शत्रु गतिविधियों पर निगरानी, गुप्तचरी, पुरातत्व सर्वेक्षण, सड़क निर्माण, भवन निर्माण, कृषि विकास, उच्चावच विश्लेषण, मानचित्रण, छति आंकलन तथा स्थलाकृतिक मानचित्र निर्माण रहा है। बाद में इस तकनीकी का उपयोग भूगर्भशास्त्रियों, वनस्पतिशास्त्रियों, मृदा वैज्ञानिकों एवं खासकर भूगोलवेत्ताओं द्वारा कालिक एवं स्थानिक अध्ययनों में किया जाने लगा। द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान हवाई छायांकन एवं निर्वचन का विविध क्षेत्रों में विस्तृत उपयोग से प्रभावित होकर संयुक्त राज्य अमेरिका एवं पश्चिमी यूरोपीय देशों के उच्च शिक्षण

संस्थानों एवं प्रशिक्षण कार्यक्रमों में हवाई छायाचित्र निर्वचन को पाठ्यक्रमों में स्थान दिया गया। 1950–60 के दशक में हवाई छायाचित्र अपेक्षाकृत अधिक व्यावहारिक बन गया। इस दशक के पूर्वाद्ध में इस तकनीकी का इस्तेमाल नगरीय विस्तार, पड़ोसी क्षेत्रों की स्थिति, यातायात, औद्योगिक विकास हेतु योजना, कृषि भूमि उपयोग, ग्रामीण नियोजन हेतु प्रभावकारी रहा। बाद के वर्षों में, तापीय अवरक्त सुदूर संवेदन तकनीक **(Thermal Infrared Remote Sensing)** के आविष्कार के बाद सैनिक वायुयानों पर राडार लगाये जाने लगे। इसी समय 4 अक्टूबर 1957 को रूस ने स्पूतनिक एवं अमेरिका ने एक्सप्लोरस–1 नामक कृत्रिम भू–उपग्रहों का प्रमोचन करके नये आयाम को जन्म दिया।

1960 में पहली बार इवेलिन प्रुट द्वारा 'सुदूर संवेदन' शब्द का प्रयोग किया गया। 1 अप्रैल 1960 को अमेरिका द्वारा टिरस श्रृंखला एवं 1972 में 23 जुलाई को **ERTS-I (Earth Resources Technology Satellite-I)** का प्रक्षेपण इस दिशा में उल्लेखनीय प्रगति है। अमेरिकी अंतरिक्ष एजेन्सी की लैण्डसेट श्रृंखला, सोवियत संघ के कॉसमास एवं सैल्युट, फ्रांस की स्पाट श्रृंखला एवं सुदूर यूरोपीय देशों की भूमि संसाधन उपग्रह **(Earth Resources Satellite)**, कनाडा का राडार सैट श्रृंखला, भारत का आई0आर0एस0 श्रृंखला, जापान का **ALOS**, चीन का **Fengyum** एवं अरब देशों द्वारा स्थापित कृत्रिम भू–उपग्रहों की श्रृंखलाएं भूमि, जल, पर्यावरण, प्रदूषण नियंत्रण, नगर नियोजन एंव मौसमी अवलोकन में उल्लेखनीय योगदान दे रही हैं। पर्यावरण में तत्व विशेष के सूक्ष्म अध्ययन हेतु सक्षम देशों द्वारा समय–समय पर उपग्रहों का प्रक्षेपण किया गया है, जैसे– मौसम सम्बन्धी निगरानी हेतु अमेरिका द्वारा **NOAA, GOES, Meteosat,** समुंद्री गतिविधियों के निगरानी एवं सर्वेक्षण हेतु **NIMBUS** एवं **SEASAT** तथा भारत द्वारा **OCEANSAT** एवं **CARTOSAT** आदि। इस प्रकार, कृत्रिम उपग्रहों के विकास होने से विविध प्रकार के भौतिक एवं मानवीय तत्वों के स्थानीय वितरण, उनके अद्यतन् मानचित्रण तथा उसमें होने वाले परिवर्तनों पर निगरानी के लिए एक प्रभावशाली माध्यम बन चुका है।

भारत में सुदूर संवेदन का विकास (Evolution of Remote Sensing in India)

हमारे देश में सुदूर संवेदन तकनीक का इतिहास पौराणिक काल से मिलता रहा है लेकिन वर्तमान वैज्ञानिक एवं तकनीकी विकास ने सुदूर संवेदन के क्षेत्र में कई उल्लेखनीय प्रगति की है। भारत में सन् 1962 ई0 में डॉ0 विक्रम साराभाई के नेतृत्व में अन्तरिक्ष विभाग की स्थापना, अनुसंधान, प्रेक्षण आदि की प्रक्रिया शुरू की गयी। 1966 ई0 में राष्ट्रीय सुदूर संवेदन अभिकरण **NRSA** (अब, राष्ट्रीय सुदूर संवेदन केन्द्र– **NRSC**) की हैदराबाद में एवं ठीक उसी वर्ष भारतीय सर्वेक्षण विभाग के सहयोग से हवाई छायाचित्र के प्राप्ति, विश्लेषण एवं मानचित्रण हेतु देहरादून में भारतीय सुदूर संवेदन संस्थान **(IIRS)** की स्थापना की गयी। इन केन्द्रों पर नवीनतम् प्रौद्योगिकी एवं तकनीकी का प्रयोग करते हुए सुदूर संवेदन, भौगोलिक अवस्थिति तन्त्र एवं भौगोलिक सूचना तन्त्र से सम्बन्धित अध्ययन एवं विश्लेषण किया जा रहा है। यह सभी कार्य भारत सरकार के अन्तरिक्ष विभाग के तहत 1972 में बैंगलुरू में स्थापित अंतरिक्ष आयोग (बैंगलुरू, 1972) के निगरानी में होते है।

यद्यपि राष्ट्रीय सुरक्षा के मद्देनजर भारत में हवाई छायाचित्र व उपग्रह छायाचित्र प्रतिबन्धित है, फिर भी देश का कोई सरकारी व स्वशासी संस्थान एवं प्रमाणित नागरिक देश के कुछ क्षेत्र का छायांकन जो, सुरक्षा की दृष्टि से संवेदनशील न हो, भारतीय सर्वेक्षण विभाग से अध्ययन एवं शोध हेतु प्राप्त कर सकता है। अंतरिक्ष आयोग, बैंगलुरू के अन्तर्गत देश में अन्तरिक्ष विज्ञान एवं प्रोद्योगिकी के विकास, प्राकृतिक एवं मानवीय समस्याओं के अध्ययन एवं समाधान हेतु विक्रम साराभाई अंतरिक्ष केन्द्र, त्रिवेन्द्रम, श्री हरिकोटा प्रक्षेपण केन्द्र, अंतरिक्ष अनुप्रयोग केन्द्र, अहमदाबाद, भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन, नई दिल्ली, भौतिक शोध प्रयोगशाला, अहमदाबाद, राष्ट्रीय सुदूर संवेदन अभिकरण, हैदराबाद एवं भारतीय सुदूर संवेदन संस्थान देहरादून आदि कार्यरत है।

भारतीय अंतरिक्ष कार्यक्रम की वास्तविक शुरूवात 19 अप्रैल 1975 से मानी जाती है जब भारत ने एक्स–रे, खगोलिकी, सौर भौतिकी एवं जलवायु के अध्ययन हेतु अपना पहला कृत्रिम भू उपग्रह आर्यभट्ट का सफल प्रक्षेपण सोवियत संघ के प्रक्षेपण केन्द्र कास्मोड्रोम से किया। तत्पश्चात, संसाधन सर्वेक्षण जलवायु एवं मौसम, हिमाच्छादन, भूगर्भीय खोज, सूखा, आगजनी, बाद आपदा, कृषि एवं समुद्रीय अध्ययन हेतु भारत ने 7 जून 1979 को प्रथम

भू–निरीक्षण उपग्रह भास्कर–1 एवं 12 जुलाई 1980 को राहिणी तथा 20 नवम्बर 1981 को भास्कर– 2 का सफल प्रक्षेपण किया।

अभी तक (सन् 2022 तक) भारत कुल 124 भारतीय उपग्रहों का प्रक्षेपण कर चुका है। 1 जनवरी 2023 के अंतरिक्ष विभाग की रिपोर्ट के अनुसार 23 भू–उपग्रह पृथ्वी के नजदीक कक्षा में एवं 29 भारतीय भू–उपग्रह पृथ्वी के भू–तूल्यकालिक कक्षा में कार्य कर रहे हैं जिनमें चन्द्रयान–2 (सन् 2022) भी शामिल है। इसके पश्चात् चन्द्रयान–3 2024 का सफल प्रक्षेपण लल्लेखनीय है। भारतीय उपग्रहों का प्रक्षेपण सामान्यतया इसरो **(ISRO)** द्वारा निर्मित अंतरिक्ष वाहनों ध्रुवीय उपग्रह प्रक्षेपण वाहन **(PSLV)** एवं भू–तूल्यकालिक उपग्रह प्रक्षेपण वाहन **(GSLV)** से किया जाता है। **GSLV** को लॉन्च व्हीकल मार्फ **(LVM)** के नाम से जाना जाता है, भारतीय अन्तरिक्ष तन्त्र में मुख्यतः दो भू–उपग्रह तन्त्र कार्य करते है–

(1) भारतीय राष्ट्रीय उपग्रह तन्त्र (INSAT) –

इस क्रम के भू–उपग्रहों का प्रक्षेपण दूरसंचार, टेलीविजन प्रसारण, शैक्षणिक प्रयोजन, मौसम निगरानी, प्राकृतिक आपदाओं (चक्रवात, सागरीय तूफान, हिम या स्थल स्खलन, बाढ़ एवं सूखा, वनाग्नि, निर्वनीकरण, मृदा क्षरण एवं अपरदन) एवं मानवीय विकास एवं गतिविधियों की निगरानी हेतु किया गया है। इस प्रकार, भारतीय राष्ट्रीय उपग्रह तन्त्र **(Indian National Satellite System - INSAT)-** एक बहुउद्देशीय भू–तूल्यकालिक उपग्रहों की श्रृंखला है। इस योजना के अन्तर्गत इसरो की पहली स्वेदशी भू–तूल्यकालिक कृत्रिम भू–उपग्रह एप्पल **(APPLE- Ariane Passenger Payload Experiment)** का प्रक्षेपण 19 जून 1981 को किया गया। इस तन्त्र के 4 क्रम एवं अन्य उपक्रम के उपग्रहों का विवरण निम्नलिखित है। उपरोक्त के अतिरिक्त कल्पना श्रृंखला के उपग्रह एवं जीसैट के अब तक प्रमोचित 3 दर्जन उपग्रहों में से केवल 11 उपग्रह कार्य कर रहे हैं शेष या तो फेल हो गये या उनका कार्यकाल समाप्त हो चुका है।

(सारणी–14.1)

इनसैट श्रृंखला के उपग्रह		प्रक्षेपण तिथि
उपग्रह क्रम	उपग्रह का नाम	
इनसैट – 1	इनसैट–1 A	10 अपैल, 1982
	इनसैट–1 B	30 अगस्त, 1983
	इनसैट–1 C	21 जुलाई, 1988
	इनसैट–1 D	9 जुलाई, 1992
इनसैट – 2	इनसैट–2 A	10 जुलाई, 1992
	इनसैट–2 B	23 जुलाई, 1993
	इनसैट–2 C	07 दिसम्बर, 1995
	इनसैट–2 D	04 जून, 1997
	इनसैट–2 DT (Insat-2R)	26 फरवरी, 1992
	इनसैट–2 E	3 अप्रैल, 1999
इनसैट – 3	इनसैट–3 B	22 मार्च, 2000
	इनसैट–3 C	24 जनवरी, 2002
	इनसैट–3 A	10 अप्रैल, 2003
	इनसैट–3 E	28 सितम्बर, 2003
	इनसैट–3 D	25 जुलाई, 2013
	इनसैट–3 DR	08 सितम्बर, 2016
	इनसैट–3 DS	17 फरवरी, 2024

इनसैट – 4	इनसैट–4 A इनसैट–4 B इनसैट–4 C इनसैट–4 CR	27 सितम्बर, 2005 11 मार्च, 2007 10 जुलाई, 2006 2 सितम्बर, 2007
इनसैट – 4(GSAT)	इनसैट–4 D(जीसैट–5) इनसैट–4 E(जीसैट–6) इनसैट–4 F(जीसैट–7) इनसैट–4 G(जीसैट–8)	निरस्त कर दी गयी 27 अगस्त, 2015 29 अगस्त, 2013 20 मई, 2011

(2) भारतीय सुदूर संवेदन उपग्रह तन्त्र (Indian Remote Sensing Satellite System- IRS – SS)- यह उपग्रह क्रम भारत–सोवियत सहयोग आधारित कार्यक्रम हैं। इन उपग्रहों का उद्देश्य राष्ट्रीय आवश्यकताओं के अनुरूप संसाधन प्रबंधन, जल प्रबंधन, कृषि, बागवानी, महासागरीय संसाधनों की खोज, नगरीय विस्तार, अवस्थापना नियोजन एवं प्रबंधन हेतु हेतु 'राष्ट्रीय प्राकृतिक संसाधन प्रबन्धन तन्त्र **(NNRMS)**' के अन्तर्गत कार्य करना है। इस क्रम का प्रथम उपग्रह आई0आर0एस0 1 ए **(IRS-1A)** का प्रक्षेपण 1988 में सोवियत संघ के सोवियत कास्मोड्रम, बैंकोनूर से किया गया था। तत्पश्चात्, अगस्त 1999 में **IRS-B,** 2 अक्टूबर 2003 **IRS-P,** 5 मई 2005 को **CARTOSAT -1 (IRS-PS)** तथा **CARTOSAT -2** का प्रक्षेपण 10 जवनरी 2007 में किया गया यह **RS-P6C Resourcesat** है जिसमें बहुवर्णक्रम **(Multi Spectral)** कैमरा **LISS III** एवं उच्चस्थल विभेदन **(High Ground Resolution)** युक्त कैमरा **LISS IV** लगा हुआ है। ये कैमरे उच्च गुणवता युक्त छायांकन करते है। राष्ट्रीय प्राकृतिक संसाधन प्रबन्ध तन्त्र हेतु इन उपग्रहों के आकड़ों को प्राप्त करने हेतु एक उच्च स्तरीय केन्द्र 'राष्ट्रीय सुदूर संवेदन केन्द्र', बालानगर हैदराबाद में कार्य कर रहा है।

भारत में सुदूर संवेदन केन्द्र एवं संस्थान
(Remote Sensing Centre and Institution in India)

राष्ट्रीय प्राकृतिक संसाधन प्रबंध तन्त्र (National Natural Resource Management System (NNRMS):- भारतीय अंतरिक्ष विभाग द्वारा देश में संसाधनों के सर्वेक्षण, आंकड़ा संकलन, मानचित्रण एवं प्रबन्धन हेतु देहरादून, बैंगलुरू, नागपुर, खड़गपुर एवं जोधपुर में क्षेत्रीय सुदूर संवेदन केन्द्र **(Regional Remote Sensing Centres)** स्थापित किये गये (चित्र 14.9)। ये केन्द्र सुदूर संवेदन तकनीकी द्वारा देश के वन क्षेत्रों एवं घास क्षेत्रों का मानचित्रण, वन क्षेत्र का अतिक्रमण, स्थानान्तरित कृषि एवं वनाग्नि पर निगरानी, जैव संरक्षित क्षेत्रों की निगरानी एवं मानचित्रण, संवेदनशील परितन्त्रों (हिमालय, पश्चिमी घाट आदि) का अध्ययन, पर्यावरणीय एवं वनीय संसाधन सूचना तन्त्र का विकास, ईंधन लकड़ी का आंकलन, भूमि, जल एवं वायु प्रदुषण को दृष्टिगत रखते हुए पर्यावरणीय प्रभाव आंकलन, पर्यावरणीय आपदाओं (भू–स्खलन, ज्वालामुखी, भूकम्प, बाढ़, सूखा, आदि) का अध्ययन एवं समुद्र तटीय तटबन्धों एवं क्षेत्रों की निगरानी एवं मानचित्रण करते है।

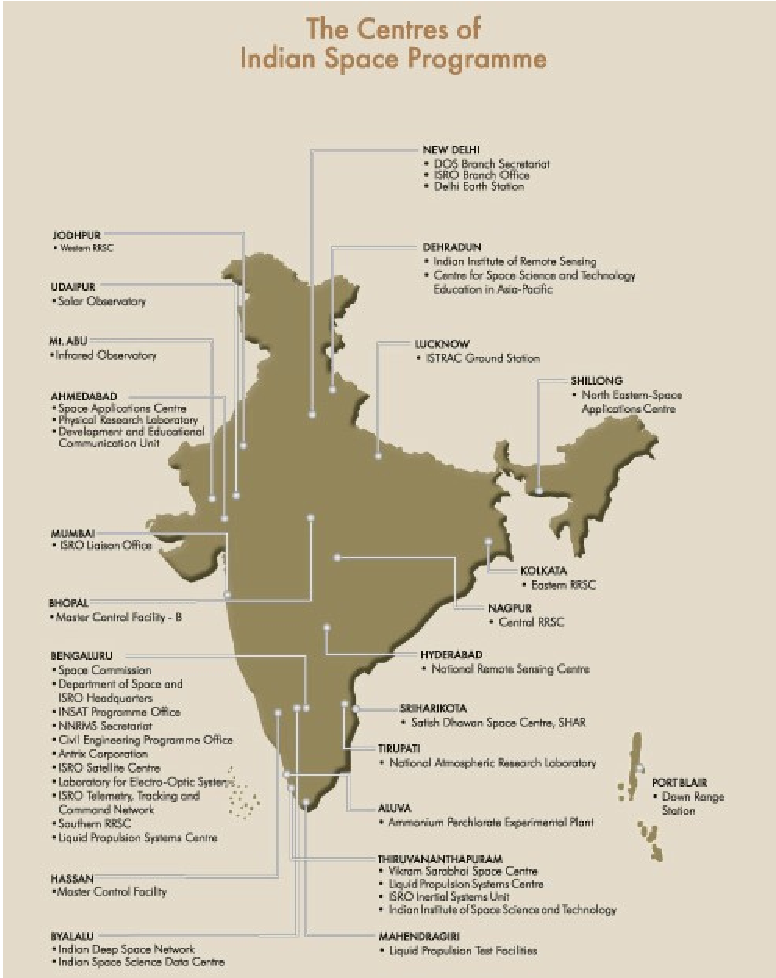

चित्र 14.9

चूंकि इन केन्द्रों से भू–उपग्रहों द्वारा सुदूर संवेदन तकनीकी से प्राप्त चित्रों एवं आकड़ों का उपयोग प्राकृतिक संसाधनों के सर्वेक्षण एवं प्रबन्धन हेतु किया जा रहा है अतः यहाँ का आंकड़ों का उपयोग विद्यार्थियों एवं शोधार्थियों के उपलब्ध कराये जाते है।

राज्य सुदूर संवेदन अनुप्रयोग केन्द्र

(State Remote Sensing Application Centres - SRSAC)

देश के 23 राज्यों में राज्य स्तरीय सुदूर संवेदन अनुप्रयोग केन्द्र कार्य कर रहे हैं। इनका मुख्य कार्य निम्नलिखित है–

1. राष्ट्रीय योजना को सहयोग।
2. भू–उपग्रहीय आंकड़ों एवं चित्रों का राज्य स्तरीय योजना में उपयोग करना।
3. भू–भौतिकी सर्वेक्षणों, मृदा एवं जल आंकलन, निगरानी, उपयोग एवं प्रबन्धन।
4. विभिन्न प्रकार के प्राकृतिक संसाधनों का राज्य के धारणीय विकास के सन्दर्भ में प्रबन्धन।
5. फसल क्षेत्र एवं उत्पादन, नम भूमि खोज आंकलन, जल संभर क्षेत्र प्रबन्धन।
6. आपदा सुभेद्यता, मरूस्थलीकरण एवं भूमि अनाच्छादन का आंकलन।
7. वनक्षेत्र के अतिरिक्त पौधरोपण, जलक्षेत्रों की पुर्नसंरचना, ग्रामीण–नगरीय नियोजन, स्मार्ट सिटी एवं नगरीय अवस्थापनात्मक तत्वों का नियोजन एवं निगरानी।
8. छात्रों अधिकारियों, नियोजकों, शोधार्थियों को प्रशिक्षण प्रदान करना।

प्रशिक्षण संस्थान

(Training Institutes)

हमारे देश में उपवर्णित सुदूर संवेदन केन्द्र अपने मूल कार्य के अतिरिक्त एक प्रशिक्षण संस्थान के रूप में भी कार्य करते है जिनमें कुछ निम्नलिखित हैं जो इससे सम्बन्धित निम्न विधाओं में डिग्री एंव डिप्लोमा तथा शोध पाठ्यक्रम चलाते हैं–

1. भारतीय सुदूर संवेदन संस्थान **(IIRS),** देहरादून
2. राष्ट्रीय सुदूर संवेदन केन्द्र **(NRSC),** हैदराबाद
3. अन्तरिक्ष अनुप्रयोग केन्द्र **(SAC),** अहमदाबाद
4. सुदूर संवेदन संस्थान, अन्नामलाई, चेन्नई
5. सभी क्षेत्रीय सुदूर संवेदन सेवा केन्द्र **(RRSSC)**

उपरोक्त के अतिरिक्त, वन सर्वेक्षण विभाग, भूगर्भ सर्वेक्षण विभाग, भारतीय सर्वेक्षण विभाग, मृदा सर्वेक्षण का राष्ट्रीय बोर्ड, केन्द्रीय भूमिगत जल बोर्ड आदि भी सुदूर संवेदन तकनीक के अनुप्रयोगों का प्रशिक्षण प्रदान करते हैं। साथ ही जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली, दिल्ली विश्वविद्यालय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी सहित सभी बड़े विश्वविद्यालय, प्रौद्योगिकी संस्थान, महाविद्यालय (उपग्रह आधारित ऑन लाईन कोर्स) भी प्रशिक्षण प्रदान करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है।

निष्कर्ष (Conclusion)

उपरोक्त विवरणों से यह निष्कर्ष निकलता है कि सुदूर संवेदन तकनीक भू सतह के विभिन्न प्राकृतिक एवं मानवीय तत्वों, घटनाओं, प्रक्रियाओं के स्थानिक वितरण आदि के अध्ययन हेतु एक सफल एवं अत्याधुनिक तकनीक हैं जिसमें समय, श्रम एवं खर्च में कम निवेश से विश्वसनीय आकड़ें प्राप्त किये जाते हैं। इस तकनीकी का विकास ऊँचे स्थानों, मीनारों, पक्षियों, गैस भरे गुब्बारों, हेलीकाप्टर, वायुयानों पर बैठकर लिये गये फोटो (छायाचित्र) से लेकर आधुनिक भू–तुल्यकालिक एवं सूर्य तुल्यकालिक कृत्रिम भू–उपग्रहों द्वारा संवेदित एवं छायांकित (आकड़ों एवं छायाचित्रों) के द्वारा सर्वेक्षण एवं अध्ययन से हुआ है। इस तकनीकी में सभी कार्य चूंकि मशीनों पर आधारित होते है। अतः सर्वेक्षणकर्ता एवं शोधकर्ता की तटस्थता एवं विश्वसनीयता प्रमाणित रहती है। सुदूर संवेदन से प्राप्त आकड़ों द्वारा प्राकृतिक संसाधनों के अनुकूलतम उपयोग हेतु संसाधन सर्वेक्षण, विश्लेषण एवं संद्धृत सरंक्षण के उद्देश्य की पूर्ति की जा रही है। अतः इसकी उपयोगिता एवं महत्ता को देखते हुए भविष्य में मानव एवं प्रकृति हित में इसके प्रयोग की अन्य क्षेत्रों में संभावनाएं भी बढ़ती जा रही है। मानवीय संसाधन विकास हेतु इस तकनीकी के प्रशिक्षण के लिए भारतीय सुदूर संवेदन संस्थान **(IIRS),** देहरादून, राष्ट्रीय सुदूर संवेदन केन्द्र **(NRSC),** हैदराबाद, अन्तरिक्ष अनुप्रयोग केन्द्र **(SAC),** अहमदाबाद, अन्तरिक्ष अनुप्रयुक्त केन्द्र, अहमदाबाद सहित विभिन्न उच्च शिक्षा संस्थानों में इसकी व्यवस्था है। भारत में सुदूर संवेदन तकनीक का प्रयोग वन मानचित्रण, बंजरभूमि मानचित्रण, भूमिगत जल का मानचित्रण, मृदा मानचित्रण, वसुन्धरा योजना, सूखा, बाढ़ तथा अन्य प्राकृतिक एवं मानवीय आपदाओं में किया जा रहा है।

मॉडल प्रश्न (Model Questions)

प्रश्न 1–किसी भी सेंसर सिस्टम की मूलभूत आवश्यकता होती है

a) स्थानिक संकल्प
b) वर्णक्रमीय संकल्प
c) रेडियोमेट्रिक संकल्प
d) उपरोक्त सभी

प्रश्न 2–इनमें से कौन सुदूर संवेदन का सिद्धांत नहीं है?

a) विद्युत चुम्बकीय ऊर्जा
b) विद्युत चुम्बकीय वर्णक्रम

c) उपग्रह के साथ ऊर्जा की बातचीत

d) वातावरण के साथ ऊर्जा की बातचीत

प्रश्न 3—निम्नलिखित में से सही कथन चुनिए

a) प्लेटफॉर्म की ऊँचाई बढ़ने के साथ इमेजिंग सिस्टम का स्थानिक रिजॉल्यूशन खराब हो जाता है

b) सुदूर संवेदन तकनीक में, अवलोकन स्थल को प्लेटफॉर्म या मंच कहा जाता है

c) प्लेटफॉर्म या तो स्थिर या गतिशील हो सकते हैं

d) उपरोक्त सभी

प्रश्न 4—रिमोट सेंसिंग अपनी प्रक्रिया में निम्नलिखित में से किन तरंगों का उपयोग करता है?

a) विद्युत क्षेत्र

b) सोनार तरंगें

c) गामा किरणें

d) विद्युत चुंबकीय तरंगें

प्रश्न 5—ध्रुवीय परिक्रमा करने वाले सूर्य—तुल्यकालिक उपग्रहों को आम तौर पर कितनी ऊंचाई सीमा पर रखा जाता है?

a) 7—15 किमी

b) 7000—15000 किमी

c) 700—1500 किमी

d) 70—150 किमी

प्रश्न 6—लैंडसैट किस देश की उपग्रह श्रृंखला है?

a) कनाडा

b) यूरोपीय संघ

c) संयुक्त राज्य अमेरिका

d) रूस

प्रश्न 7—निम्न में से कौन सुदूर संवेदन में मंच का प्रकार है

a) भूआधारित मंच

b) वायुमंडलीय आधारित मंच

c) अन्तरिक्षीय मंच

d) उपरोक्त सभी

प्रश्न 8—हिमावरी (सूर्यमुखी) किस देश के उपग्रह तंत्र से सम्बंधित है

a) भारत

b) रूस

c) जापान

d) चीन

प्रश्न 9—भारतीय सुदूर संवेदन संस्थान का मुख्यालय कहाँ है

a) हैदराबाद

b) देहरादून

c) बंगलुरु

d) चेन्नई

प्रश्न 10—इनसैट किस देश की उपग्रह श्रृंखला है ?

a) रूस

b) जापान

c) भारत

d) संयुक्त राज्य अमेरिका

प्रश्न 11–सुदूर संवेदन क्या है? इसको परिभाषित कीजिए।

प्रश्न 12–सुदूर संवेदन तकनीक में भू–आधारित मंच कौन–कौन है?

प्रश्न 13–सूर्य तुल्यकालिक कृत्रिम उपग्रह क्या होते है?

प्रश्न 14–सुदूर संवेदन सर्वेक्षण में प्रयुक्त संवेदकों को सूचीबद्ध कीजिए।

प्रश्न 15–राष्ट्रीय प्राकृतिक संसाधन प्रबन्ध तन्त्र पर लघु निबन्ध लिखिए।

प्रश्न 16–सुदूर संवेदन तकनीक को समझाते हुए इसके महत्व पर प्रकाश डालिए।

प्रश्न 17–सुदूर संवेदन तकनीक का विकासीय इतिहास प्रस्तुत कीजिए।

प्रश्न 18–भारत में सुदूर संवेदन तकनीकी के विकास को समझाईये।

प्रश्न 19–भारत में सुदूर संवेदन के विकास के प्रयास एवं अनुप्रयोगों को लिखिए।

प्रश्न 20–सुदूर संवेदन तकनीक के अन्तरिक्षीय मंचों को विशेषकर कृत्रिम उपग्रहों के सन्दर्भ में व्याख्या कीजिए।

सन्दर्भ पुस्तकें (Reference Books)

- Basudeb Bhatta (2021), Remote Sensing and GIS, Oxford University Press, New Delhi.
- शिव शंकर वर्मा एवं विश्वम्भर नाथ शर्मा (2015), सुदूर संवेदन तकनीक एवं भौगोलिक सूचना तत्व के मूल तत्व, वसुन्धरा प्रकाशन गोरखपुर।
- James B. Campbell and Randolph H. Wynne (2011), Introduction to Remote Sensing, Guilford Press, New York.
- राज कुमार शर्मा (2011), वायु फोटो निर्वाचन, सुदूर संवेदन एवं भौगोलिक सूचना तन्त्र, हिमांशु पब्लिकेशन्स।
- K.K. Maltiar & S.R. Maltiar (2019) Concepts of Cartography Remote Sensing and GIS, Rajesh Publications, New Delhi.
- Kali Charan Sahu (2018), Textbook of Remote Sensing and Geographical Information Systems, Atlantic Publishers and Distributors Pvt Ltd, New Delhi.
- डॉ० देवी दत्त चौनियाल (2004), सुदूर संवेदन एवं भौगोलिक सूचना प्रणाली के सिद्धान्त, शारदा पुस्तक भवन, प्रयागराज।
- P.J. Curran (1985), Principles of Remote Sensing, Longman, England.
- Prithvish Nag (1992), Thematic Cartography and Remote Sensing by Concept Publishing Company, New Delhi.
- Sailesh Samanta (2023), A Text Book of Remote Sensing GIS and GNSS, Notion Press, New Delhi.
- https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Map_of_Department_ofSpace_centres.gif, accessed on 12.07.2024
- De Sherbinin, Alex & Balk, Deborah & Yager, Karina & Jaiteh, Malanding & Pozzi, Francesca & Chandra, Giri & Wannebo, Antoinette (2002), A CIESIN Thematic Guide to Social Science Applications of Remote Sensing, Center for International Earth Science Information Network (CIESIN), Columbia University, Palisades, NY, USA.
- Themistocleous, Kyriacos & Hadjimitsis, Diofantos & Georgopoulos, Andreas & Agapiou, Athos & Alexakis, Dimitrios. (2012). Development of a Low Altitude Airborne Imaging System for Supporting Remote Sensing and Photogrammetric Applications 'The ICAROS Project' Intended for Archaeological Applications in Cyprus. 7616. 494-504. 10.1007/978-3-642-34234-9_51.

यूनिट–15 (Unit- 15)
भौगोलिक सूचना तन्त्रः परिभाषा, उद्देश्य एवं कार्य
(Geographical Information System: Definition, Objectives and Function)

पाठ संरचना (Lesson Structure)

1) उद्देश्य (Objectives)
2) प्रस्तावना (Introduction)
3) भौगोलिक सूचना तन्त्र का अर्थ एवं परिभाषा (Meaning and definition of Geographical Information System)
4) भौगोलिक सूचना तन्त्र की उत्पत्ति एवं विकास (Evolution and Development of GIS)
5) भौगोलिक सूचना तन्त्र की उद्देश्य एवं संघटक (Objectives and Components of GIS)
6) भौगोलिक सूचना तन्त्र में आंकड़ा संग्रहण एवं कार्य (Data acquistion and function in GIS)
7) भौगोलिक आँकड़े (Geographical Data)
8) भौगोलिक सुचना तंत्र की क्रियाविधि (Functioning of Geographical Information System)
9) भारत में भौगोलिक सूचना तन्त्र का विकास (Development of GIS in India)
10) भौगोलिक सूचना तंत्र और मानचित्र निर्माण (GIS and Map Making)
11) भौगोलिक सूचना तन्त्र का अनुप्रयोग (Application of GIS)
12) निष्कर्ष (Conclusion)
13) मॉडल प्रश्न (Model questions)
14) सन्दर्भ पुस्तकें (Reference Books)

उद्देश्य (Objectioves)

1. छात्र भौगोलिक सूचना तन्त्र के बारे में सामान्य जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
2. भौगोलिक सूचना तन्त्र की उत्पत्ति एवं क्रमीय विकास को जान पायेंगे।
3. भौगोलिक सूचना तन्त्र के उद्देश्यों एवं महत्व को समझ सकेंगे।
4. छात्र भौगोलिक सूचना तन्त्र में प्रयुक्त होने वाले महत्वपूर्ण उपकरणों एवं इसके संघटकों की सूचना के बारे में जानेंगे।
5. छात्र भौगोलिक सूचना तन्त्र की उपयोगिता के बारे में विस्तार से जान सकेंगे।
6. छात्र भौगोलिक सूचना तन्त्र एवं इसके सॉफ्टवेयर का मानचित्र निर्माण में उपयोग के बारे में सामान्य जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
7. छात्र भौगोलिक सूचना तन्त्र के भारत में विकास एवं उपयोग के बारे में जान सकेंगे।

प्रस्तावना (Introduction)

भौगोलिक सूचना प्रणाली (Geographical Information System- GIS) संगणक आधारित एक ऐसी प्रणाली है जिसमें सभी प्रकार के आंकडों की प्राप्ति, निर्माण, सम्पादन, प्रबंधन, विश्लेषण एवं मानचित्रण किया जाता है। इस तकनीकी की मदद से आंकड़ों को इतना अच्छे ढ़ंग से प्रदर्शित किया जाता है कि सामान्य समझ के लोग भी इसका लाभ उठा सकें अथवा समस्या व सुझाव को समझ सकें। वर्तमान समय में विश्वस्तरीय समस्याओं जनसंख्या वितरण, पर्यावरण प्रदूषण, निर्वनीकरण, प्राकृतिक आपदाएं एवं मौसम निगरानी आदि की व्याख्या, पूर्वानुमान एवं नियोजन हेतु सरकारी एवं गैर–सरकारी संगठन भौगोलिक सूचना तन्त्र एक सक्षम तकनीकों से युक्त प्रणाली है। यही क्षमता जी0आई0एस0 को अन्य सूचना तन्त्र से अलग करता है। भौगोलिक अध्ययनों में मानचित्रण निर्माण कोई नई विद्या नहीं है किन्तु भौगोलिक सूचना तन्त्र के प्रयोग से यह कार्य सरल एवं

सुविधाजनक हो जाता है। व्यापक स्तरीय प्रशिक्षण की व्यवस्था न होने के कारण यह तकनीक अभी कुछ सीमित उपयोगकर्ताओं तक ही सीमित है किन्तु अब शुद्ध विज्ञानों के साथ–साथ सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक अध्ययनों में अनेक विश्वविद्यालयों एवं उच्च शिक्षण संस्थानों में इसका अध्यापन एवं प्रशिक्षण शुरू होने से इसके प्रयोग में व्यापकता आने की पूरी संभावना है। भौगोलिक तन्त्र तकनीकी का विकास 1960 के दशक में हुआ था परन्तु विगत कुछ वर्षो में सुदूर संवेदन (Remote Sensing) व कम्प्यूटर आधरित प्रौद्योगिकी (Computer Based Technology) के क्षेत्र में तीव्र एवं उल्लेखनीय विकास तथा विभिन्न क्षेत्रों यथा, संसाधन प्रबन्धन, प्राकृतिक व पर्यावरणीय समस्याओं की सूचना सम्बन्धी जरूरतों ने भौगोलिक सूचना प्रणाली की तकनीक के अनुप्रयोग (Applications) का विषय क्षेत्र (Scope) बहुत व्यापक कर दिया है। भौगोलिक सूचना तन्त्र में विभिन्न तकनीकों द्वारा वास्तविक संसार की घटनाओं के बारे में सूचनाओं को एकत्र करके उन्हें अध्यापन हेतु डिजिटल बनाया जाता है तथा उनका उचित विश्लेषण करके समाज को एक दिशा दी जाती है।

आज भौगोलिक सूचना प्रणाली की तकनीकी एवं प्रौद्योगिकी पर आधारित अनेक सूचना तन्त्रों का प्रयोग समाज व प्रकृति के अध्यापन हेतु प्रमुखता से किया जा रहा है जैसे प्रतिविम्ब आधारित सूचना तन्त्र (Imaginary Based Information System) प्राकृतिक संसाधन प्रबन्ध तन्त्र (Natural Resources Management Information System), बाजार विश्लेषण सूचना तन्त्र (Market Analysis Information System), नियोजन सूचना तन्त्र, नगरीय सूचना तन्त्र, आपदा प्रबन्धन सूचना तन्त्र तथा परिपथ जाल विश्लेषण सूचना तन्त्र आदि। उपरोक्त सूचना तन्त्रों जो कि भौगोलिक सूचना तन्त्र के ही भाग है, को देखने से स्पष्ट हो जा रहा है कि भौगोलिक सूचना तन्त्र का हमारे विकास व जीवन में अत्यधिक महत्वपूर्ण स्थान बन गया है।

भौगोलिक सूचना तन्त्र की अर्थ एवं परिभाषा (Meaning and Definition of Geographical Information System) :- शाब्दिक रूप से भौगोलिक सूचना तन्त्र का अर्थ स्वतः स्पष्ट है। इस तन्त्र में तीन शब्द शामिल है–भौगोलिक (Geographical), सूचना (Information) एवं तन्त्र या प्रणाली (System)। भौगोलिक शब्द का सम्बन्ध किसी भी स्थान, वस्तु, घटना, परिघटना के भौगोलिक तत्वों, क्षेत्रीय स्थिति एवं किसी स्थान (Space) में एक विशिष्ठ अवस्थिति सन्दर्भ (Reference) से है। सूचना शब्द वास्तविक जगत के विशाल भण्डार को प्रस्तुत करती है जो कि इस तकनीक का आधार है तथा तन्त्र या प्रणाली का सन्दर्भ यहां एक उपयोग को प्रदर्शित करता है। भौगोलिक सूचना तन्त्र एक संश्लिष्ट तन्त्र है जो विभिन्न घटकों में उपनियोजित है किन्तु इसके सभी अंग व घटक सम्मिलित रूप से स्वतः अपना कार्य करते हैं। संगणक (Computer) तकनीक इसी तन्त्र के सहारे कार्य करती है। अतः भौगोलिक सूचना तन्त्र सगणक आधारित तकनीक है।

भौगोलिक सूचना तन्त्र के अनुप्रयोग के इतने विस्तृत क्षेत्र तथा इसके कार्यों की व्यापकता को देखते हुए इसे परिभाषित करना बहुत कठिन है, फिर भी विभिन्न विशेषज्ञों ने भौगोलिक सूचना तन्त्र को इसके विभिन्न क्रिया विधि अनुसार परिभाषित करने का प्रयास किया है। वस्तुतः विभिन्न विषयों से सम्बन्धित जितनी समस्याओं के अध्ययन में इस तकनीकी का अनुप्रयोग हुआ है, उतनी ही इसके विशेषज्ञों द्वारा परिभाषाएं की गयी है जो निम्नलिखित हैः–

1. डॉ0 जे0पी0 शर्मा ने इसे परिभाषित करने के प्रयास में बताया कि पृथ्वी के बारे में सूचना के संग्रहण, संचयन, विश्लेषण व प्रर्कीणन हेतु हार्डवेयर, सॉफ्टवेयर, तन्त्र, विशेषज्ञों, संगठनों व संस्थागत व्यवस्थाओं के तन्त्र को भौगोलिक सूचना तन्त्र की संज्ञा देते हैं।

अर्थात् सभी भू–सूचना तन्त्र वास्तव में भौगोलिक सूचना तन्त्र के ही रूप है जिसमें भू–अभिलेखीय विशेषताओं एवं सूचनाओं को केन्द्रीय महत्व प्राप्त होता है। क्लार्क महोदय के अनुसार ''एक विशेष संगठन के अन्तर्गत धरातलीय आंकड़ों का अभिग्रहण, संग्रहण, पुनर्प्राप्ति, विश्लेषण तथा प्रदर्शन करने वाली कम्प्यूटर सहायता प्राप्त प्रणाली को भौगोलिक सूचना तन्त्र कहते हैं।''

2. एरोन ऑफ (Aronoff 1989) के अनुसार भौगोलिक संदर्भित आंकड़ों के संग्रह तथा परिचालन की कोई भी हस्त चलित या कम्प्यूटर आधारित क्रियाविधि का समूह भौगोलिक सूचना तन्त्र कहलाता है

(Any manual or Compuetr based set of procedure used to store and manupulate geographical refreneed data).

3. क्लार्क (Clark) ने 1986 में जी0आई0एस0 को परिभाषित करते हुए लिखा है कि ''एक विशेष व्यवस्था के अन्तर्गत धरातलीय आंकड़ों का अभिग्रहण, संग्रहण, पुर्नप्राप्ति, विश्लेषण तथा प्रदर्शन करने वाली कम्प्यूटर सहायता प्राप्त प्रणाली को भौ0सू0 तन्त्र कहते हैं (A computer assisted system for the capture, retrieval, analysis and display of spatial data within a particular organisation).
4. स्मिथ तथा सीचरमैन (Smith and Sicherman):- के अनुसार कार्य प्रणाली के स्वचलित समूह जो व्यवसायकारों को भौगोलिक आंकड़ों को एकत्र, पुनप्राप्ति, परिचालन तथा प्रदर्शन के लिए उच्च क्षमता प्रदान करता है। (An automated set of functions that provides professionals with advanced capabilities for the storage, retrieval, manipulation and display of geographically located data).
5. कोवेन (Cowen) के अनुसार जी0आई0एस0 एक ऐसी निर्णय प्रदायी प्रणाली है जो समस्याओं के समाधान के क्रम में धरातलीय संदर्भित आंकड़ों की खोज करती है। (A decision support system involving the investigation of spatially referenced data in problem solving enviromment).
6. बेरी (Berry) के अनुसार जी0आई0एस0 एक आन्तरिक रूप से संदर्भित, स्वचलित, धरातलीय सूचना प्रणाली है। '(An internally referenced automated spatial information system).
7. डिवाइन एवं फील्ड (Devine and Field) के अनुसार भौगोलिक सूचना प्रणाली प्रबन्धन सूचना प्रणाली का एक ऐसा रूप है जो सामान्य सूचनाओं को मानचित्र के रूप में प्रदर्शन का अनुमति देता है। (A form of management information system that allows map display of the general information).

इस प्रकार भौगोलिक सूचना तन्त्र कम्प्यूटर आधारित स्थानिक समस्याओं का निराकरण करने वाला उपकरण है जिसमें आंकड़ों को एकल, संग्रह, पुर्नप्राप्ति, रूपान्तरण एवं प्रदर्शन की क्षमता होती है (वर्मा एवं शर्मा, 2015)।

भौगोलिक लक्ष्य में एक विशिष्ट आंकड़ों समूह छिपा होता है, जो पूरी तरह विस्तृत रूप में मानचित्रों पर प्रदर्शित नहीं किया जा सकता, इसलिए सम्बन्धित आंकड़ों के साथ संलग्न कर दिये जाते हैं। ये आंकड़ें उस लक्ष्य की सूचना के रूप में संगणक के माध्यम से प्राप्त किये जा सकते हैं। 'तन्त्र' भौ0सू0त0 द्वारा प्रयुक्त तन्त्र–उपगाम को प्रदर्शित करता है। भौगोलिक सूचना तन्त्र एक संश्लिष्ट तन्त्र है जो विभिन्न घटकों में उपविभाजित है, किन्तु सभी घटक सम्मिलित रूप से कार्य करते हैं। संगणक तकनीक इसी उपागम से अभिप्रेरित है। अतः भौगोलिक सूचना तन्त्र संगणक आधारित सूचना तन्त्र है जिसका उपयोग धरातल पर अवस्थित तत्वों तथा उपस्थित घटनाओं को आंकिक रूप में प्रदर्शन तथा विश्लेषण के लिए किया जाता है। इस प्रकार भौ0सू0त0 एक व्यवस्थित कार्य है जिसके द्वारा व्यक्ति निम्न प्रयास करता है :–

- भौगोलिक परिदृश्य एवं प्रक्रियाओं के विभिन्न आयामों का मापन,
- इन मापों को संगणक आंकड़ा आधार के रूप में प्रस्तुति,
- सूचनाओं के उत्पादन एवं नये सम्बन्धों की खोज के लिए आंकड़ा विश्लेषण तथा तत्वों एवं उनके सम्बन्धों को नये ढ़ांचे में प्रस्तुति हेतु आंकड़ों का रूपान्तरण

भौगोलिक सूचना तन्त्र की उत्पत्ति एवं विकास (Evolution and Development of GIS) :-

भौगोलिक सूचनाओं के विश्लेषण का इतिहास एक शतक पुराना है। संगणकों के विकास के पूर्व सूचनाओं का विश्लेषण हस्तचालित था किन्तु 1960 के बाद संगणकों के अस्तित्व में आने से आंकड़ा विश्लेषण सरल हो गया। संगणकों के माध्यम से आंकड़ों के विश्लेषण का सर्वप्रथम प्रयास 1960 के दशक के आरम्भ में कनाडा में शुरू हुआ और कनाडियन भौगोलिक सूचना तन्त्र का अस्तित्व प्रकाश में आया। 'भौगोलिक सूचना तन्त्र'

(GIS) शब्द का प्रयोग तभी से शुरू हुआ। भौगोलिक सूचना तन्त्र के एतिहासिक विकास को तीन कालों में बाँटा गया है– उत्पत्ति काल, विकास काल एवं अनुप्रयोग काल।

उत्पत्ति काल (1960–1970) :- इस अवधि में संगणकों का उपयोग मानचित्रण में होने लगा था । मानचित्र पर बिन्दु, रेखा या क्षेत्र X, Y निर्देशांक की सहायता से प्रदर्शित किये जाने लगे थे। इस अवधि में वर्तमान भौगोलिक सूचना तन्त्र की तकनीक की संकल्पनाओं एवं विधियों को प्रतिस्थापित किया गया था। यद्यपि आँकड़ों का इलेक्ट्रानिक प्रसंस्करण का विकास 1940–50 के दौरान शुरू हो गया था और 1955 में मेसाचुसेट्स इन्स्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलोजी एवं 1965 में जनरल इलेक्ट्रिक द्वारा संगणकों से भौगोलिक आँकड़ों का प्रसंस्करण प्रारम्भ कर दिया गया था किन्तु भौगोलिक सूचना तन्त्र का वास्तविक विकास डॉ० रॉजर टॉमलिसन ने 1971 में किया था। इस प्रणाली को कनाडा ज्योग्राफिक इनफॉरमेशन सिस्टम कहा जाता है और इसका प्रयोग कनाडा लैंड इन्वेंटरी द्वारा आंकड़े एकत्रित और विश्लेषित करने हेतु किया जाता है। इसके माध्यम से कनाडा के ग्रामीण क्षेत्रों की जमीन, कृषि, पानी, वन्य–जीवन आदि के बारे में जानकारी एकत्रित की जाती थी। 1973 में अमेरिका में USGS ने भूमि उपयोग सम्बन्धी आँकड़ों के विश्लेषण के लिए भौगोलिक सूचनाओं की पुनर्प्राप्ति एवं विश्लेषण पद्धति की शुरूआत की। यूरोप एवं अमेरिका में संगणक आधारित मानचित्र तथा आंकड़ा प्रसंस्करण तथा विकासीय योजनाओं को प्रारम्भ किया गया। कम्प्यूटर ग्राफिक के लिए हार्वड लेवोरेटरी ने प्रथम समकालीन वेक्टर GIS जिसे ODESSEY कहा जाता है, विकसित किया। लंदन में रायल कालेज आफ आर्ट ने कम्प्यूटर का प्रयोग कर उच्च गुणवत्ता वाले मानचित्र का उत्पादन किया। स्काटलैंड के एडिनवर्ग विश्वविद्यालय के भूगोल विभाग ने भौगोलिक सूचना मानचित्रण तथा प्रबंधन पद्धति, पैकेज विकसित किया। इस प्रकार 1960 तथा 1970 का काल उत्पत्ति काल रहा जिस दौरान अनेक साफ्टवेयर विकसित किये गये जिनका उपयोग विश्वविद्यालयों, सरकारों, एजेन्सियों एवं रक्षा, तर्क अन्वेषण, जनगणना आदि में होने लगा था।

विकास काल (1980–90):- 1980 के दशक में आँकड़ा प्रारूप एवं संगणक क्षमता में महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए। स्थानिक आँकड़ा आधार प्रबंधन तन्त्र विकसित किया गया जो पारम्परिक आँकड़ा आधार प्रबन्धन क्षमता को संगणक आधारित मानचित्रण दक्षता से संयोजित किया। धरातलीय सूचनाओं का संग्रह एवं उनका मानचित्रों पर आलेखीय प्रदर्शन की क्षमता भी इस अवधि में विकसित हुई। आँकड़ों के अधिग्रहण के लिए वेक्टर एवं रास्टार आँकड़ा प्रतिमान भी इस अवधि में सामने आये जिससे भौगोलिक सूचना तन्त्र में आँकड़ों का परिसंचरण अधिक आसान हो गया। X,Y निर्देशांक की सहायता से विन्दु, रेखा या क्षेत्र को वेक्टर प्रतिमान में आँकड़ों को संग्रहित किया जाने लगा। कार्बेट (1979) का तकनीकी पत्र 'On the Concept to Topology as Applied to Spatial Data' भौगोलिक सूचना तंत्र के विकास में मील का पत्थर साबित हुआ। भौगोलिक आँकड़ा संरचना में भू–आकृतिक इकाईयों के संदर्भ में Topology का महत्व बढ़ता गया। टोपोलॉजी संकल्पना का उपयोग कर भौगोलिक आँकड़ों का भण्डारण किया जाता है। उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारम्भिक वर्षों में टोपोलॉजी आँकड़ा संरचना संकल्पना का आँकड़ा निरुपण में आधिकाधिक उपयोग हुआ। 1982 में Environmental System Research Institute (ESRI) ने ArcInfo साफ्टवेयर को विकसित किया। यह वेक्टर आधारित प्रथम GIS साफ्टवेयर था जिसका उपयोग भू–सम्बन्धात्मक आँकड़ा मॉडल के लिए किया जाता है। टोपोलोजिकल आँकड़ा रचना का उपयोग कर ग्राफिक आँकडों का भण्डारण संबन्धात्मक या सारणयिक आंकड़ा संरचना में किया जाता है। 1980 के मध्य में अनेक साफ्टवेयर विकसित किये गये जिनमें INFOMAP एवं CARIS पैकेज तथा 1980 के उत्तरार्द्ध MAPINFO, SPANS, PC & ARCINFO तथा अन्य कई साफ्टवेयर किये गये। आँकड़ा आधार प्रबन्धन तथा उपयोगकर्ता–संगणक अन्तक्रिया के विकास से भौगोलिक सूचना तन्त्र एक बहुआयामी मंच बन गया।

अनुप्रयोग काल (1990 के पश्चात)**:-** यह समय आँकड़ों के विश्लेषण एवं प्रतिमानीकरण का माना जाता है। वास्तविक विश्व एवं मानव के जटिल अन्तर्सम्बन्धों के विश्लेषण, समस्याओं की प्रवृत्तियों का विश्लेषण एवं समाधान हेतु प्रतिमानीकरण के लिए भौगोलिक सूचना तन्त्र का प्रयोग होने लगा है। इस तकनीकी का प्रयोग अब आम जीवन की विविध समस्याओं के निराकरण में किया जाने लगा है। 1990 में यू0एस0ए0 में सरकार ने राष्ट्रीय सूचना संस्था का विकास किया जिसका उद्देश्य नागरिकों को स्वास्थ्य, शिक्षा एवं सामुदायिक विकास की सूचनाएँ

उपलब्ध कराना था । राष्ट्रीय स्थानिक आँकड़ा संस्था का कार्यान्वयन भी 1994 में हुआ जो आँकड़ों के अधिग्रहण, प्रसंस्करण तथा वितरण में संलग्न था। वर्तमान समय में भौगोलिक सूचना तन्त्र का प्रयोग नौकायन, वायु तथा समुद्री यातायात, मौसम पुर्वानुमान, प्राकृतिक आपदा प्रबन्धन, व्यापार, उद्योग पुनर्स्थापन, भू–अभियन्त्रण आदि में व्यापक रूप से होने लगा है। यह व्यापकता, भौगोलिक सूचना तन्त्र तकनीक में व्यापक सुधार एवं विकास के कारण आयी है।

भौगोलिक सूचना तन्त्र का उद्देश्य (Objectives of GIS)

भौगोलिक सूचना तन्त्र में मुख्य उद्देश्य निम्नलिखित हैः–

- विभिन्न स्रोतों से प्राप्त सूचनाओं को सम्पादित, संग्रह एवं संगठित करने में सक्षम होना।
- भू संदर्भित आँकड़ों के विश्लेषण से नवीन सूचनाएँ विकसित करना।
- अवस्थिति, दशा, प्रवृत्ति तथा प्रतिरूप का विश्लेषण एवं प्रतिरुपण।
- अति जटिल आँकड़ा विश्लेषण की क्षमता रखना।
- शीघ्रता एवं सरलता से सूचनाएँ उपलब्ध कराना एवं अद्यतन करने की क्षमता रखना
- आँकड़ों के वितरण एवं संचालन हेतु सक्षम साधन प्रदान करना।

भौगोलिक सूचना तन्त्र का अन्य विषयों से सम्बन्ध (Relationship of GIS with other Desciplines)

भौगोलिक आंकड़ों के संचालन के समय भौगोलिक सूचना तन्त्र को कई अन्य विषयों का सहयोग लेना पड़ता है। भौगोलिक सूचना तन्त्र में क्षेत्रीय संकल्पना उसकी आत्मा है। कोई भी तत्व या घटना क्षेत्र से ही सम्बन्धित होते हैं। यह संकल्पना समाहित करने के लिए GIS भूगोल, मनोविज्ञान तथा भाषा विज्ञान आदि से सहायता लेता है। क्षेत्रीय आंकड़ों की प्राप्ति एवं प्रसंस्करण के लिए सुदूर संवेदन, इन्जिनियरिंग सर्वेक्षण, मानचित्र भाग, फोटोग्रैमेट्री आदि विज्ञान सहायक होते हैं जबकि सैद्धान्तिक आधार कम्प्यूटर विज्ञान, गणित तथा सांख्यिकी प्रस्तुत करते हैं। भौगोलिक संरचना तन्त्र के अनुप्रयोग के लिए पुरातत्व विज्ञान, वानिकी, भूविज्ञान, क्षेत्रीय योजना, सर्वेक्षण आदि विषयों को सम्बद्ध किया जाता है। वैधनिक विज्ञान, अर्थशास्त्र आदि भौगोलिक सूचना तन्त्र को प्रोत्साहित करते हैं।

भौगोलिक सूचना तन्त्र में आंकड़ा संग्रहण एवं कार्य (Data and function in GIS)

भौगोलिक सूचना तन्त्र में विभिन्न स्रोतों से प्राप्त अंकीय आंकड़ों को स्तरीय, जालतन्त्र या सम्बन्धात्मक आंकड़ा आधार में संग्रहित किया जाता है। ये आंकड़े, धरातलीय तत्वों के अलग–अलग स्तरों से सम्बन्धित होते हैं। सभी भौगोलिक लक्ष्य बिन्दु, रेखा या बहुभुज के रूप में प्रदर्शित होते हैं। प्रत्येक आंकड़ा स्तर के इन स्वरूपों को रास्टर या वेक्टर प्रतिमानों में जी0आई0एस0 के अन्तर्गत संग्रहत किया जाता है। रास्टर प्रतिमान में लक्ष्य धरातल को निश्चित आकार की इकाइयों में विभाजित कर उसे एक निश्चित पहचान मूल्य प्रदान किया जाता है जबकि वेक्टर प्रतिमान में प्रारम्भ और अन्त बिन्दुओं के निर्देशांक संकलित किये जाते हैं।

सामान्यतया भौगोलिक सूचना तन्त्र छः प्रकार के कार्य करता है– आँकड़ा प्रविष्टि (Data Input), परिचालन (Manipulation), प्रबन्धन (Management), पृच्छा एवं विश्लेषण (Query and Analysis) तथा दृश्य प्रदर्शन (Visualization)। भौगोलिक आंकड़ों को सर्वप्रथम उपयुक्त आकिक प्रतिरूप में बदला जाता है जिसे अंकीकरण (digitization) कहते हैं। वर्तमान समय में यह कार्य अब स्वचालित होने लगा है। अंको के रूप में आँकड़े जब जी. आई.एस. में प्रविष्ट हो जाते हैं तब इन आँकड़ों को उद्देश्य एवं साफ्टवेयर विशिष्टता के अनुरूप रूपान्तरित करने पड़ते हैं तथा उनसे नई सूचनाएँ प्राप्त की जाती हैं जिन्हें परिचालन (manipulation) कहते हैं। आँकड़ों की मात्रा बढ़ने के कारण उनको व्यवस्थित करना कठिन हो जाता है। इन आँकड़ों को ठीक प्रकार से एवं आसानी से उपयोग करने के लिए ऐसे संगणक साफ्टवेयर तैयार किये जाते हैं जो आँकड़ों के उपयोग को आसान बना देते है। इन्हे आँकड़ा आधार प्रबन्धन तन्त्र कहते हैं और इस प्रक्रिया को प्रबन्धन (Management) कहते हैं। कुछ साफ्टवेयर के माध्यम से परिचालित सूचनाओं से उपयोग कर्ता अपनी समस्याओं का समाधान प्राप्त करता हैं। यह कार्य आँकड़ों की स्थानिक एवं कालिक प्रवृत्तियों के विश्लेषण से सम्पादित करता है। जी.आई.एस. में पृच्छा एवं

प्रदर्शन, समपेटी निर्धारण, जालतन्त्र विश्लेषण तथा अध्यारोपण विश्लेषण एवं भू–भाग प्रतिमानीकरण कार्यो द्वारा उपयोगकर्त्ता अपेक्षित समाधान प्राप्त करने की कोशिश करता है।

भौगोलिक आँकड़े (Geographical Data)

आँकड़े भौगोलिक तथ्यों के संख्यात्मक एवं सदृश्य (analog) प्रतिरूप हैं। इनका संकलन कई स्रोतों से किया जाता है। आँकड़े भौगोलिक सूचना तन्त्र में कच्चे माल के रूप में प्रयुक्त होते है। बिना आँकड़े के जी.आई.एस. का कोई अस्तित्व नहीं है। भौगोलिक सूचना तन्त्र इनकी सहायता से सामान्यीकरण और सिद्धान्त निरूपण के द्वारा मानव कल्याण हेतु विकासात्मक स्तर पर निर्णय प्रक्रिया संभव करता है। इस प्रकार आँकड़े भौगोलिक तथ्यों के जटिल तन्त्र के परिमाणात्मक प्रतिरूप हैं। भौगोलिक तथ्यों की जटिलता, विविधता एवं अन्तर्सम्बन्ध के अनुरूप आँकड़े भी कई प्रकार के होते हैं। इनका वर्गीकरण निम्नलिखित आधार पर किया जा सकता है–

(1) **प्राप्ति स्रोत आधारित वर्गीकरण**–इस प्रकार का वर्गीकरण संकलित आँकड़ों के प्राप्ति स्रोतों के आधार पर किया जाता है जैसे–प्राथमिक एवं द्वितीयक आँकड़े।

(2) **गुणात्मक वर्गीकरण**–आँकड़ों के गुण–धर्म के आधार पर जब वर्गीकरण किया जाय तो गुणात्मक वर्गीकरण कहलाता है।

(3) **स्थानिक वर्गीकरण**–भौगोलिक आँकड़ों के क्षेत्र के अनुसार आकृति एवं प्रतिरूप के आधार पर ऐसे वर्गीकरण किये जाते हैं।

(4) **कालिक वर्गीकरण**–समय के संदर्भ में जब वर्गीकरण किया जाय तो कालिक वर्गीकरण कहा जाता है।

भौगोलिक सूचना तन्त्र के लिए सूचनाएँ अनेक स्त्रोतों से प्राप्त की जाती हैं। उनकी प्रकृति प्राप्ति स्रोतों पर आधारित होती है। निम्नलिखित पाँच प्रकृति अधिक महत्वपूर्ण हैं जो अलग–अलग स्रोतों से प्राप्त होते हैं–

(14) वास्तविक (Real) : किसी समय विशेष पर किसी स्थान विशेष में घटित घटनाओं तथा प्रत्यक्ष भू–धरातलीय दशाओं की सूचनाएँ वास्तविक होते हैं। ऐसे आँकड़े प्राथमिक एवं द्वितीयक दोनों स्रोतों से प्राप्त किये जाते हैं।

(2) अधिग्रहित (Captured) : ऐसे आँकड़ों के स्रोत वे एकत्रित सूचनाएँ हैं जो अन्य उपकरणों की सहायता से प्राप्त किये गये होते हैं जैसे सुदूर संवेदन उपग्रह के प्राप्त डिजिटल ऑकड़ तथा वायु फोटो चित्र आदि।

(3) विश्लेषित (Interpreted) : आँकड़ा आधार में उपलब्ध आँकड़ों के विश्लेषण से कई प्रकार की अन्य सूचनाएँ प्राप्त होती हैं जिसे विश्लेषण जन्य आँकड़े कहते हैं। उदाहरण के लिए सुदूर संवेदन से प्राप्त आँकड़ों से भूमि उपयोग के आँकड़े प्राप्त करना।

(4) कूटकृत (Encoded) : कुछ लाक्षणिक आँकड़े कूट के माध्यम से आँकड़ा आधार में संग्रहित किये जाते हैं उदाहरण के लिए वर्षामापी यन्त्र से मापे गये आँकड़े, तापमान, कुँओं की गहराई आदि।

(5) संरचित (Structured) : किसी विशेष व्यवस्था में रखे गये संरचित आँकड़े कहलाते हैं जो पुनर्प्राप्ति के लिए व्यवस्थित किये जाते हैं । जैसे तालिका ।

आँकड़ों के प्रकार (Types of Data)

भौगोलिक सूचना तन्त्र के अन्तर्गत निम्नलिखित दो प्रकार के आँकड़ों का संग्रह किया जाता है और प्रयोग कर्ता उनके उपयोग से नये आँकड़ों का सृजन करता है–

(अ) धरातलीय आँकड़े (Spatial data) –

धरातलीय सूचनाओं के अन्तर्गत भौगोलिक स्पेस में विभिन्न तत्वों की अवस्थिति सम्बन्धी आँकड़े सम्मिलित होते है। उदाहरण के लिए एक बसाव स्थिति का दूसरे बसाव स्थिति से सम्बन्ध, धरातलीय इकाइयाँ एवं धरातलीय सम्बन्धों में अन्तर, आकृतियों तथा संरचना के मात्रात्मक एवं गुणात्मक विश्लेषण, अलग–अलग घटनाओं के मध्य सहसम्बन्ध एवं अन्तक्रिया इत्यादि। धरातलीय सूचनाएँ विभिन्न आकृतियों लक्ष्यों तथा क्षेत्रों की धरातलीय सापेक्षिक स्थिति होती है।

(ब) **लाक्षिणिक आँकड़े (Attribute data)**– धरातलीय सूचनाओं की विशेषताओं को प्रदर्शित करने वाले आँकड़ों को लाक्षिणिक या अधरातलीय (Non-spatial) आँकड़े कहते हैं। धरातलीय सूचनाएँ क्षैतिज होती हैं जबकि

लाक्षणिक सूचनाएँ धरातलीय तथ्यों की उर्ध्वाधर विशेषताएँ बताती हैं। उदाहरण के लिए सड़क एक रेखीय आकृति के रूप में धरातलीय आँकड़ा हैं किन्तु सड़क के प्रकार पक्की या कच्ची सड़क की चौड़ाई, लम्बाई, निर्माण विधि, निर्माण तिथि, ट्रैफिक नियम, सड़क के किनारे बनी नालियाँ, जल आपूर्ति के पाइप आदि सभी धरातलीय तथ्य–सड़क के लाक्षणिक आँकड़े हैं। भौगोलिक सूचना तन्त्र में धरातलीय आँकड़ों के निवेश के साथ–साथ लाक्षणिक आँकड़ों के निवेश की भी कई विधियाँ हैं। धरातलीय सूचनाओं के साथ–साथ लाक्षणिक सूचनाओं को अन्तर्सम्बन्धित कर के ही कोई निर्णय निष्पादन सम्भव हो पाता है।

भौगोलिक सूचना तन्त्र के लिए धरातलीय आँकड़ा प्रतिमान (Spatial Data Model for GIS) : कम्प्यूटर में घटना क्रिया विज्ञान की संरचना प्रदर्शित करने वाले प्रोग्राम होते हैं जो आँकड़ों को उपयुक्त तरीके से संगठित करते हैं। भौगोलिक सूचना तन्त्र धरातलीय आँकड़ों को प्रदर्शित करने की विधियों का प्रबन्ध करती है। आँकड़ा आधार प्रबन्ध प्रणाली भी उन्हीं में से एक है जो धरातलीय तथा अधरातलीय आकृतियों की विवेचना करती है। धरातलीय आँकड़ों को प्रदर्शित करने के लिए भौगोलिक सूचना तन्त्र में मुख्यतः दो उपागम अपनाए जाते हैं–

(1) कार्टोग्राफिक मानिचत्र प्रतिमान (Cartographic Map Model)

(2) भू–सम्बन्धात्मक प्रतिमान (Georelational Model)

कार्टोग्राफिक मानचित्र प्रतिमान (Cartographic Map Model) : इसे मिश्रित मानचित्र मॉडल भी कहते हैं। भौगोलिक सूचना तन्त्र के पैकेज के रूप में रास्टर के लिए अधिकतर प्रयोग किया जाता है। रास्टर संरचना में आँकड़ों का उपयोग दो विधियों से–चारखानेदार वर्गाकार विधि तथा चतुर्वृक्षीय–बहुखानेदार विधि से किया जाता है।

भू–सम्बन्धात्मक प्रतिमान (Geo-relational Model) : यह प्रतिमान मानचित्र तत्वों के साथ धरातलीय सम्बन्धों को स्थापित करता है। धरातलीय इकाई में उपस्थित विभिन्न आँकड़ा परतों यथा–नगर, बसाव, सड़क, नहरें या भू–आकृतियाँ आदि की विशेषताओं और इन परतों की विभिन्न लाक्षणिक सूचनाओं के मध्य सम्बन्धों का विश्लेषण भू–सम्बन्धात्मक मॉडल करता है। वेक्टर संरचना इस प्रकार के मॉडल का प्रमुख उदाहरण है।

रास्टर एवं वेक्टर ऑकड़ा प्रतिमान (Raster and Vector Data Models) :

वास्तविक जगत की आकृतियाँ प्रायः दो प्रकार की होती है–वस्तु (Object) तथा दृश्य (Phenomena)। वस्तु निश्चित अवस्थिति वाला असतत् तत्व है जैसे शहर, बिल्डिंग, उद्यान तथा मार्ग आदि, जब कि दृश्य एक विस्तृत क्षेत्र पर सतत् वितरित होता है जैसे–उच्चावच, तापमान, वर्षा इत्यादि। भौगोलिक आँकड़े वास्तविक जगत को इन दो आधारभूत प्रतिरूपों में प्रदर्शित करते हैं। भौगोलिक आँकड़ा आधार में इन्हें वस्तु आधारित प्रतिमान तथा क्षेत्र आधारित प्रतिमान कहते हैं। वस्तु वह धरातलीय तत्व है जिसमें निश्चित विस्तार एवं सीमा होती है तथा जिसमें निश्चित विशेषताएँ होती है। स्थानिक वस्तु के दो वर्ग हैं सुनिश्चित (Exact) वस्तु तथा अनिश्चित (Inexact) वस्तु, सुनिश्चित वस्तु की निर्धारित सीमा रेखा होती है जैसे बिल्डिंग जब कि अनिश्चित वस्तु की सीमारेखा निश्चित नहीं होती वल्कि अस्पष्ट होती है जैसे मिट्टी के प्रकार। वस्तु की प्रकृति और मापक के आधार पर स्थानिक को आरेखीय तत्वो–बिन्दु (Point), रेखा (line) तथा बहुभुज (Polygon) द्वारा प्रदर्शित करते हैं। क्षेत्र आधारित प्रतिमान में भौगोलिक क्षेत्र एक या अधिक क्षेत्रीय दृश्यों से अच्छादित होता है तथा दृश्यों के मध्य की सीमा रेखा स्पष्ट नहीं होती है।

स्थानिक आँकड़ा आधार या तो वस्तु आधारित प्रतिमान या क्षेत्र आधारित प्रतिमान का प्रयोग कर बनाया जा सकता है। वस्तु आधारित स्थानिक आँकड़ा आधार में आँकड़े को आर्डिनेट या वेक्टर लाइन के रूप में प्रदर्शित होते है, अतः इन्हें वेक्टर आँकड़ा प्रतिमान कहते हैं जब कि क्षेत्र आधारित आँकड़ा आधार में चतुष्कोणीय सेल को आँकड़े की ईकाई (Pixel) के रूप में प्रदर्शित करते है जो पूरे क्षेत्र को समान सेल के ग्रिड में विभाजित कर प्राप्त किया जाता है। इसे रास्टर आँकड़ा प्रतिमान कहा जाता है। इस प्रकार स्थानिक आँकड़ो के प्रदर्शन की दो विधियाँ हैं–रास्टर तथा वेक्टर।

रास्टर आंकड़ा प्रतिमान (Raster Data Model) :- विस्तृत क्षेत्र पर फैले भौगोलिक स्वरूपों के आंकड़ों के लिए रास्टर पद्धति का प्रयोग किया जाता है। इस पद्धति में सम्पूर्ण भौगोलिक क्षेत्र को कतार (Row) तथा स्तम्भ (Column) में विभाजित कर देते हैं, जिससे पूरा क्षेत्र कोशिकाओं (Cells) में विभाजित हो जाती है। एक कोशिका के आकार को लघुतम मानचित्र इकाई (Minimum mapping unit) कहते है। इसे धरातलीय विभेदन (Spatial resolution) भी कहते हैं।

वेक्टर आँकड़ा प्रतिमान (Vector data Model)

इस उपागम का प्रयोग पृथक लक्ष्यों के आँकड़ों का प्रदर्शित करने के लिए करते हैं। इसके अन्तर्गत लक्ष्यों की अवस्थिति को कोआर्डिनेट युग्म द्वारा प्रदर्शित करते हैं। वेक्टर आँकड़ा प्रतिमान लक्ष्य के स्वरूप (बिन्दु, रेखा, क्षेत्र के कोअर्डिनेट तथा स्थानविज्ञान (topology) के उपयोग पर आधारित है। बिन्दु को कोआर्डिनेट से एक युग्म (X, Y) द्वारा, रेखा को कोआर्डिनेट के दो युग्मों तथा क्षेत्र को कोआर्डिनेट समूह द्वारा प्रदर्शित किया जाता है।

कम्प्यूटर तकनीक के विकास ने भौगोलिक सूचना तन्त्र में रास्टर एवं वेक्टर दोनो प्रतिमानों का समानान्तर प्रयोग सम्भव बना दिया है। भौगोलिक सूचनाओं के विविध आयामी विशेषताओं के कारण केवल रास्टर या वेक्टर प्रतिमानों के माध्यम से पूर्ण प्रदर्शन उपयोगी नहीं है। इसीलिए अब भौगोलिक सूचना तन्त्र के साफ्टवेयर दोनो प्रतिमानों के समन्वय से विश्लेषण करने में सक्षम बनाये गये हैं।

भौगोलिक सूचना तंत्र की क्रियाविधि (Functioning of Geographical Information System)

आँकड़े, भौगोलिक सूचना तन्त्र की आत्मा है। बिना आंकड़ों के जी.आई.एस. से कोई भी उत्पाद नहीं लिया जा सकता है विभिन्न स्रोतों से भिन्न–भिन्न प्रकार के आँकड़े प्राप्त किये जाते हैं और भिन्न–भिन्न विधियों से जी.आई. एस. में इनका उपयोग किया जाता है। मानचित्रों को डिजिटाइजेशन, स्कैनिंग या सीधे फाइल ट्रान्सफर के द्वारा; हवाई छायाचित्र की स्कैनिंग के द्वारा; उपग्रहीय बिम्बों को डिजिटल रूप में तथा जी.पी.एस. आदि यन्त्रों द्वारा सीधे जी.आई.एस. में प्रवेश किया जाता है। जी.आई.एस में आँकड़ों को आवश्यक आँकड़ा प्रतिमान के अनुरूप संशोधित किया जाता है। किसी भी जी.आई.एस. परियोजना में उद्देश्य प्राप्ति हेतु निम्न कार्य करने आवश्यक होते हैं–

1. विभिन्न प्रक्षेपों पर उपलब्ध मानचित्रों को आवश्यक प्रक्षेप पर रूपान्तरण,
2. संश्लिष्ट आँकड़ों को साधारण संरचना में रूपान्तरण,
3. डिजिटल रूप में आँकड़ों के रूपान्तरण के बाद मानचित्रों का मिलान एवं जोड़।

की–बोर्ड, डिजिटाईजेशन, स्कैनिंग तथा इलेक्ट्रानिक डाटा ट्रान्सफर के द्वारा जी.आई.एस. में आँकड़ा प्रवेश होने के बाद आँकड़ों की त्रुटियों का संरचना तथा संपादन एवं संशोधन किया जाता है। सम्पादन में प्रक्षेप पुनर्रचना, आँकड़ा सामान्यीकरण, कोर मिलान तथा रबर शीटिंग आदि कर के समन्वित जी.आई.एस. आँकड़ा आधार तैयार किया जाता है जिसे आँकड़ा बहाव कहते हैं।

आँकड़ा प्रविष्टि की प्रक्रियाएं (Processes of Data Input) :– आँकड़ों को संकेत पद्धति द्वारा आँकड़ा आधार में लिखना या भण्डारित करना आँकड़ा प्रविष्टि कहलाता है। आँकड़ों को सुचारू रूप से परिचालन हेण्ड संगणक में उनकी प्रविष्टि आवश्यक है। स्थानिक एवं लाक्षणिक आँकड़े एक सिक्के के ही दो पहलू हैं। इन दोनों आँकड़ों की प्रविष्टि एवं संयोजन भौगोलिक संरचना तन्त्र की महत्वपूर्ण प्रक्रियाएँ हैं जिनका विवरण निम्नलिखित है–

1. स्थानिक आँकड़ों की प्रविष्टि
2. लाक्षणिक आँकड़ों की प्रविष्टि
3. स्थानिक एवं लाक्षणिक आँकडों का संयोजन

1. **स्थानिक आँकड़ों की प्रविष्टि (Spatial data input)**– स्थानिक आँकड़ों को संगणक में प्रवेश की अनेक विधियाँ हैं जिनका उपयोग आँकड़ों के प्रकार, प्रवृत्ति, आवश्यकता, उपलब्ध तकनीकी एवं वित्त के अनुसार

किया जाता है। कभी–कभी एक से अधिक विधियों का प्रयोग भी किया जाता है। स्थानिक आँकड़ों में क्षेत्र मानचित्र, टोपोशीट, हवाई छायाचित्र, सुदूर संवेदन से प्राप्त आँकड़े, तथा अन्य धरातलीय आँकड़े प्रमुख हैं। स्थानिक आँकड़ों की प्रविष्टि मुख्यतः आंकिक रूपान्तरण (Digitization) प्रक्रिया द्वारा सम्पन्न किया जाता है।

2. **लाक्षणिक आँकड़ों की प्रविष्टि (Entering attribute data)**– स्थानिक तत्वों की विशेषताओं को दर्शाने वाले आँकड़े लाक्षणिक आँकड़े कहे जाते हैं। ये आँकड़े स्थानिक आँकड़ों के साथ जोड़े जाते हैं ताकि वे स्थानिक आँकड़ों की विशेषताएँ बता सकें। उदाहरण के लिए सड़क को स्थानिक आँकड़े के रूप में अंकीकृत कर रास्टर या वेक्टर के रूप में संगणक में प्रविष्ट किया जाता है तो उन आँकड़ों के साथ सड़कों के रंग, चिह्न, लम्बाई, चौड़ाई, निर्माण विधि, निर्माण तिथि, जल पाइप, विद्युत लाइन, यातायात संचालन आदि लाक्षणिक आँकड़े भी उसके साथ जोड़े जाते हैं।
3. **स्थानिक एवं लाक्षणिक आँकड़ों का संयोजन (Interlinking spatial and attribute data)**– भौगोलिक सूचना तन्त्र में धरातलीय तथा लाक्षणिक आँकड़ों का संयोजन आवश्यक होता है। यद्यपि किसी भी आकृति के कोड तथा पहचान को ग्राफिक तथ्यों के साथ सीधे ही जोड़ा जा सकता है, परन्तु अधिक संख्याओं में जटिल आधारतलीय तत्वों के जोड़ने के लिए यह दक्ष या सफल विधि नहीं है। पहले से ही डिजिटाइज बिन्दुओं रेखाओं तथा क्षेत्रीय आकृतियों से धरातलीय आँकड़ों को जोड़ने के लिये एक विशेष प्रोग्राम की आवश्यकता है जो डिजिटाइज बिन्दुओं, रेखाओं तथा किसी अंक को प्रदर्शित करने में एक विशेष पहचान रखता हो। इसके लिये पहचान चिन्ह तथा निर्देशांक दोनों ही आँकड़ा आधार में संग्रह किये जाते हैं। संयोजित आँकड़ों का परिचालन जी.आई.एस. में सरल हो जाता है।

आँकड़ा प्रविष्टि की विधियाँ (Methods of data input)– संगणकों की एक सीमा होती है कि वह मात्र आंकिक आँकड़ों का ही परिचालन कर सकते हैं, इसलिए सभी सादृश्य (Analogue) आँकड़ों को अंकीय रूप में बदलना अनिवार्य होता है। आंकिक आँकड़ों को सीधे इलेक्ट्रॉनिक परिषण द्वारा संगणक में प्रवेश कर दिया जाता है। सादृश्य आँकड़ों को आंकिक रूप में बदलने के कई तरीके (कूट विधियाँ) हैं।

1. कुंजी–पटल द्वारा आंकड़ा प्रविष्टि (By Key board)
2. अंकरूपक द्वारा आंकड़ा प्रविष्टि (By digitizer)
3. क्रमवीक्षण द्वारा आंकड़ा प्रविष्टि (By Scanner)
4. इलेक्ट्रानिक आँकड़ा–परिषण (Electronic data-transfer)

आँकड़ा सम्पादन (Data Editing)– आँकड़ा प्रविष्टि के दौरान त्रुटियाँ मुख्यतः तीन प्रकार से होती है–आँकड़ा स्रोत में त्रुटि के कारण, संचालक द्वारा अंकीकरण के दौरान तथा संगणक प्रणाली द्वारा उत्पन्न की गई त्रुटियों के कारण। हम सभी त्रुटियों का निराकरण विश्लेषण के पूर्व करना अनिवार्य होता है अन्यथा आँकड़े गलत सूचनाएँ दे सकते हैं। आँकड़ा स्रोत में त्रुटि की खोज कठिन होता है। उदाहरण के लिए मानचित्र में विद्यमान सर्वे सम्बन्धी या मुद्रण सम्बन्धी त्रुटि अंकीकरण के समय अंकीकृत आँकड़ों में आ सकती है। अंकीकरण प्रक्रिया के दौरान की–बोर्ड द्वारा टाइपिंग की गलती, संचालक द्वारा अंकीकरण के समय गलत विन्दु या लाइन का अंकीकरण या भौगोलिक तत्वों को गलत पहचान कर गलत लेयर के रूप में अंकीकरण आदि त्रुटियाँ हो सकती हैं। इलेक्ट्रानिक आँकड़ा परिषण के समय आवश्यक आँकड़ा अनुकृति में मूल आँकड़े को परिवर्तित करते समय आँकड़ों की हानि या उनमें अवक्रमण हो जाता है।

भारत में भौगोलिक सूचना तन्त्र का विकास (Development of GIS in India)

भौगोलिक सूचना तन्त्र का प्रयोग भारत में विभिन्न क्षेत्रों में होने लगा है। यद्यपि भारतीय विद्वानों द्वारा परम्परागत रूप से आँकड़ों को एकत्र करने और विश्लेषण करने की पद्धति अपनाया जाता रहा है, किन्तु भौगोलिक सूचना तन्त्र के विकास से अब यह परम्परागत कार्य कम्प्यूटर आधारित हो गया है। भारत में कृषि, भूगर्भ शास्त्र, भौतिकी, उद्योग आदि क्षेत्रों में इसका प्रयोग व्यापक रूप से होने लगा है।

प्राचीन काल से ही सर्वेक्षण, मानचित्रण, आँकड़ा संकलन एवं विश्लेषण का कार्य होता रहा है किन्तु भौगोलिक सूचना तन्त्र का प्रयोग भारत में स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात शुरू हुआ। 1950–60 के दशक में भारतीय राष्ट्रीय एटलस निर्माण में जी.आई.एस. का प्रयोग शुरू हुआ। भारतीय अन्तरिक्ष कार्यक्रमों के विकास से जी.आई.एस. के विकास को बल मिला। 1960–70 के दशक में भारत में अन्तरिक्ष विज्ञान पर काफी ध्यान दिया गया। जून 1972 में अन्तरिक्ष विज्ञान विभाग एवं अन्तरिक्ष आयोग की स्थापना हुई। 1975 में भारत के प्रथम उपग्रह आर्यभट्ट को सोवियत रूस की सहायता से अन्तरिक्ष में भेजा गया। नीदरलैण्ड की सहायता से भारतीय सर्वेक्षण विभाग ने 1980–90 के दशक में भारतीय छायाचित्र निर्वाचन संस्थान (Indian Photo Interpretation Institute) की स्थापना देहरादून में किया। इस संस्थान में मृदा विज्ञान, वनस्पति शास्त्र, भौम्यकृति विज्ञान, भौमिकी, भूगोल आदि विषयों के विद्यार्थियों का प्रशिक्षण दिया जाता है। भारतीय जनगणना विभाग ने 1000 किमी. के ग्रिड का विस्तार कर नगरीकरण के क्षेत्र में महत्वपूर्ण कार्य किया है। भारत के जियोमैप सोसाइटी द्वारा GIS India नामक पत्रिका का प्रकाशन हुआ। 1990–2000 के दशक में भारतीय आर्थिक समस्याओं को सुलझाने के लिए GIS के प्रयोग पर बल दिया गया। वैश्वीकरण के अन्तर्गत अनेक बहुराष्ट्रीय कम्पनियों ने GIS परियोजनाओं और साफ्टवेयर के विकास पर कार्य शुरू किये।

सूचना तकनीकी एवं भौगोलिक सूचना तन्त्र एक दूसरे के पूरक हैं। इसीलिए सूचना तकनीकी में विकास का GIS पर प्रभाव अवश्यसम्भावी है। इक्कीसवी शताब्दी सूचना क्रान्ति में लिए विख्यात है। कम्प्यूटर तकनीकी में व्यापक परिष्करण का प्रभाव जी0आई0एस0 क्षमता पर पड़ा है। अब जी0आई0एस0 के न केवल अनुप्रयोग के क्षेत्र व्यापक हुए हैं बल्कि उसकी निर्णय प्रस्तुति की क्षमता में भी वृद्धि हुई है। जी0आई0एस0 की व्यापक क्षमता को देखते हुए अनेक संस्थाएं अपने कार्यों में इसका प्रयोग कर रही हैं। बिहार राज्य में नक्सलियों पर निगाह रखने के लिए उपग्रहों का सहारा लिया जा रहा हैं भूस्थानिक आंकड़ों के संग्रह एवं रूपान्तरण के लिए जी0आई0एस0 का व्यापक उपयोग हो रहा है।

भारत में भौगोलिक सूचना तन्त्र के अनुप्रयोग के प्रमुख क्षेत्र (Major areas of application GIS in india):-

1. **नियोजन** क्षेत्र (Planning) - नगर, भवन, यातायात, भूदृश्य इत्यादि।
2. **अवस्थापनात्मक तत्व** (Infrastructure)- यातायात मार्ग अवस्थिति, स्थिति निर्धारण, आपदा नियोजन, प्रखण्ड वर्गीकरण, भूमि अधिग्रहण, पर्यावरण प्रभाव विश्लेषण, प्राकृतिक गुणवत्ता सुरक्षा आदि।
3. **संसाधन एवं आपदा प्रबंधन** (Resources and Disaster Management)- पर्यावरण प्रभाव विश्लेषण, पर्यावरण प्रबन्धन, बाढ़ क्षेत्र, नमभूमि, भूजल, वन एवं जीव आदि।
4. **पर्यावरण अवनयन** (Environmented degradation)- हानिकारण उद्योग अवस्थिति निर्धारण, वन्यजीव निवास क्षेत्र, विभिन्न प्रदूषण वैश्विक तथा स्थानीय पर्यावरणीय समस्याएं।

भारत में अनेक क्षेत्रों में भौगोलिक सूचना तन्त्र का प्रयोग हो रहा है। कम्प्यूटर मानचित्रण एवं स्थानिक विश्लेषणों के विकास से कई क्षेत्रों में इसका उपयोग हो रहा है। उदाहरण के लिए उपयोगिता नेटवर्क (Utility Networks), स्थलाकृतिक मानचित्रण (Topographical Mapping), थिमैटिक मानचित्रकला (Thematic Cartography), सर्वेक्षण (Surveying) एवं फोटोग्राफी दूरस्थ संवेदन (Photogrammetry Remote Sensing), प्रतिबिम्ब प्रसंस्करण (Image Processing), ग्रामीण व शहरी नियोजन (Rural and Urban Planning), पृथ्वी विज्ञान (Eartrh Science) एवं भूगोल इत्यादि। भारत में जी0आई0एस0 तकनीक प्राकृतिक संसाधनों के प्रबन्धन के लिए महत्वपूर्ण तन्त्र बनता जा रहा है। भारत में जी0आई0एस0 अनुप्रयोग के महत्वपूर्ण क्षेत्र निम्नलिखित है -

- प्राकृतिक संसाधन प्रबन्धन–वन संसाधन की व्यवस्था व वातावरणीय प्रभाव व्याख्या (Environmental Effect Analysis), बाढ़ मैदान, भूमिगत जल एवं जंगल (Ground water and Forest) प्रवसन मार्ग नियोजन (Migration Route Planning)।
- नियोजन शहरी नियोजन–यातायात नियोजन, शिल्प संरक्षण नियोजन शहरी रूपरेखा नियोजन (Urban Design Planning)।

- भूमि प्रबन्धन–मेखलीकृत.... उपविभाग, नियोजन रूपरेखा भूमिलाभ, प्रकृति गुण व्यवस्था (Natural Quality Management)।
- स्ट्रीट नेटवर्क–यातायात मार्ग स्थिति चुनाव (Site Selection) नामावली स्थिति (Scheduling Location) आपादा नियोजन (Disaster Planning)।

भौगोलिक सूचना तन्त्र के घटक (Components of GIS):- भौगोलिक सूचना तन्त्र एक कम्प्यूटर आधारित प्रणाली है जो भौगोलिक क्षेत्र (Space) के विभिन्न पहलुओं से सम्बन्धित आंकड़ों को एकत्र, संग्रह, विश्लेषण, परिचालन, प्रस्तरण तथा पुर्नप्रसारण करता है। यह किसी निर्णय पर पहुंचने के लिए शक्तिशाली साधन या तंत्र है। वास्तविक जगत से भौगोलिक आंकड़ों की प्राप्ति तीन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए की जाती हैः–

1. समन्वयन के सन्दर्भ में आकृति या पदार्थ की स्थिति का ज्ञान।
2. स्थिति से सम्बद्ध चरों की पहचान।
3. चरों के मध्य विद्यमान स्थानिक अन्तः सम्बन्ध की प्रकृति ज्ञात करना।

उपर्युक्त सभी कार्य भौगोलिक सूचना तन्त्र के विभिन्न घटकों द्वारा सामूहिक रूप से किया जाता है। स्थानिक एवं लाक्षणिक आंकड़ों की प्रवृष्टि हार्डवेयर एवं साफ्टवेयर युक्त संगणक तन्त्र में करने के पश्चात् विभिन्न विधियों को अपनाते हुए आंकड़ों का विश्लेषण एवं प्रतिमानीकरण और किसी विशिष्ट क्षेत्र में उसका प्रयोग भौगोलिक सूचना का मुख्य कार्य है। इस प्रकार भौगोलिक सूचना तन्त्र के कुल चार घटक हैः–

1- उपकरण एवं विधियां (Tools and Procedures)
2- आंकड़े (Data)
3- संचालक (Liveware)
4- अनुप्रयोग (Application)

उपकरण एवं विधियाँ (Tools and Procedures):- कम्प्यूटर के सभी भौतिक अवयव हार्डवेयर कहलाते हैं। कम्प्यूटर अनेक हार्डवेयर का एक समन्वित रूप होता है। जब कम्प्यूटर कार्य करता है तो सभी हार्डवेयर उस कार्य के एक–एक भाग को पूर्ण करते हैं। हार्डवेयर युक्तियों के रूप में कम्प्यूटर प्रणाली के मुख्यतः चार इकाईया होती हैं– 1. अन्तर्गामी इकाई (Input Unit) : जिन युक्तियों द्वारा सूचनाएँ या आँकड़े कम्प्यूटर में प्रवेश किये जाते हैं, उन्हें अन्तर्गामी इकाई कहते हैं। अन्तर्गामी इकाई आँकड़ों को पढ़ने योग्य प्रारूप में स्वीकार कर पुनः आन्तरिक कोड में परिवर्तित करती है। तत्पश्चात ये आँकड़े स्मृति इकाई में संग्रहित होते हैं। संचित आँकड़े कार्यक्रम के निर्देशानुसार निर्गतगामी इकाई को प्रेषित किये जाते हैं। 2. केन्द्रीय संसाधिल इकाई (Central Processing Unit): यह कम्प्यूटर का केन्द्रीय विश्लेषक इकाई है जो निर्देशन कोड के अनुसार आँकड़ा–प्रसंस्करण करता है। बाइनरी पद्धति निर्देशित कोड से यह इकाई संचालित होती है। इसके मुख्य भाग निम्नवत हैं– निर्देश रजिस्टर एवं डी–कोडर, गणितीय व तार्किक इकाई, विनिर्देशन पंजिका, नियन्त्रक इकाई। केन्द्रीय विश्लेषक इकाई समन्वित सर्किट के रूप में चिप पर लगे हुए ट्रान्जिस्टरों की संख्या के आधार पर लघु, मध्यम, वृहद् एवं अतिवृहद् स्तरों में विभाजित किया जाता है। 3. स्मृति इकाई (Memory Unit): कार्यक्रमों एवं विश्लेषित आँकड़ों के संग्रह हेतु स्मृति इकाई की आवश्यकता होती है। इस इकाई का लघुतम अंग मेमोरी सेल कहलाता है जो एक समय पर दो चिह्नों में से केवल एक का ही संग्रह करता है। इस प्रकार स्मृति सेल सूचनाओं का संग्रह 0 और 1 के द्विवर्णी श्रृंखला के रूप

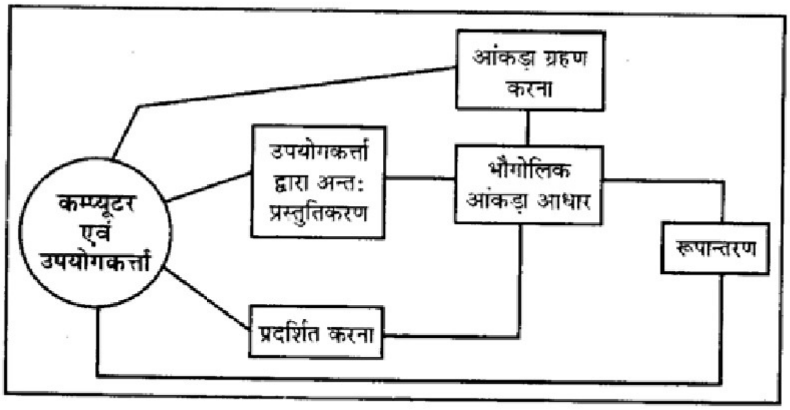

चित्र 15.2: हार्डवेयर

में करता है। मेमोरी में सभी सूचनाएँ बाइट (Byte) में कोड के रूप में रहती हैं। एक बाइट में 0 से 255 तक की गणितीय संख्या संग्रहित रहता है। मेमोरी दो प्रकार की होती है– मुख्य स्मृति (Main Memory) को RAM (Random Access Memory) कहा जाता है। यह कम्प्यूटर की आन्तरिक स्मृति है जो विद्युत चालित होता है। इसमें संग्रहित सूचनाएँ विद्युत आपूर्ति समाप्त होते ही नष्ट हो जाती हैं। मुख्य स्मृति सीमित क्षमता वाली होती है। बाह्य स्मृति (External Memory) में वृहद् मात्रा में आँकड़ों का स्थायी भण्डारण किया जा सकता है। इसके लिए मैग्नेटिक डिस्क या टेप का प्रयोग किया जाता है। चुम्बकीय हार्ड डिस्क चुम्बकीय प्लेटों का समुच्चय होता है जो मोटर द्वारा एक अक्ष पर तेजी से घूमती है। सूचनाओं का संग्रह सकेन्द्रीय वृत्तीय पथ पर होता है। वर्तमान समय में हार्ड डिस्क की क्षमता 500GB से अधिक बढ़ाई जा चुकी है। 4. निर्गतगामी इकाई (Output Unit):- निर्गतगामी इकाई में वे युक्तियाँ सम्मिलित है जो कम्प्यूटर प्रणाली से सूचनाएँ बाहर निकालतीं हैं। इसके द्वारा निर्गत सूचनाएँ प्रयोगकर्ता द्वारा पढ़ी जा सकती हैं। इन युक्तियों में मुख्य हैं– प्रिन्टर, प्लाटर, मानीटर, आदि। साफ्टवेयर **(Software):-** साफ्टवेयर एक निश्चित कार्य को सम्पन्न करने के लिए निर्देशों का समूह योजना है जो हार्डवेयर को संचालित करती है। साफ्टवेयर निम्नलिखित प्रकार के होते हैं– (1) सिस्टम साफ्टवेयर – कम्प्यूटर के विभिन्न अंगों पर नियन्त्रण एवं अन्य साफ्टवेयर को

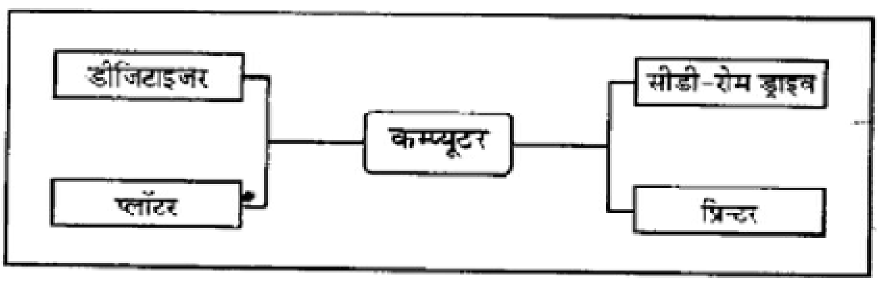

चित्र 15.1: साफ्टवेयर

संचालित करने के लिए तैयार किए गये प्रोग्रामों के समूह को सिस्टम साफ्टवेयर कहते है। (2) एप्लिकेशन साफ्टवेयर– कार्य की प्रकृति के अनुसार अलग–अलग निर्देशों का कार्यक्रम समूह एप्लिकेशन साफ्टवेयर कहलाता है जैसे– **ERDAS, ESRI, Gram** इत्यादि। (3) यूटिलिटी साफ्टवेयर– कम्प्यूटर के विभिन्न हिस्सो तथा उनकी कार्यप्रणाली के रख रखाव के लिए कार्यक्रम समूहों को यूटिलिटी साफ्टवेयर कहते हैं जैसे– डिस्क रिकवरी टेक्स्ट एडिटर, लिंकर आदि। (4) यूजर्स साफ्टवेयर- ऐसे कार्यक्रमों का समूह जो प्रयोगकर्ता के उद्देश्य को पूरा करता हो, यूजर्स साफ्टवेयर कहलाता है जैसे– शैक्षणिक कार्य, व्यापार, वित्तीय आँकड़े, मानचित्रण आदि के लिए विकसित किये गये साफ्टवेयर। जी.आई.एस. साफ्टवेयर **(GIS Software):-** भौगोलिक सूचना तन्त्र में निम्नलिखित पाँच प्रक्रियाओं के लिए साफ्टवेयर की आवश्यकता होती है– (अ) आँकड़ा निवेश तथा सत्यापन (ब) आँकड़ा संग्रहण तथा आँकड़ा आधार प्रबन्धन (स) आंकड़ा रूपान्तरण (द) आंकड़ा निर्गमन तथा प्रस्तुतीकरण (य) उपयोगकर्ता के

साथ अन्तः क्रिया। प्रविष्टि, भण्डारण, प्रबन्धन, रूपान्तरण, विश्लेषण तथा सूचना उत्पादन आदि प्रक्रियाएँ सम्पन्न की जाती हैं। ये सभी कार्य उपयोगकर्ता के उद्देश्यानुसार विभिन्न विधियों से सम्पन्न की जाती है। विभिन्न संगठनों की कार्य पद्धतियाँ अलग–अलग होती हैं, इसीलिए वे जी.आई.एस. के प्रयोग में अलग–अलग विधियाँ भी अपनाती हैं। आँकड़ा प्रविष्टि के अन्तर्गत आँकड़ों को जी.आई.एस. में प्रयोग करने लायक उपयुक्त स्वरूप में परिवर्तित किया जाता है। आँकड़ा आधार प्रबन्धन तन्त्र के माध्यम से जी.आई.एस. में आँकडों का भण्डारण, व्यवस्थापन तथा पुनर्प्राप्ति का कार्य किया जाता हैं जिसे आँकड़ा प्रबन्धन कहा जाता है। आँकड़ा रूपान्तरण विधियाँ स्थानिक आँकड़ों को रूपान्तरित करने के लिए अपनाई जाती हैं।

आंकड़ें (Data):- आँकड़े भौगोलिक सूचना तन्त्र के लिए कच्चे माल की तरह हैं। ये किसी भौगोलिक स्पेस के यथार्थ तथ्यों के प्रदर्शक होते हैं। धरातलीय तथ्यों को डिजिटल रूप में कम्प्यूटर द्वारा ग्रहण किया जाता है। धरातल के एक प्रकार की सूचनाओं के आँकड़े को एक परत कहा जाता है जैसे सड़क, अपवाह, अधिवास आदि आँकड़ों की अलग–अलग परते हैं। ये आँकड़े विभिन्न स्रोतों से प्राप्त किये जाते हैं, और आँकड़ा–आधार के रूप में विभिन्न तरीकों से संग्रहित किये जाते हैं।

संचालक (Liveware):- भौगोलिक सूचना तन्त्र का प्रयोग करने वाले प्रशिक्षित कार्यकर्त्ता तथा इस प्रणाली से सम्बन्धित अन्य जिम्मेदार लोग भी भौगोलिक सूचना तन्त्र के तत्व हैं। आँकड़ों के संकलन, संगणक में उनका निवेश, विश्लेषण, निर्गमन एवं प्रसरण कार्य में अनेकों सामान्य एवं प्रशिक्षित लोग सम्मिलित होते हैं। ये सभी जी. आई.एस. के अंग हैं। संचालक प्रायः तीन प्रकार के होते हैं– (1) जी.आई.एस. विशेषज्ञ– जो जी.आई.एस. के विकास, आँकड़ा आधार नियन्त्रण, परियोजना निर्माण से सम्बन्धित होते हैं। (2) जी.आई.एस. उपयोगकर्ता– जो विभिन्न कार्यों में प्रयोग करते हैं जैसे–इन्जीनियर, नियोजक, वैज्ञानिक, भूमि प्रशासक इत्यादि। (3) जी.आई.एस. लाभार्थी– जिनकों जी.आई.एस. से प्राप्त समाधान का लाभ प्राप्त होता है।

अनुप्रयोग (Application):- सम्पूर्ण भौगोलिक सूचना तन्त्र में किसी समस्या के लिए प्राप्त निर्णय का अनुप्रयोग भी महत्वपूर्ण है। अनुप्रयोग को निम्नलिखित तीन तथ्यों के रूप में समझा जा सकता है– (1) **क्षेत्र**– अनुप्रयोग के अनेक क्षेत्र हैं जैसे शिक्षा, सरकार, व्यवसाय, सेना, संसाधन प्रबन्धन इत्यादि। (2) **प्रकृति**– जी.आई.एस. कार्य पद्धति और कार्यक्षमता अनेक उपयोगकर्ता को आकर्षित किया है। जी.आई.एस. की प्रकृति प्रायः जनसामान्य, पूरी संस्था एवं पूरे वैज्ञानिक समूह के लिए ग्राहय है। (3) **उपागम**–अनुप्रयोग के प्रसार का माध्यम कई प्रकार के हो सकते हैं। उदाहरण के लिए सरकार जो विभिन्न जनसामान्य की समस्याओं के निराकरण के लिए जी.आई.एस. आधारित योजनाएँ लागू करती है। जी.आई.एस. आँकड़ों तथा निर्णयों के विक्रेता जो जरूरत मन्द को विक्रय करती है। सामान्य मीडिया भी अनुप्रयोग के प्रसार में मदद करती है। वैश्विक जाल (Internet) इसमें प्रमुख है।

भौगोलिक सुचना तंत्र और मानचित्र निर्माण (GIS and Map Making)

मानचित्र जी.आई.एस. के उत्पादों में से सबसे प्रमुख एवं महत्वपूर्ण है तथा यह धरातलीय चरों अथवा किसी विशेष चर के प्रतिरूपों को दर्शाने का सशक्त माध्यम है। कम्प्यूटर दृष्यकरण में क्रान्तिकारी विकास के बावजूद मानचित्र धरातलीय आँकड़ों को प्रदर्शित करने एवं उपयोगकर्त्ता तक सूचनाएँ सम्प्रेषित करने का महत्वपूर्ण माध्यम है। सूचनाओं में धरातलीय लक्ष्यों की अवस्थिति, आकार, प्रतिरूप एवं वितरण प्रवृत्ति आदि का उल्लेख होता है। मानचित्रण के लिए प्रायः प्रक्षेप, संदर्भ धरातलीय परिक्षेत्र, दर्शाये जाने वाले धरातलीय तत्व, सामान्यीकरण सार तथा संकेत आदि की आवश्यकता होती है। आंकिक विज्ञान और संगणक तकनीक में आधुनिकीकरण के कारण भौगोलिक सूचना तन्त्र के प्रयोग से निर्मित मानचित्रों में तीन गुणों का विकास हुआ है–क्षमता, तीव्रता तथा स्पष्टता। मानचित्रों में अधिकाधिक सूचनाओं का समावेश करना सम्भव हुआ है तथा मानचित्र निर्माण भी तीव्र हुआ है। जी.आई.एस. में एक बार आँकड़े निवेश करने के बाद मानचित्र निर्माण बहुत तेजी से होता है। नई तकनीक से

निर्मित मानचित्र अधिक स्पष्ट एवं आसानी से समझने लायक हुए है। संगणक अनुप्रयोग योजना (Software) की सहायता से मानचित्रों को संदर्श अवलोकन तथा गतिक प्रदर्शन भी किया जा सकता हैं। दूसरे शब्दों में आंकिक मानचित्रों को आसानी से अन्य सूचना उत्पादों में परिवर्तित किया जा सकता है जैसे–ग्राफ, चार्ट, सांख्यिकी तालिका आदि। मुद्रित मानचित्र आँकड़ा भण्डार, आँकड़ा, बाहक तथा आँकड़ा प्रदर्शन का कार्य एक साथ करता हैं, जब कि भौगोलिक सूचना तन्त्र में ये तीनों कार्य अलग–अलग होता है। इसीलिए आंकिक मानचित्र में नयी संकल्पनाओं तथा तकनीकों का प्रयोग आसान होता है।

कम्प्यूटर चालित मानचित्रण– मानचित्रण के लिए संगणकों का प्रयोग सर्वप्रथम भवन निर्माण तथा अभियन्त्रण में किया गया था जिसे संगणक चालित परिरूप (Computer Assisted Design) कहा जाता था। 1960 के दशक में मानचित्रों में प्राकृतिक अन्तर्सम्बन्धों को दर्शाने की प्रवृत्ति बढ़ने लगी थी और संसाधन मूल्यांकन, भू–मूल्यांकन, योजना क्रियान्वयन आदि के लिए निर्मित मानचित्रों में नवीन प्रवृत्तियाँ झलकने लगी थी तथा 1980 के पश्चात संगणको के विकास एवं नयी तकनीकों के आगमन से आंकिक मानचित्रण तेज हो गया।

भारत में आंकिक मानचित्रण का कार्य अनेक सरकारी तथा गैर सरकारी संस्थाओं तथा विभिन्न विश्वविद्यालयों में व्यापक रूप से होने लगा हैं कम्प्यूटर तकनीक में क्रान्तिकारी विकास के साथ ही आंकिक मानचित्रण में भी क्रान्ति आयी है। अनेक सांख्यिकीय तथा जी0आई0एस0 साफ्टवेयर के विकास के साथ ही मानचित्रों में स्पष्टता तथा गुणवत्ता बढ़ी है। भारतीय सर्वेक्षण विभाग, राष्ट्रीय सुदूर संवेदन केन्द्र, भारतीय तकनीकी संस्थान, मुम्बई अनेक विश्वविद्यलायों तथा कई निजी संस्थाओं में अत्याधुनिक डिजिटल मानचित्र प्रणाली स्थापित किया गया है। भारत सरकार ने प्राकृतिक संसाधन सूचना प्रणाली की स्थापना की थी जिसे अब अन्तरिक्ष विभाग संचालित कर रहा है। भारतीय सर्वेक्षण विभाग ने 1/250,000 मापक पर एक राष्ट्रीय आंकिक मानचित्रात्मक आँकड़ा आधार केन्द्र की स्थापना किया है। वर्तमान समय में तीन आंकिक मानचित्र केन्द्र कार्य कर रहे हैं–

(1) आंकिक मानचित्र केन्द्र, हैदराबाद
(2) आंकिक मानचित्र केन्द्र, देहरादून
(3) आधुनिक मानचित्र कला केन्द्र, देहरादून

इन केन्द्रों की कार्यप्रणाली नये सर्वेक्षण तथा मानचित्र कला तकनीक पर आधारित है। राष्ट्रीय आंकिक मानिचत्रात्मक आंकड़ा आधार की स्थापना, सुदूर संवेदन तथा वायु फोटो चित्रों के आँकड़ों का प्रयोग, आंकिक मानचित्र कला द्वारा स्वचालित भू–पत्रक तथा विषयक मानचित्रों का निर्माण, आंकिक मानचित्र कला में प्रशिक्षण, परामर्श एवं सुविधा उपलब्ध कराना इन केन्द्रों के मुख्य उद्देश्य हैं। आंकिक उच्चावच मॉडल निर्माण, आंकिक आँकड़ा आधार से जिलास्तर के योजना मानचित्रों का निर्माण प्रमुख है। इनके अलावा मानचित्र प्रकाशन तन्त्र, डिजिटल फोटोग्रैमेटिक तन्त्र या क्लिक मानचित्रण जैसी आधुनिकतम प्रणालियों का विकास एवं उपयोग भी भारत में हो रहा है।

मानचित्रण परिरूप (Cartographic Design)

भौगोलिक सूचना तन्त्र का उपयोग कर मानचित्रकार, मानचित्रों के माध्यम से अनेक धरातलीय समस्याओं का निराकरण करता है। मानचित्र का निर्माण विभिन्न मानचित्रण प्रक्रियाओं को अपनाकर किया जाता है जिसमें कई मानचित्रण सिद्धान्त प्रयुक्त होते हैं। भौगोलिक सूचना तन्त्र के उपयोग से कागज पर मानचित्रण तथा संगणक मॉनीटर पर मानचित्रण दोनों रूपों में संभव है। मानचित्र निर्माण के पूर्व मानचित्रकार को मानचित्र में रंगों के उपयोग, उद्धरण की प्रविष्टि चिन्हों का प्रयोग तथा मानचित्र पृष्ठ रूपान्तरण आदि संकल्पनाओं को अच्छी तरह समझना आवश्यक होता है। रंगों का उपयोग मानचित्र में सूचनाओं के प्रकार को अलग–अलग पहचानने हेतु करते हैं।

मानचित्र से पृष्ठरूपान्तरण वास्तव में भौगोलिक सूचना तन्त्र के अर्न्तगत मानचित्र संघटन का महत्त्वपूर्ण अंग है। इसक अंर्तगत संगणक में मानचित्र के विशिष्ट आकार में प्रर्दशन किया जाता है। किसी भी भौतिक– मानचित्र

(Hard Copy) को क्रमविक्षक (Scanner) की सहायता से संगणक में भण्डारित कर लिया जाता है जिसे आवश्यकता पड़ने पर विभिन्न आकारों में प्राप्त किया जा सकता है। स्थानिक सूचनाओं को सम्प्रेषित करने के माध्यम के रूप में मानचित्रों में विभिन्न लक्ष्यों की अवस्थिति आकार, अनुकृति, प्रतिरूप, वितरण एवं प्रवृति को प्रदर्शित किया जाता है। मानचित्र परिरूप के तत्वों में सन्दर्भ, गठन, प्रक्षेप, मानचित्रित किये जाने वाले धरातलीय तत्व, सामान्यीकरण का स्तर, टिप्पणी तथा चिन्ह सम्मलित हैं। मानचित्र वास्तिविक जगत का मापक प्रतिकृति होता है जिसमें मानचित्र का किसी धरातलीय तत्व की अवस्थिति वास्तविक धरातल पर निश्चित करता है।

मानचित्रण प्रक्रिया (**Mapping Process**)

मानचित्रण कार्य कई तकनीकों के प्रयोग से किया गया सामूहिक प्रयास होता है। इसके अर्न्तगत मानचित्र नियोजन (Planning), आँकड़ा अधिग्रहण, उत्पादन एवं उत्पादन सम्प्रेषण है। मानचित्र नियोजन के अर्न्तगत मानचित्र का स्तर राष्ट्रीय अथवा क्षेत्रीय, मानचित्रण का उद्देश्य, मानचित्रण के लिए उपलब्ध संसाधन एवं धन आदि की उपलब्धता का समावेश होता है। इसके अर्न्तगत अध्ययन का क्षेत्र मानचित्र में प्रदर्शित की जाने वाली विषय–वस्तु तथा मानचित्र की गुणवत्ता को निर्धारित कर लिया जाता है। इसके पश्चात् क्षेत्रीय आँकड़ों को पारम्परिक, भूमि सर्वेक्षण, छायाचित्रमिति एवं सुदूर संवेदन विधियों से एकत्र किया जाता है।

इस प्रकार आंकड़ा अधिग्रहण चरण में वर्तमान आंकड़ा स्रोतों के मूल्यांकन एवं व्यवस्थापन सम्मिलित किया जाता है। मानचित्र उत्पादन चरण में मानचित्रों का परिरूप निर्धारण मानचित्र उत्पादन प्रक्रिया प्रूफ रीडिंग एवं मानचित्रों का मुद्रण शामिल है। आकिंक मानचित्रण में आँकड़ों का सम्पादन एवं संशोधन संगणक स्क्रीन पर ही कर लिया जाता है। भौगोलिक सूचना तन्त्र के अर्न्तगत उत्पादित मानचित्रों को न केवल मुद्रित करते है। बल्कि, आंकिक रूप में संगणक में संग्रहित भी कर लेते है। ताकि भविष्य में आँकड़ों में संशोधन एवं मानचित्रों में परिष्करण किया जा सके। अन्तिम चरण में मुद्रित मानचित्रों को भण्डारित एवं विभिन्न उपयोगकर्ताओं में वितरित करने की व्यावस्था की जाती है। वर्तमान समय में वितरण के अनेक इलेक्ट्रानिक माध्यम उपलब्ध हैं।

मानचित्र सामग्री (**Map Content**)

किसी समतल सतह पर मानचित्र प्रक्षेप एवं संकेतों की सहायता से धरातलीय विशेषताओं को प्रदर्शित करना ही मानचित्रण है और इस प्रकार से निर्मित वस्तु को मानचित्र कहते हैं। विभिन्न स्रोतों से प्राप्त आँकड़ों के आंकिक रूप में बदलकर कम्प्यूटर में संग्रहित किया जाता है, और संग्रहित आंकड़ों को अनेक साफ्टवेयर की सहायता से मानचित्र तैयार किया जाता है। संकेतों तथा प्रक्षेपों का एक पूरा भण्डार इन साफ्टवेयर में होते हैं जिनका उपयोग मानचित्रकार अपनी आवश्यकतानुसार करता है। मानचित्र सामग्री मूलतः तीन प्रकार के होते हैं–प्रकरण तत्व, मुख्य भाग तथा संदर्भ तत्व।

प्रकरण तत्व (**Context element**)– मानचित्र की पहचान बताने वाले कुछ तत्वों का समावेश मानचित्र में किया जाता है। इनमें निम्नलिखित तत्व समाहित हैं:–

1) शीर्षक– मानचित्र का एक शीर्षक होता है जो उसमें प्रदर्शित विषय सामग्री दर्शाता है। उदाहरण के लिए भारत की भौतिक विशेषताएँ।
2) प्रक्षेप – प्रक्षेप समतल सहत पर संकेतों के वितरण के लिए आधार प्रस्तुत करता है। क्षेत्र, दूरी तथा दिशा को वास्तविक रूप में प्रदर्शित करने के प्रयास एवं समतल सतह की विभिन्न स्थितियों के फलस्वरूप प्रक्षेप कई प्रकार के होते हैं, जिनका चुनाव सूचनाओं की विशेषताओं एवं उद्देश्य के अनुसार किया जाता है। मानचित्र में प्रक्षेप के साथ ही साथ अक्षांश एवं देशान्तर का मान भी अंकित होता है।

3) उत्पादन तिथि– मानचित्र में उत्पादन तिथि भी अंकित होती है। कभी–कभी धरातलीय विशेषताओं में कालिक परिवर्तन समझने की आवश्यकता होती है। कभी–कभी केवल उत्पादन वर्ष लिखा होता है और कभी तिथि, समय तथा दिन भी लिखा होता है। उदाहरण के लिए मौसम मानचित्र।

4) मानचित्रकार की पहचान– मानचित्र में प्रदर्शित सभी सूचनाओं की सटीकता के लिए मानचित्रकार जिम्मेदार होता है । इसलिए मानचित्र में मानचित्रकार का नाम एवं पद अंकित होता है।

मानचित्र का मुख्य भाग (Main body)– मानचित्र के इस भाग में विभिन्न चिन्हों की सहायता से धरातलीय विशेषताओं को प्रदर्शित किया जाता है। इस भाग में मुख्य मानचित्र के अलावा आरेख भी सम्मिलित किया जा सकता है। ये मानचित्र लघु तथा वृहत् मापंक पर बनाये जाते हैं। साथ ही उद्देश्य के आधार पर इन्हें कई प्रकारों में भी बाँटा जा सकता है। भूमि सम्बन्धी विशेषताओं को प्रदर्शित करने के लिए भूकर मानचित्र (Cadestal map) जैसे–कृषि जोत, आवादी, भूमि उपयोग आदि, प्राकृतिक तथा मानवीय तथ्यों के लिए स्थलाकृतिक (Topographical) मानचित्र जैसे, भौतिक, प्राकृतिक आदि, सामान्य उपयोग के लिए बड़े दीवाल मानचित्र (Wall map) जैसे एशिया का मानचित्र विश्व का भौतिक मानचित्र आदि, एक विशिष्ट क्षेत्र भी प्राकृतिक तथा मानवीय विशेषताओं को प्रदर्शित करने वाले क्रमिक मानचित्रावली **(Globe)** जैसे भारत का एटलस, विभिन्न तथ्यों को ग्लोब पर प्रदर्शित करने वाले ग्लोब (Globe) मानचित्र तथा किसी विशेष विषय से सम्बन्धित विषयक (Thematic) मानचित्र जैसे भारत में जनसंख्या वितरण, भारत में वनों का वितरण आदि मानचित्र के मुख्य भाग में प्रदर्शित होते हैं। इस भाग में सांख्यिकीय आरेख तथा ग्राफ भी सम्मिलित किये जाते हैं जो मुख्य मानचित्र की व्याख्या में सहायक होते हैं।

संदर्भ तत्व (Reference Elements)– मानचित्र पर प्रदर्शित विभिन्न सूचनाओं को समझने के लिए संदर्भ तत्वों की आवश्यकता होती है जो सूचनाओं की कुंजी होती है। इनमें मापक, संकेतक तथा उत्तर दिशा आदि का प्रदर्शन किया जाता है।

(1) **मापक (Scale)-** यह मानचित्र में प्रदर्शित किन्ही दो बिन्दुओं के मध्य की दूरी और वास्तविक धरातल पर उन्हीं विन्दुओं के बीच की दूरी का अनुपात होता है। जब यह अनुपात कथन द्वारा प्रदर्शित होता है तो उसे कथन मापक (Statement) कहते हैं जैसे–'एक से.मी. = 1 किमी.', जब अनुपात भिन्न के रूप में मानचित्र में दी हो तो उसे प्रदर्शक भिन्न (Representative fraction) कहते हैं जैसे '1: 200,000' तथा जब इस अनुपात को रेखा के रूप में दर्शाया जाय तो उसे रेखीय मापक (Linear scale) कहा जाता है। मापक का उपयोग मानचित्र में प्रदर्शित तत्वों का वास्तविक धरातलीय तत्वों के संदर्भ में आनुपातिक मापन के लिए किया जाता है।

(2) **संकेतक (Legend)**– संकेतक मानचित्र में विभिन्न संकेतों के माध्यम से प्रदर्शित सूचनाओं का संकेत करते हैं या उनकी वास्तविकता का आभास कराता है। इसमें संकेतों की एक सूची होती है जिसमें इस बात का उल्लेख होता है कि वह संकेत किस सूचना को इंगित करता है। इसके लिए विभिन्न अक्षर, आकृतियां, रंग, शेड, प्रतिरूप, आकार आदि का सहारा लिया जाता है।

(3) **उत्तर (North)**– यद्यपि उत्तर दो प्रकार के होते हैं– भौगोलिक उत्तर जो मानचित्र में शीर्ष की ओर होता है, तथा चुम्बकीय उत्तर जो पृथ्वी की आन्तरिक भू–भौतिक दशाओं के अनुसार परिवर्तित होता रहता है। इसका उल्लेख प्रायः मानचित्र में नहीं होता। उत्तर को मानचित्र में प्रायः एक तीर के रूप में दर्शाते हैं जिसकी नोक शीर्ष की ओर होती है और जिस पर उत्तर लिख दिया जाता है। यदि मानचित्र में अक्षांश–देशान्तर रेखाओं का उल्लेख हो तो उत्तर की आवश्यकता नहीं पड़ती क्योंकि अक्षांश ही दिशा उत्तर बताने के लिए पर्याप्त होते हैं।

मानचित्र का अभिन्यास (Map layout)

ऐसा प्रारूप जिसमें विभिन्न मानचित्र सामग्रियों का उचित स्थान निर्धारित रहता है, उसे मानचित्र अभिन्यास कहते हैं। स्थान निर्धारण के मुख्य उद्देश्य हैं–सूचना, क्रमबद्धता एवं स्पष्टता।

- **सूचना क्रमबद्धता** – मानचित्र में विभिन्न सामग्रियों का स्थान अर्थपूर्ण एवं तार्किक क्रम में होता है, जैसे शीर्ष स्थान पर शीर्षक, उत्तर दिशा, मध्य में प्रमुख सूचनाएँ, नीचे मापक, संकेतक आदि उचित स्थान पर होते हैं ताकि समग्र रूप में पूरा मानचित्र आकर्षक, सन्तुलित एवं एक रूप में दिखाई पड़े।
- **स्पष्टता** – निश्चित क्रम में सूचनाओं के प्रदर्शन से मानचित्र में स्पष्टता आ जाती है और संकेत विभिन्न सूचनाओं की सटीक व्याख्या कर पाते हैं।

अभिन्यास के तत्व (**Elements of layout**)

मानचित्र अभिन्यास के प्रमुख तत्व हैं– (1) **सीमा रेखाएँ** (**Borders**)– एक मानचित्र अभिन्यास में दो प्रकार की सीमा रेखाएँ होती हैं– बाह्य एवं आन्तरिक। वाह्य रेखा का आकार समतल सतह के आकार के अनुरूप रखना चाहिए ताकि मानचित्र में दृश्य सन्तुलन बना रहे । प्रायः वाह्य रेखा कागज (समतल सतह) चारों किनारों से समान दूसरी पर खींची जाती है। बाह्य सीमा रेखा के अन्तर आन्तरिक सीमा रेखा बनाई जाती है। दोनों रेखाओं के मध्य इतनी दूरी होनी चाहिए ताकि सीमान्त संरचनाएं आसानी से अंकित हो सकें। कभी–कभी यदि आन्तरिक रेखा मानचित्र की स्पष्टता में बाधक बनती है तो नहीं खींची जाती बल्कि सिर्फ काल्पनिक ही रह जाती है। (2) **सीमान्त सूचनाएँ (Marginal Information):-** दोनों सीमा रेखाओं के मध्य स्थान को सीमान्त स्थान (Marginal Space) कहा जाता है, जहां मानचित्र से सम्बन्धित कई सूचनाएं अंकित की जाती है। सीमान्त में सबसे ऊपर मध्य में मानचित्र का शीर्षक लिखा जाता है और उसके दाहिनी तरफ (पूरब) उत्पादन तिथि अंकित की जाती है। नीचे (दक्षिण) बायी तरफ संकेतक (Legend), मध्य में मापक (Scale) एवं दाहिनी तरफ (पूरब) मानचित्र प्रक्षेप का नाम अंकित रहता है। सीमांत स्थान में अक्षांश एवं देशान्तर रेखाओं को उचित स्थान पर दर्शाया जाता है। इनकी अनुपस्थिति में मानचित्र के मुख्य भाग में ऊपर दाहिनी तरफ उत्तर अंकित कर दिया जाता है। (3) **मुख्य स्थान (Main Body):-** आन्तरिक सीमा रेखा से घिरे भाग में मानचित्र का मुख्य भाग प्रदर्शित किया जाता है। इस भाग में संकेतों के माध्यम से धरातलीय विशेषताओं को प्रदर्शित किया जाता है। इसी हिस्से में ऊपर दाहिनी तरफ उत्तर बनाया जाता है तथा नीचले भाग में बांयी तरफ आवश्यकताओं पड़ने पर सम्बद्ध मानचित्र के लिए भी स्थान (Insect) होता है। निचले भाग में सम्बन्धित आरेख भी प्रदर्शित किये जा सकते हैं। मुख्य भाग के पृष्ठभूमि (Background) को रंगों अथवा चित्रों से सजाया भी जा सकता है, लेकिन मानचित्र की स्पष्टता में कमी नहीं आनी चाहिए बल्कि बढ़नी चाहिए।

मानचित्र अभिन्यास में विभिन्न सूचनाओं के लिए स्थान निर्धारण मानचित्र की स्पष्टता एवं गुणवत्ता में वृद्धि के लिए होती है। गुणवत्ता में वृद्धि के लिए उपर्युक्त स्थानों में फेर–बदल भी किया जाता है। यह कार्य मानचित्र में प्रदर्शित की जाने वाली सूचनाओं की प्रकृति, मानचित्र निर्माण का उद्देश्य, मानचित्र निर्माण करने वाली संस्था के मानक एवं निर्माण में प्रयुक्त तकनीक पर निर्भर करता है। एक अच्छे मानचित्र में स्पष्टता, शुद्धता, पूर्णता, स्वच्छता, सूचनाओं की सघनता, उपयुक्त संकेत चिह्नों का प्रयोग, त्रुटिहीनता, बोधात्मकता, पुनरावृत्ति विहीनता, मापक में स्पष्टता एवं व्याख्या करने में सुगमता होनी चाहिए।

मानचित्र समतल धरातल पर एक निश्चित अक्षांश–देशान्तरीय रेखा जाल पर सांकेतिक चिह्नों द्वारा धरातलीय विशेषताओं का अनुपातिक प्रतिरूप प्रस्तुत करता है। ऐसे मानचित्र जब कम्प्यूटर की सहायता से बनाये जाते हैं तो उसे आंकिक मानचित्र (Digital Map) भी कहते हैं। आंकिक मानचित्रण का कार्य 1960 के दशक से ही शुरू हो गई थी। भारत में भारतीय सर्वेक्षण विभाग, राष्ट्रीय सुदूर संवेदन केन्द्र, राष्ट्रीय विषयक मानचित्रण संगठन आदि संस्थाएं कम्प्यूटर आधारित मानचित्रण में संलग्न हैं आंकिक मानचित्रण का कार्य उपयोगकर्ता की आवश्यकता एवं उद्देश्य के अनुरूप योजना निर्माण से शुरू होता है और कम्प्यूटर में आंकड़ा प्रविष्टि, परिचालन, मुद्रण होते हुए भण्डारण एवं वितरण तक सम्पन्न होता है।

भौगोलिक सूचना तन्त्र का अनुप्रयोग (Application of Geographical Information System)

भौगोलिक सूचनाओं के संग्रहण, भण्डारण, विश्लेषण, संवर्द्धन एवं संप्रेक्षण हेतु भौगोलिक सूचना तन्त्र (GIS) अब एक व्यवस्थित उपकरण का रूप ले लिया है। इसका अनुप्रयोग अब अनेक सरकारी तथा गैर सरकारी संगठनों में होने लगा है। भूमि सूचना तन्त्र के अन्तर्गत भूमि–व्यवस्था, भूमि उपयोग, भूमि परिवर्तन, भूमि सर्वेक्षण एवं प्रबन्धन, नगरीय नियोजन, नगरीय विकास, नगरीय भूमि उपयोग, नगर नियोजन, आपदा प्रबन्धन में आपदाओं के प्रभाव का आकलन, आपदा संसूचन तथा आपदा बचाव आदि सम्मिलित किये जाते हैं। शाश्वत विकास में वर्तमान विकास प्रतिरूप एवं भावी नियोजन की रूप रेखा तैयार की जाती है। भूमि सूचना प्रणाली, नगरीय नियोजन, आपदा प्रबन्धन एवं शाश्वत विकास में जी0आई0एस0 अनुप्रयोग का विवरण अग्रलिखित हैः–

भूमि प्रबन्धन (Land management)

भारत में भूमि सर्वेक्षण तथा भूमि लेखा का इतिहास बहुत पुराना हैं शेरशाह सूरी ने भूमि सर्वेक्षण की शुरूआत की थी और अकबर एवं टोडरमल ने उसे आगे बढ़ाते हुए जरीब–सर्वेक्षण का अनुप्रयोग किया। यह सर्वेक्षण प्रणाली लगभग सम्पूर्ण उत्तर भारत में लागू हुआ जिसे अंग्रेजों ने भी आगे बढ़ाया। यद्यपि जरीब के आकार में क्षेत्रीय भिन्नता पायी जाती है जैसे राजस्थान 132′′ एवं 165′′, उ0प्र0 में 162′′ किन्तु आज भी जरीब सर्वेक्षण विद्यमान है। भूमि के क्षेत्रफल का मापन आज भी बिगहा, बिस्वा, डिसमिल तथा मण्डा आदि में विभिन्न क्षेत्रों में होता है। यही कारण है कि भारत सरकार ने पिछले दशक में भूमि–सुधार उपायों के आधुनिकीकरण के लिए निम्न बिन्दुओं पर ध्यान केन्द्रित किया है–

1. क्षेत्रीय मापन, मानचित्रण एवं ग्रामीण मानचित्रों का संकलन।
2. वर्गीकृत भूमि का राजस्व मूल्यांकन
3. चिन्हों की सहायता से धरातलीय मानचित्र निर्माण।
4. भूमि–विवरण एवं मानचित्रों में नवीन परिवर्तनों का समावेश।
5. भूमि–सीमा सम्बन्धी विवादों का निराकरण।

ग्रामीण विकास कार्यक्रमों के क्रियान्वयन के उद्देश्य से प्रथम पंचवर्षीय योजना के ही नियोजकों ने भूमि विकास के आधुनिकीकरण की वकालत की थी। छठी योजना काल में इसका प्रयास किया गया। नवीं योजना में दलालों के उन्मूलन, किसानों की सुरक्षा, काश्तकारी सुधार, भूमि की सुरक्षा, भूमि विवरण के रख–रखाव आदि पर अत्यधिक जोर दिया गया। भूमि प्रबन्धन हेतु राष्ट्रीय भूमि सूचना तन्त्र की शुरूआत की गई। राष्ट्रीय भूमि सूचना तन्त्र के तीन अंग है–सर्वेक्षण तकनीक, भूमि विवरण आंकड़ा प्रविष्टि तथा सेवा वितरण तन्त्र।

सर्वेक्षण भूमि सूचना तन्त्र का प्रमुख अंग है। वर्तमान समय में पारम्परिक सर्वेक्षण तकनीक के अलावा हवाई फोटो सर्वेक्षण, वैश्विक अवस्थिति तन्त्र तथा उपग्रह प्रतिकृति सर्वेक्षण के कुछ प्रमुख तकनीकें प्रचलन में है। वैश्विक अवस्थिति तन्त्र तकनीक का प्रयोग सैन्य, सामाजिक–आर्थिक कार्यों तथा अनुसंधान में किया जाता है। वर्तमान में सर्वेक्षण, धरातलीय सूचनाओं का मानचित्रण, पर्यावरणीय सर्वेक्षण व प्रबन्धन, प्राकृतिक संसाधन अवस्थिति निर्धारण एवं नियोजन, ग्रामीण नगरीय अर्थव्यवस्था का प्रबन्धन, कृषि, परिवहन तथा आपदा अवस्थिति निर्धारण एवं प्रबन्धन में वैश्विक अवस्थिति तन्त्र का उपयोग हो रहा है। उपग्रह प्रतिबिम्ब सामान्यतः उपग्रहों से लिए गये चित्र होते हैं। बहुआयामी स्कैनिंग प्रणाली में लक्ष्यों की अलग–अलग बैण्ड पर अलग–अलग प्रतिबिम्ब बनता है जों आंकिक इकाइयों में अंकित होता है। कागज अथवा फोटो फिल्म पर प्रतिबिम्ब संकेतकों की ऊर्जा को टोन के अधार पर अलग–अलग बैण्डों में प्राप्त आँकड़ों को अलग अलग रंग में छायांकित करते हैं और संयुक्त रूप से इसका प्रयोग करते हैं जिसे मिथ्यारंग संयोजन कहते हैं। यह पद्धति तीव्र एवं सस्ता है।

राष्ट्रीय सूचना केन्द्र जिला स्तर पर स्थापित किया गया है, जो पूरे जिले की भूमि सम्बन्धी विवरणों को एकत्रित करता है और सूचना–तन्त्र के साथ जोड़ता है। इस तन्त्र के द्वारा किसी भी क्षेत्र की सूचना मानचित्र एवं आँकड़ों के साथ उपलब्ध हो जाती है।

सेवा वितरण तन्त्र और राष्ट्रीय भूमि सूचना तन्त्र का महत्वपूर्ण भाग है। कुछ आँकड़ों के प्रकाशन के अलावा साफ्ट संस्करण में ये आँकड़ें उपलब्ध कराये जाते हैं। सर्वाधिक महत्वपूर्ण माध्यम विश्व व्याप्त जाल (World Wide Web) है, जिससे GIS आधारित भूमि विवरणों को भंडारित करना एवं प्रसारित करना काफी सरल हो गया है। विश्व व्याप्त जाल के माध्यम से कुछ आँकड़ों को मुफ्त एवं कुछ को सशुल्क प्राप्त किया जा सकता है। –

नगरीय प्रबन्धन (**Urban Management**)

नगरीय प्रबन्धन की अवधारणा नगरीय समस्याओं के कारणों की पहचान उसके नियमन और पिछले अनुभवों के आधार पर भविष्य की सम्भावनाओं के परिप्रेक्ष्य में शाश्वत उपायों को ढूढ़ने से सम्बन्धित है। नगरीय समस्याओं में यातायात की भीड़, गाड़ियों को खड़ा करने के स्थान की कमी, असंतुलित भूमि उपयोग, आवास, जल एवं विद्युत आपूर्ति की समस्या, संचार–समस्या, त्याज्य पदार्थों के निस्तारण की समस्या इत्यादि प्रमुख हैं। नगरीय प्रबन्धन के अंतर्गत भूमि उपयोग, यातायात, नगर विस्तार, नगरीय सुविधाएँ एवं सेवाएँ, प्रदूषण, त्याज्य पदार्थ निस्तारण एवं जनसंख्या वृद्धि आदि शामिल किये जाते हैं। उपर्युक्त तत्वों के प्रबन्धन में भौगोलिक सूचना तन्त्र का अब व्यापक अनुप्रयोग होने लगा है। कम्प्यूटर आधारित आरेखों से सम्बन्धित विभिन्न साफ्टवेयर के अस्तित्व में आने एवं इनकी सहायता से आरेखीय प्रस्तुति, औपचारिक विश्लेषण, अनुकरण, प्रतिमानीकरण तथा निर्णय प्रदार्य सहायता अस्तित्व में आये हैं।

आपदा प्रबन्धन (**Disaster Management)**

भौतिक या पर्यावरणीय तत्वों से उत्पन्न विनाशकारी घटनाओं को आपदा कहते हैं। कुछ आपदायें प्राकृतिक होती है जो अनादिकाल से होती रही है। किन्तु कुछ आपदाएं औद्योगिक युग की देन हैं जिसमें मानव अपनी विभिन्न क्रियाओं से प्राकृतिक चक्र को प्रभावित करता है। प्राकृतिक आपदाओं को रोका नहीं जा सकता है बल्कि उसके प्रभाव को कम करने का प्रयास किया जा सकता है, जबकि मानवजन्य आपदाओं को कम करने के साथ ही साथ रोका भी जा सकता है। मानवीय आपदाओं को कम करने, रोकने या प्राकृतिक आपदाओं के प्रभाव को कम करने के विभिन्न उपायों में से उचित उपाय को उचित समय एवं स्थान पर लागू करना तथा क्रियान्वित उपायों की निगरानी एवं आकलन करना आपदा प्रबन्धन कहलाता है।

आपदा पूर्वानुमान, चेतावनी रणनीति, विकास योजनाएं, भारी क्षति से बचने के उपाय, बचाव/राहत कार्य, क्षतिपूर्ति, पुनर्वास आदि कार्यों में अन्तरिक्ष तकनीकी और भौगोलिक सूचना तन्त्र महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। बाढ़, सूखा, चक्रवात, भूकम्प, दावाग्नि आदि आपदाओं के आंकड़ों के साथ एकीकरण कर आपदा–प्रभाव क्षेत्र की पहचान की जा सकती है। उपग्रह प्रतिबिम्बों की व्याख्या कर आपदा प्रभावित क्षेत्रों की विशेषताओं को समझने और आपदा प्रभाव को कम करने में सहायता मिलती है। आपदा से पिनटने के लिए तैयारी के समय भौगोलिक सूचना तन्त्र सुदूर संवेदन द्वारा प्राप्त आंकड़ों के साथ दूसरे सम्बन्धित आंकड़ों का एकीकरण कर आवश्यक आंकड़े उपलब्ध कराता है। क्षेत्रीय संचालन में जी0पी0एस0 की भूमिका भी महत्वपूर्ण होती है। पुनर्निमाण की अवस्था में सम्पत्ति सम्बन्धी हानि का क्षेत्रीय विवरण इन तकनीकों से प्राप्त किया जाता है और पुनर्निमाण सम्बन्धी दिशा निर्देश प्राप्त किया जाता है।

सतत विकास (**Sustainabale Development)**

सतत विकास की अवधारणा स्थानीय पर्यावरण में उपलब्ध संसाधनों का मानवहित में इस प्रकार उपयोग से सम्बन्धित है ताकि प्रकृति की गुणवत्ता भी बनी रहे, विकास कार्य अवरूद्ध न हो और संसाधनों की उपलब्धता भावी पीढ़ियों के लिए बनी रहे। इस रणनीति में जब जगत की क्षमता को ध्यान में रखते हुए संसाधनों के उपयोग को इस प्रकार नियोजित किया जाता है कि प्रकृति पर अनुचित दबाव डाले बिना विकास की निरन्तरता बनाये रखा जा सकें। पर्यावरण विकास सम्बन्धी योजना बनाना, योजना का क्रियान्वयन, आकलन, संशोधन आदि में

भौगोलिक सूचना तन्त्र का प्रयोग किया जा रहा है। नियोजन हेतु विभिन्न स्रोतों से प्राप्त भौगोलिक आंकड़ों का एकीकरण, आंकड़ा, भण्डारण, आंकड़ा संवर्धन, प्रतिमानीकरण, मानचित्र अध्यापरोपड़ आदि आंकड़ा आधार के रूप में जी0आई0एस0 निर्णयकर्ता के लिए सहयोगी होता है।

अनेक पर्यायवरणीय समस्याएं मानवता के लिए घातक बनती जा रही है। इन समस्याओं की भयावहता को कम करने में जी0आई0एस0 एक उपयोगी अस्त्र साबित हो सकता है। इसका उपयोग निम्नवत् हैः–

1. समाप्त प्राय जीवों की पहचान, उनके निवास्य का वितरण मानचित्र निर्माण तथा संरक्षण।
2. वैकल्पिक ऊर्जा स्रोतों की खोज एवं विकास।
3. आणविक विकिरण से प्रभावित क्षेत्रों की पहचान, अपशिष्ट निस्तारण हेतु अवस्थिति निर्धारण।
4. फसलों का वितरण, बीमारी प्रभावित क्षेत्रों की पहचान, बीमारियों की पहचान।
5. खनिज क्षेत्रों की खोज, उत्खनन और उपयोग नियमन।
6. नगरीय विकास नियोजन, अधिवासीय विस्तार, नगरीय अपशिष्ट विस्तारण, यातायात व्यवस्था, सुविधा एवं सेवा प्रबन्धन।
7. शिक्षा, स्वास्थय तथा अन्य सामाजिक सुविधाओं का नियोजन।
8. औद्योगिक अवस्थिति निर्धारण, औद्योगिक प्रदूषण की पहचान एवं क्षेत्र वितरण।
9. प्रदूषणों की पहचान, आकलन एवं निवारण।

यूनेस्कों द्वारा गठित संयुक्त राष्ट्रसंघ कार्यक्रम, विश्व पर्यावरण और विकास कार्यक्रम, दक्षिणी एशिया पर्यावरण सहयोग कार्यक्रम, अन्तर्राष्ट्रीय सागर परामर्श संगठन, अन्तर्राष्ट्रीय पर्यावरण और प्राकृतिक संसाधन संरक्षण संगठन, विश्व स्वास्थय संगठन, पर्यावरण संरक्षण एजेन्सी तथा संयुक्त राष्ट्र संघ शिक्षा, विज्ञान एवं सांस्कृतिक संगठन आदि संस्थाएं सतत विकास हेतु अनुसंधान एवं नियोजन कार्य कर रही हैं। अधिकांश संस्थाएं भौगोलिक सूचना तन्त्र का प्रयोग कर रही है। भौगोलिक सूचना तन्त्र का संगठित उपयोग सतत विकास सम्बन्धित नियोजन में अनिवार्य हैं इसके लिए उपयोगकर्ता का अत्यन्त कुशल होना आवश्यक है ताकि नियोजन के विभिन्न घटकों में उपलब्ध आंकड़ों का समुचित प्रयोग कर सकें। उसे न केवल भौगोलिक सूचना तन्त्र का पर्याप्त ज्ञान होना जरूरी है बल्कि सतत विकास के विभिन्न घटकों का ज्ञान भी उतना ही आवश्यक है।

निष्कर्ष (Conclusion)

भौगोलिक सूचना प्रणाली एक ऐसी संगणक आधारित प्रणाली है जिसमें आंकडों की प्राप्ति, निर्माण, सम्पादन, प्रबंधन, विश्लेषण मानचित्रण एवं प्रदर्शन से सामान्य समझ के लोग भी इसका लाभ उठा सकें अथवा समस्या व सुझाव को समझ सकें। वर्तमान समय में पूर्वानुमान एवं नियोजन हेतु सरकारी एवं गैर–सरकारी संगठन भौगोलिक सूचना तन्त्र पर आश्रित हैं। यह विश्लेषकों और वैज्ञानिकों को जलवायु परिवर्तन, समुद्र के स्तर में वृद्धि, भूमि उपयोग नियोजन, व्यवसाय और यहां तक कि हमारे देश की रक्षा का अध्ययन करने में मदद करती है। भौगोलिक सूचना तंत्र या भौगोलिक सूचना प्रणाली कंप्यूटर हार्डवेयर और सॉफ्टवेयर को भौगोलिक सूचना के साथ एकीकृत कर इनके लिए आंकड़े एकत्रण, प्रबंधन, विश्लेषण, संरक्षण और निरूपण की व्यवस्था करता है। भूगोलीय निर्देशांक प्रणाली को मुख्यतः तीन तरीकों से देखा जा सकता है। पहला, डेटाबेस– यह डेटाबेस संसार का अनन्य तरीके का डेटाबेस होता है। एक तरह से यह भूज्ञान की सूचना प्रणाली होती है। बुनियादी तौर पर जी०आई०एस० प्रणाली मुख्यतः संरचनात्मक डाटाबेस पर आधारित होती है, जो कि विश्व के बारे में भौगोलिक सूचकों के आधार पर बताती है। दूसरा, मानचित्र– यह ऐसे मानचित्रों का समूह होता है जो पृथ्वी की सतह सबंधी बातें विस्तार से बताते है। यह डेटाबेस के लिये इंटरफेस का कार्य भी करते हैं और इनके जरिये स्थानिक पृच्छा की जा सकती है। तीसरा, प्रतिरूप– यह सूचना परिवर्तन उपकरणों का समूह होता है जिसके माध्यम से वर्तमान डाटाबेस द्वारा नया डाटाबेस बनाया जाता है।

मॉडल प्रश्न (Model Questions)

प्रश्न 1. वन संसाधनों के संरक्षण एवं प्रबंधन में भौगोलिक सूचना तंत्र का उपयोग कहां–कहां होता है

a) बनवानी मानचित्र
b) जैव विविधता का संरक्षण
c) वन आवरण मानचित्र
d) उपरोक्त सभी

प्रश्न 2. भौगोलिक सूचनाओं की क्रियाओं का अनुक्रम क्या है

a) स्थानिक आंकड़ा निवेश
b) स्थानिक विश्लेषण
c) आंकड़ों का सत्यापन एवं संपादन
d) उपरोक्त सभी

प्रश्न 3. आंकड़ों के वर्गीकरण के आधार हैं

a) प्राप्ति स्त्रोत के आधार पर
b) गुणात्मक आधार पर
c) स्थानिक वर्गीकरण
d) उपरोक्त सभी

प्रश्न 4. भौगोलिक सूचना तंत्र में धरातलीय आंकड़े प्रदर्शित किए जाते हैं

a) बिंदु आकृति के रूप में
b) रेखीय आकृति के रूप में
c) बहुभुज आकृति के रूप में
d) उपरोक्त तीनों रूपों में

प्रश्न 5. भौगोलिक सूचना तंत्र का अनुप्रयोग होता है

a) भूमि प्रबंधन में
b) नगरीय प्रबंधन में
c) आपदा प्रबंधन में
d) उपरोक्त सभी में

प्रश्न 6. भौगोलिक सूचना तंत्र क्या है? इसको परिभाषित कीजिए

प्रश्न 7. भौगोलिक सूचना तंत्र से क्या लाभ है? इसके महत्व को समझाइए

प्रश्न 8. भौगोलिक सूचना तंत्र के विविध प्रकारों का वर्णन करते हुए उनकी उपयोग को समझाइए

प्रश्न 9. चित्रलेखा पुंज रास्टर एवं सदिश वेक्टर आंकड़ा मॉडल के मध्य अंतर बताइए

प्रश्न 10. भौगोलिक सूचना तंत्र के मुख्य घटक कौन कौन से हैं

प्रश्न 11. भौगोलिक सूचना तंत्र की क्रियो का अनुक्रम बताइए

प्रश्न 12. भौगोलिक सूचना तंत्र के उपयोग के विभिन्न क्षेत्रों का वर्णन करते हुए मानचित्र निर्माण में इसकी भूमिका को स्पष्ट कीजिए

प्रश्न 13. भौगोलिक सूचना तंत्र के विकास कल को स्पष्ट वर्णन कीजिए

प्रश्न 14. भौगोलिक सूचना तंत्र एवं सतत विकास को स्पष्ट कीजिए

प्रश्न 15. भौगोलिक सूचना तंत्र एवं आपदा प्रबंधन को स्पष्ट कीजिए

सन्दर्भ पुस्तकें (Reference Books)

- Basudeb Bhatta (2021), Remote Sensing and GIS, Oxford University Press, New Delhi.

- शिव शंकर वर्मा एवं विश्वम्भर नाथ शर्मा (2015), सुदूर संवेदन तकनीक एवं भौगोलिक सूचना तत्व के मूल तत्व, वसुन्धरा प्रकाशन गोरखपुर।
- James B. Campbell and Randolph H. Wynne (2011), Introduction to Remote Sensing, Guilford Press, New York.
- राज कुमार शर्मा (2011), वायु फोटो निर्वाचन, सुदूर संवेदन एवं भौगोलिक सूचना तन्त्र, हिमांशु पब्लिकेशन्स।
- K.K. Maltiar & S.R. Maltiar (2019) Concepts of Cartography Remote Sensing and GIS, Rajesh Publications, New Delhi.
- Kali Charan Sahu (2018), Textbook of Remote Sensing and Geographical Information Systems, Atlantic Publishers and Distributors Pvt Ltd, New Delhi.
- डॉ० देवी द्त्त चौनियाल (2004), सुदूर संवेदन एवं भौगोलिक सूचना प्रणाली के सिद्धान्त, शारदा पुस्तक भवन, प्रयागराज।
- Sailesh Samanta (2023), A Text Book of Remote Sensing GIS and GNSS, Notion Press, New Delhi.

इकाई - 16 (Unit - 16)
परिच्छेदिकाए Profiles

पाठ संरचना (Lesson Structure)

1. प्रस्तावना
2. उद्देश्य
3. परिच्छेदिका की परिभाषा
4. परिच्छेदिका बनाने की विधियॉः–
   - A. कागज पट्टी विधि
   - B. लम्ब विधि
5. परिच्छेदिका के मापक
6. परिच्छेदिकाओं के प्रकार
   - A- संक्रम परिच्छेदिकाएं
   - B- अध्यारोपित परिच्छेदिकाएं
   - C- प्रक्षेपित परिच्छेदिकाएं
   - D- मिश्रित परिच्छेदिकाएं
7. निष्कर्ष
8. मॉडल प्रश्न
9. सन्दर्भ पुस्तकें

1. **प्रस्तावनाः–** प्रयोगात्मक भूगोल की अन्तिम ईकाई के रूप मे ंहम परिच्छेदिका का अध्ययन करेगें। इस ईकाई में आप सर्वप्रथम परिच्छेदिका के विषय में तथा उसकी परिभाषाओं का अध्ययन करेगें। भू–आकारिकी में परिच्छेदिका का महत्व अत्यधिक बढ़ जाता है। समोच्च रेखीय मानचित्र ही परिच्छेदिका निर्माण का आधार होता है। इस इकाई में विस्तार से हमे इस इकाई में विस्तार से हमे यह समझना होगा कि एक वैज्ञानिक विषय के रूप में प्रयोगात्मक भूगोल के अध्ययन की परिधि कहॉ तक पहॅुच गई है। परिच्छेदिका का निर्माण कैसे होगा? यह भी आप इस ईकाई में अध्ययन करेगे। किसी धरातलीय सतह की एक निश्चित तल के सहारे उच्चावच की रूपरेखा को परिच्छेदिका कहते हैं। परिच्छेदिकाओं का निर्माण समोच्च रेखीय मानचित्रों के आधार पर किया जाता है। भू–आकारिकी में परिच्छेदिका का अत्याधिक महत्व होता है क्योंकि इससे क्षेत्र विशेष की उच्चावच की प्रकृति तथा विभिन्न ढाल वाले सतहों का स्पष्ट बोध हो जाता है। अत भू–आकृतिक निरूपण में परिच्छेदिकाओं एव ढाल विश्लेषण का अत्याधिक उपयोग किया जाता है।

2. उद्देश्य

- प्रयोगात्मक भूगोल की मूल भावना को आप आसानी से समझ सकेगें।
- परिच्छेदिका के मापक, विधियॉ एवं उनके प्रकार के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेगें।
- प्रयोगात्मक भूगोल जैसे जटिल विषय को सरलतापूर्वक, रोचक एवं व्यवस्थित रूप में समझ सकेगें।

3. परिभाषा (Definition)

यदि किसी भू–भाग के एक पार्श्व को खडे तल के रूप में काट लिया जाए, तो उस कटे भाग को परिच्छेदिका कहा जाता है। स्थलाकृतिक मानचित्र में एक रेखा के सहारे अनुप्रस्थ काट को परिच्छेदिका कहते हैं।''' (A profile is cross&sectional view along a line drawn through a portion of a topographic map) अर्थात् परिच्छेदिकाएं क्षेत्र के ऊर्ध्वांधर उच्चावचीय प्रतिरूप को प्रदर्शित करती हैं।

यदि समोच्च रेखाओं युक्त स्थलाकृतिक मानचित्र में निश्चित अनुप्रस्थ काट रेखाओं के आधार पर परिच्छेंदिकाएं बनायी जायें तो उस भू–भाग का स्पष्ट उच्चावचीय प्रतिरूप प्रदर्शित किया जा सकता है।

4. **परिच्छेदिका बनाने की विधियां (Methods for Drawing a Profile)**:– यदि किसी भू–आकृति को खडे तल में काट दिया जाए तो कटे हुए परिच्छेद का सपाट दृश्य पार्श्व चित्र कहलायेगा। परिच्छेदिका बनाने की दो विधियां हैं:–

   1. कागज–पट्टी विधि (Paper Strip Method)

   2. लम्ब विधि (Perpendicular Method)

   दोनों विधियों में परिच्छेद रेखा (Line of Secion) अथवा अनुप्रस्थ काट रेखा (Cross & section Line) के आधार पर परिच्छदिकाओं की रचना की जाती है। परिच्छेद रेखा के विषय में यह जानना आवश्यक है–

1. समोच्च रेखी मानचित्र पर कई परिच्छेद रेखाएं खींचकर अनेक परिच्छेदिकाएं प्राप्त की जा सकती हैं।
2. परिच्छेद रेखा सदैव एक सरल सीधी रेखा होती है।
3. परिच्छेद रेखा क्षैतिज, लम्बवत और नत आदि किसी भी रूप में हो सकती है।

1. **कागज–पट्टी विधि (Paper Stipe Method)** इस विधि में सीधे किनारे वाली कागज की पट्‌टी या ग्राफ पेपर का प्रयोंग करके समोच्च रेखी मानचित्र से मूल्य अकिंत कर अलग किसी कागज पर परिच्छेदिका बनायी जाती है। कागज–पट्टी विधि से परिच्छेदिका बनाने की प्रक्रिया इस प्रकार है:–

i) मान लीजिए समोच्व रेखीय मानचित्र पर कोई दो बिन्दु A व B लीजिए तथा एक सीधी सरल रेखा से उनको मिलाकर एक अनुप्रस्थ काट रेखा (Cross Section Line) बनाइए।

ii) सीधे किनारे वाली कागज की पट्टी को इस रेखा AB के सहारे रखिए।

iii) अब पेंसिल से कागज की पटटी पर AB बिन्दु अकित कीजिए तथा साथ ही उन समस्त बिन्दुओं को भी अकित कीजिए, जहाँ–जहाँ समोच्च रेखाएं कागज की पट्टी को स्पर्श करती हैं। अब अंकित किए गए प्रत्येक बिन्दु पर संबधित समोच्च रेखाओं की ऊँचाइयों को लिखिए।

iv) किसी अन्य कागज पर AB रेखा के बराबर एक सीधीसरल रेखा A' B खींचए तथा कागज की पट्‌टी सटाकर रखते हए पट्टी पर अंकित किए गए बिन्दुओं को उनके मूल्य सहित A` B' रेखा पर स्थानान्तरित कीजिए।

v) अब अन्य स्थान पर AB रेखा के बराबर एक सीधी सरल रेखा A" B" खींचिए तथा A" व B" से मानी गईं उद्धर्वाधर मापनी के अनुसार प्रत्येक बिन्दु पर लम्ब उठाइए।

vi) इन लम्ब रेखाओं के शीर्ष बिन्दु को मिलाते हुए एक निष्कोण वक्र बनाइए। बनाया गया वक्र मानचित्र पर AB बिन्दुओं के बीच की परिच्छेंदिका को प्रदर्शित करता है।

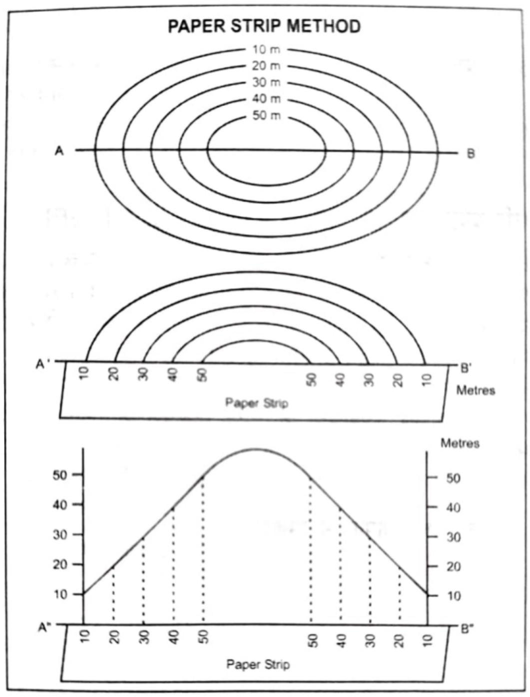

चित्र संख्या – 1 कागज पट्टी विधि

2 **लम्ब विधि (Perpendicular Method)** इस विधि में समोच्च रेखीय मानचित्र पर लम्ब डालकर (By Drawing Perpendicular) परिच्छेदिका बनाई जाती है। लम्ब विधि में परिच्छेदिका बनाने की प्रक्रिया इस प्रकार है–

i) समोच्च रेखीय मानचित्र पर कोई दो बिन्दु AB लीजिए तथा उनकों मिलाते हुए एक, अनुप्रस्थ काट रेखा बनाइए।

ii) खींची गई कटान रेखा AB बिन्दुओं के बीच स्थित समोच्च रेखाओं C,D,E,F,G,H,I तथा, J बिन्दुओं पर प्रतिच्छेदित करती है।

iii) अब A तथा B बिन्दु से मानचित्र के नीचे की ओर AX तथा B Y समान लम्बाई के लम्ब गिराइये। X तथा Y को मिलाकर परिच्छेदिका की आधार रेखा बनाइए।

iv) X तथा Y का मान शून्य मानते हुए XA तथा YB लम्ब रेखाओं पर मानी गई मापनी के अनुसार 0 से 50 मीटर की ऊँचाइयों को अंकित कीजिए। अब प्रत्येक अंकित ऊँचाईं हेतु X Y के समानान्तर रेखाएं खीचिए जो समुद्र तल स विभिन ऊँचाइयों को प्रदर्शित करती हैं।

v) प्रत्येक कटान बिन्दु से ऊँचाई अनुसार इन समानान्तर रेखाओं पर लम्ब डालिए तथा कटान बिन्दु अनुसार इनको A',C', D',E',F',G',I',J' तथा B' नाम दीजिए।

vi) अब A',C', D',E',F',G',I',J' तथा B' बिन्दुओं को मिलाते हुए एक सरल वक्र की रचना कीजिए जो उपयुक्त समोच्च रेखीय मानचित्र की परिच्छेदिका होगी।

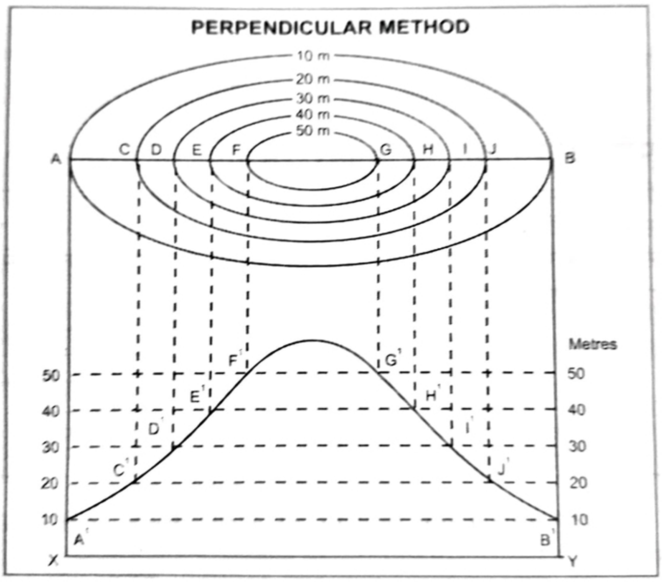

चित्र संख्या – 2 लम्ब विधि

5. **परिच्छेदिका के मापक (Scales of a Profile)** क्षैतिज व ऊर्ध्वाधर मापक सही होने पर ही सटीक परिच्छेदिका की रचना की जा सकती है, लेकिन स्थलाकृतिक मानचित्र में प्रदर्शित मापक के आधार पर निर्मित परिच्छेदिका द्वारा धरातल की उच्चावचीय प्रकृति को समझना मुश्किल हो जाता है क्योंकि इन समोच्च रेखीय मानचित्रं में दोनों मापनियों को समान दर्शाया जाता है। अतः परिच्छेदिका की रचना में ऊर्ध्वाधर मापक का चयन बहुत ही महत्वपूर्ण होता है। क्योंकि दिये गये समोच्च रेखा मानचित्र का क्षैतिज मापक लघु होता है। इसी कारण इस आधार पर निर्मित परिच्छेदिकाओं द्वारा धरातल के सभी स्वरूप का स्पष्ट प्रदर्शन नही हो पाता।

धरातलीय उच्चावचों क स्पष्ट निरूपण के लिए परिच्छेदिका में क्षैतिज दूरी एवं ऊर्ध्वाधर ऊँचाई को भिन्न–भिन्न मापक के अनुसार दिखाया जाता है। अर्थात् क्षैतिज मापक के संदर्भ में ऊर्ध्वाधर मापक को बढ़ाकर प्रदर्शित किया जाता है। यह विकृति भू–आकृति के विश्लेषण को ध्यान रखकर की जाती है।

ऊर्ध्वाधर मापक में विकृति = उर्ध्वाधर मापक / क्षैतिज मापक$=\dfrac{1/25{,}000}{1/1{,}00{,}000}$

$$=\frac{1}{25{,}000}\div\frac{1}{1{,}00{,}000}$$

$$=\frac{1}{25{,}000}\times\frac{1{,}00{,}000}{1}$$

$$=\frac{1{,}00{,}000}{25{,}000}=4$$

= ऊर्ध्वाधर मापक क्षैतिज मापक के चार गुना बड़ा है अर्थात विकृति चार गुना है।

6. **परिच्छेदिकाओं के प्रकार (Kinds of Profiles)** किसी समोच्च रेखी मानचित्र पर विद्यमान विभिन्न उच्चावचीय लक्षणों को केवल एक परिच्छेदिका द्वारा प्रदर्शित कर संभव नहीं है। अतः कई आधार रेखाओं के आधार पर अनेक परिच्छेदिकाओं की रचना कर वहॉ के धरातलीय स्वरूप को स्पष्ट किया जा सकता है। परिच्छेदिकाओं को चार प्रकार में विभक्त किया जाता है–

परिच्छेदिकाओं के प्रकार

A- संक्रम परिच्छेदिकाएं
B- अध्यारोपित परिच्छेदिकाएं
C- प्रक्षेपित परिच्छेदिकाएं
D- मिश्रित परिच्छेदिकाएं

एक समोच्च रेखी मानचित्र को आधार बनाकर विभिन प्रकार की परिच्छेदिकाओं को अधिक स्पष्ट रूप सेसमझा सकता है।

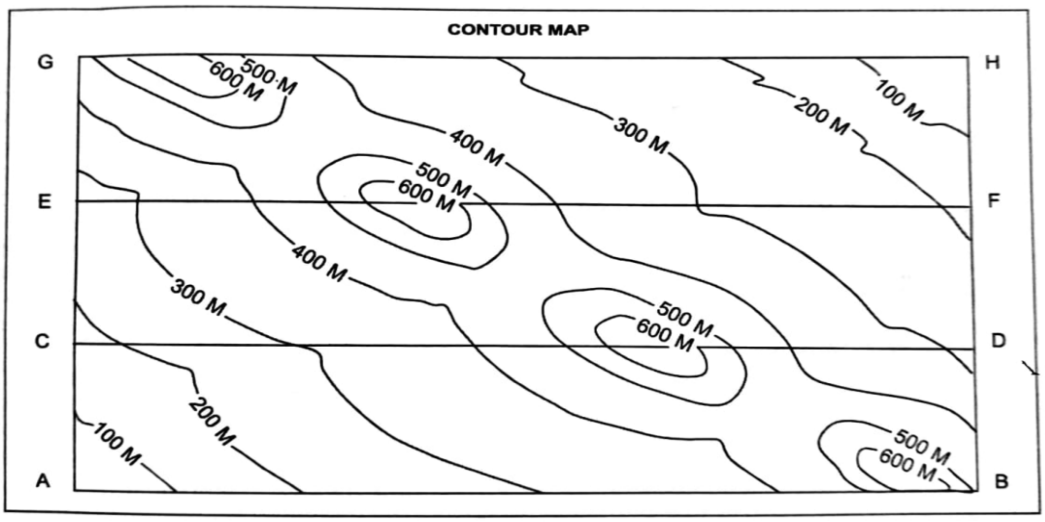

चित्र संख्या – 3 समोच्च रेखीय मानचित्र

A- **संक्रम परिच्छेदिकाएं (Serial Profles)** समोच्चरेखी मानचित्र पर निश्चित की गई समान्तर रेखाओं (कटान रेखाओं) के सहारे खींची गई परिच्छेदिकाओं का विभिन्न आधारों पर ऊर्ध्वाधर रूप से व्यवस्थित क्रम, संक्रम परिच्छेदिकाएं कहलाती हैं। उपरो्क्त समोच्च रेखीय मानचित्र के आधार पर संक्रम परिच्छेदिकाएं बनाने के लिए सभी महत्वपूर्ण स्थलाकृतियों को काटती हुई चार समान्तर रेखाएं खीचिए। इन रेखाओं को नीचे से ऊपर की तरफ AB, CD, EF तथा GH नाम अंकित कर दीजिए। इन चारों आधार रेखाओं (कटान रेखाओं) के आधार पर अलग–अलग चौखटों में पूर्व में बतलाई गई विधियों (कागज पट्टी या लम्ब विधि) के अनुसार विभिन्न परिच्छेदिकाओं की रचना कीजिए। खींची गई चारों परिच्छेदिकाओं को ऊर्ध्वांधर रूप से व्यवस्थित क्रम में रखने पर संक्रम परिच्छेदिकाओं की रचना होती है।

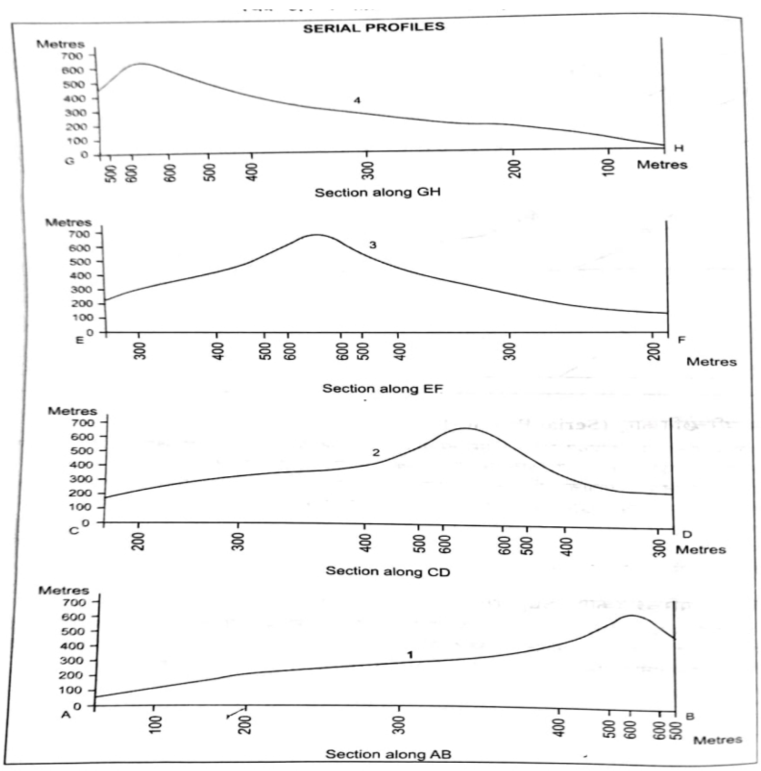

चित्र संख्या – 4 संक्रम परिच्छेदिकाए

B- . **अध्यारोपित परिच्छेदिकाएं (Superimposed Profiles)** समोच्च रेखीय मानचित्र के आधार पर निर्मित सभी संक्रम परिच्छेदिकाओं को जब एक ही आधार पर अर्थात् एक ही चौखटे में बना दिया जाता है तो उन्हें अध्यारोपित परिच्छेदिकाएं कहते हैं। इसमें सभी परिच्छेदिकाओं का ऊर्ध्वाधर मापक समान होता है. जिससे उच्चावचीय लक्षणों का तुलनात्मक विश्लेषण सरलता से किया जा सकता है।

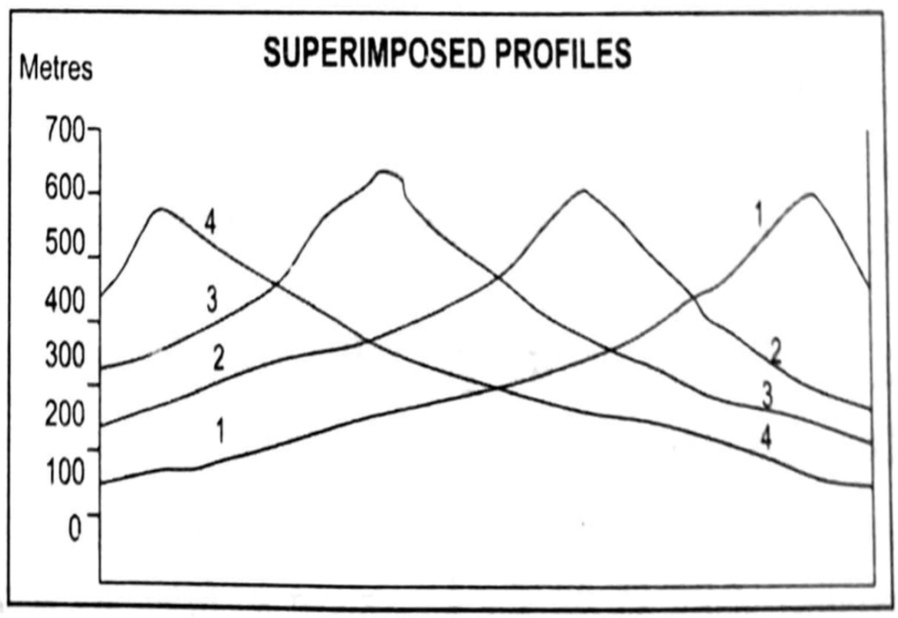

चित्र संख्या – 5 अध्यारोपित परिच्छेदिकाए

C- **प्रक्षेपित परिच्छेदिकाएं (Projected Profiles)** जब संक्रम परिच्छेदिकाओं को एक ही पर खींचकर अध्यारोपित परिच्छेदिकाओं में प्रथम परिच्छेदिका के नीचे छिपे भाग तथा दूसरे के नीचे तीसरी तथा तीसरे के निचे छिपे चौथे भाग को मिटा दिया तो निर्मित परिच्छेदिकाएं प्रक्षेपित परिच्छेदिकाएं कहलाती हैं। उपरोक्त उदाहरण में क्रमांक 1 की परिच्छेदिका को पूरा दर्शाया गया है तथा क्रमांक 2, 3 व 4 की परिच्छेदिकाओं के एक के पीछे छिपे भागों को नहीं बनाया गया है अथवा मिटा दिया गया है।

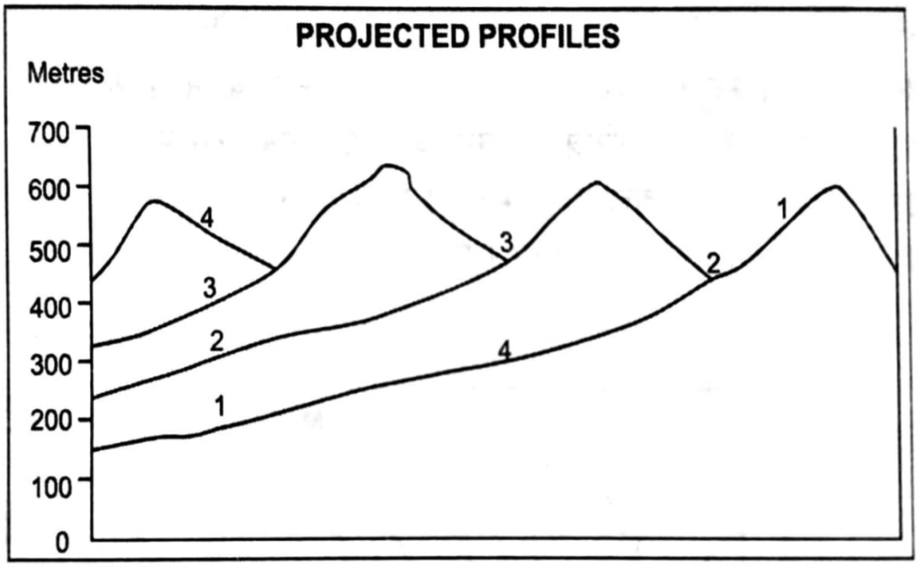

चित्र संख्या – 6 प्रक्षेपित परिच्छेदिकाए

D- **मिश्रित परिच्छेदिकाएं (Composite Profiles)** इसके अन्तर्गत क्षेत्र विशेष के सर्वोच्चय भाग को ही प्रदर्शित किया जाता है। अध्यारोपित परिच्छेदिका की रचना कर के सर्वोच्च भागो को छोडकर शेष निचले भागों को मिटा दिया जाता है इस तरह से मिश्रित परिच्छेदिका का निमार्ण होता है।

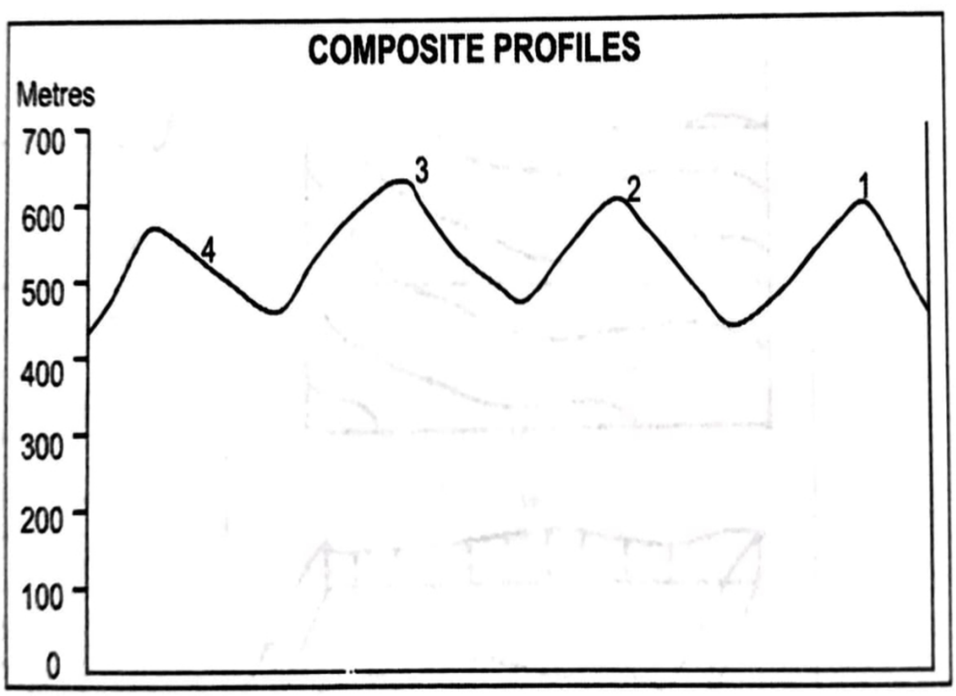

चित्र संख्या – 7 मिश्रित परिच्छेदिकाए

उपरोक्त उदाहरण में अध्यारोपित परिच्छदिकाओं में सबसे ऊँचे भागों को दर्शाने वाली परिच्छेदिकाओं के भाग को छोड़कर शेष भागों को मिटा दिया गया है।

7. **निष्कर्षः–** प्रयोगात्मक भूगोल के अध्ययन में परिच्छेदिका के विषय में जानकारी से प्राप्त होती है। परिच्छेदिका निर्माण के द्वारा हम किसी स्थान विषेश की भू–आकारिकी के विषय में जानकारी प्राप्त कर सकते है तथा उनके आधार पर इस स्थान की स्थालाकृतियों का निर्माण कर सकते है। समोच्च रेखा के आधार पर विभिन्न प्रकार की परिच्छेदिकाओं की रचना की जाती है।

8. **मॉडल प्रश्नः–**

1. परिच्छेदिका निर्माण की विभिन्न विधियों को समझाइए।
2. परिच्छेदिका किसे कहते है? इसके प्रकारो को समझाइए।
3. परिच्छेदिका की रचना करते समय किन बातों का ध्यान रखना चाहिए।
4. मिश्रित परिच्छेदिका को परिभाषित करे।

9. **सहयोगी पुस्तकेः–**

(i) भूगोल (परिचय, मानव एवं प्रायोगिक)–डॉ. एस.एम. गुप्ता

(ii) प्रायोगिक भूगोल– डॉ0 आर. एन. मिश्रा

(iii) प्रायोगिक भूगोल– डॉ0 जे.पी. शर्मा

(iv) प्रयोगात्मक भूगोल के मूल तत्व– डॉ0 आर.एल. सिंह

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

- चौहान, पी0आर0, प्रयोगात्मक भूगोल, 2013, बसुन्धरा प्रकाशन, गोरखपुर
- मोहम्मद, हारून, प्रयोगात्मक भूगोल, 2010, मिश्रा ट्रेडिंग कारपोरेशन, मैदागिन, वाराणसी
- सिन्हा, वी0सी0 एवं आलोक गुप्ता, व्यावसायिक सांख्यिकी, 2010 एस बी पी डी पब्लिकेशन्स, आगरा
- शुक्ल, एस0 एम0 एवं एस0 पी0 सहाय, सांख्यिकी के सिद्धान्त, 2004, साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा